रसायन दर्शन

गुजरात रिफाइनरी—तीसरी यूनिट

गुजरात रिफ़ाइनरी (कोयली)

- **नींव डालनेका मुहूर्त**
  १० मई, १९१३

  उत्पादन का आरम्भ :
  प्रथम यूनिट—२८-१०-६३
  दूसरी यूनिट — २८-५-६६
  तीसरी यूनिट—१८-९-६७

- **केपेसिटी—क्षमता**

  प्रतिदिन ९००० टन क्रूड तैलका फ्रेक्शनेशन

- **उत्पादन**

  मोटर स्पिरिट
  केरोसिन
  हाईस्पीड डीजल
  लाइट डीजल
  जलानेका तैल

विशिष्टता

भारतीय इजीनीयर ० भारतीय साजसामान ० कम-से-कम विदेशी मुद्रा
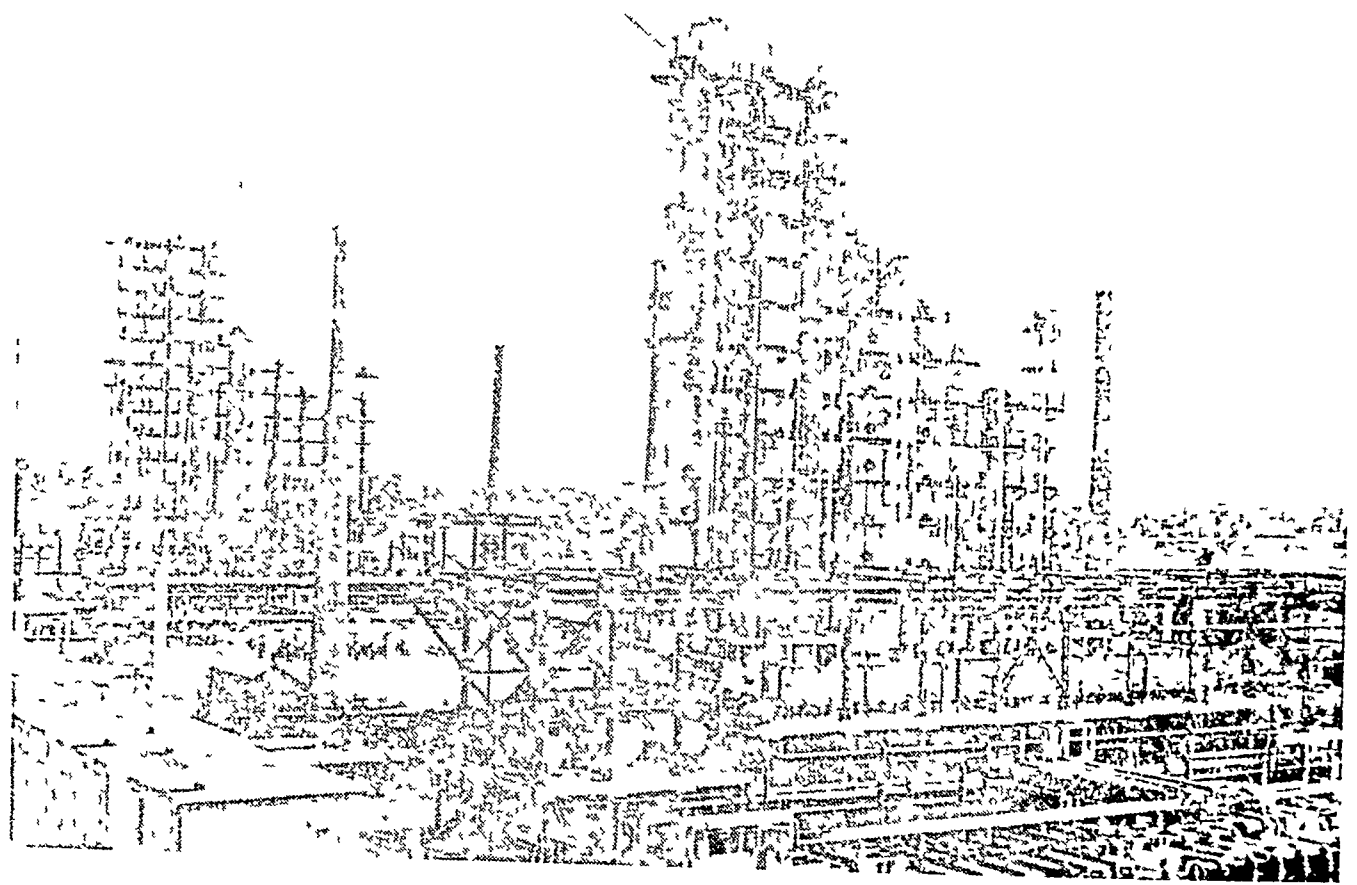
गुजरात रिफाइनरीके (कोयली) प्रथम दो यूनिट—प्रत्येककी केपिसिटी १० लाख टन।
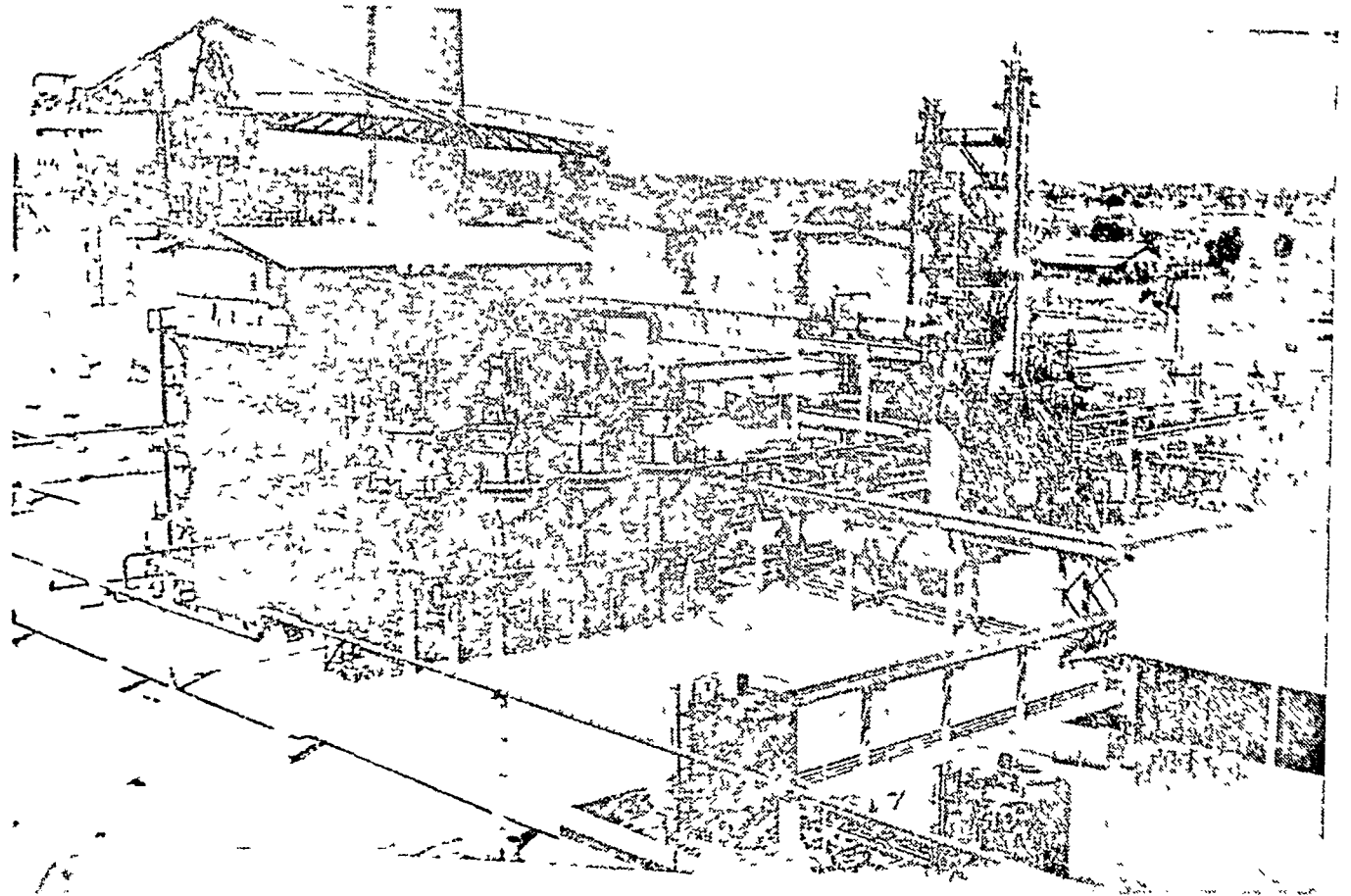
४

ज्ञान-गंगोत्री ग्रन्थमाला : विज्ञान-विद्याशाखा

रसायन दर्शन

लेखक-मंडल
डा० नरसिंह मू० शाह
डा० सुरेश सेठना
डा० भास्कर मांकड
श्री पद्मकान्त शाह
श्री बंसीधर गांधी
अनुवादक:
श्री श्यामू सन्यासी

भारत सरकार, शिक्षा मंत्रालयकी मानक-
ग्रन्थोंकी प्रकाशन-योजनाके अन्तर्गत प्रकाशित

सरदार पटेल वर्सिटी-वल्लभविद्यानगर

आभार दर्शन

लेखन :

- ○ डा० नरसिंहभाई मू० शाह रसायन विज्ञानके क्षेत्रमे अग्रगण्य प्राध्यापक और लेखक।
- ⊙ डा० सुरेश सेठना . म० स० विश्वविद्यालय, वडौदाके रसायन विभागके अध्यक्ष और लेखक तथा १९६८की 'अखिल भारतीय विज्ञान परिषद'के रसायन विभागके अध्यक्ष।
- ○ डा० भास्कर मांकड . सरदार पटेल युनिवर्सिटीके रसायन विभागके प्राध्यापक।
- ○ श्री पद्मकान्त शाह नेशनल रेयन कारपोरेशन (बम्बई)के पुस्तकालय-अध्यक्ष रसायनशास्त्रके सिद्धहस्त लेखक।
- ○ श्री वंसीधर गांधी . ज्ञान-गंगोत्री-ग्रन्थमालाके सह-सम्पादक, वैज्ञानिक विषयो के लेखक।

अनुवाद

- ○ श्री श्यामू सन्यासी विज्ञान और मानविकी विषयोके अधिकारी विद्वान, लेखक ओर अनुवादक।

योजना-दान हरि ॐ आश्रम, नडियाद

भारत सरकार, शिक्षा मंत्रालयकी मानक-ग्रन्थोकी प्रकाशन-योजना-के अन्तर्गत इस पुस्तकका अनुवाद और पुनरीक्षण वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोगकी देखरेखमे किया गया है और इस पुस्तककी एक हजार प्रतियाँ भारत सरकार द्वारा खरीदी गई है।

प्रकाशन तिथि १ जनवरी, १९७२ ई०
प्रथम संस्करण, ३००० प्रतियाँ

कीमत :
रु० २० ०० (Rs 20 00) + डाक खर्च रु० २ ०० (Rs 2 00)

प्रकाशक कान्तिलाल अमीन, रजिस्ट्रार सरदार पटेल युनिवर्सिटी-वल्लभविद्यानगर (भारत

मुद्रक :
सम्मेलन मुद्रणालय १३ सम्मेलन मार्ग . प्रयाग (भारत)

प्रस्तावना

हिंदी और प्रादेशिक भापाओको शिक्षाके माध्यमके रूपमे अपनानेके लिए यह आवश्यक है कि इनमे उच्च कोटिके प्रामाणिक ग्रथ अधिकसे अधिक सख्यामे तैयार किये जाएँ। भारत सरकारने यह कार्य वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोगके हाथमे सौपा है और उसने इसे बडे पैमानेपर करनेकी योजना बनायी है। इस योजनाके अन्तर्गत अग्रेजी और अन्य भाषाओके प्रामाणिक ग्रथोका अनुवाद किया जा रहा है तथा मौलिक ग्रथ भी लिखाये जा रहे है । यह काम अधिकतर राज्य सरकारो, विश्वविद्यालयो तथा प्रकाशकोकी सहायतासे प्रारभ किया गया है। कुछ अनुवाद और प्रकाशन-कार्य आयोग स्वय अपने अधीन भी करवा रहा है। प्रसिद्ध विद्वान अध्यापक हमे इस योजनामे सहयोग दे रहे है। अनूदित और नये साहित्यमे भारत सरकार द्वारा स्वीकृत शब्दावलीका ही प्रयोग किया जा रहा है ताकि भारतकी सभी शिक्षा-सस्थाओमे एक ही पारिभाषिक शब्दावलीके आधारपर शिक्षाका आयोजन किया जा सके।

ज्ञान-गगोत्री श्रेणीका चतुर्थ ग्रथ 'रसायन दर्शन' आयोग द्वारा प्रस्तुत किया जा रहा है। इस ग्रथके लेखक है : सर्वश्री डा० नरसिह मू० शाह, डा० सुरेश सेठना, डा० भास्कर माकड, श्री पद्मकात शाह तथा श्री बसीधर गाधी। श्री श्यामू सन्यासी ने इसका हिन्दी अनुवाद किया है तथा श्री गिरिराज किशोरने इस अनुवादका पुनरीक्षण कार्य किया है।

अध्यक्ष

वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग

निवेदन

स्वतन्त्रता-प्राप्तिके पश्चात हमारे देशमे शिक्षाका विस्तार हुआ है। साथ ही उच्च शिक्षा-परिपाटीके कारण ज्ञान-विस्तारके नये अवसर सुलभ हुए है। तकनीकी क्षेत्रमे भी हम वडे कदम भर रहे है। इतना होते हुए भी, कई कारणोसे, उच्च शिक्षाकी प्राप्तिके लिए साधारण छात्रके ज्ञान-सस्कारका सबल पर्याप्त नही है; अत विश्वविद्यालयीय छात्रका ज्ञान-व्याप भी वहुत कम प्रतीत होता है।

यह भी स्वाभाविक है कि स्वाधीन लोकतात्रिक समाजके सर्वागीण विकास-कालमे सर्व-साधारण शिक्षित प्रजाजनको चुनौतियाँ देने वाली असख्य जटिल समस्याएँ भी उपस्थित होती रहे। ऐसी परिस्थितिमे, वौद्धिक तालीमका ज्ञानसचय अपर्याप्त रह जानेपर एक सुसज्ज नागरिकके रूपमे उसके व्यक्तित्वकी क्षति वैयक्तिक व राष्ट्रीय—दोनो दृष्टियोसे प्रभावशाली पूर्तिकी अपेक्षा करती है।

इस क्षति-पूर्तिके उद्देश्यसे सरदार पटेल युनिवर्सिटीने अपनी सीमाओमे रहकर यथासभव, एक अल्प किन्तु सनिष्ठ प्रयास किया है, और इसे 'ज्ञान-गगोत्री'के माध्यमसे मानव विद्या-शाखाके बीस और विज्ञान विद्याशाखाके दस—इस तरह कुल तीस ग्रथोकी मालाकी योजनासे आरभ किया है।

महाविद्यालय-स्तरके छात्रो व शिक्षित नागरिकोको ध्यानमे रखकर यह ग्रथमाला तैयार करनेका निश्चय किया गया है। इस ग्रन्थ-मालाके उद्देश्य है :

(१) अध्ययनकी इच्छावाले पाठक इन ग्रथोको थोडे परिश्रमसे कितु रसपूर्वक पढे, उनकी ज्ञान-पिपासा अधिक बढे, (२) अध्ययनके उपरात अध्येताके चित्त-पटल पर बहुविध विकासके मुख्य सोपान उभर आवे, (३) जानकारी व तथ्योकी अनेक-विधता द्वारा ज्ञान-प्राप्तिका 'गुर' पाठक हस्तगत करे और (४) अध्येताओके चित्तमे मूलभूत सत्य एव मूल्योके प्रति श्रद्धाका बीजारोपण हो।

इस दृष्टिसे इतिहास, चितन-साहित्य, ललितकला और विज्ञान जैसे विविध क्षेत्रोके विभिन्न प्रकारके आलेखनोके लिए कुछ आधारभूत वाते स्वीकार करके ही हम अग्रसर हुए है। यथा—

(१) मानव-विकासमे अनेक प्रेरक-शक्तियाँ क्रियाशील रहती है, परतु अततोगत्वा परिस्थितियोके परिवर्तनमे मानवीय चेतना भी प्रमुख भूमिका अदा करती है, और हरेक मानवके व्यक्तित्वके यथासभव पूर्ण विकासकी नीव पर ही सामाजिक व सामुदायिक विकासका भवन रचा जाना चाहिए।

(२) विज्ञानका रहस्य परिवर्तनशीलतामे निहित है और अखड शोध-वृत्ति ही उसकी कुजी है। विज्ञानकी विलक्षणता तथ्योके भडारका सचय करनेमे नही हे। किंतु वाह्य विश्रृखलताओकी अतर्निहित सवादिता खोज लेनेमे है।

(३) अन्वेपणकी इस प्रक्रियामे मानवकी चेतना और कल्पना शक्तिका योगदान असाधारण है, और यह वैज्ञानिक सत्य मुक्त मानवके निर्णयका ही फल हे।

(४) आखिर तो विज्ञान भी अन्य मानवीय क्षेत्रोकी भाति मूल्योके निर्णयके विना मात्र यात्रिक प्रवृत्तिके रूपमे टिकेगा नही। इस सदर्भमे विज्ञान और मानव-विद्याओके वीचकी ज्ञान-सीमाएँ अभिन्न प्रतीत होती है।

(५) जीवनकी समग्रताके साथ आदिकालके तदात्मभूत वनी सृजन-प्रवृत्तियोंके प्रति विशेप अभिमुख होना व आत्मीयता जगाना उचित है। हमारा विद्यार्थी और नागरिक सोदर्य निरखनेवाला वने, सौदर्य पहचाननेवाला वने और उसका आस्वादन करनेवाला अर्थात् परमानदी घूंट पीनेवाला वने, ऐसी चैतसिक सृजन-शक्तिका रहस्योद्‌घाटन करना चाहिए।

(६) इस ग्रथमालाका लक्ष्य उस रहस्यको अवगत करना है कि ज्ञान केवल जानकारी नही है, विज्ञान भौतिक या प्राकृतिक शक्तियोका केवल सकलन या पृथक्करण नही है, अनुभूति केवल घटनाओका वाह्य स्पर्श नही है, ज्ञानानुभूति इससे भी कुछ विशिष्ट है।

हमने सदैव इस समानताका अनुभव किया है कि उपर्युक्त वाते सिद्ध करनेका कार्य अति दुष्कर है। एक ओर युवको व नागरिकोके स्तर, उनकी अभिरुचि, अध्ययन-क्षमता ओर वोध-क्षमताकी सीमाए है, तो दूसरी ओर इतिहास-विकासकी झाँकी करानेका कार्य कठिन हे। गभीर व कठिन समझे जानेवाले विषयोको गभीरतासे किंतु आस्वाद्य वनाकर प्रस्तुत करनेका कार्य लेखकोके लिए कसौटी-रूप है। सम्पादकोकी भी मर्यादाए होती है। इस प्रकार यह प्रयास महत्त्वाकाक्षी व दुराराध्य लगते हुए भी अति महत्वाकाक्षी किंवा असाध्य नही है। इस यात्राका आरभ हमने इस विश्वाससे किया है कि गगावतरण करानेका तो नही, गगोत्रीमे आचमन करानेका यश तो हमे मिलेगा। विदेशी ग्रथोके अनुवाद या रूपान्तरोको प्रस्तुत करनेके वजाय यथासभव मौलिक अध्ययन व चिंतन प्रस्तुत करना हमारा उद्देश्य है।

अपने इस प्रयासमे हरि ॐ आश्रम, नडियादवाले पूज्य श्री मोटासे, भारत सरकारके शिक्षा मत्रालय ओर राज्य सरकारके शिक्षा विभागसे तथा अन्य सज्जनो और सस्थाओकी ओरसे जो आर्थिक सहायता हमे प्राप्त हुयी है उसके लिए हम इन सभीके वहुत ही कृतज्ञ है। नडियाद और रादेरके अपने भक्तो ओर प्रशसको द्वारा ज्ञान-गगोत्री श्रेणीके ग्रथोके प्रकाशनार्थ दो लाख रुपयोका दान सरदार पटेल युनिवर्सिटीको दिलवाकर पूज्य श्री मोटाने ज्ञान-गगोत्रीके इस कार्यका मगलारभ किया है।

मगर यह हुयी गुजराती ग्रथ-श्रेणीकी वात। इस श्रेणीके प्रथम दो ग्रथोके प्रकट होनेके वाद पूज्य श्री मोटाने सोचा कि यह ग्रथ-श्रेणी हिंदी जनताके लिए भी उतनी ही उपयोगी है जितनी गुजराती जनता के लिए और उन्होने ज्ञान-गगोत्रीकी हिन्दी-आवृत्तिके लिए पैंतीस हजार रुपयेका दान सरदार पटेल युनिवर्सिटीको देनेका विचार प्रकट किया। पूज्य श्री मोटाकी यह शुभ भावना फलवती सावित हुयी। हिन्दी सस्करणके लिए अन्य व्यक्तियोसे हमे दान

मिलने लगा और इस प्रकार इस श्रेणीके प्रथम ग्रथ 'ब्रह्माण्ड दर्शन'के हिन्दी-सस्करणका प्रकाशन शक्य बना। हम पूज्य श्री मोटाके और अन्य सभी सज्जनोके बहुत कृतज्ञ है। हम आशा करते है कि हिदी सस्करणके इस कार्यमे भारत सरकारके शिक्षा मत्रालयसे भी हमे सहायता प्राप्त होगी।

इस ग्रथ श्रेणीमे हिन्दीमे अबतक तीन ग्रथ——ब्रह्माण्ड दर्शन, पृथ्वी दर्शन और स्वास्थ्य दर्शन प्रगट हो चुके है। यह चौथा ग्रथ 'रसायन दर्शन' प्रगट हो रहा है।

गुजरातके अनेक श्रेष्ठ चितको व लेखकोने इस योजनाके सम्पादक-मण्डलके सदस्यो और परामर्श-दाताओके रूपमे अपनी सेवाएँ अर्पितकर तथा अनेक प्राध्यापको, अध्येताओ और विद्वानोने लेखनका दायित्व स्वीकार कर हमारी योजनाओको मूर्तरूप दिया है, तदर्थ हम उनके ऋणी है।

ज्ञान-गगोत्री श्रेणीकी हिन्दी आवृत्तिको हिन्दी जगतके समक्ष लानेका श्रेय दिल्लीकी राधाकृष्ण प्रकाशन सस्थाके अध्यक्ष श्री ओप्रकाश जीको है। उन्होने इस ग्रथ-मालाके प्रमुख वितरक होनेकी स्वीकृति देकर हमारी योजनाको बल प्रदान किया है।

हमारी युनिवर्सिटीकी सिण्डिकेटके सदस्यो, अन्य अध्यापको और प्रशासकीय कर्मचारियोने 'ज्ञान-गगोत्री'के इस कार्यमे उत्साहपूर्वक सहयोग प्रदान किया है। उस बातका तथा इस योजना-के सम्पादक श्री भोगीलाल गाधी और सह-सम्पादक श्री बसीधर गाधीकी नैष्ठिक यत्नशीलताका यहाँ उल्लेख करते हुए मुझे प्रसन्नता होती है।

भारत सरकारके शिक्षा मत्रालय द्वारा निर्धारित पारिभाषिक पदावलीका प्रयोग इस ग्रन्थ-श्रेणीमे किया गया है।

——आर. एस. महेता
उपकुलपति
सरदार पटेल युनिवर्सिटी-वल्लभविद्यानगर

वल्लभविद्यानगर
१५-१२-७१

सत्कार

सरदार पटेल युनिवर्सिटीने शिक्षा-विस्तारका जो भगीरथ कार्य-भार अपने कधोपर उठाया है, उसका प्रारभ विज्ञान शाखाके ग्रथोसे हुआ है यह निश्चय ही स्वागतार्ह है। पूर्वके तीन ग्रथोका सभी दिशाओसे अच्छा स्वागत हुआ है, यह जानकर मुझे वडी प्रसन्नता हुई है। यह चौथा ग्रथ 'रसायन दर्शन' भी अपनी विशेपता सिद्ध करेगा, ऐसा मुझे पूर्ण विश्वास है।

आधुनिक युगमे रसायन विद्याका महत्त्व असाधारण है। औद्योगिक व चिकित्सा क्षेत्रके अतिरिक्त आधुनिक भौतिक आवश्यकताओके साथ रसायन विज्ञान आश्चर्य उत्पन्न करे उस सीमा तक ओतप्रोत हो गया है। इस ग्रथके प्रारभमे भारतीय विज्ञानके आदि युगका परिचय देनेवाला अध्याय है, और अतमे वीसवी शतीकी क्षिप्र गति व विकासका परिचय देनेवाला अध्याय है। इन दो छोरोके अति महत्त्वपूर्ण अध्यायोके वीच रसायन विज्ञानके विकासके अनेक सोपान (काफी चित्रोके साथ) तथा मूलभूत सिद्धान्त (आवश्यक तथ्योंके साथ) सुदर रीतिसे निरूपित कर दिये गये है, यह इस ग्रथकी विशेपता है। इतना ही नही वल्कि रसायन विज्ञान जैसे कठिन विपयको उसके निष्णात लेखकोने ओर सुधी सपादकोने विद्यार्थियो तथा नागरिकोके लिए सुलभ व रोचक स्वरूपमे प्रस्तुतकर इस ग्रथको वहुत उपयोगी वना दिया है।

आजकी हमारी पीढीके वौद्धिक-साम्कारिक विकासका विचार करते समय मुझे ऐसा लगता है कि 'ज्ञान गगोत्री'की पूरी योजना एक गौरवपूर्ण ज्ञानयज्ञके समान है।

मैं 'रसायन दर्शन' ग्रथका मानद सत्कार करता हूँ।

—डा० चतुरभाई एस० पटेल
भूतपूर्व उपकुलपति, महाराजा सयाजीराव युनिवर्सिटी, वडोदा

सम्पादकीय

ज्ञान-गगोत्री श्रेणीका यह चतुर्थ ग्रथ प्रगट हो रहा है।

यह एक प्रकारसे तकनीकी विपयका ग्रथ है। उसका अध्ययन वैज्ञानिक ज्ञानकी अपेक्षा रखता है। किन्तु आधुनिक युगके औद्योगिक विकासमे इस विद्याका अपूर्व व्यावहारिक प्रदाय (योगदान) रहा है। अत इस विज्ञानसे अपरिचित गिक्षित नागरिकोका इस विषयमे प्रवेग करानेके उद्देग्यसे इस ग्रथमे महत्त्वपूर्ण मूलभूत सूत्रोका परिचय दे कर, उत्तरोत्तर विकसमान इस क्षेत्रके इतिहास, उसके व्यावहारिक प्रयोग व उसकी उपलब्धियाँ प्रस्तुत की गई है, भविष्य-की सभावनाओकी ओर अगुलिनिर्देश भी किया गया है। इस विद्याके क्षेत्रमे आदियुगमे भारतका आरभ हमने भारतीय रसायन विद्यासे करना उचित समझा है। यहाँ एक स्पप्टता कर लेना उचित है 'कृषि विज्ञान' पर एक स्वतत्र ग्रथ तैयार किया जा रहा है अत हमने इस ग्रथमे 'कृपि क्षेत्रमे रसायन विज्ञान' विषयका समावेश करना उचित नही समझा।

इस ग्रथके सभी लेखक रसायन विज्ञानके क्षेत्रके प्रतिष्ठाप्राप्त, तद्विद लेखक है। उनके ज्ञान और सरल गैलीका लाभ इस ग्रथके लिए उपकारक सिद्ध हुआ है। इस क्षेत्रके मूर्धन्य व आदरणीय विद्वान् आचार्य श्री नरसिह भाई मू० गाहने इस ग्रथकी सारी सामग्रीका आदिसे अततक अवलोकन किया है तथा उनके निर्देश हमे बराबर मार्गदर्गन देते रहे है, एतदर्थ हम उनके विगेप आभारी है। इस ग्रथके लेखक डा० सुरेग सेठनाने, हृदय रोगके असरमेसे मुक्त होनेके बाद, अपने सिर पर अखिल भारतीय विज्ञान परिपद्के रसायन विभागकी विभागीय अध्यक्षताका भारी उत्तरदायित्व होने पर भी, इस ग्रथके सम्बन्धमे स्वीकृत जिम्मे-दारियाँ पूर्ण करनेमे जो उत्सुकता (तत्परता) दिखाई है, वह सचमुच उल्लेखनीय है।

इस ग्रथके भारतीय रसायन विज्ञान वाले अध्यायमे जैन तत्त्वज्ञान (दर्गन)के सम्बन्धमे कुछ स्थापनाएँ है। इन स्थापनाओका पुनरीक्षण करनेमे जैन दर्गनके पण्डित व इतिहासविद् एव इस योजनाके एक परामर्गक श्री रसिकलाल छो० परीखने जो ममतापूर्ण सहकार प्रदान किया है, वह अपूर्व है।

इस ग्रथको इस विपयके विद्वान् डा० चतुरभाई एस० पटेल (भूतपूर्व उपकुलपति म० स० यूनिर्सिटी, बडोदा)की ओरसे जो सत्कार (स्वागत) प्राप्त हुआ है, वह विगेप आनदप्रद बात है।

पूर्वके ग्रथोकी तरह यह ग्रथ भी विद्यार्थियो व गिक्षित नागरिकोके लिए एक महत्त्वपूर्ण विपयमे प्रवेश करानेमे उपयोगी सिद्ध होगा, ऐसी आगाके साथ हम इसे प्रस्तुत कर रहे है।

अनुक्रम

खण्ड : १

भारतीय रसायन शास्त्र	डा० न० मू० शाह	१	१
चीनी-अरबी कीमियागरी	बंसीधर गांधी	२	१२
यूरोपमे रसायन विज्ञानका विकास	डा० सुरेश सेठना	३	२५
मूलतत्त्वोका वर्गीकरण और आवर्त-सारणी	डा० सुरेश सेठना	४	४७

खण्ड : २

धातु-रसायन	डा० न० मू० शाह	५	५५
विस्फोटक पदार्थ	डा० न० मू० शाह	६	९९
रत्न-विज्ञान	डा० न० मू० शाह	७	११३

खण्ड : ३

कार्बनिक रसायनकी भूमिका	पद्मकान्त शाह	८	११९
स्निग्ध द्रव्य	पद्मकान्त शाह	९	१२६
पेट्रोलियम	पद्मकान्त शाह	१०	१३५

खण्ड : ४

रबर	पद्मकान्त शाह	११	१५३
प्लास्टिक	पद्मकान्त शाह	१२	१६४
संश्लिष्ट वस्त्र-रेशे	पद्मकान्त शाह	१३	१७९

खण्ड ५

रंग और वर्णक	डा० भास्कर माकड	१४	१८७
संश्लिष्ट औषधियाँ	डा० भास्कर माकड	१५	२०३

खण्ड : ६

अधात्विक मूलतत्त्व	बंसीधर गांधी	१६	२३१
रसायन-उत्पादक उद्योग	डा० न० मू० शाह	१७	२४६

खण्ड : ७

अधुनातन प्रगति और नये क्षितिज	डा० सुरेश सेठना	१८	२५३
	पारिभाषिक शब्दावली		२६९

खंड : १

महर्षि आचार्यश्री
डॉ० प्रफुल्लचंद्र राय
जन्म २-८-१८६१
अवसान १६-६-१९४४

"आप प्राचीन भारतके कोई महर्षि, गुरु है जो पुनर्जन्म लेकर आधुनिक भारतके ज्ञान-भाण्डार पर प्रकाश डालकर हमे प्रेरणाका पीयूष-पान करानेको पधारे है।

जब वर्तमानकालकी बुद्धिमत्ता द्वारा प्राप्त की हुई सिद्धियोका इतिहास लिखा जायगा, तब रसायन-विद्याके आद्य-पिता, प्रचारक और अग्रदूतकी तरह आपका नाम स्वर्णाक्षरोमे लिखा जायगा।

भारतीय रसायन-विद्याका इतिहास लिखकर, आपने भारतकी सिद्धियोपर एक नवीन ही प्रकरण खोला है, और विस्मृत हो गए भूतकाल तक सेतुका निर्माण करके, वर्तमानकालके युवक शोधकर्त्ताओको किन्ही नागार्जुन तथा चरककी आत्मासे हाथ मिलानेका अवसर ला दिया है।

रसायन-विद्याके आपके शास्त्रीय ज्ञानने आपको अपने देशके कच्चे धनका व्यावहारिक उपयोग करनेके लिए प्रेरित किया और एक कौडी भी खर्च किये बिना विज्ञान एव उसकी आनुषगिक सस्था क्या-क्या कर सकती है, इसका जीवत प्रतीक आपके द्वारा सस्थापित बगाल केमिकल एण्ड फार्मास्युटिकल वर्क्स बना रहेगा।

जीवनकी सध्यामे जब बहुजन समाज शाति और विश्रामका यत्न कर रहा है, तब एक पीढी पहले आपकी जलाई हुई विज्ञानकी ज्योति-शिखाके सतत प्रज्ज्वलित रखनेके हेतु आप उसकी धुरीको वहन करते रहे है।"

[प्रेसिडेन्सी कालेज, कलकत्तासे निवृत्त होनेपर जब युनिवर्सिटी कालेजमे सम्बद्ध हुए, तब उनके शिष्यो द्वारा दिये गए अभिनन्दन-पत्रमे उद्धृत]

१ : भारतीय रसायन-शास्त्र

यह बताना सम्भव नही है कि रसायन-शास्त्रका प्रारम्भ कबसे हुआ। अनेक देशोमे प्राप्त पुरातात्त्विक अवशेषोसे पता चलता है कि ई० पू० ३५०० वर्षसे भी पहले कतिपय रासायनिक प्रक्रियाएँ प्रचलित थी। शराब, सिरका, धातु-कर्म, वानस्पतिक तथा प्राणिज रग, खनिज रग, पालिश किये हुए मिट्टीके वरतन आदिका उपयोग वहुत पुराना है। लेकिन इस प्रकारकी वस्तुओमे निहित रासायनिक सिद्धान्तो एव रासायनिक क्रियाओकी जानकारी हमारे पूर्वजोको नही थी। पाषाणकालीन अवशेषो (वस्तुओ)मे सोनेके गहने भी मिले है। रसायनके क्षेत्रमे भारत, चीन और मिस्रने उल्लेखनीय प्रगति की थी। प्राचीनकालमे इस विद्याके जानकार जादूगर अथवा कीमियागर कहे जाते थे। विज्ञानके रूपमे रसायन-शास्त्रकी प्रगति पिछली दो शताब्दियोमे हुई है। अब क्रमश भारत, चीन, अरबदेश और यूरोपमे यह प्रगति किस प्रकार हुई, उसका विहगावलोकन कर लिया जाए।

अन्य देशोकी तरह प्राचीन भारतमे भी रसायन-शास्त्रका उद्भव जीवनकी आवश्यकताओकी सन्तुष्टिके लिए व्यावहारिक कलाओके विकासके परिणामस्वरूप हुआ। इसके अतिरिक्त द्रव्यकी रचना और उसके स्वरूपको समझनेकी दिशामे भी विचारोका विकास हुआ। आत्म-परिरक्षण एव नया ज्ञान प्राप्त करनेकी उत्कण्ठाने भी रसायन-शास्त्रको जन्म दिया।

भारतीय रसायन-शास्त्रके इतिहासको नीचे लिखे छह कालखण्डोमे विभाजित किया जा सकता है

१ प्रागैतिहासिक काल (ई० पू० ४०००से १५०० तक)
२ आयुर्वेदिक काल (वैदिक युग अथवा प्राक्-बुद्धकाल—लगभग ई० पू० ६००से ई० ८०० तक)
३ सक्रान्ति काल (ई० ८००से ११०० तक)
४ तात्रिक युग (ई० ८००से १३०० तक)
५ औषधीय-रसायन (Iatro-chemical) युग—रसायनका औषधियोके लिए उपयोग करनेका युग (ई० १३०० से १५०० तक)
६ अँगरेजोके आगमनके बादका युग (लगभग १८०० ई०)—उस समय कला-कौशल ओर उद्योग-धन्धोमे होनेवाला रसायनका उपयोग।

बलूचिस्तान, सिन्ध, पजाव और गुजरातमे प्राप्त पुरातात्त्विक अवशेषोमे यह पता चलता

है कि प्रागैतिहासिक कालके भारतमे रसायनके जानकार थे। सिन्धके मोहेन-जो-दडो, पजावके हडप्पा और गुजरातके लोथलमे मिले पुरातात्त्विक अवशेप यह प्रमाणित करते है कि प्राक्-आर्य-सस्कृति इन स्थानोमे फैली हुई थी। यह सस्कृति मिस्रकी नीलनदीकी घाटी और मेसोपोटामिया (इराक)की सुमेरियन सस्कृतिसे सम्बद्ध या उसके समकक्ष थी।

विशेपज्ञोके मतानुसार हडप्पा सस्कृति ई० पू० २५००से १८०० तक सिन्धु नदी और उसकी सहायक पाँच नदियोके प्रदेशमे फली-फूली। इसीलिये उसका नामोल्लेख आदि-कास्ययुगकी सिन्धुघाटी-सस्कृतिके रूपमे किया जाता है।

उस प्रागैतिहासिक कालके लोग मिट्टीके वरतन वनानेकी कलासे ही परिचित नही थे, दो या अधिक रगोसे रगनेकी कला भी जानते थे। इसका यह अर्थ हुआ कि उन्हे मिट्टीके वरतन पकानेवाली भट्ठियाँ वनानेकी विधि भी मालूम थी। ताम्र-खनिजसे ताँवा निकालनेकी कला, विभिन्न प्रकारकी आकृतियाँ वनानेके लिए उसे हथौडेसे पीटना, धातुको काटना और उसकी चादरे (पत्रे) वनाना तथा काँसेकी ढलाई करना भी वे जानते थे। इस कामके लिए ७००°–८००° से० तापकी आवश्यकता होती है, यह अनुभव सिद्ध ज्ञान भी उन्होने अर्जित कर लिया था।

ई० पू० १५००के आसपास आर्योका आगमन हुआ। तवतक यह सस्कृति अपने विकसित रूपमे विद्यमान थी। आर्य आरम्भमे खेतिहर थे। लेकिन धीरे-धीरे उन्होने विज्ञान, साहित्य, कला, दर्शन और धर्म आदि क्षेत्रोमे प्रगति कर आर्य-सस्कृतिका निर्माण किया। इस सस्कृतिके आरम्भ-कालसे रसायन-विज्ञान तरक्की करने लगा। देशमे अनेक राजनैतिक एव सामाजिक परिवर्तनोके वावजूद रसायन-विज्ञानकी प्रगति अनेक वर्षो तक जारी रही। लेकिन अन्तमे इस सचाईको मानना होगा कि मध्ययुगके आखिरी दिनोमे इसके विकासमे क्रमिक रुकावट आने लगी।

ऋग्वेदके देवता मूलतत्त्वो एव अन्य नैसर्गिक घटनाओके विशिष्ट प्रतीक है, जैसे कि अग्निदेव, वायुदेव, सूर्यदेव आदि। औपधीय वनस्पतियोको भी देवता माना जाता था, उदाहरणार्थ सोमवल्ली, इसका देवता सोमदेव रोगियोको रोग-मुक्त करता है। हिन्दू कीमियागरीका उपाकाल सोमरससे आरम्भ होता है। अथर्ववेदमे डाकिनी, मारण-उच्चाटन एव जादू-टोनेका उल्लेख मिलता है। अथर्ववेदको अन्य तीन वेदोके समान पवित्र नही माना जाता था, क्योकि उसके कुछ सूक्तोमे स्वार्थ एव दुष्कर्मोकी सिद्धिके लिए आसुरी शक्तियोका आह्वान किया गया है। अथर्ववेदमे रोगोके निवारण एव प्रेत-वाधा दूर करनेके लिए जो सूक्त दिये गए है उन्हे 'भैपज्यानि' कहा जाता है। इसके विपरीत दीर्घायु और स्वास्थ्य-प्राप्ति करानेवाले सूक्त 'आयुष्याणि' कहे गए है। रसायन-विद्याका उद्गम इन दोनो प्रकारके सूक्तोसे हुआ होगा।

अथर्ववेदके समय स्वर्ण और सीसेके सम्बन्धमे जो रासायनिक विचार एकत्रित किये गए, वे दृष्टव्य है.

'रसरत्नसमुच्चय'मे पाँच प्रकारके स्वर्णका उल्लेख है। स्वर्णको जीवनका सत्व माना गया है। सीसेको जादूका प्रभाव दूर करनेवाला कहा गया है।

वेदोके उत्तरकालमे विकसित दर्शनकी पद्धतियो और उपनिपदोके सिद्धान्तोकी इसमे प्रवलता थी। विश्वरचना और विज्ञानकी रीतियोसे सम्वन्धित भौतिक और रासायनिक सिद्धान्तोका

इस युगसे सम्बन्ध है। इन सिद्धान्तोका विगतवार ब्यौरा बी० एन० सीलने अपनी पुस्तक 'पाजिटिव सायन्सेज आफ एन्श्यण्ट हिन्दूज'मे दिया है। द्रव्यकी रचना और उसमे होने वाले परिवर्तनोका सम्बन्ध मुख्यत रसायन विज्ञानके साथ होनेसे उन सिद्धान्तोमेसे कुछेककी विशेषताओका यहाँ उल्लेख करना उपयुक्त होगा।

सबसे पहले यह स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि ये सिद्धान्त केवल काल्पनिक थे। इन्हे प्रमाणित करनेके लिए प्रयोगोका आधार शून्यवत् था। ये सूक्ष्म कोटिकी विचार-परम्पराका परिणाम थे। विश्वोत्पत्तिके सम्बन्धमे दो सिद्धान्त उल्लेखनीय है ई० पू० ५००के आसपास छान्दोग्य उपनिषद और साख्य-विचारधारामे इनका विवेचन किया गया है। पतजलि द्वारा 'योगशास्त्र'मे प्रतिपादित विश्वोत्पत्तिका साख्य-सिद्धान्त वास्तवमे वैज्ञानिक तर्क पद्धतिके सभी लक्षणोसे युक्त है। वह शक्ति-सरक्षण, परिवर्तन और वितरणके सिद्धान्तो पर तो आधारित है ही, उसमे देश और कालका विचार भी किया गया है। ऋग्वेदके कुछ सूक्तोमे, छान्दोग्य आदि उपनिषदोमे और पुराणोमे विश्वोत्पत्तिका जो निरूपण किया गया है, उसमे एक कल्पना इस प्रकार है

पहले पानी था। उसमेसे हिरण्यगर्भ नामक एक सोनेका अण्डा ऊपर आया। परिपक्व होनेके बाद एक खास समय पर उसके दो टुकडे हुए और उन टुकडोसे स्वर्ग और पृथ्वीकी सृष्टि हुई। यह बहुत प्राथमिक विचार है, लेकिन 'विकासमान विश्व'के विचार पर आधारित विकासवादके आधुनिक सिद्धान्तसे बहुत-कुछ मिलता-जुलता है। ब्रह्माण्ड शब्दमे भी 'ब्रह्म' और 'अड' दो शब्द है। ब्रह्मका अर्थ है विकसित होता या वृद्धि प्राप्त करता हुआ तत्त्व और अडका मतलब है अडा। यह विश्वोत्पत्तिकी प्रक्रियाका सूचक है।

विपरिणमन अथवा परिणमन या परिणामके सिद्धान्तका ज्ञान भी प्राचीनकालके हिन्दुओको था। यास्कके निरुक्तमे, जिसका रचनाकाल ई० पू० आठवीसे छठवी शताब्दीके बीच माना जाता है, जिन छह भावोका वर्णन किया गया है उनमे परिणामका भी समावेश हुआ है। इसकी व्याख्या यो की गई है (द्रव्यके) स्वभाव (या प्रकृत अवस्था, रूप, गुण आदि)का विकार (जिससे वह द्रव्य कुछ और ही हो जाए) विपरिणमन कहलाता है। यह सिद्धान्त आगे चलकर साख्यवादके प्रकृति दर्शनमे विकसित हुआ और जैन दर्शनमे जड और चेतन तत्त्वोकी व्याख्याके रूपमे भी विकसित हुआ।

साख्यदर्शनके प्रसिद्ध प्रणेता कपिलने द्रव्यके अन्तिम तत्त्वोके बारेमे अपने विचारोको इस तरह निरूपित किया प्रकृतिमेसे महत् (बुद्धि), उसमेसे अहकार (विशिष्टीकरण individuation) और उसमेसे सोलह तत्त्व विकसित हुए। ये षोडशक कहलाते है। पाँच तन्मात्रा है—शब्द तन्मात्र, स्पर्श तन्मात्र, रूप तन्मात्र, रस तन्मात्र और गन्ध तन्मात्र। इनसे पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, पाँच कर्मेन्द्रियाँ और ज्ञानक्रिया उभयात्मकमे पाँच तन्मात्रासे पाँच महाभूतोकी उत्पत्ति हुई, जैसे कि शब्द तन्मात्रसे आकाश, स्पर्श तन्मात्रसे वायु, रूप तन्मात्रसे तेज, रस तन्मात्रसे पानी और गन्ध तन्मात्रसे पृथ्वी। इस प्रकार पाँच परमाणुसे पाँच महाभूत उत्पन्न होते है। (ईश्वरकृष्ण, साख्यकारिका, २२, गौडपाद भाष्य)

हमारी पचेन्द्रियोका सम्बन्ध पच तन्मात्रासे है, और यह भी उल्लेखनीय है कि जिन पच

महाभूतोके सयोग (सयोजन) और विघटन (वियोजन) से यह विश्व प्रक्रिया चलती है, उनके मूलमे भी यही पच तन्मात्रा है। क्षिति, अप् और वायु रसायनके मूलतत्त्व माने गए हैं। क्षिति अर्थात् सव ठोस पदार्थ, अप् अर्थात् सव द्रव्य (तरल) पदार्थ और वायु अर्थात् तमाम गैसे।

साख्य-मतके अनुसार इन सभी स्थूल मूलतत्त्वोके परमाणु (अणु) 'तन्मात्रा' के वने होते है। अणुओमे 'तन्मात्रा'के समूहीकरणमे परिवर्तन होनेसे एक ही 'भूत' वर्गके गुण-धर्ममे अन्तर हो जाता है। यूनानी दार्शनिक एम्पीडोक्लिस (ई० पू० ४९०–४३०) के मूलतत्त्वके सिद्धान्तसे साख्यवाद काफी मिलता-जुलता है। वैशेषिक-दर्शनके रचयिता कणादके सिद्धान्तसे डेमोक्रिटस (ई० पू० ४७०–३६०)के सिद्धान्तमे वहुत समानता है। नैयायिक पद्धतिमे भी लगभग ऐसे ही विचार व्यक्त किये गए है।

जैनोका (लगभग ई० ४०) परमाणुवादका सिद्धान्त रासायनिक सयोजनके विपयमे काफी रोचक योगदान करता है। परमाणु सयोजनोके पृथक्करण ओर अणुकी रचनामे परमाणुओके आकर्पण या प्रत्याकर्पण (विकर्पण) की चर्चा भी वह करता है। जैन दर्शनोकी मान्यता है कि प्राथमिक पदार्थो (भूतो)के विविध वर्ग एक ही मूल परमाणुओके वने है। इसलिए रासायनिक सयोजनो एव अणुकी रचनामे एक ही प्रकारके अन्तर-परमाणु वल जुडे होते ह। जैन-मतानुसार परमाणुओ या अणुओके एक दूसरेके समीप आने मात्रसे रासायनिक सयोजन नही होता। सयोजनसे पहले परमाणुओ या अणुओमे अन्तर-गठन होना चाहिए। द्रव्य (भूत)को जैन दर्शनमे पुद्गल कहते है। उसके दो रूप है एक परमाणु (अणु) और दूसरा समूह (स्कन्ध)।

विरोधी गुण-धर्मवाले द्रव्यके रजकणोके ही वीच सयोजन सम्भव है। एक धन (+) होना चाहिए और दूसरा ऋण (–)। इस तरहके विरोधी या विपरीत गुणोके लिए खुरदुरा ओर चिकना, सूखा और स्निग्ध आदि उदाहरण दिये जा सकते है। एक-जैसे दो रजकणो—दोनो धन या दोनो ऋण—का, यदि उनके गुण एक समान हुए तो सयोजन नही हो सकता।

परमाणुके गुणो और सयोजनोके भौतिक गुणोके परिवर्तन इस सयोजन पर निर्भर करते है। जैनोका यह मत महान स्वीडिश रसायनाचार्य वर्जीलियस (ई० १७७९–१८४८) द्वारा प्रतिपादित रासायनिक सयोजनका द्वन्द्ववाद (dualistic hypothesis)से काफी मिलता है। इन दर्शनोके रचना-कालके सम्वन्धमे निश्चित और प्रामाणिक जानकारी प्राप्त नही हो सकी है। लेकिन मैक्समूलर, मैक्डोनल और अन्य विद्वानोके मतोके आधार पर यह कहा जा सकता है कि हिन्दू दर्शनकी छह पद्धतियाँ वुद्धके समय (ई० पू० पाँचवी शताब्दी)से पहले, लगभग ई० पू० १०० तक, जैन और वौद्धधर्मके विकास और विस्तारके साथ, निरूपित की जा चुकी होगी। साथ ही यह भी माना जाता है कि उपनिपदो एव ब्राह्मण ग्रन्थोके सिद्धान्तोसे भी वे सम्वन्धित है।

ईसाकी दूसरी-तीसरी शताब्दीमे, गुजरातमे, रसायनशास्त्रके ज्ञाताके रूपमे नागार्जुन और उनके गुरु पादलिप्तका नाम प्रसिद्ध है। यह नागार्जुन और वौद्ध कीमियागर नागार्जुन भिन्न व्यक्ति है। जैनोका तीर्थ शत्रुजय पालिताणाके समीप है। ऐसा माना जाता है कि पादलिप्तसे ही पालिताणा नाम पडा।
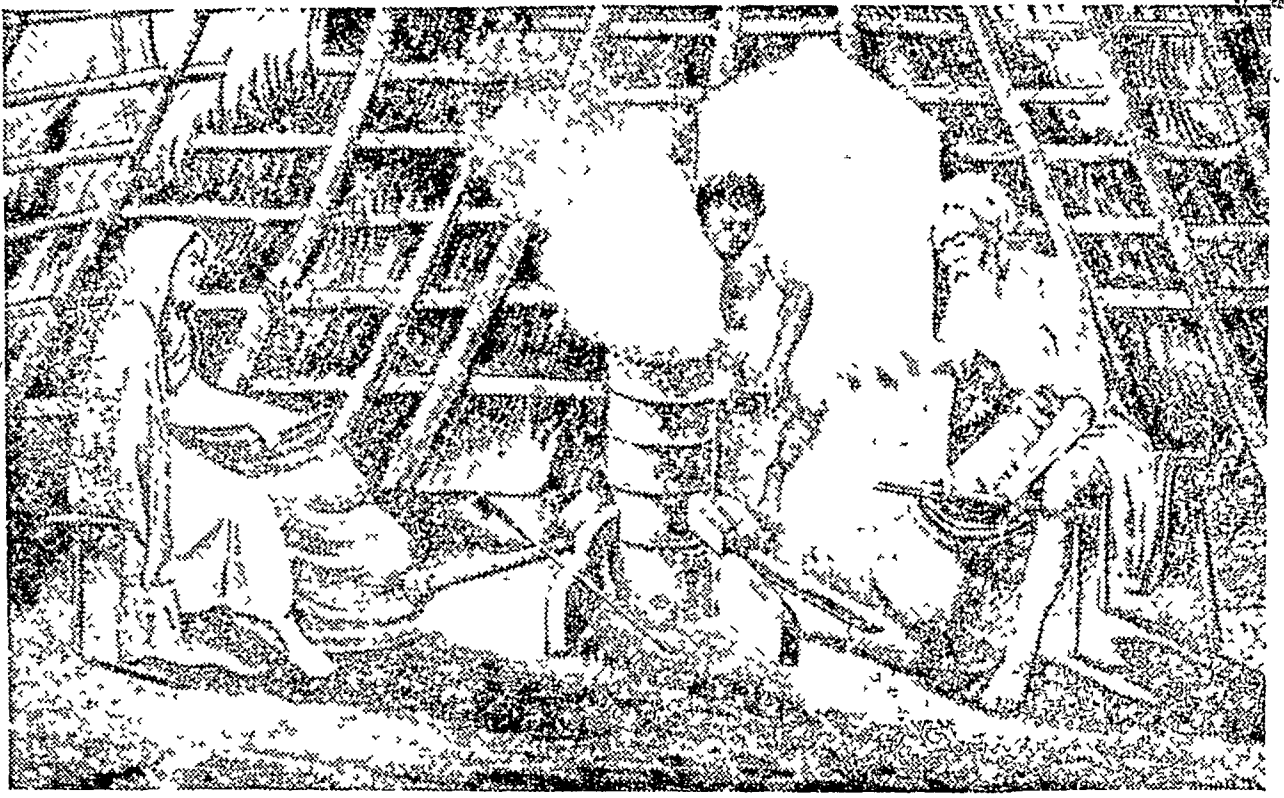
ताँबा पकाने (निष्कर्षण) की देहाती भट्ठी [स्थल जयपुरके पास खेतडी]
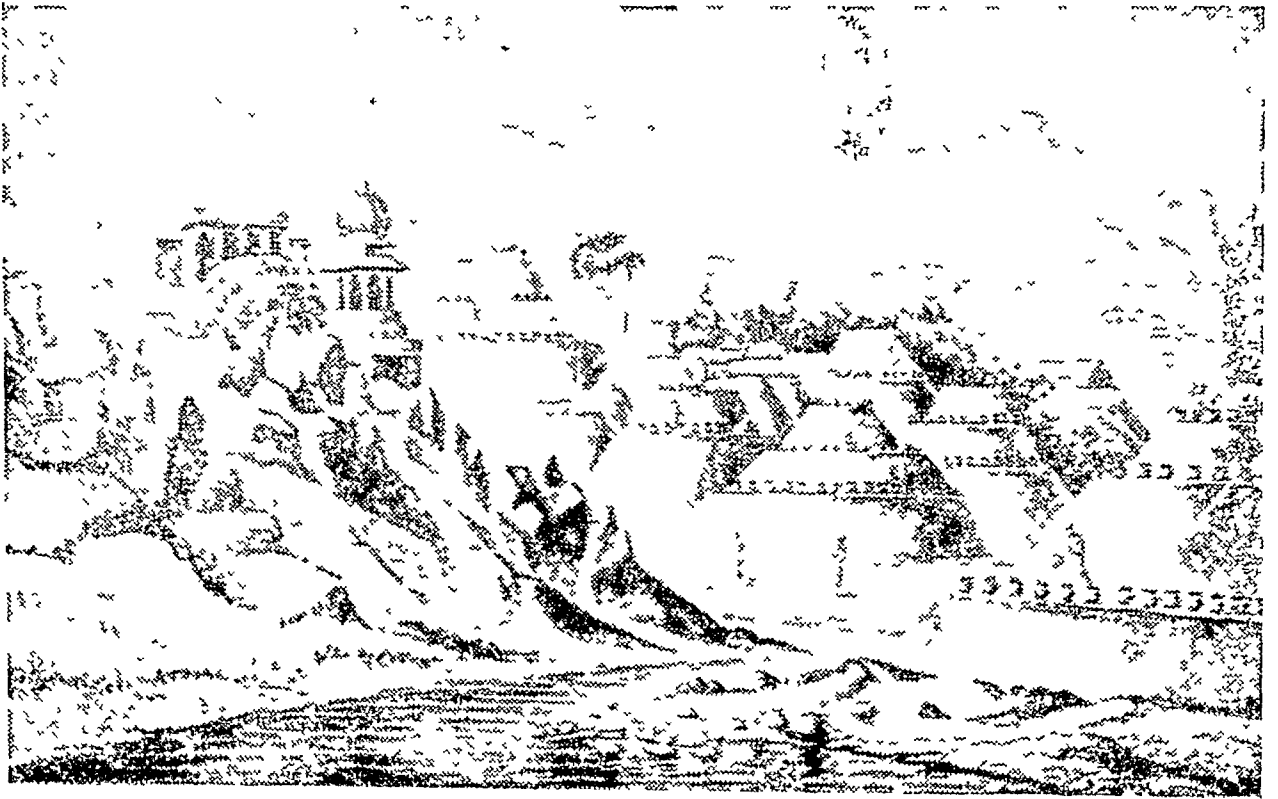
नीला थोथा, फिटकरी आदि रसायन पकाने (निष्कर्षण) का कारखाना [स्थल . खेतडी]
(सर पी० सी० रायकी 'हिस्ट्री आफ हिन्दू केमिस्ट्री'से)
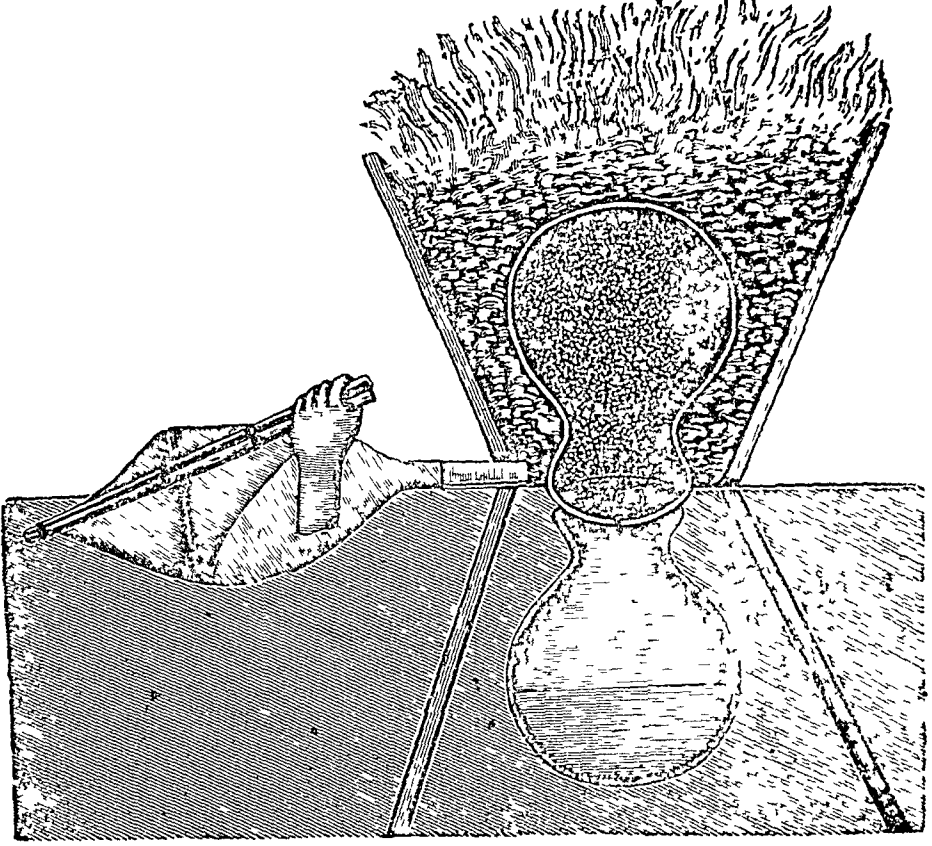
कोष्ठी यन्त्र

नीचेकी मटकीमे पानी भरकर उसके ऊपर चलनी ढाँके, चलनीमे कैलेमाइन (कच्चा जस्ता), लाख, गुड, सरसो आदिसे भरा कुल्हड रखे, ऊपर दूसरा औधा मटका ढक दे, फिर आँच देनेसे औषध तत्त्वका पृथक्करण होगा। दवाइयोमे उसका उपयोग किया जाए।
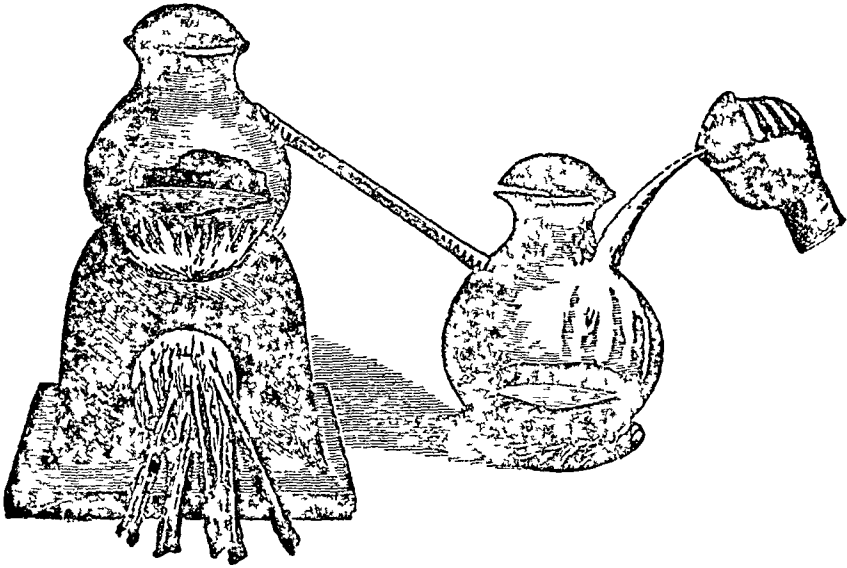
आसवनके लिए उपयोगमे लाया जानेवाला तिर्यक्पातन यन्त्र
(सर पी० सी० रायकी 'हिस्ट्री आफ हिन्दू केमिस्ट्री'से)

कहा जाता है कि जैनाचार्य नागार्जुनने 'योगरत्नावली', 'योगरत्नमाला', 'कक्षपुटी' आदि ग्रन्थोंकी रचना की थी। नागार्जुनकी रुचि वचपनसे ही रसायन-सिद्धिकी प्रक्रियाओंमे रही होगी, इसीलिए उसने वन, नदी और पहाडोको अपना निवासस्थान वनाया था। परिणामस्वरूप उसे स्वर्ण-रसकी प्राप्ति हुई। वादमे पादलिप्तसे उसका सम्पर्क हुआ, जो रसायन-शास्त्रमे उससे अधिक निपुण थे। कहा जाता है कि पादलिप्तको आकाशगमन (हवामे उडने)के रासायनिक प्रयोगका भी ज्ञान था। इस ज्ञानको प्राप्त करनेके ही लिए नागार्जुन उनका शिष्य वना था। ('प्रभाव चरित्र', प्रस्तावना, पृष्ठ ३०-३२, कल्याण विजयजी, प्रकाशक, आत्मानन्द जैन सभा, भावनगर, वि० स० १९८७)।

इससे यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि हिन्दू दर्शनोमे विवेचित द्रव्यरचना ओर द्रव्यके गुण विलकुल स्वतन्त्र रूपसे विकसित हुए, और जैसा कि कुछ पाश्चात्य विद्वानोका मत हे, यूनानियों-से ग्रहण नही किये गए। 'हिस्ट्री आफ सस्कृत लिटरेचर'मे प्रो० मैक्डोनल लिखते है "थेल्स, एम्पीडोक्लिस, एनाक्सागोरस, डेमोक्रिटस और अन्य यूनानी विद्वानोने प्राच्य दर्शनशास्त्रका ज्ञान प्राप्त करनेके लिए पूर्वी देशोकी यात्राएँ की थी, इसीलिए फारस देशके माध्यमसे यूनानियोके भारतीय विचारोसे प्रभावित होनेकी ऐतिहासिक सम्भावना है।" साख्यकारिकाकी प्रस्तावनामे प्रो० एच० एच० विल्सन भी उपर्युक्त अनुमानका समर्थन करते है।

आचार्य कोटिल्य (ई० पू० ३२१—२९६)के 'अर्थशास्त्र'मे, रसायन, धातुशोधन और औषधियोके वारेमे काफी जानकारी दी गई है। कौटिल्य या चाणक्य मोर्यसम्राट् चन्द्रगुप्तके प्रधाना-मात्य (प्रवान मत्री) थे। खनिजो, धातुओ और मिश्र धातुओसे सम्वन्धित समग्र जानकारी उनके द्वारा रचित 'अर्थशास्त्र'मे मिलती है। काच वनानेकी विधि और सोना तोलनेकी तुला (वैलेन्स)का वर्णन भी उसमे किया गया है। सोनेमे मिलावट करनेवालेको कडा दण्ड दिया जाता था। आसवनके द्वारा विविध प्रकारकी शरावे वनानेका ज्ञान काफी उन्नत था। कौटिल्यके समय कीमियागरीको अधिक महत्त्व नही दिया जाता था। उसके वाद आयुर्वेदमे रसायनकी विशेष प्रगति हुई। वैज्ञानिक परिभाषाओ सहित हिन्दू चिकित्सा-शास्त्रकी विधिवत रचना इसी कालमे हुई। इस युगके 'चरक सहिता' ओर 'सुश्रुत सहिता' नामक ग्रन्थ, जो क्रमश वैद्यक और शल्यक्रिया (सर्जरी)मे सम्वन्धित हे, काफी प्रसिद्ध हे। इन दोनोमे तत्कालीन रासायनिक जानकारी प्रचुर मात्रामे दी गई हे।

'चरक सहिता'मे छह धातुओ—सोना, चाँदी, तावा, सीसा, रांगा ओर लोहा तथा इनकी भस्मो (आक्साइड)का दवाइयोंके लिए उपयोग किये जानेका उल्लेख है। चरकने पाँच प्रकारके क्षारोका उल्लेख किया है सौवर्चल या शोरा (nitre), सैन्धव (rock-salt), विट (black-salt), आद्भिद (वनस्पति क्षार) और समुद्रक्षार (sea-salt)। त्वचाके रोगोमे ऊपर लगानेके लिए नीलाथोथा, हीराकसीस, गन्धक आदि वस्तुओके उपयोगकी वात 'चरक सहिता'मे ज्ञात होती है। क्षार वनाने और धातुओको फूंकनेकी विधियोका वर्णन भी उसमे किया गया है। सुश्रुतने सुहागेका उल्लेख अल्कली (क्षार)के अन्तर्गत किया है। उसने मुख्यत वानस्पतिक औषधियोका वर्णन किया है। संखिया (arsenic)के यौगिकोके विषैले होनेकी वात स्वीकार की गई है।

इसके बादके कालमे रगोके लिए राल, लाख, हल्दी, नील और मजीठका उपयोग किये जानेका उल्लेख मिलता है।

चीनी तुर्किस्तानमे कुत्याके निकटस्थ बौद्ध स्मारकसे ई० १८९०मे ब्रिटिश सैन्य अधिकारी लेफ्टिनेंट ए० बॉवरने एक प्राचीन पाडुलिपि प्राप्त की थी, जो 'बॉवर' पाडुलिपि'के नामसे प्रसिद्ध हे। इस पाडुलिपिमे जिन विधियोका वर्णन किया गया है उनमेसे कुछ अक्षरश चरक और सुश्रुतसे मिलती है। इस ग्रन्थका नाम 'नावनीतक' हे। चरक ओर सुश्रुतकी सहिताओके ही समान दूसरा महत्त्वपूर्ण वैद्यकग्रन्थ 'अष्टाग हृदय' है। इसमे पारेका उल्लेख है।

आयुर्वेदिक युगमे रसायन-सम्बन्धी ज्ञानकी क्या स्थिति थी, अब उसे देखा जाए। कौटिल्यके 'अर्थशास्त्र'मे उपलब्ध काच बनानेकी विधिका उल्लेख ऊपर किया जा चुका हे। सुश्रुतने काच और स्फटिकका अन्तर समझाया। प्लीनीने इस बातको स्वीकार किया हे कि भारतके काच अन्य देशोके बने काचसे श्रेष्ठ होते थे। महाभारतमे काचका उल्लेख कई स्थानोमे आया है। उत्तरप्रदेशके बस्ती जिलेमे खलीलाबादके निकट अनोमा नदीके किनारे ई० पू० पाँचवीं सदीका काच बनानेका एक पुराना कारखाना मिला है। यह प्रमाणित करता हे कि भारतीयोको काच बनानेकी कला मालूम थी। तक्षशिलाकी खुदाईमे काचकी चूडियाँ ओर मनके (गोलियाँ) मिले हे।

ई० पू० ५००से १०० तककी बनी मिट्टीकी बहुत-सी चीजे मिली हे, जिनपर पालिश की हुई है।

अब धातुकोको लिया जाए। ताँबा ओर उसकी मिश्र धातुओ, काँसा एव पीतलकी बनी अनेक वस्तुओके अवशेष वहाँसे मिले है। दिल्लीमे कुतुबमीनारके पास जो लोहस्तम्भ है, उसपर अकित लेखसे पता चलता है कि वह ई० ४००मे बनाया गया होगा। लोहेकी ओर भी वस्तुएँ मिली है। उन चीजोको देखनेसे पता चलता है कि प्राचीन भारतमे गढनेके लिए जो लोहा प्रयुक्त हुआ वह पिटवाँ लोहा (wrought iron) है, क्योकि शोधनके लिए ईंधनके रूपमे लकडीका उपयोग किया जाता था, जिसका ताप बहुत उच्च नही हो सकता था। इससे यह भी प्रकट होता है कि ढलवाँ लोहा (cast iron) बनानेके लिए आवश्यक उच्चताप भट्ठियोमे पैदा नही किया जा सकता था। इस्पात बनाया और उपयोग मे लाया जाता था। वराहमिहिर (ई० ५५०के लगभग)की रचनाओसे पता चलता है कि लोहे पर पानी (temper) चढानेकी विधिका ज्ञान भी था। अगरागो (सौन्दर्य साधन cosmetics) और चिनाईके लिए चूना और रेतीका गारा (मिश्रण) बनानेकी कलाएँ भी सुपरिचित थी। मणि-माणिक्यो और रत्नोमे सम्बन्धित ज्ञान भी खूब प्रचलित था।

हिन्दू औषधि-विज्ञानकी प्रगतिमे लगभग ई० ८००से सक्रान्ति आरम्भ हुई। अभी तक ओषधियोके लिए अधिकतर वनस्पतियोका ही उपयोग किया जाता था, औषधिके लिए खनिज, क्षार और रासायनिक पदार्थ अल्पमात्रामे उपलब्ध थे। वाग्भटके समयसे धातुके सपाकोका ओषधिके रूपमे अधिकाधिक उपयोग होने लगा। रसायन-शास्त्रकी प्रगतिके कारण प्रयोगशाला-मे बने धातु-यौगिकोका उपयोग बढा। इस जमानेकी दो उल्लेखनीय पुस्तके है वृन्दका 'सिद्ध-

योग' और चक्रपाणि दत्तका 'चक्रदत्त'। ये दोनो नागार्जुनका उल्लेख करते और चरक, सुश्रुत एव वाग्भटका अनुसरण करते है। वृन्द और चक्रपाणिकी रचनाओमे तान्त्रिक क्रियाओका प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित है। तात्रिककाल सक्रान्तिकालके ही साथ चलता रहा है। चक्रपाणिने अपने ग्रन्थमे वृन्दकी स्थापनाओको आधार बनाया। चरक और सुश्रुतके टीकाकार चक्रपाणिने अपने ग्रन्थकी रचना ई० १०५०मे की थी। ईसवी सदी आठवीमे खलीफाओके हुक्मसे वैद्यकग्रन्थ 'माधवनिदान'का अरबी भाषामे अनुवाद किया गया। इससे वृन्दका समय ई० ९७५से १०००के बीच निश्चित होता है। पारेके खनिज, गन्धक, ताम्रमाक्षिक (copper pyrites) आदिके उपयोग भी लिखे गए है। चक्रपाणिने अपने ग्रन्थमे रसपर्पटी (कज्जलि), ताबेका सल्फाइड, लोहभस्म, चादीकी भस्म आदि बनानेकी विधियाँ दी है।

अन्य देशोके मुकाबले, भारतमे कीमियागरीका विकास मुख्यत तात्रिक क्रियाओसे हुआ। अन्य देशोमे वैद्यक, निकृष्ट धातुओसे स्वर्ण बनाने और पारसमणि (Philosopher's stone) की खोजमे लगे हुए कीमियागरोके अथक परिश्रमके परिणामस्वरूप रसायनशास्त्रकी कुछ जानकारी मिली। उस कीमियागरीसे ही रसायन-विज्ञानकी प्रगति हुई। स्वास्थ्य, धन-प्राप्ति, शक्ति और दीर्घायु वैद्यक एव कीमियागरीका अन्तिम उद्देश्य नही माना जाता, बल्कि ईश्वर साक्षात्कारके लिए उसे उपासनाका एक ढग कहा जाता है।

भारतमे कीमियागरीका विकास तात्रिककालमे विशेष रूपसे हुआ, लेकिन तात्रिक कालसे पहले भी यहाँ कीमियागरीका ज्ञान प्रचुर मात्रामे था। छटवी शताब्दीके 'वासवदत्ता' और 'दश-कुमारचरित'मे पारेके सपाको और निश्चेतकोके रूपमे योग चूर्ण, स्तम्भन चूर्ण आदि विनिर्मित पदार्थोका उल्लेख किया गया है।

जादू, नजरबन्दी, कीमियागरी और सम्बन्धित विषयोकी विवेचना करनेवाले तन्त्र दो प्रकारके है ब्राह्मण और बौद्ध। बुद्ध और शिवके भक्तो द्वारा रचित कीमियागरीसे सम्बन्धित पुष्कल साहित्य मिलता है। भारतीय कीमियागरोमे नागार्जुन सबसे प्रसिद्ध है (यह नागार्जुन बुद्धका अनुयायी था, इसके गुजरातके जैनाचार्य पादलिप्त सूरिके शिष्य् क्षत्रिय नागार्जुन होनेकी सम्भावना बहुत कम है)।

उपनिषद समाजके उच्चस्तरीय बौद्धिक वर्गको ही सुलभ थे। उपनिषदोके अनुसार निर्वाण या मोक्ष सदाचारके द्वारा अनेक पुनर्जन्मोके पश्चात ही प्राप्य है। तत्र इसके लिए सरल मार्ग सुझाते है। मुमुक्षुको अपने शरीरकी हिफाजत करते हुए काम करना चाहिए और शरीरकी हिफाजत पारा, औषधियो एव योगसे होती है, इसलिए तत्रो (तात्रिक ग्रन्थो)मे औषधियाँ बनानेकी विधियाँ भी दी गई है। और यह तो मानी हुई बात है कि औषधियाँ बनानेके लिए रसायनका ज्ञान आवश्यक था।

सभी तात्रिक ग्रन्थोमे पारेके लिए रस शब्द प्रयुक्त हुआ है। रसायन-शास्त्रका मूल अर्थ ही है पारेके सपाको और उद्योगका शास्त्र। उस समयके तात्रिक ग्रन्थोमे अनेक रासायनिक जानकारियाँ और कीमियागरीके सूत्रोका वृहद् भडार ही भरा हुआ है। प्रमुख कीमियागरो और उनके ग्रन्थोकी सूची नीचे दी जाती है .

मुख्य तांत्रिक ग्रन्थ

ग्रन्थकार	ग्रन्थका नाम
आनन्दानुभाव	रसदीपिका
भोजदेव	रसराजमृगाङ्क
चन्द्रसेन	रसचन्द्रोदय
चारपट	चारपटसिद्धान्त
चूडामणि मिश्र	रसकामधेनु
धनपति	दिव्य रसेन्द्रसार
गुरु दत्तसिद्ध	सर (रस ?) रत्नावली
गोरक्षनाथ	गोरक्षसंहिता
	रसेश्वर सिद्धान्त

इनके अतिरिक्त हरिहर, कपाली, केशवदेव, नान्दी, नरहरि, रामराज, श्रीनाथ, त्रिमल्ल भट्ट, वासुदेव, ककरी, मल्लरी, (सिद्ध) भास्कर, (सिद्ध) प्राणनाथ वैद्यराज आदि नामोका उल्लेख भी मिलता है।

तान्त्रिक युगमे प्रमुख रूपसे रस या पारेका उपयोग होता था, इसलिए उस युगमे रसायनके सम्बन्धमे प्रचुर जानकारी एकत्र हो गई थी। यह सारी जानकारी बादके युगमे—भारतीय रसायन-शास्त्रके औषधोपयोगी रसायन (आएट्रो-केमिकल) युगमे खूब काम आई।

अमृत या अमररसकी खोज तान्त्रिक युगकी विशेषता थी, आएट्रो-केमिकल युगमे इस विचित्र और 'हवाई' कल्पनाको असम्भव मानकर छोड दिया गया और व्यावहारिक बातोकी ओर अधिक ध्यान दिया जाने लगा। पारा, लोहा, ताँबा और अन्य धातुओके कई विनिर्मित पदार्थ (सपाक) चिकित्साके लिए उपयोगी मालूम हुए, और इसके परिणामस्वरूप रसायन-सम्बन्धी ज्ञानमे वृद्धि हुई।

चरक और सुश्रुतके सूत्रोके अनुसार बनाई हुई वानस्पतिक औषधियोके साथ सभी रासायनिक पदार्थ काममे लाये जाने लगे और आयुर्वेदकी प्राचीन पद्धतिमे इन्होने अपना स्थान बना लिया। धीरे-धीरे इनका महत्त्व इतना बढा कि वैद्यकमे रसादि (धातुओसे बनी) औषधियोको अचूक माना जाने लगा। इस युगका ग्रन्थ 'रसरत्न समुच्चय' विशेष रूपसे उल्लेखनीय है। औषधीय रसायनसे सम्बन्धित और भी कई ग्रन्थ मिलते है और सभीमे कमो-बेश एक ही तरहकी बाते लिखी हुई है। 'रसरत्न समुच्चय'मे रोगोके निवारणके लिए पारेसे विनिर्मित उपयोगी पदार्थो और खनिजोका विवरण है। भारतीय 'मेटेरिया 'मेडिका'मे खनिजोका वर्गीकरण रस, उपरस, रत्न और लौहमे किया गया है। इसका अर्थ सामान्यत पारा है। बुढापेको रोकने और आयुको बढानेवाली औषधियाँ रसायन कहलाती है। कालान्तरमे पारद और अन्य धातुओके औषधियोमे प्रयुक्त किये जानेके अर्थमे भी इस शब्दका उपयोग होने लगा।

अभ्रक (अबरक), वैक्रान्त (चुन्नी नामक मणि), माक्षिक (Pyrites), विमल (एक उपधातु), अद्रिज (शिलाजीत), सस्यक (नीला थोथा $CuSo_4, 5H_2O$), चपल (गन्धक युक्त खनिज bismith)

और रसक (खर्पर calamine)—ये आठ रस, और गन्धक, लाल-गेरू, हीराकसीस ($FeSO_4$, $7H_2O$), फिटकरी, हरताल (orpiment), मैनसिल (realgar), सुरमा (अजन, antimony) और ककुष्ठ (उशारे रेवन्द या रेवतसार)—ये आठ उपरस पारेकी क्रियाओमे उपयोगी है।

सोमदेवने अपने 'रसेन्द्र चूडामणि'मे पारिभाषिक शब्द दिये है। प्रयोगशाला कहाँ बनानी चाहिए, उसमे प्रयोग साधन (यन्त्र) कहाँ और किस तरहके रखे जाएँ, प्रयोग करनेवालेकी योग्यता क्या हो—ये सभी ब्यौरे 'रसरत्नसमुच्चय'मे दिये हुए है। 'रसप्रदीप'मे (लगभग १५३५ ई०) खनिज अम्ल बनानेकी विधियाँ बताई गई है। ये अम्ल धातुओको गलाते और शखको पिघालते है, इसलिए शखद्रावक कहलाए। 'रसकौमुदी'मे अफीमके उपयोगोके बारेमे लिखा गया है। सिफिलिस (फिरग रोग गर्मी)के लिए पारेके यौगिक केलोमेल ($HgCl$)का प्रयोग बताया गया है। इस समयके कुछ अन्य ग्रन्थोमे सालिनाथकी 'रसमजरी', 'रसरजन', 'गन्धककल्प' (तत्र), 'रसार्णव' (कीमियागरीके इसी नामके प्रामाणिक ग्रन्थसे भिन्न), 'रसरत्नाकर' (नित्यनाथके ग्रन्थके अतिरिक्त) आदि उल्लेखनीय है, यद्यपि इनमे कोई नई बात नही कही गई है। ऊपर जो कुछ बताया जा चुका है उन्ही क्रियाओका पुनरावर्तन हुआ है।

प्राचीन भारतमे उपयोगी कलाओ और विज्ञानके विकासका कार्य ऊँची जातियोके हाथमे था। यह बडे दु खकी बात है कि जाति-सस्थाका सगठन बहुत दृढ और कठोर होनेके बावजूद यह सारा ज्ञान लुप्त हो गया। 'कामसूत्र'मे (१५०० ई०) ६४ कलाओका उल्लेख है। आयुर्वेदमे दस कलाएँ थी। 'लोहविद्' और 'धातुविद्' शब्द सस्कृत साहित्यमे प्रचुरतासे मिलते है। इससे पता चलता है कि धातुशोधनके जानकारोका समाजमे ऊँचा स्थान था। रगनेकी कला भी खूब विकसित थी। वैदिक युगमे ऋषियोने अपनी जातिकी घडेबन्दी नही की थी, इसलिए सामान्य जन भी अपनी सुविधा और रुचिके अनुसार भिन्न-भिन्न पेशे अपना लेते थे।

बौद्ध धर्मकी अवनतिके बाद ब्राह्मणोने अपनी सर्वोपरिताका सिक्का बिठाया तो परिस्थिति बदली। जातिके बन्धन कठोर हुए। सुश्रुतके अनुसार शल्यक्रिया (सर्जरी) सीखनेवाले विद्यार्थीके लिए व्यवच्छेदन (शवच्छेदन dissection) आवश्यक है, परन्तु मनुने इसे चलने नही दिया। यह प्रतिपादित किया गया कि मुर्देका स्पर्श मात्र ब्राह्मणकी पवित्र देहको दूषित करनेवाला है। धन्धे वश-परम्परागत हो गए। बुद्धिजीवियोने कलामे सक्रिय भाग लेना बन्द कर दिया, परिणामस्वरूप जिज्ञासाकी भावना नष्ट हो गई और भारतमे प्रायोगिक विज्ञान समाप्त हो गया। बॉयल, डेकार्ट्स अथवा न्यूटनके जन्मके उपयुक्त परिस्थितियाँ भारतमे नही रह गई और विज्ञान-जगत्के नक्शेसे भारतका नाम मिट गया। इसके बाद तो यथार्थमे हमारे यहाँ कीमियागरी और रहस्यवाद (अगम्यवाद)की साधना गलत रास्ते पर जा पडी। परिणाम यह हुआ कि मध्ययुगके अन्तिम काल-खण्डमे विज्ञानका प्रवाह रुक गया और वह क्षीण होने लगा।

मध्ययुगीन यूरोपमे भी विज्ञानकी दशा हमसे अच्छी नही थी, लेकिन कोपर निकस, गैलिलियो, न्यूटन, बॉयल, लवाशिये और डॉल्टन आदिने उसे नया झुकाव दिया। उनके विचारोने विज्ञानको नया प्रोत्साहन दिया। लेकिन १९वी सदीके मध्य तक, भारतमे ब्रिटिश शासनके आगमन और स्थिर होने तक, इन विचारोका भारतमे प्रवेश न हो सका।

२ : चीनी-अरबी कीमियागरी

जोसेफ निडहाम नामक सुप्रसिद्ध विचारकने अपनी पुस्तक 'सायन्स एड सिविलिजेशन'मे जो अधिकृत जानकारी दी है उससे चीनी रसायन-शास्त्रके आरम्भ ओर विकास पर अच्छा प्रकाश पडता है। उनके द्वारा प्रदत्त जानकारियोके अनुसार चीनका आदि दर्शन ताओवाद प्रकृति-पर्यवेक्षण द्वारा ज्ञान सम्पादनके पक्षमे था, इसके परिणामस्वरूप और उस जमानेकी समझके अनुसार वहाँ विज्ञानका विकास हुआ। आजकी दृष्टिसे विचार करने पर वह हमे बौना लगेगा, लेकिन उस समयके लिहाजसे एक नई विद्या विकसित हो रही थी। उस विद्याको हम चीनकी अल्केमी-कीमियागरी कह सकते है।

ई० पू० दूसरी शताब्दीमे लिखी गई एक पुस्तक 'हु आई नान त्सु'के लेखक, हु आई नानके राजा ल्यू आन अपनी इस पुस्तकमे निम्न जानकारिया देते है --लकडीके दो टुकडोको घिसनेसे आग पैदा होती है, आगमे धातुको तपानेसे वह पिघल जाती है, पहिए गोल-गोल घूमते हे, कुरेदकर खोखली वनाई हुई चीजे पानी पर तैरती है---इस प्रकार प्रत्येक पदार्थका अपना विशिष्ट गुण होता है।

एक दूसरा चीनी लेखक जानकारी देता है कि तृण मणि (ambe1) सडी सरसोके छिलकोको आकर्षित नही करेगा, सीनावार---रससिन्दूर (HgS) निकृष्ट धातुसे क्रिया नही करेगा, ओर लोहचुम्बक निकृष्ट धातुओको (लोहेके अतिरिक्त) आकर्षित नही करेगा।

जादूको एक प्रकारकी करामात और आम लोगोके बूतेके बाहरकी बात समझा जाता था। ऐसी करामातोको लोगोकी नजरसे छिपाकर भी रखा जाता था। करामातोकी शोध-खोजमे लगे हुए जिन लोगोको जादूगर कहा जाता था, मूल रूपमे वे लोग अच्छे पर्यवेक्षक, निरीक्षक और प्रयोगकर्ता थे। उस कालकी कीमियागरीको एक प्रकारका प्रयोग क्षेत्र ही मानना चाहिए। परन्तु उन प्रयोगोके परिणामोकी व्याख्या पर उस समयके प्रचलित विचार और विश्वास हावी हो जाया करते थे, जिससे विज्ञानका विकास अवरुद्ध होने लगता था। परन्तु ऐसे विचारोका तो यूरोपमे भी पैरा सेल्सस (१६वी शताब्दी)के समय तक बोलबाला रहा। यूरोप ऐसे विचारोसे ठेठ उन्नीसवी सदीमे ही अपनेको मुक्त कर सका। इस दृष्टिसे देखा जाए तो चीनके उस समयके रसायन-सम्बन्धी ज्ञानको काफी विशद और व्यापक मानना होगा।

'बुक आफ चेजेज' नामक एक चीनी ग्रन्थ ई० पू० ८००मे लिखा गया था। मूल रूपसे तो वह ग्रन्थ केवल शुभ और अशुभ शकुनोका सग्रह था। परन्तु उसके बाद सदियो तक जो वैज्ञानिक पर्यवेक्षण होते रहे, उन्हे भी इस पुस्तकके सकेतोमे खोजने और समोनेका प्रयत्न हुआ। और इस प्रकार चीनकी विशिष्टताओके कारण शकुनोका ग्रन्थ विज्ञानका ग्रन्थ बन गया। मूल रचना तो वही रही, लेकिन

उसके नये अर्थ और नई टीकाएँ होती रही। ई० पू० तीसरी शताब्दीमे इस ग्रन्थका नया सस्करण तैयार किया गया। उसके बाद बारहवी सदी तक समय-समय पर जो वैज्ञानिक पर्यवेक्षण हुए, उन सबका समावेश इस ग्रन्थमे होता रहा। इसीलिए इस पुस्तकमे लिखी हुई बातोको समझाने और उनका सही-सही अर्थ लगानेमे बडी कठिनाई होती है। कुछ विद्वानोने बडे प्रयत्न और परिश्रमके बाद इस पुस्तकके सकेतोका अर्थ किया है। कुछ लोगोकी तो यह मान्यता है कि इस ग्रन्थमे पारा, सोना और गन्धककी क्रियाएँ भी दी हुई है।

ह्याग ती नामके बादशाहने ई० पू० २६५०मे लिखी अपनी पुस्तक 'निचिग'मे 'याग' और 'यीन' नामक तत्त्वोका विवेचन किया है। उसकी एक व्याख्या हम 'स्वास्थ्य दर्शन'मे पढ आए है। इन दो तत्त्वोकी पारस्परिक क्रियासे पानी, अग्नि, काष्ठ, धातु और मिट्टी उत्पन्न होती है। आकाशका पुरुष तत्त्व पृथ्वीके नारी तत्त्वको सम्पूर्णता प्रदान करता है। इन दोनो शक्तियोके पारस्परिक प्रभावसे लाखो पदार्थ अस्तित्वमे आते है। अस्तित्वमे आनेके साथ ही उनके गुण भी पैदा हो जाते है। पहले जल, फिर काष्ठ, फिर अग्नि, फिर मिट्टी, फिर धातु और तब पुन जल––इस प्रकारकी एक प्रक्रिया उत्तरोत्तर आगे बढती रहती है। यह व्याख्या 'पुरुष और प्रकृतिसे विश्वोत्पत्ति'के सिद्धान्तसे बहुत अशोमे मिलती-जुलती है।

चीनी दर्शन शास्त्रमे 'याग' और 'यीन', इन दोनो शक्तियोको माता और पिता, धन और ऋण, अग्नि और जल, आकाश और पृथ्वी आदिके द्वन्द्वोका प्रतीक माना जाता है। कीमियागर जब दो पदार्थोको कुठाली या घडियामे (मूषा Crucible) गलानेके लिए रखते है तो ऐसा मानते है कि उनमेसे एक पदार्थका पुरुष तत्त्व और दूसरे पदार्थका नारी तत्त्व सयोजित होकर नया पदार्थ बनता है। चीनी भाषामे इस घटनाको वहाँकी शब्दावलीमे 'मैथुन' जैसे शब्दके द्वारा अभिव्यक्त किया जाता है। एक और साकेतिक-कथाको लिया जाए

"एक पात्रमे किशोर विराजमान है और दूसरेमे सुन्दर कन्या। यदि कोई प्रथम पात्रके किशोरको दूसरे पात्रमे रख सके तो वे दोनो किशोर-किशोरी एक-दूसरेको देख सकते है और उनका सयुक्त रूप निर्मित हो सकता है।" सोने और पारेके सरस (एमलगम)––स्वर्ग-पारद-मिश्रणका वर्णन करनेके लिए इस प्रकारकी भाषाका उपयोग किया गया है।

"दोनो एक-दूसरे पर अधिकार जमाएँगे, एक-दूसरेको अकुशमे रखेगे, पारस्परिक सहयोग करेगे और परस्पर गुँथ (गठित) जाएँगे। इसके परिणामस्वरूप परिवर्तन होगा। कई बार किशोर और किशोरी पृथक् दिखाई देगे, कुछ क्षणोपरान्त वे उछलेगे, दौडेगे, कूदेगे और एक क्षण भी शान्त नही होगे। लेकिन वे पात्रसे बाहर नही निकल सकेगे। ठीक इसी समय आगको फूँकना पडेगा और तब जबर्दस्त परिवर्तन होकर सीनाबार––रससिन्दूर (HgS) तैयार हो जाएगा।"

इन सकेतो अथवा प्रतीकोके अर्थको जाने बिना चीनी रचनाओको समझ पाना मुश्किल ही है। उदाहरणके लिए दूसरी शताब्दीके कीमियागर वेई पो-यागकी एक पुस्तक 'गान युग छी'को ले। इस पुस्तकके अनुसार राजाका अर्थ बरतनका भीतरी भाग और मत्रीका अर्थ बाहरी भाग होता है। 'कुआली' पारेको कहते है और सीसे के लिए 'खान' शब्दका प्रयोग किया गया है। 'कुआ छियें' (Kua chhien) और 'खुन' (Khun) क्रमश नाप और कुठाली या घडियाके द्योतक है। पिताका

अर्थ है आरम्भ और माताका अन्त। पति-पत्नीका मिलन अथवा मैथुन दो पदार्थोंके बीच होनेवाली रासायनिक क्रियाको दिग्दर्शित करता है। अमावस्याका अर्थ ऊपर और प्रतिपदाका अर्थ नीचे है। 'कुआ' और उसके 'हशियाव'से परिवर्तन अथवा नया स्वरूप ग्रहण करनेका अभिप्राय निकलता है।

यह सारी जानकारी टूटी हुई अथवा पूरी रेखाओवाले तीन अथवा छह रेखाओके सकेतोमे ग्रथित की गई है। टूटी और पूरी रेखाओके क्रमके अनुसार एक-एक सकेतके कई-कई अर्थ होते हे। चीनी भाषामे इन रेखाओको 'कुआ' कहते है, लेकिन कीमियाकी परिभाषामे इनका अर्थ परिवर्तन होता है। इस तरह सामान्य भाषाके शब्दोको सकेतोमे लिखा जानेसे कीमियागरीसे सम्बन्धित साहित्यका अर्थ लगाना बहुत मुश्किल हो गया।

	1 kua	2	3	4a
1	☰	*Chhien*	乾	♂
2	☷	*Khun*	坤	♀
3	☳	*Chen*	震	♂
4	☵	*Khan*	坎	♂
5	☶	*Kên*	艮	♂
6	☴	*Sun*	巽	♀
7	☲	*Li*	離	♀
8	☱	*Tui*	兌	♀

चीनी ट्रायाग्राम

उत्तर-हन कालके एक सुपरिचित कीमियागर युफान (ई० १६४से २३३)ने और भी एक नई प्रणाली निकाली। उसने सूर्य, चन्द्र आदिको कीमियागरीके साथ सयुक्त कर दिया।

भट्ठीमे चीजोको डालने और तैयार पदार्थोको निकालनेके समय और अवधिकी चर्चा इस पुस्तकमे की गई है, साथ ही कतिपय रासायनिक उपकरणो अथवा साधनोका नाम भी सकेतोमे दिया गया है।

ई० सन् २७०से ५८०के मध्यकालमे चीनमे कीमियागरीका सोलहो आना विकास हो चुका था। ३२५ ई०मे को डुग चीनका राजा था। कागजका आविष्कार चीनमे ईसाकी दूसरी शताब्दीमे ही हो गया था। लेकिन यह कागज टिकाऊ नही था, इसलिए उस कालका अधिकाश साहित्य नष्ट हो गया। फिर भी बहुत-कुछ बचा लिया गया। उसमेसे कुछ उद्धरण यहाँ दिए जाते है

"चीनका सर्वश्रेष्ठ कीमियागरको हग चौथी शताब्दीमे हुआ। एक बार किसीने उससे कहा कि लु यान और गो ती-जैसे कारीगर भी पत्थरसे बढिया सुई नही बना सकते, ओ येह-जैसे लोग भी सीसे अथवा राँगेसे कुदालीका फल तक नही गढ सकते। यह सचमुच असम्भव है और उसे तो आसमान भी नही कर सकता।" परन्तु उसी पुस्तकमे यह उल्लेख भी मिलता हे कि पानी ओर अग्नि आकाशमे रहते है, फिर भी आरसी (छोटा काच)के द्वारा दोनोको जमीन पर लाया जा सकता है। सीसा सफेद चमकीली धातु होते हुए भी उससे लाल पदार्थ बनाया जा सकता हे और उस लाल पदार्थसे पुन सीसा वनाया जा सकता है। आगे यह भी लिखा है कि

अजगरकी चर्बी और जावसात (वनस्पति-विशेष)की चर्बीमे कोई अन्तर नही होता। मतलब यह कि वानस्पतिक और प्राणिक चर्बी दोनो एक-जैसी है (क्योकि दोनोसे साबुन बन सकता है, और इससे पता चलता है कि उस समय चीनमे सज्जी (पोटाश)से साबुन बनाया जाता था)।

ई० ३८९से ४०४के बीच एक राजाने कीमियागरको दवाइयो पर अनुसन्धान करनेकी सुविधा प्रदान की थी। पहाडो और जगलोसे लकडी लेनेकी और अन्य सुविधाओके अतिरिक्त जो दवाइयॉ बनाई जाती थी उनके गुण-दोषका पता लगानेके लिए कैदियोको उन्हे खिलानेकी सुविधा भी दी गई थी। उससे बहुतसे कैदियोके मर जानेका उल्लेख भी मिलता है।

दूसरे देशोकी तरह चीनमे भी कीमियागरीको—कीमियागरीकी क्रियाओको ग्रहोकी गतिके साथ सम्बद्ध करनेका प्रयत्न हुआ। अमुक समयमे किया हुआ काम—क्रिया—सफल होगा और बाकी समय किया गया प्रयत्न निष्फल होगा। कुछेक रासायनिक क्रियाओ और साधनो (उपकरणो)को भी उस युगमे विकसित किया गया।

ई० १०८६मे लिखी गई 'मेग चि पी थान' पुस्तकके लेखक शेन फुआका कहना है

"छियेँ शान नामक प्रान्तमे कडवे पानीका एक सोता है। उस पानीको तपानेसे वह पानी कडवी फिटकरी (नीला थोथा) बन जाता है। उस कडवी फिटकरीको लोहेके बरतनमे खूब तपाया जाए तो लोहेका वह बरतन तॉबेका हो जाता है।" कापर सल्फेट और लोहमे परस्पर क्रिया होनेसे कापर (तॉवा)का पृथक्करण होता है और हीरा कसीस अर्थात् लोह सल्फेट बनता है—इसी क्रियाका ऊपर वर्णन किया गया है। और यह कहनेके बदले कि लोहेके बरतन पर तॉबेका अवक्षेप होता है यो कहा गया है कि, लोहे का बरतन तॉबेका हो जाता है। फिर यह बात भी उसकी समझमे नही आई कि सोतेका पानी विलयन है और पानी उड जाता है (वाष्पीकरण)। इसलिए यह कहा गया कि पानीका कडवी फिटकरीमे रूपान्तर हो जाता है। अवक्षेपका इस तरहका उल्लेख उस समयके यूरोपीय साहित्यमे कही भी उपलब्ध नही होता।

सु वे नामक एक वैद्यक ग्रन्थमे बताया गया है कि आकाशमे पॉच तत्त्व होते है और पृथ्वीमे भी पॉच तत्त्व होते है। पृथ्वीके 'छी' तत्त्वसे मिलता-जुलता आकाशका 'भेज' तत्त्व है। पृथ्वी पत्थर और धातुको उत्पन्न करती है और 'भेज'से भी पत्थर और ताबा उत्पन्न होता है—यह ऊपर दिये गए सोतेके पानीसे तॉबा और फिटकरीका पत्थर बननेके उदाहरणकी ही तरह है।

एक और कीमियागरके लिखे अनुसार .

"मनुष्य प्रकृतिको जीत सकता है, सर्दियोमे बादलोको और गर्मियोमे बर्फको बरसा सकता है, भूत (प्रेत)को उर्दके दानेमे बन्द कर सकता है, पानीके प्यालेमे मगरमच्छको रख सकता है, चित्रमे बने द्वारको खोल सकता है और जड मूर्तिको बोलती हुई कर सकता है . अतिथि तो आते और जाते है, लेकिन सभीका सत्त्व—मूल पदार्थ बना रहता है, उसका नाश नही होता।" द्रव्यके अविनाशी होनेके नियमसे इसका साम्य है।

"कुछ गुफाओमे पानी टपकता रहता है और वह टपकता हुआ पानी स्तम्भमे परिवर्तित हो जाता है। वसन्त और शरदमे कुछ कुओका पानी पत्थर बन जाता है, मतलब यह कि पानी पत्थरमे

परिवर्तित हो जाता है। ये पत्थर हमेशा आर्द्रतावशोषी (hygroscopic) रहते है।" ये सभी उदाहरण उस समयकी मान्यताके अनुसार पानीका परिवर्तन होनेसे बने पदार्थोके है।
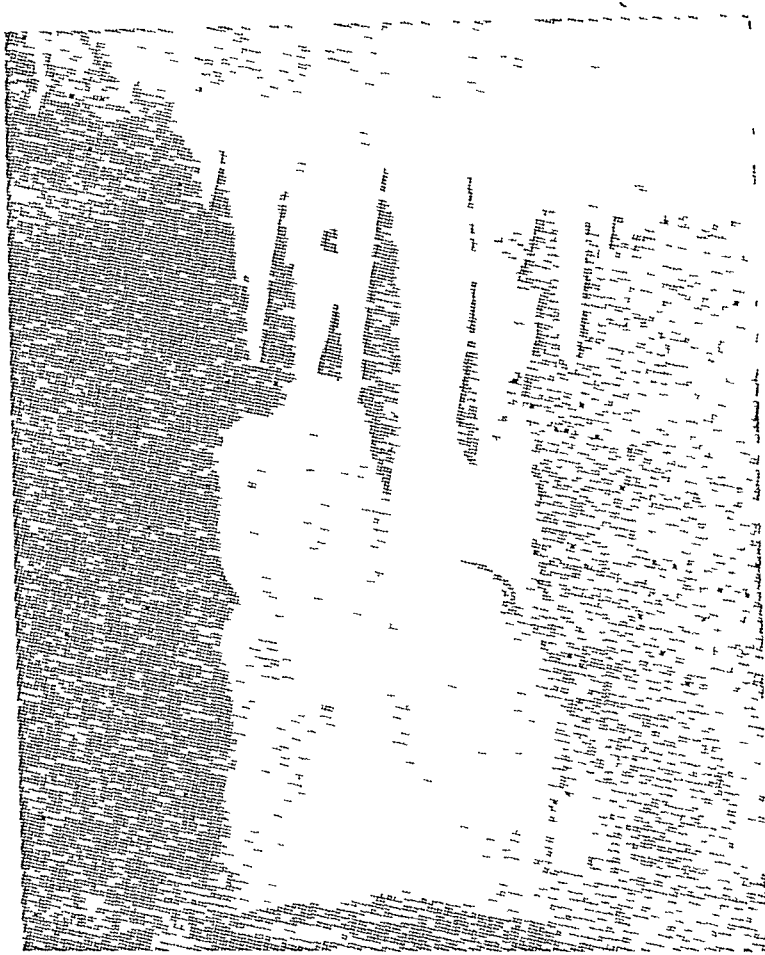
कुछ गुफाओमे पानी टपकता रहता है और वह टपकता हुआ पानी स्तम्भमे परिवर्तित हो जाता है।

इसी प्रकार लकडीका तत्त्व आकाशमे रहता है तो हवा होती है। लकडी अग्निको उत्पन्न करती है और पवन उसका पोषण। पॉच तत्त्वोके महाभूतोका धर्म ऐसा ही है।

इन उदाहरणोसे पता चलता है कि प्राचीन कालमे रासायनिक क्रियाओका अधकचरा, परन्तु प्रचुर ज्ञान चीन वालो को था और उनके पर्यवेक्षण भी त्रुटिहीन थे। केवल उन्हे यह जानकारी नही थी कि पानीका वाष्पीकरण होकर उड जाता है और उसमे का विलेय क्षार बचा रह जाता है, इसीलिए वे मानते थे कि पानीका पत्थरमे रूपान्तर हो जाता है।

इसके अतिरिक्त भट्ठियो, बरतनो, धौकनियो, धमन मुखो आदि उपकरणो तथा कब धौकनीको धीरे चलाना चाहिए और कब तेज आदि क्रियाओका उल्लेख भी चीनी कीमियागर साहित्यमे मिलता

है। क्रियाके जोरको बढाना हो तो शुक्ल पक्ष और कम करना हो तो कृष्ण पक्ष—इस प्रकार चन्द्रकी कला द्वारा क्रियाओका वर्णन किया गया है।

चीनी कीमियागरीके समस्त साहित्यको देखनेसे यह निष्कर्ष निकलता है कि १८वी शताब्दी तक चीनमे रसायन शास्त्र यूरोपकी अपेक्षा बहुत उन्नत था, लेकिन उसके बाद चीन पिछड गया। ई० १६९४मे येन युआनने चीनमे एक महाविद्यालयकी स्थापना की थी। उस महाविद्यालयमे भाषा ज्ञान, गणित, खगोल, चिकित्सा-शास्त्र और युद्ध-कलामे प्रयुक्त होनेवाले यत्रोका उपयोग करना सिखाया जाता था। रसायन शास्त्र और मद्य बनाने तथा उसका उपयोग करनेकी रीति भी सिखाई जाती थी। १६८३ई० मे ताई जग द्वारा रचित एक पुस्तकमे वायुदाबमापी, तापमापी, सुईके द्वारा आर्द्रतासूचक आर्द्रता मापी, उपक्षेपणी (वक्रनाली Siphon) और सूक्ष्मदर्शी जैसे अद्यतन ८० उपकरणोका वर्णन किया गया है।
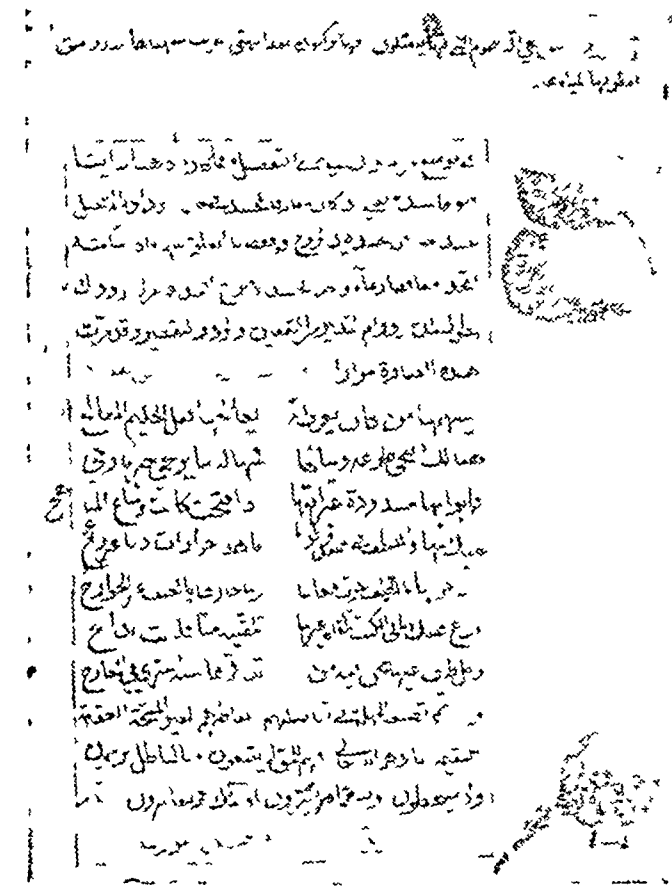
अरबी कीमियागरीकी पुस्तक 'शाह दिवान अल् शुहुर'का एक पृष्ठ

अब हम देखेगे कि अरबदेशोमे कीमियागरी और उससे रसायन शास्त्रका विकास किस प्रकार हुआ।

अल्केमीका विकास सबसे पहले चीनमे हुआ, लेकिन यूरोपको उसका ज्ञान मिस्रके ही द्वारा हो सका। यूनानी कीमियागरीके संचित ज्ञानको नेस्टोरियन लोग अपने साथ ईसाकी पाँचवी शताब्दीमे सीरिया ले गए थे, इस तथ्यको हम 'स्वास्थ्यदर्शन'मे पढ आए है। अरब राज्योमे मुस्लिम संस्कृतिके उदयके बाद यूनानी कीमियागरीका वह संचित ज्ञान अरबोको मिला। परन्तु उस समय मुस्लिम संस्कृतिने चीन, भारत और अन्य एशियाई देशोकी विद्याको पचा ही नहीं लिया था प्रयोगो-

संखियाकी धातु आर्सेनिकका संकेत १७वीं शताब्दी
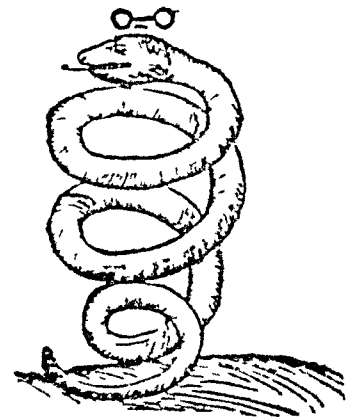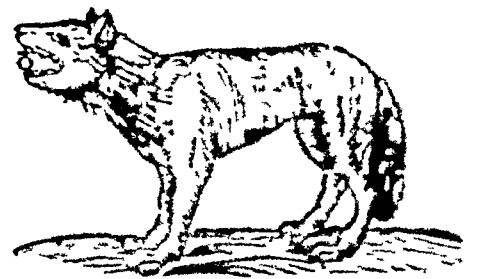
१८वीं शताब्दीमें सुर्मेकी धातु एन्टी-मनीका संकेत

के द्वारा सच और झूठको परखनेकी उमग भी उनमे पैदा हो चुकी थी।

कुछ कीमियागर एक धातुके दूसरी धातुमे परिवर्तन होनेकी वातको स्वीकार नही करते थे। कुछ ऐसा अमृत-तत्त्व वनानेके फेरमे पडे थे, जिससे मनुष्यकी आयुको खूव वढाया जा मके। कुछ ग्रहोकी गतिके आधार पर दृष्ट-अनिष्ट ग्रह दशाको मानते थे ओर वैज्ञानिक कार्योमे भी शकुन-अपशकुनका वडा विचार रखते और इस वात पर जोर देते थे कि ग्रहोके अनुकूल होने पर ही सफलता सम्भव हो सकती है। इस प्रकार कीमियागरी अन्धविश्वासोके जालमे फँसी हुई थी, फिर भी कुछ वहुत उज्ज्वल परिणाम सामने आये। कीमियागरीका युग १८वी शताव्दी तक चलता रहा। ओर यह कहा जा सकता है कि कीमियागरीके ही कुछ प्रयोगकर्ताओने रसायन-शास्त्र एव रसायन-ओपध-विज्ञान (Iatro-Chemistry)की नीव रखी।

रसायन-शास्त्रके विकासका श्रेय कीमियागरोकी प्रयोगशालाओ ओर धातुविदो (metallurgist)के अनुभवोको देना सर्वथा उचित होगा। मेसोपोटामिया और मिस्रके उत्खननोमे प्राप्त वस्तुएं ई० पू० पाँचवी शताव्दीमे वहाँहोनेवाले धातु कर्म, कॉच-निर्माण कला, आसवनी (distillery) आदिको प्रमाणित करती है। धातु-शोधन, चमडा कमाना, चूना पकाना, शराव निकालना, तरह-तरहके शरवत वनाना आदि क्रियाएँ मुस्लिम युगमे विकसित हो चुकी थी।

अल्केमीके सम्वन्धमे अरव वैज्ञानिक जवीर (७६८–८०९)की कृतियाँ उल्लेखनीय हे। अपनी पुस्तक 'गुण-धर्म' (Book of Properties)मे उसने सफेदा वनानेकी रासायनिक विधिका विस्तारसे वर्णन किया है। उसकी कृतियोसे यह भी पता चलता है कि उस समय नाप-तोलमे भी वडी सावधानी वरती जाने लगी थी।

जवीरने पदार्थके दो विभाग किए थे। गर्म करने पर वायु रूप होकर उडनेवाले पदार्थोको उसने 'साल' यानी 'स्पिरिट' कहा। गन्धक, सखियाके क्षार, पारा, नौसादर (साल एमोनिक)का समावेश इस विभागमे किया जाता था। उसके जमानेमे भी नौसादरका उपयोग धातु-शोधनमे प्रद्रावक (flux) के रूपमे होता था। नौसादर वनानेकी विधि भी उसे ज्ञात थी।

उस समयकी सात ज्ञात धातुओको उसने दूसरे विभागमे रखा। ये थी सोना, चाँदी, सीसा, राँगा, ताँवा, लोहा और पारा। इसके अलावा उसने चीनी-लोहे (जस्ता)के वारेमे भी लिखा हे।
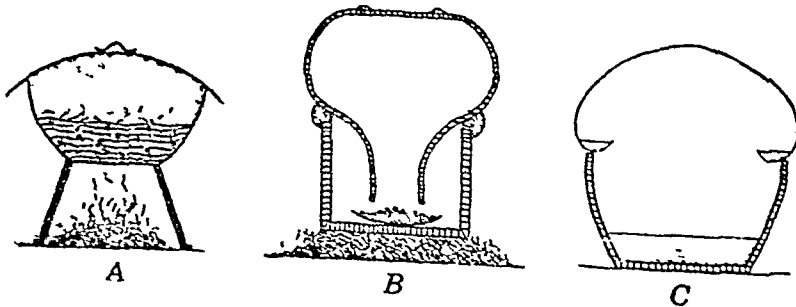
आसवनका पूर्व स्वरूप सघननके पात्र-सघनित्र

जवीरने यह भी लिखा है कि जिन धातुओका चूर्ण हो सकता है (भगुर धातुएँ) उन्हे पीटकर उनमे पत्ते (पत्तर) नही वनाये जा सकते। जवीरकी प्रयोगशाला तैग्रिस नदीके किनारे कूफामे थी।

हिराक्लीटस
[ई० पू० ५४०-४७५]
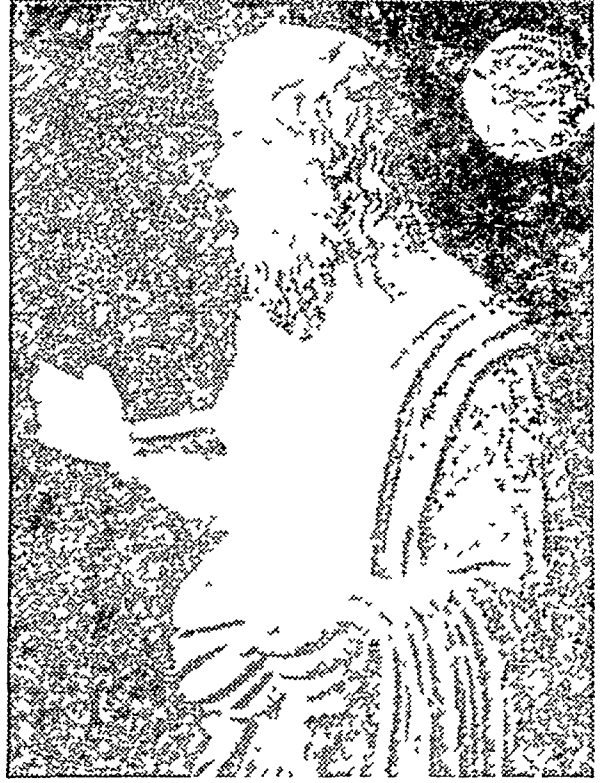
जेनोफेनिस, हिराक्लीटस, थैल्स आदि सभी यूनानी दार्शनिक इस बातको मानते थे कि सारी सृष्टि एक ही आद्यतत्त्वसे पैदा हुई है, लेकिन उस मूलतत्त्वके स्वरूपके बारेमें उनमें मतभेद था।

थैल्सका कहना था आद्यतत्त्व पानी है। भाप बनाकर उसे उडा दो, या ठंडा करके जमा दो तो ठोस पदार्थ प्राप्त होंगे।

हिराक्लीटसका कहना था आद्यतत्त्व अग्नि है और उसके द्वारा जो परिवर्तन होता है वही तथ्य वास्तविकता है।

नीलमकी तख्ती

(हर्मिस द्वारा नीलमकी तख्ती पर अंकित कीमियागरीका रहस्य)

एक ही (सत्)के अनेक कौतुकोंकी सिद्धि, जो ऊपर (आसमानमें) है वही नीचे (पातालमे) है, ओर जो पातालमे है वही आसमानमे है, यह वास्तविकता सच्ची, असत् (दोप) रहित सर्वश्रेष्ठ सत्य है।

एकही के चिन्तनसे सभी वस्तुओका प्रादुर्भाव होता है इसलिए वे सव एक हीमेंमे जन्मी हुई है।

उनके पिता सविता है और माता चन्द्रमा है। वायुने उनकी स्थापना चन्द्रमाके उदरमे की है।

सृजनमे अवस्थित समस्त ज्ञानके पिता सविता ही हे। उन्हे पृथ्वीकी ओर घुमाया जाए तो भी उनके गुण अवाधित रहेगे।

वडे ही कौगल और धैर्यसे तुम अग्निमेंसे धातुको पृथक् करते हो। स्थूलमेंमे सूक्ष्मको उपजाते हो। इसी प्रकार एक ही मूल सत्यसे समस्त वस्तुओंकी सृष्टि हुई है।

सविता देवकी सत्ताके सम्वन्धमे मुझे जो-कुछ कहना था वह मैंने समाप्त किया। वह (सत्) पृथ्वीसे ऊँचा उठकर आसमानको आच्छादित कर देता हे ओर वहाँसे फिर लौटकर पृथ्वीमे—पातालमे भी व्याप्त हो जाता है। जो-कुछ ऊँचा है या जो-कुछ नीचा है वह दोनो हीकी सत्ताको धारण किए हुए है।

इसी प्रकार समस्त सर्जनके ज्ञानका प्रकाश होगा और अज्ञान पलायन कर जाएगा।

बलोका बल भी वही है, क्योंकि जितना भी सूक्ष्मातिसूक्ष्म ज्ञान हे वह सारा उसकी पहुँचमे है और स्थूलातिस्थूलके भी हार्द तक उसकी गति है।
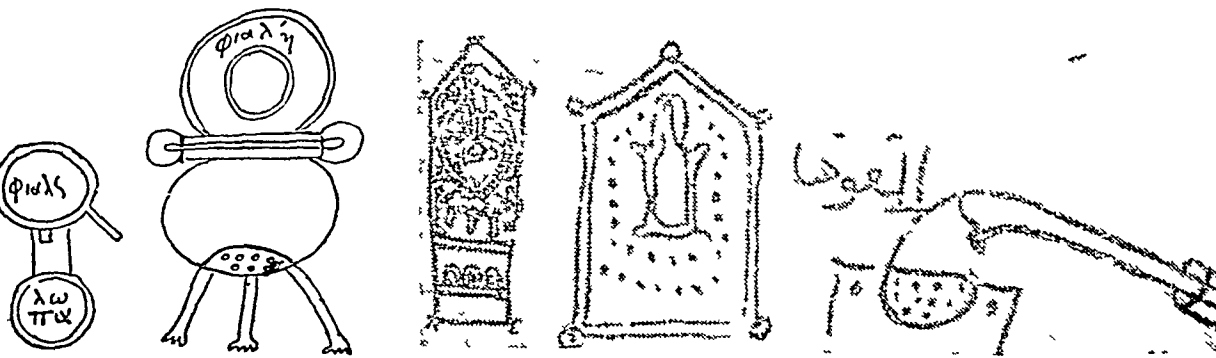
रासायनिक प्रयोगके पुराने उपकरण
प्राचीन यूनानी पाडुलिपिसे

धातु पकानेके उपकरण क्रमिक विकास
भभका (रिटार्ट) और प्रापक (रिसीवर)

उसने अपना यौवन काल कीमियागरी सीखनेमे विताया और अनुभव सिद्ध ज्ञानके आधार पर ही ग्रन्थ रचना की। प्रयोगशालाके लिए आवश्यक उपकरणोकी सूची भी उसने दी है। उसकी सूचीमे विभिन्न प्रकारकी भट्ठियो, धौकनियो, कुठालियो (मूषा), आसवनके लिए भभका-यन्त्रो (stills), तुलाओ, वटखरो, पलियो (flask), शीशेके वरतनोके अतिरिक्त रेणु ऊष्मको एव जल ऊष्मको (sand bath and watcı bath)के उपयोग तथा पदार्थोके छाननेके लिए अलग-अलग प्रकारके निस्यन्दन (filtcıs) बनानेकी विधियोका समावेश किया गया है। भारात्मक (gıavımatıic) पद्धतिसे रासायनिक प्रयोग करनेकी प्रथा भी उसीने गुरू की थी।

र्‌हेजीस (८६५–९२५) एक धातुके दूसरी धातुमे परिवर्तित होनेकी वातको मानता था। वह नाइट्रिक अम्ल और गन्धकके तेजावका उपयोग करता था। जड और चेतन पदार्थोका उसने तीन विभागोमे वर्गीकरण किया था वनस्पति, प्राणी ओर खनिज। उस जमानेकी इस प्रचलित मान्यताको कि प्रत्येक (जड) पदार्थमे गन्धक, लवण और पारेके गुण-धर्म होते है, उसने स्वीकार नही किया था, यद्यपि उसका परवर्ती पैरा सैल्सस इस धारणाको अन्त तक मानता रहा।

र्‌हेजीसने खनिजके छह विभाग किये थे

१ वाष्पशील पदार्थ—पारा, नौसादर आदि और गन्धक, मैनसिल (ıcalgar) जैसे दहनशील पदार्थ,

२ सात धातुएँ,

३ छह प्रकारका सुहागा वोरेक्स (क्षारागार-नेट्रोन अथवा रेह कल्लर-नोनी मिट्टीके साथ),

४ ग्यारह प्रकारके लवण जिनमे सैंधव, चूना, मूत्र क्षार, पोटाश (सज्जी) आदिका समावेश किया गया था।

५ तेरह प्रकारके पत्थर—मुख्यत कच्ची धातुएं—मेर्लेचाइट, हिमेटाइट, जिप्सम, फिटकरी इत्यादि, और

६ विट्रियल—कासीस (सल्फेट), जिसे गरम करनेसे गन्धकका तेजाव निकलता है।

उसके वाद एवीसेना—इब्नसेना (९८०–१०३७)ने अल्केमी-सम्बन्धी अपने लेखोमे स्पष्टतामे कहा कि एक धातुका दूसरी धातुमे परिवर्तन असम्भव है। निकृष्ट धातुओके मिश्रणसे सोने या चाँदीकी तरह दिखाई देनेवाली मिश्र धातु वन जाती है, परन्तु वह सोना या चादी कदापि नही हो सकती।

एवीसेना

इस प्रकार प्रसिद्ध अल्केमिस्ट वैज्ञानिक पद्धतिसे काम करने लगे थे। उन्होने मद्य-आसवनकी विधियोमे सुधार किया और शुद्ध ऐल्कोहल (मद्यसार)का आसवन भी सिद्ध कर लिया था। गन्धक, लवण और शोरेके अम्ल बनानेकी विधियाँ भी उन्होने खोज

निकाली थी और इन अम्लोका वे उपयोग भी करते थे। भारात्मक पद्धतिमे कार्य करनेके ढगको उन्होने और भी विकसित किया। अरबी अल्केमीने विलयन, आसवन, निस्यन्दन, ऊर्ध्व पातन आदि रासायनिक विधियाँ यूरोपको भेट की।

उसके बाद अरबी विज्ञान आगे प्रगति नही कर सका। ज्ञान-विज्ञानका क्षेत्र बगदाद अथवा अरबिस्तानके शहरोसे हटकर सिकन्दरिया (अलेक्जेण्ड्रिया)मे सीमित हो गया। वहाँ अल्केमीको थोडा परिष्कृत रूप प्राप्त हुआ। अरस्तूने यह मत व्यक्त किया था कि धातुओका रग, द्युति, तन्यता (tenacity), आघात-वर्धनीयता आदि गुण ऊपरी है, उपयुक्त विधिके द्वारा हलकी धातुओमे भी चाँदी-सोने-जैसी धातुओके गुण पैदा किए जा सकते है। इसको आधार बनाकर अल्केमिस्ट आगे बढे। पदार्थ-मात्र चार महाभूतोसे बने है और उनकी न्यून या अधिक मात्राकी मिलावटसे सभी पदार्थ बनते है—अरस्तूके समयसे चली आती इस प्राचीन मान्यताके साथ अरबी अल्केमी विद्याका मेल बिठानेके प्रयत्न किए गए। पाँच महाभूतोकी दृष्टिसे, उनको न्यूनाधिक मात्रामे मिलाने अथवा अनुपातमे परिवर्तन करनेमे एक धातुको दूसरी धातुमे बदला जा सकता है—इस बातको कीमियागर मानते थे।

राबर्ट एस्टरने (१११०–११६०) ११४४ ई०मे कीमियागरीके अरबी ग्रन्थोका सबसे पहले लातिन भाषामे अनुवाद किया। जिरार्ड आफ क्रेमा (१११४–११८०) और उसके साथियोने ९२ ग्रन्थोका अरबीसे लातिनमे अनुवाद किया। परन्तु यूरोपके ईसाई देशोकी मान्यताओमे अरबी अल्केमीके साथ रहस्यवाद, फलित ज्योतिष, ग्रहोकी इष्ट-अनिष्ट दशा आदिका भी प्रवेश हो चुका था।

उस समयके अल्केमिस्टोकी यह मान्यता थी कि चार महाभूतोका अन्तिम स्वरूप पारा है, पारेकी गन्धकके साथ क्रिया करनेसे पारसमणि (पारस पत्थर) तैयार होता है, हलकी धातुएँ इस पत्थरको छूनेसे सोना बन जाती है। गन्धकके तीन स्वरूपो (सफेद, पीला, लाल)का ज्ञान उन्हे था, इसलिए उन्होने यह धारणा बना रखी थी कि सफेद गन्धकके द्वारा बनाया हुआ पत्थर धातुओको चाँदीमे रूपान्तरित करता है, पीले गन्धक द्वारा बनाया हुआ पत्थर धातुओको सोनेमे रूपान्तरित करता है, आदि। इस दिशा मे प्रयत्न करनेवाले सभी प्रयोगकर्ताओको अन्तमे निराश होना पडा। लेकिन ऐसे भी कुछ धूर्त और ढोगी थे जो कुठालीकी पेदीमे सोनेकी किरच रख ऊपर मोमकी तह जमा देते और फिर कुठालीमे हलकी धातुएँ डालकर तपाते और पिघल जाने पर उसमेसे सोना निकाल कर दिखा देते और इस तरह हलकी धातुओको सोनेमे रूपान्तरित करनेका दम भरा करते थे। उनकी इन करामातोसे राज पुरुष तक धोखा खा जाया करते थे। इससे अल्केमिस्टोकी बडी निन्दा हुई। तत्पश्चात् अल्केमी विद्याका झुकाव दवाइयाँ बनानेकी ओर हुआ। गन्धक, पारा और क्षारोका उपयोग करके पैरासैलसस (१४९३–१५४१)ने कई नई-नई दवाइयाँ बनाई। वे कितनी कारगर थी यह बताना मुश्किल है। लेकिन अल्केमिस्टोका झुकाव दवाइयाँ बनानेकी ओर हुआ, यह निर्विवाद है। इसका भी कारण था। यूरोपमे उन दिनो प्लेग, चेचक, हैजा आदि महामारियोंका दौर एकके बाद एक चलता ही रहता था और उसमे इतने अधिक आदमी मरते थे कि सोना बनानेके बदले दवाइयाँ बनानेकी ओर अल्केमिस्टोका ध्यान जाना स्वाभाविक था। इसी झुकावके कारण यूरोपमे औषधि-विज्ञानका उदय हुआ।

१८वी सदी तक यूरोपके देशोमे अल्केमीका प्रभुत्व रहा, यद्यपि वैज्ञानिकोने उनसे पृथक् होकर शुद्ध विज्ञानका विकास १७वी शताब्दीसे ही प्रारम्भ कर दिया था। परन्तु जन सामान्य तो उन्हे भी

जादूगर, कीमियागर अथवा अल्केमिस्टके ही रूपमे जानते थे। जनमानस जादूगर और कीमयागरके बीच भेद नही कर सकता, इसीलिए तो न्यूटनको उन्होने अन्तिम जादूगर (last of the magicians) कहा था। १६वी सदीमे तो विज्ञानको भी 'कुदरती जादू' (natural magic)के ही नाममे पुकारा जाता था।

कालान्तरमे कीमियागर और जादूगरका युग समाप्त हुआ और शुद्ध विज्ञानने अपनी सम्पूर्ण गरिमाके साथ १९वी शताब्दीमे पदार्पण किया। अब हम यूरोपमे अल्केमीसे रसायन-शास्त्रके विकासका सक्षिप्त विहगावलोकन करेगे।
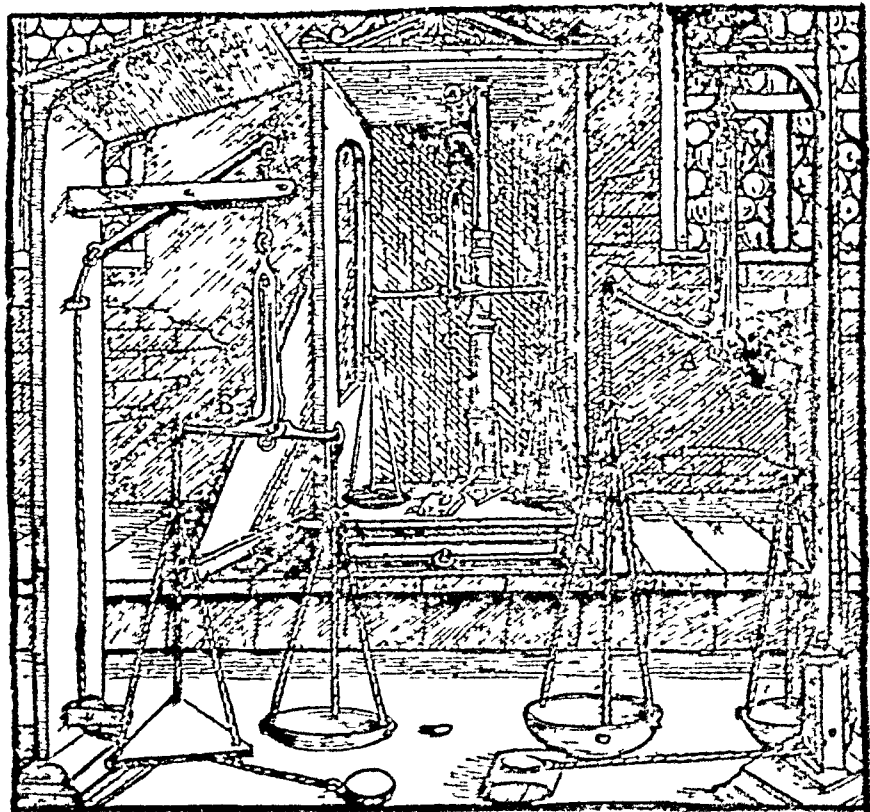
अग्रिकोला (१४९४-१५५५)की धातु शोधनकी प्रायोगिक भट्ठी और उसके उपकरण
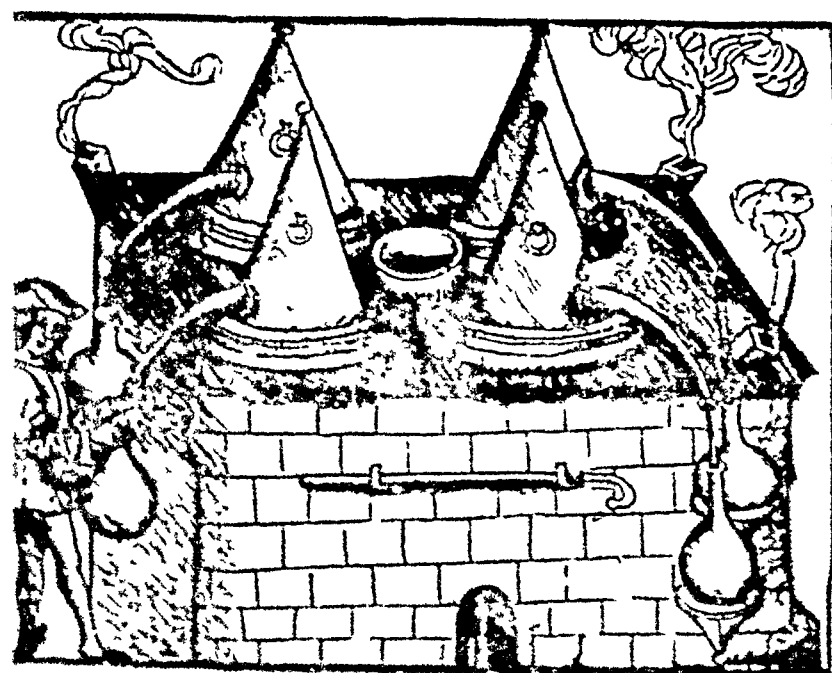
पारेका आसवन

सोलहवीं शताब्दीमें विज्ञानकी प्रगति
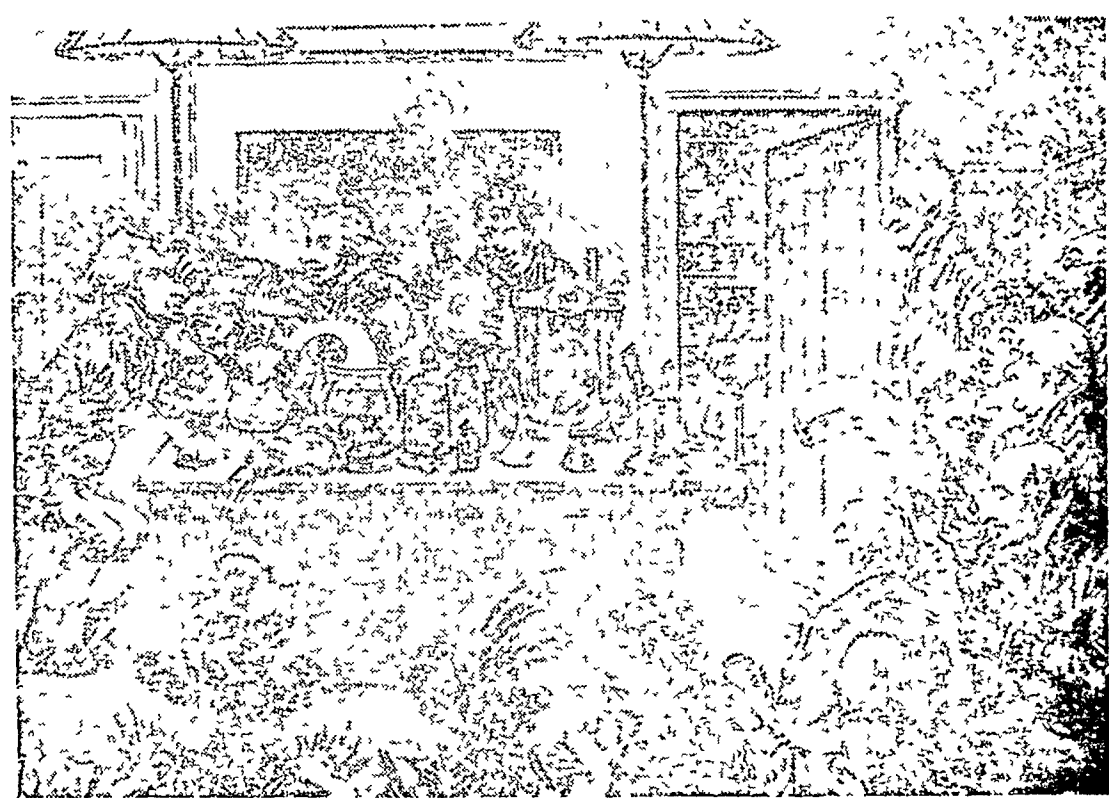
रायल इन्स्टीट्यूटके सदस्योकी हँसी उडानेवाला एक व्यग्य चित्र (डेवीके समयमे)
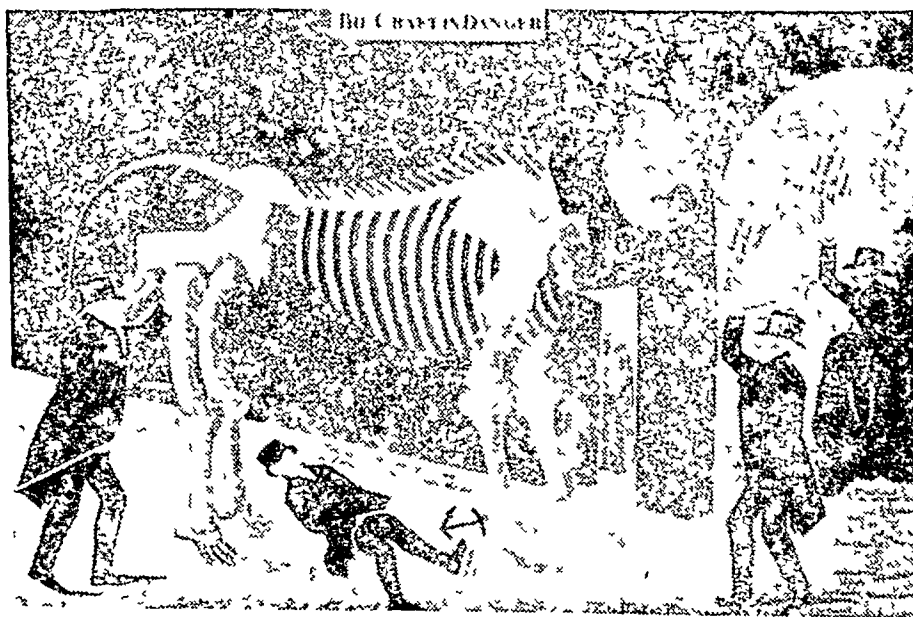
डूब मरो! विज्ञानके ऐसे विभाग भला विश्वविद्यालयमे खोले जाते होगे? जब यूरोप करवट बदलकर विज्ञानकी ओर उन्मुख होता है तो पुरातन-पन्थी उसका विरोध करते है!

३ : यूरोपमें रसायन विज्ञानका विकास

मध्ययुगके अन्त तक यूरोपीय विज्ञानका इतिहास बहुत खेदजनक है। अज्ञान, अन्ध-विश्वास और धर्मान्धता आदि अवरोधक शक्तियाँ उसके विकासमे बराबर बाधा पहुचाती रही। उस समयके विद्वान प्रत्यक्ष निरीक्षण (अवलोकन) और प्रयोगोके द्वारा ज्ञान प्राप्त करनेके बदले अनुमान (परिकल्पनाए) करते थे। धर्मगुरु भी काफी शक्तिशाली थे और उनके अधिकारोका डका बजता था, परम्परागत प्रणालियो (रूढियो)को चुनौती देने और नये सिद्धान्तोको प्रतिपादित करनेवाले विद्वानोको जेल या मौतकी सजाए दी जाती थी। अरस्तू, टालेमी (तोलेमी), गेलेन और प्लीनी जैसे दार्शनिकोकी रचनाओ पर स्वतन्त्र-रूपसे विचार कर नया ज्ञान सम्पादन और उसका प्रचार करनेका साहस गिने-चुने विद्वानोमे ही था। बारहवी और तेरहवी शताब्दी मे यूरोपके कुछ नगरोमे विश्वविद्यालय स्थापित किये गए थे, परन्तु वहाँ भी पुरातन यूनानी दार्शनिकोके विचारो और मान्यताओको ही विद्यार्थियोके दिमागोमे ठूँसा जाता था। चौदहवी शताब्दीसे यूरोपके बुद्धिवादियोने प्रयोगोके द्वारा नया ज्ञान प्राप्त करने पर जोर दिया। पन्द्रहवी शताब्दीमे मुद्रण-कलाका आविष्कार हुआ और उसके द्वारा जनतामे नये विचारोको तेजीसे फैलानेकी सम्भावनाएँ पैदा हुई। १४५३मे कुस्तुन्तुनिया (कान्स्टेण्टिनोपुल)का पतन हुआ, जिससे पूर्वी साम्राज्यका ज्ञान-विज्ञान यूरोपमे फैला। कोलम्बस, वास्को द' गामा, मैगेलैन (मगेलैन) आदि नायिकोने अपने नौ-अभियानो द्वारा नये देशो और नये समुद्री मार्गोका पता लगाया। इन सबसे प्रभावित होकर नवयुवक नई शोध-खोजकी ओर प्रवृत्त हुए। १६वी शताब्दीमे खगोलके क्षेत्रमे कोपरनिकसने प्राचीन यूनानी खगोलवेत्ता टालेमीके इस मतका कि सूर्य पृथ्वीके चारो ओर घूमता है, खण्डन किया और अपना यह मत प्रतिपादित किया कि पृथ्वी स्थिर नही है, वह सूर्यकी परिक्रमा करती रहती है। इन्ही दिनो चिकित्साशास्त्रके क्षेत्रमे वेसेलियसने यूनानी चिकित्साशास्त्री गेलेनके मानव शरीर-रचना-सम्बन्धी कई विचारोको गलत और भ्रान्त ठहराया। इन अनुसन्धानोने पुराणपन्थियोमे खासी उथल-पुथल मचा दी, जिससे विज्ञानका झुकाव नई दिशाकी ओर हुआ। गैलिलियो, केपलर और न्यूटनने जो कार्य किये, उनके परिणामस्वरूप खगोल-विज्ञान और भौतिकी (भौतिकशास्त्र)का तो तेरहवी शताब्दीमे द्रुत विकास हो रहा था, परन्तु रसायनशास्त्र अभी तक कीमियागरीसे मुक्त नही हुआ था, क्योकि कई अच्छे-अच्छे विद्वान भी कीमियागरीका मोह छोड नही सके थे।

सोलहवी शताब्दीमे रसायनशास्त्रकी प्रगतिमे योगदान करनेवाले वैज्ञानिकोमे पैरा सैल्सस

पैरा सेल्सस (१४९३–१५४१)

अग्रिकोला (१४९४–१५५५)

(१४९३-१५४१), अग्रिकोला (१४९४-१५५५) और वान हेलमाण्ट (१५७७-१६४४)की गणना की जा सकती है। पैरासैलसस चिकित्साशास्त्रका शिक्षक था और नई-नई औषधियोकी शोध-खोजके लिए प्रयोग करता रहता था। पारा, गन्धक आदिसे उसने नये क्षार बनाए थे। वह इस बात पर जोर देता था कि चिकित्सकोको रासायनिक प्रयोगोके द्वारा नई औषधियोकी खोज करनी चाहिए। उसने चिकित्सा-शास्त्र, कीमियागरी, ज्योतिष, जादू और धर्म आदि विभिन्न विषयोपर लगभग २३४ पुस्तके प्रकाशित की

जान बेप्टिस्टा वान हेलमाट (१५७७–१६४४) और उसका लडका फ्रान्सिस मरक्युरियस

राबर्ट बॉयल (१६२७-१६९१)

थी। उसकी कुछ मान्यताएँ बिलकुल गलत थी। उदाहरणार्थ वह मानता था कि हमारा शरीर पारा, गन्धक ओर लवणका बना हुआ है। अग्रिकोला चिकित्साशास्त्र, रसायन और धातुओके क्षेत्रमे पारगत था और धातुओपर उसने जो पुस्तक लिखी वह कई वर्षो तक चलती रही। वान हेलमाण्टने कार्बन डाइ-आक्साइड गैसकी खोज की थी और यह बतलाया था कि चूनेके पत्थर (lime-stone) पर अम्लकी क्रिया और किण्वन (fermentation)की क्रियाके दौरान यह गैस उत्पन्न होती है।

सत्रहवी शताब्दीमे रसायनशास्त्रमे सक्रिय

योगदान-करनेवालोमे रावर्ट बॉयल (१६२७-१६९१) अग्रणी था। सम्पन्न परिवारमे जन्मे रावर्टने इग्लैण्ड और यूरोपमे अच्छी शिक्षा पाई थी। उस जमानेके ज्ञानपिपासु और प्रगतिशील विचारोके विद्वानोने एक गोष्ठी बनाई थी, जिसका उद्देश्य नया ज्ञान प्राप्त करना था। मिलने-बैठनेका कोई निश्चित स्थान न होनेके कारण उन्होने अपनी गोष्ठीका नाम अदृश्य कालेज (Invisible College) रखा था। १६६०मे इग्लैण्डके राजा चार्ल्स द्वितीयने इस गोष्ठीको चार्टर (शासपत्र) प्रदान किया और तबसे वह अदृश्य कालेजके बदले रॉयल सोसाइटी कहलाने लगी। पिछली तीन शताब्दियोमे इस सस्था (रॉयल सोसाइटी)ने विज्ञानके क्षेत्रमे प्रचुर योगदान किया, और उसका फेलो (सदस्य) निर्वाचित होना बडे सम्मानकी बात समझी जाती है। सत्रहवी और अठारहवी शताब्दीके वैज्ञानिक पानी, हवा और दहनको मूलतत्त्व मानते और इन मूलतत्त्वो एव प्रक्रियाओको समझनेमे लगे हुए थे।

बॉयलने अनेक क्षेत्रोमे अनुसन्धान किये। गैस-सम्बन्धी उसके अनुसन्धान इतने महत्त्वपूर्ण है कि उनके कारण उसे आधुनिक रसायनशास्त्रका जनक कहा जाता है। अपने इन प्रयोगोके दौरान उसने गैसके दाव (pressure) और उसके आयतन (volume) के पारस्परिक सम्बन्धवाला जो नियम खोज निकाला वह 'बॉयलके नियम' (Boyle's law) के नाम से प्रख्यात है। उसने हवाका नाप-तोल किया और अदृश्य हवा 'अदृश्य कालेज' के सदस्योकी चर्चाका विषय बन गई। हवाका दाव कम करनेसे क्वथनाक (boiling point) कम होता है, जब पानी बर्फके रूपमे जम जाता है तो उसका विस्तार बढ जाता है, निर्वात (जिसमेसे हवा निकाल दी गई हो) पात्रमे भी लोहचुम्बकका चुम्बकीय गुण बना रहता है, आदि गवेषणाएँ बॉयलने की थी। मूलतत्त्वकी उसने जो व्याख्या की थी वह आज भी मान्य है। उसकी व्याख्याके अनुसार जिस पदार्थमेसे रासायनिक क्रियाके द्वारा अन्य तत्त्वोको पृथक नही किया जा सके, वह मूलतत्त्व है। उसने मिश्रण, यौगिक और मूलतत्त्वके अन्तरको भी स्पष्ट किया। फास्फोरस बनानेका ढग भी उसने स्वतन्त्र रूपसे खोज निकाला था। रासायनिक विश्लेपणकी नीव उसीने रखी। उसकी पुस्तक 'दि स्केप्टिकल केमिस्ट'ने विज्ञानके क्षेत्रमे एक नई परम्पराको जन्म दिया। वह प्रायोगिक-विज्ञानमे अग्रगण्य था। १७वी शताब्दीमे रसायनशास्त्रके विकासमे योगदान करनेवाले और भी कई वैज्ञानिक थे, जिनमे रावर्ट हूक (१६३५-१७०३), जानमेयो (१६४५-१६७९), ग्लौवर (१६०४-१६७०), कुकल (१६३०-१७०१), बेचर (१६३५-१६८२) और लेमरी (१६४५-१७१५)के नामोका उल्लेख किया जा सकता है।
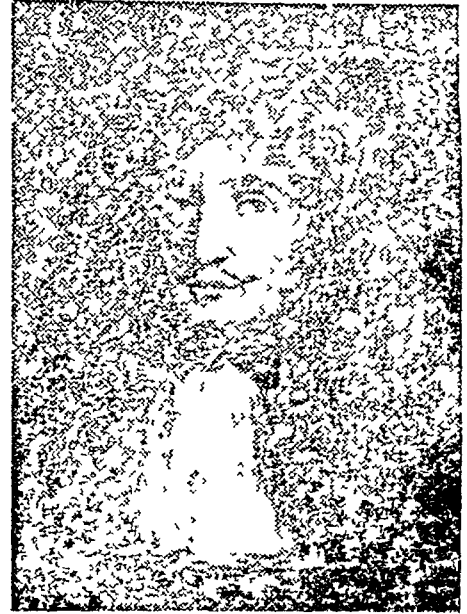
जान कुकल वान लोवेन्स्टर्न
(१६३०–१७०१)

हूकने दहन क्रियाको समझनेकी कोशिश की थी। वह इस नतीजे पर तो पहुँच गया था कि हवामे ऐसा कोई तत्त्व होता है जो दहनका सपोषण करता है, लेकिन उस तत्त्वका पता

लगानेमे वह सफल न हो सका। भौतिकीके क्षेत्रमे भी उसने प्रकाश इत्यादिके वारेमे अपने अनुमान व्यक्त किये थे। मेयो इस अनुमान पर पहुँचा था कि हवामे ऐसा कोई तत्त्व है जो धातुओको गर्म करने पर उनमे सयोजित हो जाता है। उसने यह भी वताया कि वही तत्त्व सुवर्चल या शोरा (saltpetic)मे है और उस तत्त्वके द्वारा अशुद्ध रक्त शुद्ध होता है। ग्लौवरने इस वातको स्वीकार किया था कि अम्ल और वेम (समाक्षार)की क्रियासे क्षार वनते है। उसने सोडियम सल्फेटको स्फटिक रूपमे तैयार किया था, जो आज भी 'ग्लौवर साल्ट'के नामसे जाना जाता है। एण्टीमनी सल्फाइड और मरक्युरिक क्लोराइडसे वननेवाला एण्टीमनी क्लोराइड उसने वनाया था, और आजकी सुपरिचित रासायनिक क्रिया द्विक्-विच्छेदन (double decomposition)की उल्लेखनीय गवेपणा उसीने की थी। काष्ठके आसवनसे ऐसेटिक अम्ल मिलनेकी वात भी उसीने वताई थी। कुकल कॉच वनानेमे कुशल था और फूँकनी (blow pipe)के द्वारा विश्लेपण करनेकी पद्धतिकी खोज उसने की थी, जो आज भी प्रचलित है। चीजोके सडने और किण्वनकी क्रियामे साम्य होनेकी वात उसने वताई थी। फास्फोरसकी खोज उसने स्वतन्त्र रूपसे की थी। वेचरने धातुओको गलानेके लिए ईंधनके रूपमे कोयलेके आसवनके दौरान प्राप्त होनेवाली गैस और उसीके साथ प्राप्त होनेवाले डामर (तारकोल)का उपयोग करनेका सुझाव दिया था, लेकिन उस समयका यूरोप डामरका उपयोग करनेके लिए तैयार नही था। वेचरकी विशेप प्रसिद्धि तो १८वी सदीमे विज्ञानके क्षेत्रमे खासी हलचल मचानेवाले फ्लोजिस्टनवादके अग्रणीके रूपमे है। उसने यह मत प्रतिपादित किया था कि वस्तुएँ तीन प्रकारकी मिट्टीकी वनी होती है टेरालेपिडा, टेरा मरक्युरिआलिस और टेरा पिगुइस। उसके मतानुसार आसानीसे जलनेवाली वस्तुओमे टेरा पिगुइस अधिक मात्रामे होती है और जव वह वस्तु जलती है तो टेरा पिगुइसका विलोप या विलीनीकरण हो जाता है। लेमरीने फ्रेच भाषामे रसायन-शास्त्र पर एक पुस्तक लिखी थी, जिसका यूरोपकी सभी भाषाओमे अनुवाद हुआ। लेमरीने खनिज पदार्थो ओर वानस्पतिक रसायनोका अन्तर वताया और रसायनके आजके दो प्रमुख भेदो—अकार्वनिक और कार्वनिकका सकेत भी किया था।

गैस इकट्ठा करनेके लिए टेल्स द्वारा निर्मित उपकरण

१८वी शताब्दीके उत्तरार्द्धमे रसायनने तेजीसे प्रगति की, लेकिन इस सदीके पूर्वार्द्धमे उल्लेखनीय प्रगति नही हो पाई। स्टीफन हेल्स (१६७७-१७६१)ने रक्त, काष्ठ, कोयला, चीनी

और शहद आदि कार्बनिक पदार्थोको गर्म करनेसे जो गैसे निकलती है उन्हे पानीके ऊपर एकत्रित किया था। उसने इन गैसोके गुणोकी जाँच-पडताल नही की। वह तो सिर्फ यह मालूम करना चाहता था कि विभिन्न पदार्थोसे किस-किस परिमाणमे गैसे प्राप्त होती है। उसके प्रयोगोकी सवसे वडी त्रुटि यह थी कि कुछ गैसे पानीमे घुल जाती है, जिस पर उसने कोई ध्यान नही दिया। स्टाल (१६६०-१७३४)ने आक्सिडेशन रिडक्शन (आक्सी-न्यूनीकरण)के क्षेत्रमे काम किया था और अनेक क्षारोको गर्म कर उनमे होनेवाले परिवर्तनोका परीक्षण किया था। उसकी ख्याति दहन-सम्बन्धी फ्लोजिस्टनवाद के प्रबल समर्थकके रूपमे है। स्टालने बेचरके टेरा पिगुइसको 'फ्लोजिस्टन' नाम प्रदान कर यह मत प्रतिपादित किया कि सभी ज्वलनशील पदार्थोमे फ्लोजिस्टन नामक तत्त्व रहता है और पदार्थके दहनके दौरान उड जाता है। जव लकडी (काष्ठ) जलती है तो उसमेसे ज्वाला निकलती है और अन्तमे राख बच जाती है। स्टालके मतानुसार लकडी राख और फ्लोजिस्टनसे बनी होती है। राँगा, सीसा आदि धातुओको गर्म करनेसे जो नया पदार्थ वनता है उसे धातुकी भस्म (आक्साइड) कह सकते है। फ्लोजिस्टनवादियोके मतानुसार ये धातुएँ अपनी-अपनी भस्म और फ्लोजिस्टनकी बनी हुई है। कुछ वैज्ञानिकोने इससे भी आगे जाकर फ्लोजिस्टनवादी सिद्धान्तको दहनके अतिरिक्त और भी कई रासायनिक क्रियाओ पर लागू किया। उदाहरणके लिए हमारे शरीरके अन्दर होनेवाली रासायनिक क्रियाओकी उन्होने दहनसे तुलना की। फ्लोजिस्टनवादियोकी ऐसी मान्यता थी कि उच्छ्वसनमे हमारे फेफडोमेसे फ्लोजिस्टन बाहर निकलता है।

फ्लोजिस्टन सिद्धान्तमे कई खामियाँ थी। फ्लोजिस्टनको किसीने देखा नही था, इसलिए इसके गुणोको कोई भी निश्चयपूर्वक बता नही सकता था। जव किसी धातुको हवामे गर्म किया जाता है तो उसका आक्साइड (भस्म) वनता है और वजन बढ जाता है, इसलिए अगर दहनके दौरान धातुसे फ्लोजिस्टनके निकल जानेकी बातको माना जाए तो उसका वजन कम होना चाहिए। फ्लोजिस्टनवादियोने इसका भी उत्तर खोज निकाला था। इस सम्बन्धमे उन्होने यह मत प्रतिपादित किया कि फ्लोजिस्टन ऋणभार (negative weight) वाले पदार्थोमेसे है, इसीलिए धातुको गर्म करनेसे उसका वजन बढ जाता है। लगभग एक शताब्दी तक यह सिद्धान्त रसायनज्ञोके दिमाग पर हावी रहा। १८वी शताब्दीके उत्तरार्द्धमे आक्सीजनकी खोज हो जानेके बाद लवाशिये और अन्य रसायनज्ञोने अपने कार्योसे इसे गलत सावित किया और तब कही फ्लोजिस्टनवादको तिलाजलि दी जा सकी। इस सिद्धान्तके सत्यासत्यके निर्णयके लिए वैज्ञानिकोने अनेक प्रयोग किये, जिससे विज्ञानकी सीमाएँ विस्तृत हुई। लेकिन ऐसे भी कई वैज्ञानिक थे जो प्रयोगोके परिणामोकी स्वतत्र जाँच-पडतालके बाद अनुमान पर पहुँचनेके बदले फ्लोजिस्टनवादी सिद्धान्तके द्वारा उन्हे समझने-समझानेका गलत प्रयत्न करते थे, जिससे विज्ञानकी प्रगतिमे बाधा पडती थी।

१८वी सदीके उत्तरार्द्धमे कई कुशल रसायनज्ञ हुए, इनमे जोसेफ ब्लैक (१७२८-१७९९), कैवेण्डिश (१७३१-१८१०), शीले (१७४२-१७८६), जोसेफ प्रीस्टले (१७३३-१८०४) ओर लवाशिये (१७४३-१७९४)के कार्य महत्त्वपूर्ण है।

ब्लैकने मैग्नेशियम आल्वा नामक पदार्थ पर काम किया था। यह पदार्थ मैग्नेशियम कार्बोनेट है। ब्लैकने इस पदार्थको गर्मकर एक गैस प्राप्त की थी जो दहन अथवा जीवनका सम्पोषण नही करती थी और चूनेके पानीमे अवशोषित होकर उस पानीको सफेद कर देती थी। इस गैसको उसने स्थिर वायु (fixed air) नाम दिया। उसने यह भी बताया कि इस पदार्थ पर अम्लकी क्रियासे भी यही गैस प्राप्त होती है और हम उच्छ्वासके द्वारा इसी गैसको शरीरसे बाहर निकालते है। ब्लैक ग्लासगोमे रसायनशास्त्रका शिक्षक था और जो सिद्वान्त प्रयोग पर आधारित न होते उन्हे स्वीकार नही करता था।

जोसेफ ब्लैक (१७२८–१७९९)

कैवेण्डिश इग्लैण्डके एक सम्पन्न जागीरदार परिवारमे जन्मा और कुछ अर्गो तक सनकी समझा जाता था। उसने अपना सारा जीवन वैज्ञानिक शोध-खोजमे लगाया। उसने हाइड्रोजन गैसका पता लगाया और आसानीसे जलनेवाली होनेके कारण उसे ज्वलनशील वायु (inflammable air) नाम दिया। धातुओ पर अम्लकी क्रियासे यह गैस उत्पन्न होती है। प्रीस्टले द्वारा आक्सीजनकी खोजके बाद कैवेण्डिशने इस ज्वलनशील गैसको आक्सीजनके साथ एकत्र कर इसे विद्युत-चिनगारी (electric spark)से सयुक्त (सयोजित) किया तो उसे पानी प्राप्त हुआ। इसपरसे उसने यह सिद्ध किया कि पानी मूल तत्त्व नही, बल्कि आक्सीजन और हाइड्रोजनका एक यौगिक है। इसके बाद उसने आक्सीजन और नाइट्रोजनके मिश्रणको विद्युत-चिनगारीसे सयुक्त किया और इस क्रियासे प्राप्त नाइट्रिक आक्साइडको कास्टिक पोटाशके विलयन मे अवशोषित किया तो पाया कि आरम्भिक आयतनका १/१२०वॉ भाग गैसके ही रूपमे रह गया। वह आक्सीजन, नाइट्रोजन या नाइट्रिक आक्साइड नही थी। कैवेण्डिश इसका कारण समझा न सका। लगभग एक शताब्दी बाद विलियम रैम्जेने इस समस्याको सुलझाया और बताया कि गैसका यह बुलबुला नाइट्रोजनमे पाई जानेवाली आर्गन आदि निष्क्रिय गैसोके कारण था। इस उदाहरणसे कैवेण्डिशके उच्चकोटिके प्रयोगोका पता चलता है।

कैवेण्डिश (१७३१–१८१०)

शीलेने अपने छोटे-से जीवनमे काफी अच्छे काम किये। उसने आक्सीजन और क्लोरिन गैसोका पता लगाया। टग्स्टन और मालिब्डेनमके योगिकोका उसने अध्ययन किया। मालिब्डेनम-की कच्ची (मूल) धातु जो आजकल मालिब्डेनाइट कहलाती है उसे उस जमानेके लोग ग्रेफाइटके

कीमियागरकी प्रयोगशाला

चित्रकार डेविड टेनियर [१६१०–१६९०]

सत्रहवीं सदीकी कीमियागरी
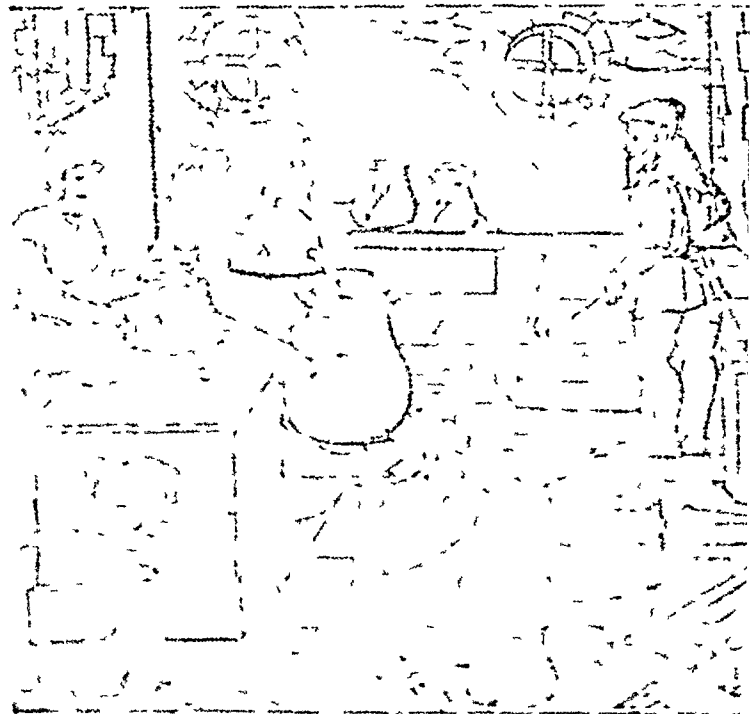
गन्धकका आसवन (१६वी सदी)

जोसेफ प्रीस्टलेके प्रयोग-सम्बन्धी टिप्पणोसे आच्छादित नगरके मार्ग

वैज्ञानिककी कद्र !

फ्रासकी राज्यक्रान्तिसे कुछ लोग प्रसन्न हुए तो कुछेकके दिल दहल गए। आक्सीजनका पता लगानेवाले जोसेफ प्रीस्टलेने मुक्ति, समानता और भाईचारेका स्वागत कर फ्रान्सकी क्रान्तिकी प्रगसा की तो हमेशा स्वतन्त्रताके गीत गानेवाले एडमड बर्क-जैसोने उसका विरोध भी किया। परिणाम यह हुआ कि उत्तेजित लोगोकी भीडने प्रीस्टलेके मकान (फेअर हिल, बर्मिघम)को लूटा, फर्नीचर जला दिया और बीसियो बरसके कठिन परिश्रमसे तैयार किये हुए उसके प्रयोग-सम्बन्धी टिप्पणो और लेखोको फाडकर सडको पर फेक दिया। सडको पर डेढ-दो मील तक बिखरी हुई जीवन-साधनाकी इस पूँजीको लोगोके पॉवो तले कुचले जाते देख उस वैज्ञानिकके हृदयको ऐसी करारी चोट लगी जो मृत्युपर्यन्त कसकती रही। इग्लैण्डमे जीना दूभर हो गया तो १७९४मे वह अमरीका जा बसा। इन्ही दिनो फ्रान्समे लवाशियेकी गर्दन नापी गई।

नामसे जानते थे। शीलेने इन दोनोका अन्तर स्पष्ट करते हुए यह वताया कि ग्रेफाइट कार्वनका एक रूप है। उसने हाइड्रोजन सल्फाइड, आर्साइन और ताँबेके क्षार--कापर आर्सेनाइट जो अपने हरे रगके कारण 'शीलेज ग्रीन' नामसे पुकारा जाता है---इन तीनोका अध्ययन किया था। प्रशियन ब्लू रगकी शोध-खोजके दौरान उसने अत्यन्त जहरीला हाइड्रोसायनिक अम्ल बनाया था। कार्वनिक रसायनके क्षेत्रमे उसने ग्लिसरीन यूरिकाम्ल (मूत्राम्ल), लैक्टिक टार्टरिक, साइट्रिक, मेलिक और आक्सेलिक अम्ल बनाये थे और उनके कैल्शियम क्षार तैयार कर परिष्करण (निर्मलीकरण)के तरीकेकी खोज की थी। इतना उच्च-कोटिका वैज्ञानिक होते हुए भी वह फ्लोजिस्टन सिद्धान्तका कट्टर समर्थक था और अपने प्रयोगोके परिणामोको फ्लोजिस्टन सिद्धान्तके द्वारा समझानेकी कोशिश किया करता था।

कार्ल शीले (१७४२-१७८६)

प्रीस्टलेकी ख्याति आक्सीजनका पता लगानेके कारण है। इस गैसको उसने पारे और आक्सीजनके एक यौगिक मरक्युरिक आक्साइडको, गर्म करके प्राप्त किया था। इस गैसके गुणोके सम्वन्धमे उसने यह खोज की कि वह दहन और जीवनका सपोषण करती है। प्रीस्टलेने गैसोको पारे पर इकट्ठा करनेका ढग खोजा था। इससे पहले गैसोको पानी पर इकट्ठा किया जाता था, जिससे पानीमे घुलनेवाली गैसे प्राप्त नही की जा सकती थी। प्रीस्टले अपनी नई विधिसे पानीमे घुलनेवाली सलफर डाइ-आक्साइड, हाइड्रोजन क्लोराइड और ऐमोनिया गैसोको प्राप्त करनेमे सफल हुआ। ऐमोनिया गैसको विद्युत-चिनगारीसे सयुक्त करने पर हाइड्रोजन गैस मिलती है और जिस बरतनमे मोमबत्ती जलाई जाए उसमे जीवन सम्भव नही होता, लेकिन यदि उस बरतनमे वनस्पतिको उगाया जाए तो जीवन सम्भव हो जाता है--यह सब उसने प्रयोगोके द्वारा प्रमाणित किया था। प्रीस्टले भी अन्त तक फ्लोजिस्टनवादका दामन थामे रहा और आक्सीजनको उसने 'डिफ्लोजिस्टेनेटेड एअर' अर्थात् फ्लोजिस्टन-रहित हवा और नाइट्रोजनको 'फ्लोजिस्टेनेटेड एअर' अर्थात् फ्लोजिस्टन-सहित हवा नाम दिये थे।
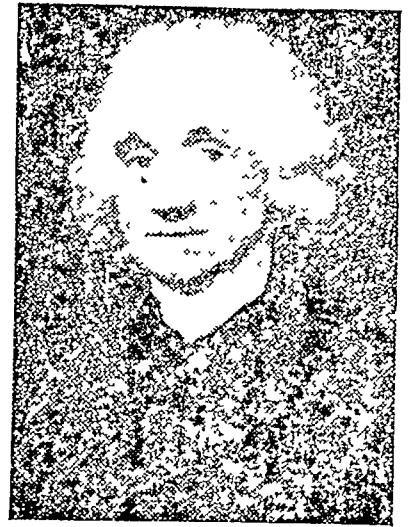
जोसेफ प्रीस्टले (१७३३--१८०४)

लवाशिये (१७४३-१७९४) १८वी सदीका एक महान वैज्ञानिक था। उसके समयमे और उसके प्रयोगोसे रसायनके क्षेत्रमे द्रुत विकास होने लगा। लवाशियेने भौतिकीविदोकी कार्य-पद्धति और विचार प्रणालीको रसायनके क्षेत्रमे अपनाया। उसने दहन-सम्बन्धी अनेक प्रयोग किये और फ्लोजिस्टनवादको सदाके लिए तिलाजलि दे दी। उसने बताया कि दहन हवामे पाई जानेवाली

आक्सीजन और जलनेवाले पदार्थके बीच होनेवाली रासायनिक क्रिया है। फ्लोजिस्टन-जैसी किसी वस्तुका अस्तित्व ही नही है। कार्बनिक पदार्थोके जलनेसे कार्बन डाइआक्साइड गैस और पानी बनता है, यह भी लवाशियेने ही बताया था। शराब, कपूर आदि अनेक पदार्थोका विश्लेषण कर किसमे कितना अश कार्बन, कितना अश हाइड्रोजन और कितना अश आक्सीजन है, यह भी उसने निश्चित किया था। राबर्ट बॉयलकी मूलतत्त्व-सम्बन्धी परिभाषाको आधार बनाकर उसने ३३ मूलतत्त्वोकी सूची तैयार की थी। लवाशियेकी इस सूचीको शत-प्रतिशत सही नही कहा जा सकता, क्योकि उसने प्रकाश और गर्मीको भी मूलतत्त्व मानकर इस सूचीमे शामिल कर लिया था। १७८९मे उसकी प्रसिद्ध पुस्तक 'ट्रेड द शीमी' प्रकाशित हुई, जिसमे उसने अपने रसायन-सम्बन्धी विचारोको सकलित किया था। इस पुस्तकने रसायनके क्षेत्रमे क्रान्ति मचा दी थी। रासायनिक पदार्थोका विश्लेषण और रासायनिक सयोजन उसके कार्योके द्वारा अपने पाँवो पर खडे हो सके। लवाशियेके समयमे कितनी भ्रान्त धारणाएँ प्रचलित थी, उसका एक उदाहरण देखा जाए। उस समय यह माना जाता था कि पानीको गर्म करनेसे वह मिट्टी बन जाता है। लवाशियेने १०० दिन तक पानीको एक बन्द बरतनमे गर्म करके इस मान्यताको गलत साबित किया था। रसायनके क्षेत्रमे क्रान्ति करने वाला लवाशिये फ्रान्सकी राज्यक्रान्तिकी बलि चढा दिया गया। लोगोमे कर वसूल करनेवाली एक सस्था 'फेर्म द जनराल'का वह सदस्य था, और इस अपराधके कारण उसे प्राणदण्ड दिया गया।
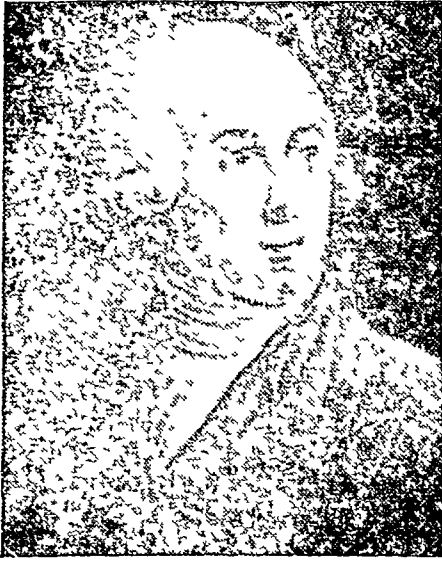
लवाशिये (१७४३–१७९४)

हाफमैन, बिरहोव (१६६८-१७३८) और मारग्राफ (१७०९-१७८२) १८वी शताब्दीके कुछ और रसायनज्ञ थे। हाफमैनने खनिज जल (mineral water)का विश्लेषण किया था और सल्फेट एव नाइट्रेटका अन्तर बताया था।

बिरहोव लीडन विश्वविद्यालयमे रसायन और चिकित्साशास्त्रका अध्यापक था और उसने 'एलीमेण्टा केमिया' (Elementa Chemiae) नामक पुस्तक प्रकाशित की थी, जिसमे उसके समयकी रसायन सम्बन्धी जानकारी सकलित की हुई है। मारग्राफने कई महत्त्वपूर्ण खोजे की थी। उदाहरणके लिए मैग्नेशिया और एल्युमीनाका अन्तर उसने बताया और यह भी दिखलाया कि जिप्सम (चिरोडी) बेराइट्स और पोटेसियम सल्फेट सल्फ्यूरिक अम्लके क्षार है।

१९वी शताब्दीमे रसायनके क्षेत्रमे तेजीसे प्रगति हुई और अनेक नये विचारो, सिद्धान्तो, कार्य-प्रणालियो (तकनीको) और उद्योगोका आविष्कार हुआ। इनमे डाल्टनकी एटमिक थियरी (परमाणुवाद), मेण्डेलीफकी पीरियोडिक टेबल (आवर्त सारणी) और केकुलेके कार्बनिक पदार्थोकी रचनामे सम्बन्धित विचार काफी महत्त्वपूर्ण है।

१९वी शताब्दीके आरम्भकालमे हम्फ्री डेवीने रसायनके क्षेत्रमे कई ठोस कार्य किये। सम्पन्न परिवारमे उसका जन्म हुआ था। वह प्रतिभा सम्पन्न युवक था और थोडी उम्रमे भी उसने कई अनुसन्धानात्मक कार्य किये। खानोके अन्दर काममे लाया जानेवाला निरापद दीप (safety lamp) उसीकी सूझ है, इसके लिए आज भी खनिक उसके नामको कृतज्ञतासे स्मरण करते है। रसायनके क्षेत्रमे भी उसके कार्य इतने ही महत्त्वपूर्ण थे। १८०० ईसवीमे वोल्टाने वोल्टीय सेलका निर्माण कर विद्युतको सचारित किया था। डेवीके उर्वर मस्तिष्कने इस खोजके महत्त्वको समझा और विद्युत एव रसायनोके पारस्परिक सबधोका पता लगानेके लिए उसने अनेक रसायनोमे विद्युतको पारित किया। कास्टिक सोडा और पोटासको गर्मकर उसने द्रव बनाया और उस द्रवमे विद्युत् पारित करके पोटेसियम और सोडियम धातुएँ प्राप्त की। उसके बाद उसने स्ट्रान्शियम, मेग्नेशियम ओर बोरोनको अपने-अपने क्षारोमेसे पृथक् किया। आक्सिम्युरियाटिक अम्लके नामसे परिचित एक गैसके बारेमे डेवीने यह पता लगाया कि वह एक मूलतत्त्व है और उसने उसका नाम क्लोरिन रखा। आयोडिनके गुणोकी जॉच-पडताल भी उसने की थी। डेवीने फेराडेको अपना सहायक नियुक्त किया था। फेराडे बहुत गरीब था और बचपनमे एक जिल्दसाजके यहॉ नौकरी करता था। लगनशील फेराडेको एक बार डेवीके भाषण सुननेका अवसर मिला तो उसने भाषणोको लिख लिया और उनकी जिल्द बनाकर डेवीको इस अनुनयके साथ भेजा कि वह उसे अपनी प्रयोगशालामे नौकर रखनेकी कृपा करे। डेवीने उसे अपने सहायकके रूपमे नौकर रख लिया। इस तरह फेराडेको अपने उज्ज्वल कार्योको आरम्भ करनेका मनचाहा अवसर मिला।

सर हम्फ्री डेवी (१७७८–१८२५)
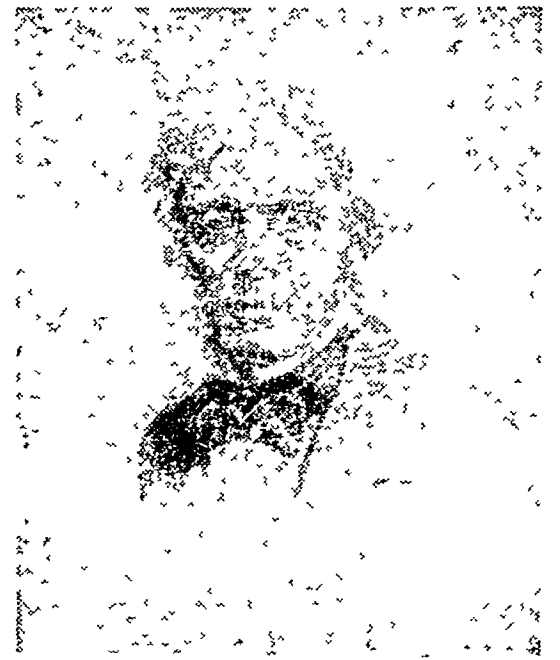
माइकेल फेराडे (१७९१–१८६७)

१८५०मे डाल्टनने अपनी 'एटमिक थियरी' अर्थात् परमाणुवादको प्रतिपादित किया और रसायनके क्षेत्रमे काफी तेजीसे प्रगति होने लगी। डाल्टनका जन्म एक साधारण परिवारमे हुआ था, गॉवकी पाठशालामे पढाई पूरी कर उसे छोटी उम्रमे ही शिक्षक बन जाना पडा था। वह जीवनभर शिक्षक बना रहा। विज्ञानके कई क्षेत्रोमे उसने कार्य किया। वर्णान्धता (colour blindness), वायु-विज्ञान, भौतिकी ओर

रसायनके क्षेत्रमे उसने जो कार्य किये वे अत्यन्त प्रसिद्ध और महत्त्वपूर्ण है। लेकिन उसकी ख्याति तो मुख्य रूपसे उसकी 'एटमिक थियरी'के कारण है। परमाणुका विचार बहुत पुरातन है। डिमोक्रिटसने (ई० पू० ४६०-३७०) यह मत प्रतिपादित किया था कि किसी भी वस्तुका छोटा-से-छोटा अदृश्य कण, जो और विभाजित नही किया जा सके, एटम (a=not, tom=to divide) है। डाल्टनके परमाणुवादके अनुसार 'एटम' घन, आकार ओर भारवाले कण है। एक मूलतत्त्वके परमाणु एक ही प्रकारके (गुणोवाले) ओर एक ही भारके होते ह, लेकिन भिन्न-भिन्न मूलतत्त्वोके परमाणु भिन्न-भिन्न भारवाले होते ह और वे निश्चित मात्रामे दूसरे परमाणुओमे सयोजित होते है। एक मूलतत्त्वके परमाणु यदि दूसरे मूलतत्त्वके परमाणुओसे भिन्न-भिन्न अनुपातमे सयोजित होकर भिन्न-भिन्न योगिकोकी रचना करे तो प्रत्येक यौगिकमे सयोजित अन्य पदार्थके परमाणु १ २ ३ ४मे दिखाये जा सकनेकी तरह निश्चित अनुपातमे होते है। मतलब यह कि दो या अधिक मूलतत्त्वोके परमाणु सरल गुणित अनुपातमे सयोजित होते है, और इस तरहके यौगिकोके परमाणु सयुक्त या मिश्रित परमाणु कहलाते है।

जान डाल्टन (१७६६–१८४४)

किसी यौगिकके सव सयुक्त परमाणु समान होते है। परमाणुओको न नष्ट किया जा सकता है, न उत्पन्न। डाल्टनने विभिन्न मूलतत्त्वोके जो परमाणुभार निकाले थे, वे कालान्तरमे और अधिक प्रयोगोके उपरान्त गलत सावित हुए और उसके 'परमाणुवाद'मे भी आगे चलकर बहुत परिवर्तन हो गए। परन्तु उसके इस सिद्धान्तने रासायनिक क्रियाओ और रासायनिक विश्लेषणोको अधिक अच्छे ढगसे समझनेका मार्ग प्रशस्त किया।

उन्ही दिनो एक और उल्लेखनीय वैज्ञानिक गैसो पर शोध-खोज कर रहा था। उसका नाम गे-लुसाक है। उसके अनुसन्धानोसे डाल्टनके परमाणुवादको और भी बल मिला। गे-लुसाकने सयोजित होनेवाली गैसोके आयतनके नियम (Law of Combining Volume of Gases)की खोज की थी। अपने परीक्षणोके दोरान गे-लुसाकने पाया कि जब हाइड्रोजन और आक्सीजनका सयोग होता है तो दो आयतन हाइड्रोजन और एक आयतन आक्सीजनके अनुपातमे सयोजन होकर दो आयतन भाप बनती है।

गे-लुसाक (१७७८–१८५०)

इसे यो भी कह सकते है कि दो आयतन हाइड्रोजन और एक आयतन आक्सीजनके सयोगसे दो आयतन भाप बनती है।

हाइड्रोजन	+	आक्सीजन	=	पानी (वाष्प)
२ आयतन		१ आयतन		२ आयतन

इसी प्रकार

कार्बन मोनोआक्साइड	+	आक्सीजन	=	कार्बन डाइआक्साइड
२ आयतन		१ आयतन		२ आयतन
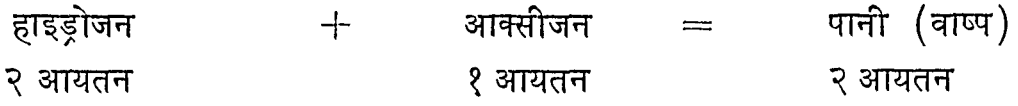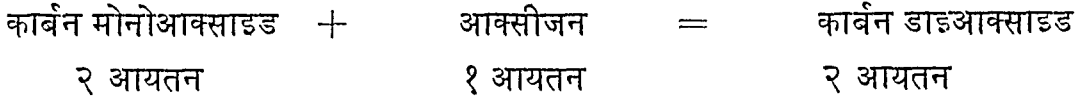
इस प्रकारके और भी कुछ परीक्षण उसने किये थे। इन सब प्रयोगोके द्वारा गे-लुसाक इस निर्णय पर पहुँचा कि जब गैसोमे रासायनिक क्रिया होती है तो उस क्रियाके दौरान सयुक्त (सयोजित) होनेवाली या क्रियाके परिणामस्वरूप उत्पन्न होनेवाली गैसोके आयतनका पारस्परिक अनुपात सादी सख्या (१ १, १ २, १ ३, २ ३ आदि)के द्वारा दर्शाया जा सकता है।

गे-लुसाकके नियमके अनुसार समान आयतन वाली गैसोमे एक ही ताप और दाब होने पर समान अनुपातमे सयोजित होनेवाले कण रहते है। इस नियमके अनुसार नीचे बताये गए अनुपातमे यौगिक मिलना चाहिए, लेकिन मिल नही पाता—

(१) हाइड्रोजन	+	आक्सीजन	=	पानी (वाष्प) मिलना चाहिए
२ आयतन		१ आयतन		१ आयतन
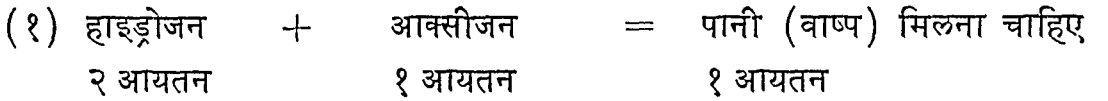
लेकिन प्रयोगमे २ आयतन वाष्प मिलती है।

इसी प्रकार

(२) नाइट्रोजन	+	हाइड्रोजन	=	ऐमोनिया गैस (मिलनी चाहिए)
१ आयतन		३ आयतन		१ आयतन
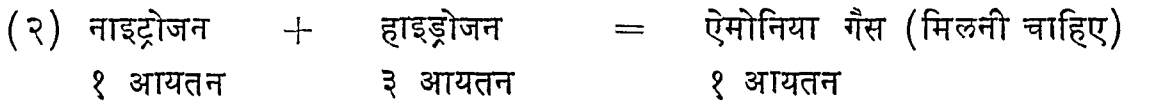
लेकिन प्रयोगमे २ आयतन ऐमोनिया मिलती है और हाइड्रोजन क्लोराइड गैसकी बनावटमे

(३) हाइड्रोजन	+	क्लोरिन	=	हाइड्रोजन क्लोराइड
१ आयतन		१ आयतन		२ आयतन
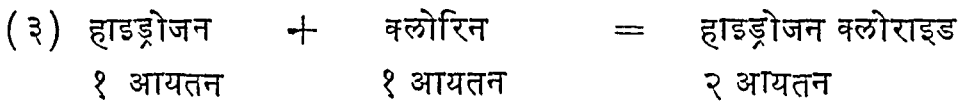
मिलती है। तो क्या हाइड्रोजन और क्लोरिनके आधे-आधे परमाणु सयोजित होकर १ परमाणु हाइड्रोजन क्लोराइड बनाते है? और क्या परमाणु विभाज्य है? इस समस्याका समाधान एवोगैड्रोने १८११ ई०मे किया।

एवोगैड्रोकी परिकल्पनाके अनुसार पदार्थका सबसे छोटा कण तो परमाणु ही है। लेकिन वह स्वतन्त्र रूपसे रह नही सकता, दो या दोसे अधिक परमाणुओके वृन्द (समूह)के रूपमे रहता है। ऐसे वृन्दको अणु (Molecule) कहते है। हाइड्रोजन, आक्सीजन और क्लोरिनके अणु दो-दो परमाणुओके बने होते है। रासायनिक संयोगके समय उस अणुके परमाणु पृथक् होकर रासायनिक क्रियामे भाग लेते है। इस परिकल्पनाके आधार पर रासायनिक प्रयोगोके परिणामोको

(रासायनिक सयोगोको) आसानीसे समझाया जा सकता है। लेकिन एवोगैड्रोके इस सिद्धान्तकी ओर उसके समकालीन वैज्ञानिकोने कोई ध्यान नही दिया। यहाँ तक कि डाल्टनने भी उसकी उपेक्षा की जवकि एवोगैड्रोकी परिकल्पनाने उसके परमाणु सिद्धान्तकी जडको और भी मजबूत ही किया था। ठेठ १८६० ई०मे स्टेनिस्लाव केनिजरोने इस ओर वैज्ञानिकोका ध्यान आकर्षित किया, तब तक रसायनज्ञ अधेरेमे ही भटकते रहे। आज तो एवोगैड्रोकी परिकल्पना सर्वमान्य सिद्धान्त वन चुकी है।

वर्जीलियस बचपनमे ही माता-पिताके मर जानेसे अनाथ हो गया था। सगे-सम्बन्धियोकी कृपासे वह किसी तरह अपनी शिक्षा पूरी कर सका। लेकिन शिक्षा समाप्त होनेके पहले ही शिक्षकोसे उसका विगाड हो गया और वह वडी कठिनाईसे परीक्षामे उत्तीर्ण हुआ। जीवनके उपाकालके इन कटु अनुभवोने उसके स्वभाव पर गहरा प्रभाव डाला। पाठशालाके विद्यार्थी जीवनमे ही वह

वर्जीलियसका एक पत्र

रासायनिक प्रयोगोमे तल्लीन रहा करता था। शिक्षाकी समाप्तिके वाद वह स्टाकहोमके मेडिकल कालेजमे नौकर हो गया और अन्तमे वही प्राध्यापक भी बना। डाल्टन और रीक्टर (Richter) के कार्योसे वह वहुत प्रभावित हुआ था, लेकिन जानता था कि जवतक विश्लेषण की पद्धतियाँ ठीक ढगसे निर्धारित नही की जाती, इन सिद्धान्तोको व्यापक समर्थन नही मिल सकता। स्वय उसने इस दिशामे वहुत काम किया और लगभग १० वर्षोकी अवधिमे ४३ मूलतत्त्वोके सव मिलाकर दो हजार यौगिक वनाए और उन्हे शुद्ध करके, उनका विश्लेषण करके उनके सयोजित होनेके अनुपात निश्चित किये। इन प्रयोगोके आधार पर उसने यह अनुमान प्रतिपादित किया कि समान दाव तथा ताप पर समान आयतनकी विभिन्न गैसोमे परमाणुओंकी सख्या एक ही होती है।

---

१ उस समय तक तत्त्वो और यौगिको, दोनो हीके सवसे छोटे कणके लिए 'परमाणु' शब्दका ही प्रयोग किया जाता था। 'अणुओ'के वारेमे लोग जानते नही थे।

उसके द्वारा निकाले हुए कुछ परमाणुभार पूरी एक शताब्दीके बाद भी विशेषज्ञो द्वारा निकाले हुए परमाणुभारोसे हूबहू मिलते है। अशुद्ध रसायनो, घरेलू साधनो और रसोईघर जैसी छोटी-सी प्रयोगशालाके सहारे उसने इतना सब काम किया और अपने प्रयोगो तथा अनुसन्धानोके परिणामोको तात्कालिक पत्र-पत्रिकाओमे प्रकाशित करता रहा। रसायनशास्त्रकी एक पाठ्य-पुस्तक भी उसने प्रकाशित की थी, जिसके कई सस्करण हुए और यूरोपकी कई भाषाओमे उसके अनुवाद भी। १९वी शताब्दीके रसायन पर उसकी गहरी छाप है।

१९वी शताब्दीके आरम्भमे कार्बनिक पदार्थोके रसायनका विकास नही हुआ था। कार्बनिक पदार्थोका प्राणजन्य और वानस्पतिक ऐसे दो भागोमे विभाजन किया जाता था। बहुतसे कार्बनिक पदार्थ जाने-पहचाने थे। शराब, सिरका, कपूर, नील, चीनी, गोद, रक्त, मूत्र इत्यादिके वर्णन, विशेषरूपसे चिकित्साशास्त्रकी दृष्टिमे, इक्की-दुक्की पुस्तकोमे देखनेको मिल जाया करते थे। कार्बन और हाइड्रोजन-के अतिरिक्त कुछ कार्बनिक पदार्थोमे आक्सीजन, नाइट्रोजन और गन्धक जैसे अन्यान्य मूलतत्त्व भी होते है, यह जान-कारी लोगोको थी। लेकिन इन पदार्थोको प्रयोगशालामे बनाया नही जा सकता, क्योकि कार्बनिक पदार्थोको बनानेके लिए एक महत्त्वपूर्ण जैवशक्ति (Vital force) आवश्यक होती है, ऐसी मान्यता प्रचलित थी। १८२८मे वोह्लरने ऐमोनियम साइनेट नामक अकार्बनिक पदार्थको गर्म करके मूत्रमे प्राप्त होनेवाला कार्बनिक पदार्थ यूरिया बनाया। इस प्रयोगमे जैवशक्तिवाले सिद्धान्तको जबर्दस्त धक्का पहुँचा।

फ्रेडरिक वोह्लर (१८००-१८८२)

वोहलर (१८००-१८८२), लिबिग (१८०३-१८७३) और ड्यूमा (१८००-१८८४) उस समयके कार्बनिक रसायनके धुरन्धर विद्वान थे। वोह्लरने विश्लेषणके क्षेत्रमे बर्जीलियससे शिक्षा पाई थी। साइनेट और यूरिक अम्ल पर उसने बहुत-सा काम किया था। अकार्बनिक रसायनके क्षेत्रमे उसने १८२७मे ऐल्युमीनियमकी खोज की थी। शिक्षकके रूपमे उसकी बहुत अच्छी ख्याति थी और देश-विदेशके विद्यार्थी उससे शिक्षा प्राप्त करनेके लिए आते थे।

लिबिग भी उच्चकोटिका शिक्षक था और उसकी प्रयोगशालाका पाठ्यक्रम आदर्श माना जाता था। वह अपने विद्यार्थियोको तरह-तरहके विश्लेषण—जैसे कि गुणदर्शी और परिमाणमापी विश्लेषण सिखाना और कार्बनिक पदार्थ बनानेकी शिक्षा भी देता था। पहले उसने शुद्ध कार्बनिक रसायनके क्षेत्रमे काम किया था, परन्तु बादमे खाद्यपदार्थों, खेती-बाडी और शरीर-क्रिया-विज्ञान (Physiology)मे उसकी अभिरुचि हो गई थी। कार्बनिक

जस्टस वान लिबिग (१८०३-१८७३)
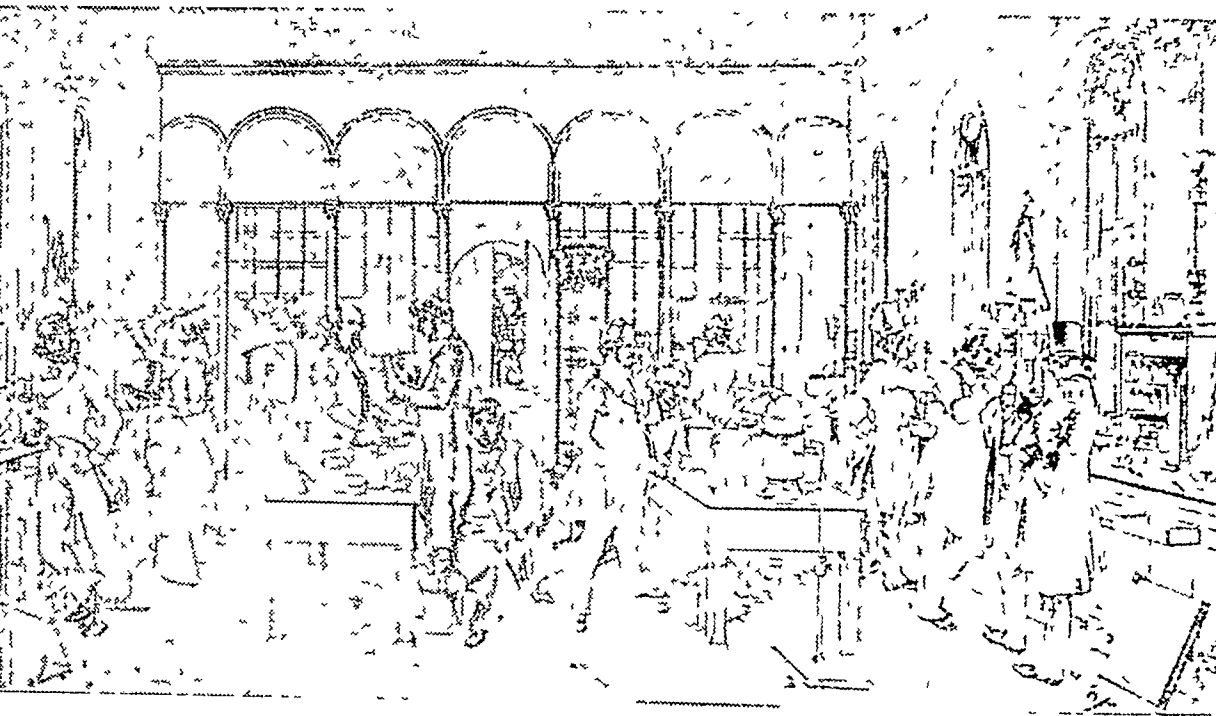
लिबिगकी सुप्रसिद्ध प्रयोगशाला ई० स०१८४२

गशालामे उसके शिष्य क्लेर, डा० विल, डा० वारेनट्रेप, शेरर और हॉफमैन आदि काम करते दिखाई देते है।
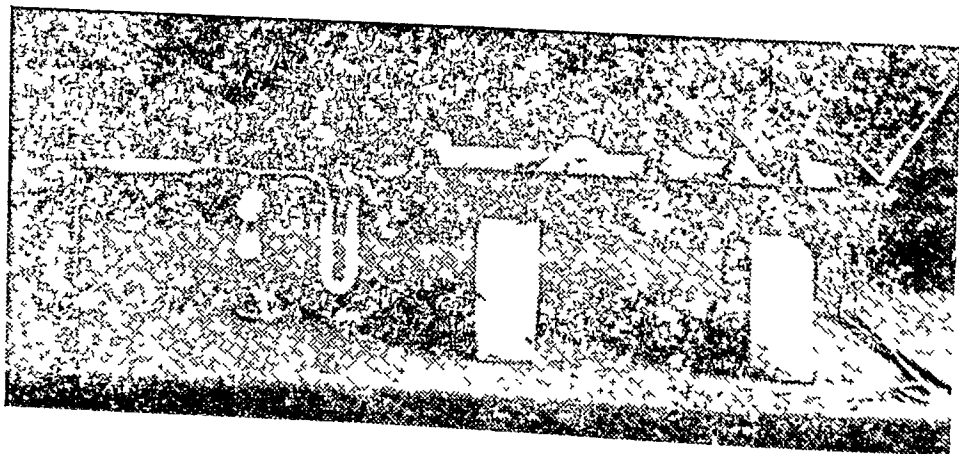
कार्वनिक पदार्थोका विश्लेपण करनेके लिए लिबिग द्वारा प्रयुक्त उपकरण
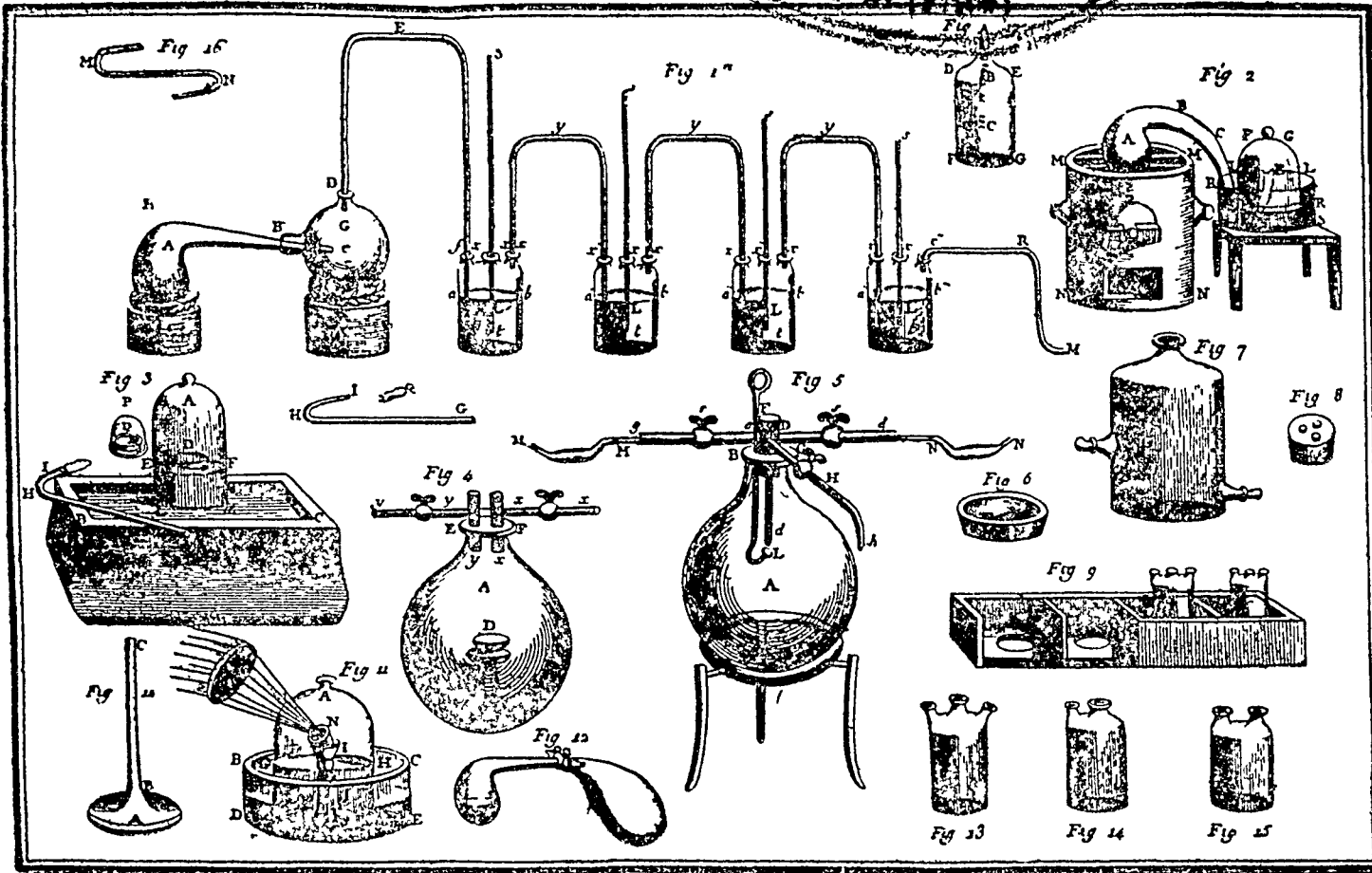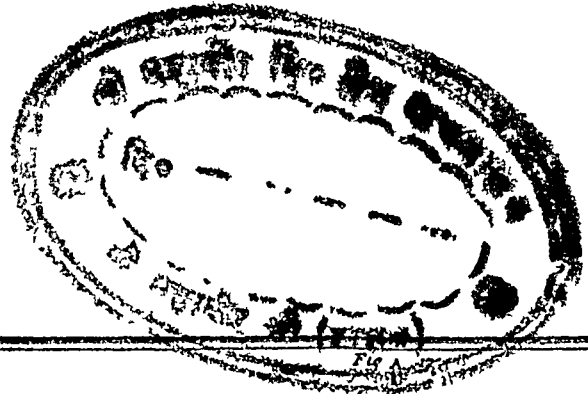
लवाशियेके प्रयोग सबधी उपकरण
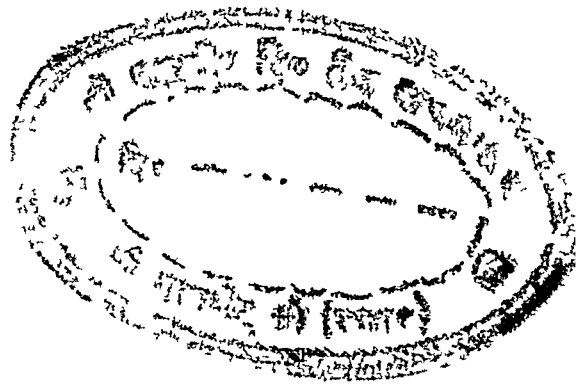
पदार्थोके विश्लेषणमे जो पद्धति आज काममे लाई जा रही है, उसकी खोज लिबिगने ही की थी। स्वभावका वह अत्यन्त उग्र था और अक्सर वाद-विवादमे उलझ जाया करता था।

जे० बी० ए० ड्युमा (१८००-१८२४)
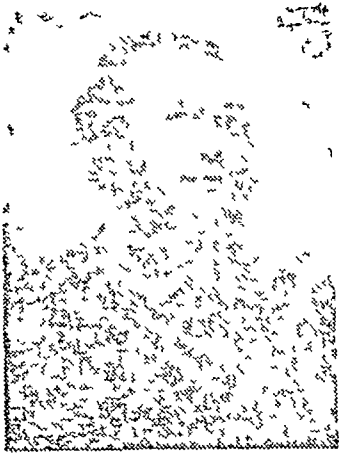
ड्युमाकी रुचि बचपनमे ही विज्ञानकी ओर थी और छोटी उम्रसे ही उसने शरीरके क्रिया-कलापोके क्षेत्रमे प्रयोग आरम्भ कर दिये थे। गाइटर (कठमाल) रोगमे आयोडिनकी उपयोगिता, शरीरके स्रावोका विश्लेषण, लाल रुधिर कणिकाओका कार्य, डिजिटैलिसका शरीर पर प्रभाव इत्यादि प्रश्नो पर उसने काफी काम किया था। २३ वर्षकी उम्रमे वह पेरिसमे शिक्षक नियुक्त हुआ। कार्बनिक पदार्थोमे नाइट्रोजनका अनुपात निश्चित करनेकी जो पद्धति आज प्रचलित है, उसकी खोजका श्रेय ड्युमाको ही है। वाष्पघनता मालूम करनेकी रीति उसने खोजी थी और कार्बनिक पदार्थोमे प्रतिस्थापनका अध्ययन उसने किया था।

१९वी सदीके पूर्वार्द्धमे मूलतत्त्वके परमाणुओके भारके बारेमे वैज्ञानिक आपसमे एकमत नही थे। कुछ मूलतत्त्वोके तुल्याक भारो (equivalent weights)की जानकारी अवश्य थी, परन्तु सामान्यत रसायनज्ञ एवोगैड्रोके सिद्धान्तकी ओरसे उदासीन ही रहे। द्रव्यके अणुभार निश्चित न होनेके कारण उनके अणुसूत्र (molecular formula) भी निश्चित नही हो पाए थे। एक ही पदार्थका भिन्न-भिन्न ढगसे वर्णन किया जाता था। बर्जीलियसकी ड्युअलिस्टिक थियरी और ड्युमाकी टाइप थियरी प्रचलित थी, लेकिन दोनोसे ही अणुसरचना पर कोई प्रकाश नही पडता था। १८५३मे वोहलरने बर्जीलियसको लिखा था कि "कार्बनिक रसायन प्राचीन-कालके किसी घने जगलकी तरह था, अनोखी चीजोसे भरा पूरा, डरावनी और सीमातीत झाडी, जिसमेसे निकलनेका कोई मार्ग नही था और जिसमे घुसते भी डर लगता था।" १८५८-मे दो युवक रसायनज्ञोने स्वतन्त्र ढगसे कार्बनके परमाणुओको जोडनेकी मार्गदर्शक पद्धतिका आविष्कार कर इस जगलमेसे बाहर निकलनेका रास्ता दिखाया। ये दोनो रसायनज्ञ थे केकुले (१८२९-१८९६) और टामस कूपर (१७५९-१८४१)।

केकुले लिबिगका शिष्य था और लिबिगके भाषणो एव रसायनके विषयने उसे मोहित कर लिया था। मूलरूपसे तो वह स्थापत्यकला (architecture) का विद्यार्थी था, परन्तु मकानोकी रचनाकी अपेक्षा कार्बनिक अणुओकी सरचनामे उसकी रुचि बढती गई आर वह कार्बनिक रसायनके क्षेत्रमे काम करनेकेलिए चला आया।

कार्बनिक पदार्थोकी रचनाके सम्बन्धमे उन दिनो तरह-तरहके विचार प्रचलित थे। लवाशियेने अकार्बनिक अम्लोके अपने सिद्धान्तको कार्बनिक अम्लो पर घटित करनेका असफल प्रयत्न किया था। उसकी ऐसी मान्यता थी कि कार्बनिक अम्ल सयुक्त मूलक (combined radicals)मे आक्साइड होते है। बर्जीलियसने अपनी 'ड्युअलिस्टिक थियरी' प्रतिपादित की थी। उसके अनुसार जलरहित अम्लका सूत्र, उसके क्षारके सूत्रोमेसे बेस (भस्म या समाक्षार)का भाग

निकालकर लिखा जा सकता है। उदाहरणके लिए, कैल्शियम सल्फेट Ca SO_4मे SO_3 अम्ल है। इसी प्रकार कैल्सियम एसेटेट $C_4H_6O_4$ Caमेसे CaO निकाल देनेसे अम्लका भाग $C_4H_8O_4$ होना चाहिए, लेकिन एसेटिक अम्लका अणुसूत्र $C_4H_6O_4$ ज्ञात हुआ। कुछ लोग इस सूत्रकी गणना C=6, O=8के आधार पर तो कुछ लोग C=6, O=16के आधार पर करते थे। ड्युमाने अपनी 'इथरीन थियरी' प्रचारित की थी। उसने यह अनुमान प्रतिपादित किया कि मद्य (ऐलकोहल)से सकलित सभी पदार्थ इथाइलिन (C_2H_4) से बने होते है। उसके बाद लिबिगने अपनी 'एसेटाइल थियरी' प्रकाशित की। इन सभी विचारोका 'रेडिकल थियरी'के अन्तर्गत वर्णन किया जाता है।

ड्युमाने ही सबसे पहले कार्बनिक पदार्थो पर क्लोरिन और ब्रोमिनकी प्रतिस्थापन अभिक्रियाएँ (Substitution reactions) की थी, और एक या दो हाइड्रोजनको क्लोरिन अथवा ब्रोमिनसे प्रतिस्थापित किया था। एसेटिक अम्लमे क्लोरिनको पारित करनेसे ट्राय क्लोरोएसेटिक अम्ल प्राप्त हुआ था, जिसके गुण एसेटिक अम्लके समान ही थे। ड्यूमाने इसके बाद अपनी 'टाइप थियरी' (प्रकार-सिद्धान्त) प्रचारित की। इस सिद्धान्तके अनुसार जिन रासायनिक पदार्थोके गुण एक-जैसे होते है, यथा क्लोरोफार्म और ब्रोमाफार्म उन्हे रासायनिक प्रकार (chemical types) ओर बाकी सभी, जैसे कि मिथेन, फार्मिक अम्ल, क्लोरोफार्म और 'कार्बन क्लोराइड'को यात्रिक-प्रकार (mechanical type)के अन्तर्गत ग्रथित किया गया था।

१८५२मे गेरहार्डने अपनी नई 'टाइप थियरी' प्रकाशित की। इस सिद्धान्तके अनुसार यौगिकोको नीचे बताये अनुसार विविध टाइपोमे विभक्त किया गया था

$$\left.\begin{matrix}H\\H\end{matrix}\right\} \quad \left.\begin{matrix}C_2H_5\\H\end{matrix}\right\} \quad \left.\begin{matrix}H\\Cl\end{matrix}\right\} \quad \left.\begin{matrix}H\\H\end{matrix}\right\} \quad O\left.\begin{matrix}C_2H_5\\H\end{matrix}\right\} \quad \left.\begin{matrix}H\\OH\\H\end{matrix}\right\rangle N \quad \left.\begin{matrix}C_2H_5\\H\\H\end{matrix}\right\} M$$

यह सिद्धान्त कार्बनिक पदार्थोके वर्गीकरणके लिए तो ठीक था, परन्तु कार्बनिक पदार्थोकी रचनाको समझनेके लिए उपयोगी नही था। लगभग इसी समय फ्रैंकलैण्ड (१८२५-१८९९)ने प्रत्येक परमाणुकी दूसरे परमाणु अथवा परमाणुओसे सयोजित होनेकी शक्तिको दिग्दर्शित करनेवाले 'वेलेन्सी' (सयोजकता) शब्दको प्रचलित किया। केकुलेने इसी सयोजकताके सिद्धान्तको आधार बनाकर अपने विचारोको विकसित किया और बताया कि कार्बनकी सयोजकता ४ है और कार्बनके परमाणु कार्बनिक पदार्थोमे एक दूसरेसे जुडे रहते है। कूपरने भी उन्ही दिनो ठीक इससे मिलते-जुलते विचार व्यक्त किये और कार्बनिक पदार्थोको लेखाचित्रीय सूत्रो (graphic formula) द्वारा दिग्दर्शित करना आरम्भ किया। आज भी हम ग्राफीय सूत्रोके ही द्वारा कार्बनिक पदार्थोको पहचानते है। यहाँ कुछ उदाहरण दिये जा रहे है.

```
    H
    |
H - C - H
    |
    H
```

मिथेन

```
H - C = O
    |
    H
```

फार्मल्डिहाइड

```
    H     O
    |    //
H - C - C
    |    \
    H     OH
```

एसेटिक अम्ल

१८६५मे केकुलेने अपनी एक और महत्त्वपूर्ण खोज प्रकाशित की। उसने प्रमाणित किया कि एरोमेटिक (बेनजीन वर्गीय) वर्गके कार्बनिक पदार्थोकी रचना मिथेन, इथेन, ऐल्कोहल,

एसेटिक अम्ल आदिसे भिन्न प्रकारकी है। एरोमेटिक वर्गका मूलपदार्थ वेनजीन ६ कार्वन और ६ हाइड्रोजनका वना होता है (C_6H_6)। उसमे ६ कार्वन सीधी पक्तिमे नही वल्कि पट्कोणके आकारमे उपस्थित होते है और प्रत्येक कार्वनके परमाणुओकी ४ सयोजकता १ हाइड्रोजन, १ अन्य
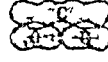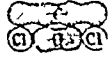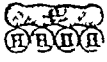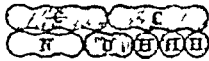
१८६१मे प्रकाशित अपनी पुस्तकमे केकुले द्वारा प्रदर्शित कार्वनिक पदार्थके सूत्र

कार्वन और शेष २ एक अन्य कार्वनके साथ जुडी रहती है। जहॉ दो कार्वन एक पक्तिसे जुडे होते है उसे एकल वन्ध (single bond) ओर जहॉ दो पक्तियोसे जुडे होते है उसे द्विवन्ध (double bond) कहते है।

इस पदार्थके एक या एकाधिक हाइड्रोजनके स्थान पर अन्य कोई परमाणु अथवा 'समूह' (group) प्रतिस्थापनके द्वारा प्रविष्ट किया जा सकता है। इस विपयकी अधिक जानकारी कार्वनिक रसायनकी भूमिका नामक अध्यायमे दी गई है।

केकुलेने कार्वनिक रसायनके क्षेत्रमे और भी काफी काम किया है। लेकिन उसके वेनजीन सिद्धान्तकी तुलनामे वह अधिक महत्त्वका नही है।
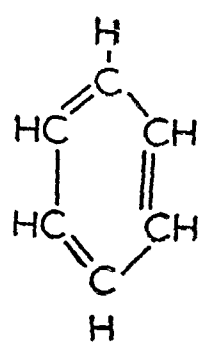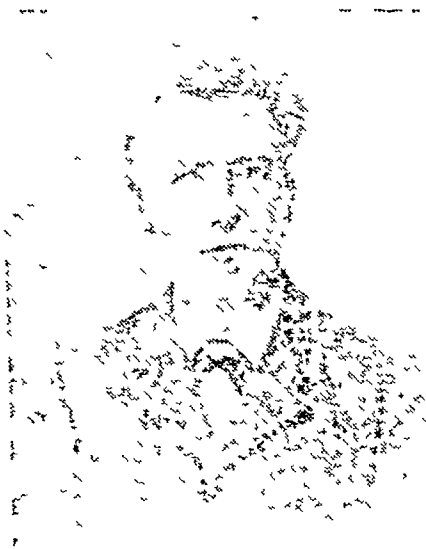
जे० एच० वेटहाफ (१८५२-१९११)   ऑगस्ट केकुले (१८२९-१८९६)

आगे चलकर कार्वनिक पदार्थोकी रचनाके सम्वन्धमे अविक निश्चयात्मक ढगसे जॉच-पडताल हुई और लवेल तथा वेण्टहाफके कार्योसे अनेक अनुत्तरित प्रश्नोके उत्तर मिले। ऐसे प्रश्नोमे एक प्रकाश-सक्रियता (optical activity)का प्रश्न भी था। कुछ पदार्थो, यथा लैक्टिक अम्ल, टार्टरिक अम्ल, ग्लुकोज आदिमे टुरमालिन स्फटिकमेसे (निकल प्रिज्म=निकल समपार्श्वमेसे) पारित की हुई प्रकाश किरणोको दाई अथवा वाई ओर मोडनेकी शक्ति होती है। लुई पाश्चर नामक फ्रान्सिसी वैज्ञानिकने ऐमोनियम टार्टरेटके दो प्रकारके स्फटिकोको पृथक् किया और उसने देखा कि एक प्रकारके स्फटिकके विलयन (घोल, द्रावण) मेसे प्रकाशको पारित करने पर ध्रुवित प्रकाश (polerised light) दाहिनी ओर तथा दूसरे प्रकारके विलयनमेसे पारित करनेपर ध्रुवित प्रकाश बाई ओर मुड जाता है। और भी कई कार्वनिक पदार्थोमे प्रकाश-सक्रियताका यह गुण पाया जाता है।

हाफमैन द्वारा वनाये हुए कार्वनिक पदार्थोके नमूने
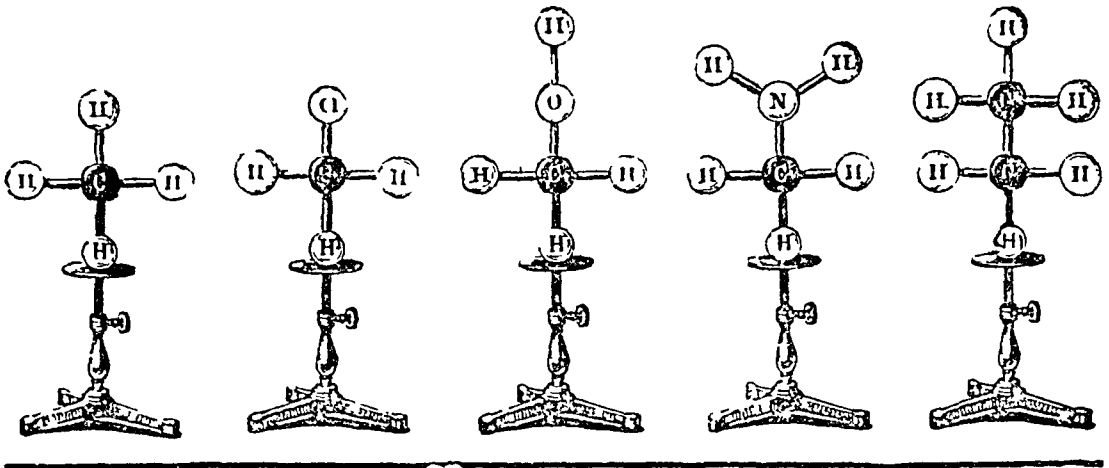
लवेल और वेण्टहाफके कार्योसे इसका कारण समझमे आ गया। इन दोनो अन्वेषकोने स्वतन्त्र रूपसे अपने अनुमानोको १८७४मे प्रकाशित किया था। उन्होने वताया कि कार्वनकी चार सयोजकता एक ही स्तर पर नही होती वल्कि अवकाश (दिक्)मे चारो ओर फैली रहती है और उनके छोरोको यदि जोड दिया जाए तो समभुजकोणीय चतुष्फलक (regular tetrahedron) वन जाता है। अव यदि इस कार्वन परमाणुकी चार सयोजकता चार भिन्न परमाणुओ अथवा अणुसमूहसे जुडी हो तो वह कार्वन असमान (unsymmetrical) होता है और उसकी दो सरचनाएँ सम्भव होती है—जिनका सम्वन्ध विम्व-प्रतिविम्वात्मक (वस्तु और दर्पणमे उसके प्रतिविम्वकी तरह) होता है। आगेकी आकृतियोमे लैक्टिक अम्लकी दो सरचनाएँ दिखाई गई है।

१९वी शताव्दीमे अनेक रासायनिक उद्योग प्रारम्भ हुए, जिनमे कृत्रिम (सश्लिष्ट) रगोका उद्योग सवसे उल्लेखनीय है। आजसे एक शताव्दी पहले केवल दर्जनभर वानस्पतिक, प्राणिज और खनिज रगोका उपयोग किया जाता था। १८५७मे विलियम पर्किन नामक एक सत्रह वर्षीय किशोरने स्कूलकी छुट्टियोमे अपने घरकी प्रयोगशालामे कुनैन वनानेका वीडा उठाया। उसने ऐनेलिन नामक पदार्थ पर पोटेसियम डाइक्रोमेट ओर सल्फ्यूरिक अम्लकी क्रियाकी तो सफेद कुनैन
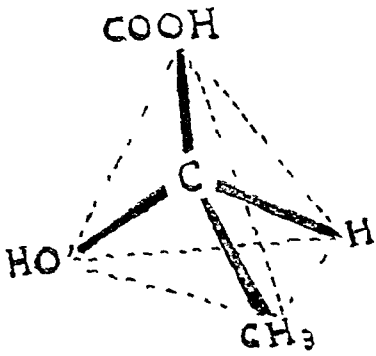
लैक्टिक अम्लकी
दो सरचनाएँ
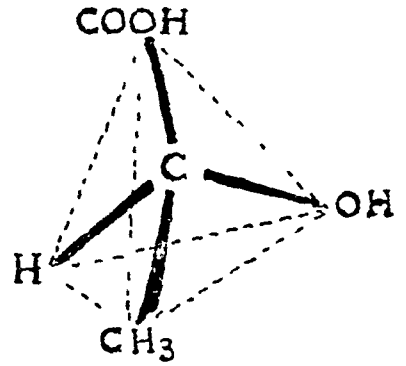
के वदले एक काला चिकना पदार्थ प्राप्त हुआ. उसमे ऐलकोहल (मद्य) मिलानेसे एक सुन्दर जामुनी (वैगनी) रगका घोल तैयार हो गया, जो रेशमकी रँगाई कर सकता था। यह था सर्वप्रथम सश्लिष्ट रग 'मोव'। उसके वाद १८५७मे पर्किनने कृत्रिम रगोका उद्योग आरम्भ किया और आज तो यह उद्योग वहुत प्रगति कर गया है। भिन्न-भिन्न वस्तुओके लिए आज भिन्न-भिन्न रग उपलब्ध है। इन रगोको वनानेके लिए आवश्यक रसायन डामर (अलकतरा, कोलतार)मे प्राप्त किये जाते थे, इसलिए इन्हे डामरके रग भी कहा जाता था।

रग, औषधियाँ, विस्फोटक, फोटोग्राफीय रसायन आदि वस्तुएँ वडे पैमाने पर वनानेके लिए मूल रसायनोकी जरूरत थी और इसलिए उन्हे प्राप्त करनेकी खोज शुरू हुई। धातुएँ, खासतौर पर लोहा और इस्पात वनानेके लिए कोयलेका आसवन कर कोक प्राप्त किया जाता था। कोयलेके आसवनके दौरान कोयलेकी गैस मिलती थी, जिसका उपयोग शहरोमे रोशनी और ईधनके लिए किया जाने लगा। आसवनके दौरान उपलब्ध होनेवाला डामर कार्वनिक पदार्थोमे सवसे समृद्ध प्रतीत हुआ, इसलिए वडे पैमाने पर उसका आसवन कर और उसमेसे अनेक क्रियाओ-प्रक्रियाओके द्वारा वेनजीन, टाल्युईन, जाइलीन, फीनोल, ऐनेलिन, क्विनालीन, क्रेसोल, नैफ्थैलीन, ऐन्थासिन इत्यादि रसायनोका उत्पादन १९वी शताब्दीमे आरम्भ हुआ।

(a) C{O OH; H³

(b) C{OH; H³ — C H³

(c) C{O OH; H³ — C H³ — C H³

(d) C{O; H³ O; H³}C — C H³ H³ C

Acide salicylique

(e) C{O OH; O³; H

(f) C{O OH; O³ — C H³

(g) C{O OH; H³ — C{H³; O OH

(h) C{O OH; O³ — C{O³; O. OH

(i) C{C H; C H — C{C H; C O OH — C{O³; O OH
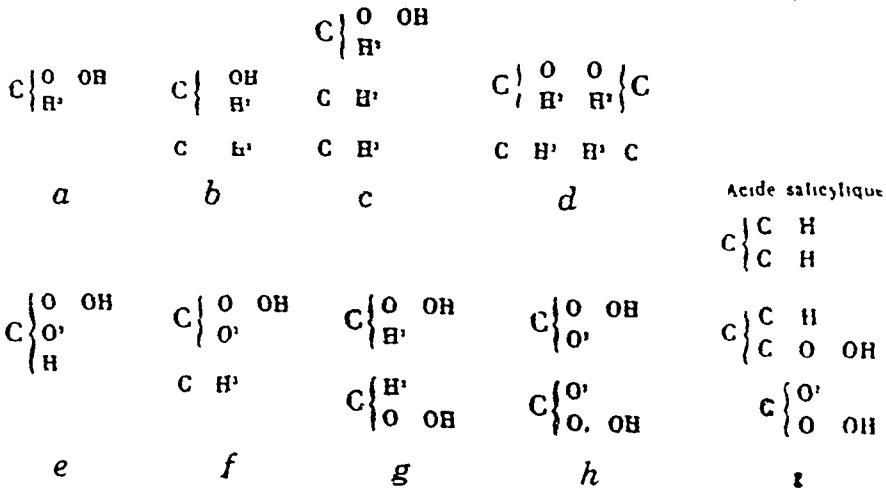
कार्वनिक रसायनके कूपर द्वारा निर्धारित सूत्र (१८५८) (a) ऐलकोहल, (b) इथिल ऐलकोहल, (c) प्रोपाइल ऐलकोहल, (d) इथिल ईथर, (e) फार्मिक अम्ल, (f) एसेटिक अम्ल, (g) इथिलीन ग्लाइकोल, (h) आक्सेलिक अम्ल, (i) सैलिसिलिक अम्ल।

४ : मूलतत्त्वोंका वर्गीकरण और आवर्त-सारणी

१८६० तक अनेक मूलतत्त्वोके परमाणुभार निश्चित हो गए थे। इस दिशामे बर्जीलियसने सराहनीय प्रगति की थी। उसके बाद वेल्जियन रसायनज्ञ स्टासने शुद्ध रसायनोका उपयोग कर अत्यन्त सावधानीसे परमाणुभारका पता लगाया। इन दिनो रसायनज्ञ विभिन्न मूलतत्त्वोके पारस्परिक सम्बन्धोका पता लगाकर उनका वर्गीकरण करनेमे लगे हुए थे। १८३९मे डोबराइनरने यह पता लगाया कि समान गुणोवाले मूलतत्त्वोको तीन-तीनके समूहमे रखा जा सकता है। इन त्रिपुटियोके परमाणुभार या तो एक जैसे होते है या त्रिपुटीके बीचके मूलतत्त्वका परमाणुभार दूसरे दो परमाणुभारका लगभग मध्यमान होता है। नीचे इस तरहकी कुछ त्रिपुटियाँ दी जा रही है, कोष्ठकमे उनके परमाणुभार दिये गए है

१ लोहा (५५ ८५), कोवाल्ट (५८ ९४) और निकल (५८ ६९),

२ क्लोरिन (३५ ५), ब्रोमिन (८०) और आयोडिन (१२७),

३ कैल्सियम (४०), स्ट्रॉन्शियम (८७) और वेरियम (१३७),

४ लिथियम (७), सोडियम (२३) और पोटासियम (३८)।

लेकिन सभी मूलतत्त्वोको इस प्रकार तीन-तीनके समूहमे रखा नही जा सकता, इसलिए यह प्रयत्न अधूरा ही रहा। उसके बाद मूलतत्त्वोके वर्गीकरणके और भी कई असफल प्रयत्न किये गए। इग्लैण्डमे न्यूलैण्ड्सने मूलतत्त्वोको उनके परमाणुभारके अनुसार क्रमबद्ध करके क्रमाक दिये। अपने इस प्रयत्नमे उसने यह पाया कि हर आठवॉ मूलतत्त्व गुणोकी दृष्टिसे पहलेसे मिलता है। इस प्रकार सगीतके सप्तककी तरह मूलतत्त्वोके गुणोका पुनरावर्तन होता है। न्यूलैण्ड्सने इसे अष्टक नियम (law of octaves) नाम दिया। इस योजनाके अनुसार समान गुणोवाले मूलतत्त्व एक साथ आते है। उदाहरणार्थ लिथियम, सोडियम और पोटासियम, वेरिलियम और मैग्नेशियम, वोरोन और ऐल्युमिनियम आदि। आगे चलकर इस पद्धतिमे भी कई खामियाँ दिखाई दी, इसलिए इसका परित्याग किया गया। लेकिन न्यूलैण्ड्सके कार्यने यह तो साबित कर ही दिया कि अनेक मूलतत्त्वोके बीच समानताके अश है और उनमे आवर्तन पाया जाता है। उसके बाद लोथर मायरने इस क्षेत्रमे उल्लेखनीय प्रगति की।
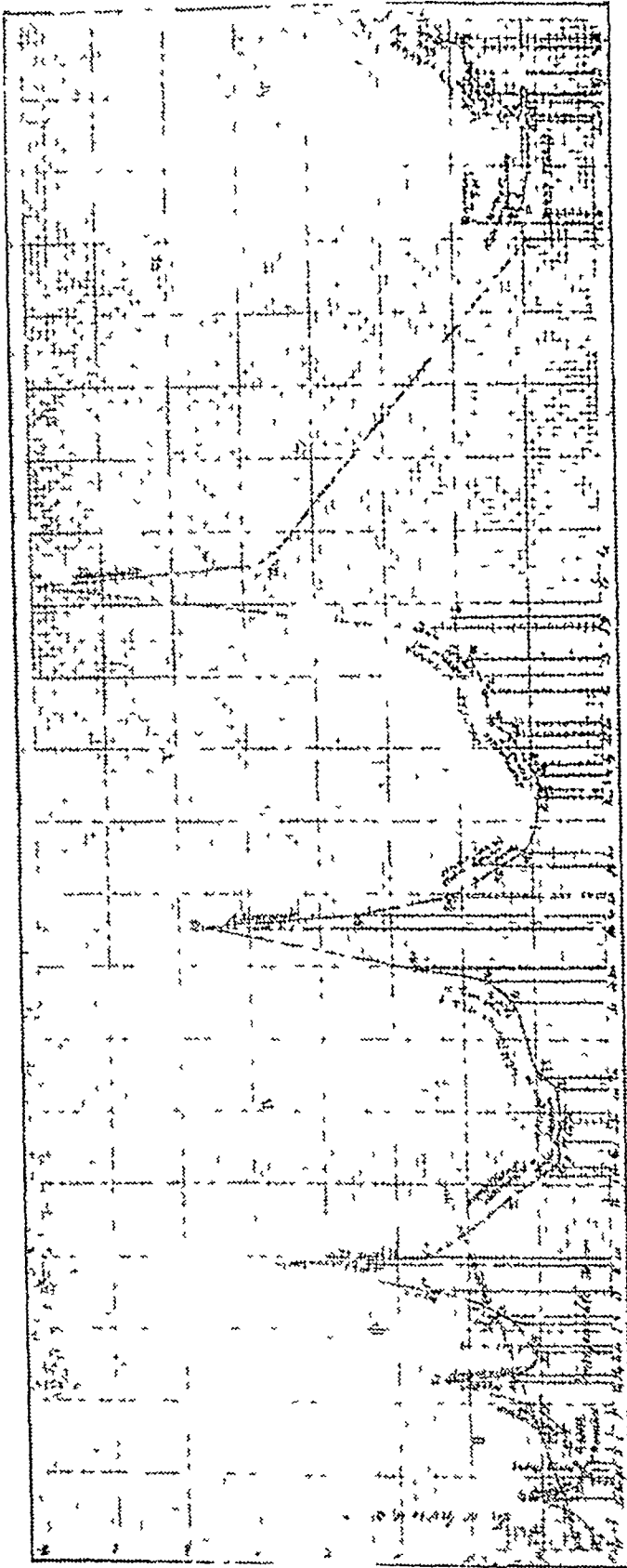
लोथर मायरका लेखा चित्र (आलेख)

लोथर मायर (१८३०-१८९५) ट्युविनगनमे प्राध्यापक था। वह उच्चकोटिका शिक्षक और लेखक था। 'रसायनके आधुनिक सिद्धान्त' नामक उसका ग्रन्थ अनेक वर्षो तक रसायनका प्रामाणिक ग्रन्थ माना जाता रहा। लोथर मायरने परमाणु आयतन और परमाणुभार दोनोका ही चित्रालेख आलेखित किया। यह लोथर मायरका परमाणु आयतन चित्रालेखा (curve) कहलाता है। पृष्ट ४८ पर दिये गए चित्रालेखमे समान गुणवाले भिन्न-भिन्न मूलतत्त्व समान स्थान (analogous positions) ग्रहण किये हुए है।

लोथर मायर (१८३०–१८९५)

मूलतत्त्वोका जो वर्गीकरण और आवर्त-सारणी आजकल प्रचलित हे उसका श्रेय रूसी रसायनज्ञ मेण्डलीफको है। मेण्डलीफ (१८३४-१९०७)का जन्म साइवेरियाके टोवोल्स्क गॉवमे हुआ था। कमजोर स्वास्थ्य, गरीवी और पढनेमे विशेष रुचि न होनेके कारण वह सामान्य कोटिका विद्यार्थी समझा जाता था। लेकिन पेत्रोग्राद (अव लेनिनग्राद)की शिक्षक-प्रशिक्षण सस्थामे प्रवेश लेनेके वादसे उसका वौद्धिक विकास हुआ और उसने अपनी गवेषणाओके परिणाम

EXPERIMENT IN THE SISTEM OF ELEMENTS
Based on Their Atomic Weights and
Chemical Similarities

			Ti = 50	Zr = 90	? = 180
			V = 51	Nb = 94	Ta = 182
			Cr = 52	Mo = 96	W = 186
			Mn = 55	Rh = 104.4	Pt = 197.4
			Fe = 56	Rn = 104.4	Ir = 198
			Ni Co = 59	Pt = 106.6	Os = 199
H = 1			Cu = 63.4	Ag = 108	Hg = 200
	Be = 9.4	Mg = 24	Zn = 65.2	Cd = 112	
	B = 11	Al = 27.4	? = 68	Ur = 116	Au = 197?
	C = 12	Si = 28	? = 70	Sn = 118	
	N = 14	P = 31	As = 75	Sb = 122	Bi = 210?
	O = 16	S = 32	Se = 79.4	Te = 128?	
	F = 19	Cl = 35.5	Br = 80	I = 127	
Li = 7	Na = 23	K = 39	Rb = 85.4	Cs = 133	Tl = 204
		Ca = 40	Sr = 87.6	Ba = 137	Pb = 207
		? = 45	Ce = 92		
		?Er = 56	La = 94		
		?Yt = 60	Di = 95		
		?In = 75.6	Th = 118?		

D Mendeleyev

मेण्डलीफका वर्गीकरण

मेण्डलीफ (१८३४–१९०७)

प्रकाशित करना प्रारम्भ किये। १८६९में उसने मूलतत्त्वोंके वर्गीकरण पर पहला लेख और १८७१में इस विषय पर अपने समग्र विचारोंको प्रकाशित किया। अपनी आवर्त सारणी (Periodic

D. I. MENDELEYEV'S PERIODIC

PERIODS	SERIES	ELEMENT I	II	III	IV	V
1	I	H 1 1.0080 1				
2	II	Li 3 6 940 1 2	Be 4 9 013 2 2	5 B 10 82 3 2	6 C 12 011 4 2	7 N 14 008 5 2
3	III	Na 11 22 991 1 8 2	Mg 12 24 32 2 8 2	13 Al 26 98 3 8 2	14 Si 28 09 4 8 2	15 P 30 975 5 8 2
4	IV	K 19 39 100 1 8 8 2	Ca 20 40 08 2 8 8 2	Sc 21 44 96 2 9 8 2	Ti 22 47 90 2 10 8 2	V 23 50 95 2 11 8 2
	V	29 Cu 63 54 1 18 8 2	30 Zn 65 38 2 18 8 2	31 Ga 69 72 3 18 8 2	32 Ge 72 60 4 18 8 2	33 As 74 91 5 18 8 2
5	VI	Rb 37 85 48 1 8 18 8 2	Sr 38 87 63 2 8 18 8 2	Y 39 88 92 2 9 18 8 2	Zr 40 91 22 2 10 18 8 2	Nb 41 92 91 1 12 18 8 2
	VII	47 Ag 107 880 1 18 18 8 2	48 Cd 112 41 2 18 18 8 2	49 In 114 76 3 18 18 8 2	50 Sn 118 70 4 18 18 8 2	51 Sb 121 76 5 18 18 8 2
6	VIII	55 Cs 132 91 1 8 18 18 8 2	56 Ba 137 36 2 8 18 18 8 2	57 La ☆ 138 92 2 9 18 18 8 2	72 Hf 178 6 2 10 32 18 8 2	73 Ta 180 95 2 11 32 18 8 2
	IX	79 Au 197 0 1 18 32 18 8 2	80 Hg 200 61 2 18 32 18 8 2	81 Tl 204 39 3 18 32 18 8 2	82 Pb 207 21 4 18 32 18 8 2	83 Bi 209 00 5 18 32 18 8 2
7	X	87 Fr [223] 1 8 18 32 18 8 2	88 Ra 226 05 2 8 18 32 18 8 2	89 Ac ☆☆ 227 2 9 18 32 18 8 2	(Th)	(Pa)

☆ LANTHA

58 Ce	59 Pr	60 Nd	61 Pm	62 Sm	63 Eu	64 Gd
140 13	140 92	144 27	[145]	150 43	152 0	156 9
2 8 20 18 8 2	2 8 21 18 8 2	2 8 22 18 8 2	2 8 23 18 8 2	2 8 24 18 8 2	2 8 25 18 8 2	2 9 25 18 8 2

☆☆ ACTI

90 Th	91 Pa	92 U	93 Np	94 Pu	95 Am	96 Cm
232.05	231	238 07	[237]	[242]	[243]	[245]
2 10 18 32 18 8 2	2 9 20 32 18 8 2	2 9 21 32 18 8 2	2 8 23 32 18 8 2	2 8 24 32 18 8 2	2 8 25 32 18 8 2	2 9 25 32 18 8 2

Figures in square brackets are mass numbers of stablest isotopes

TABLE OF ELEMENTS

GROUPS

VI	VII	VIII			0
	(H)				He 2; 4 003; 2
8 O; 16; 6 2	9 F; 19 00; 7 2				Ne 10; 20 183; 8 2
16 S; 32 066; 6 8 2	17 Cl; 35 457; 7 8 2				Ar 18; 39 944; 8 8 2
Cr 24; 52 01; 1 13 8 2	Mn 25; 54 94; 2 13 8 2	Fe 26; 55 85; 2 14 8 2	Co 27; 58 94; 2 15 8 2	Ni 28; 58 69; 2 16 8 2	
34 Se; 78 96; 6 18 8 2	35 Br; 79 916; 7 18 8 2				Kr 36; 83 80; 8 18 8 2
Mo 42; 95 95; 1 13 18 8 2	Tc 43; [99]; 2 13 18 8 2	Ru 44; 101 1; 1 15 18 8 2	Rh 45; 102 91; 1 16 18 8 2	Pd 46; 106 7; 0 18 18 8 2	
52 Te; 127 61; 6 18 18 8 2	53 I; 126 91; 7 18 18 8 2				Xe 54; 131 3; 8 18 18 8 2
74 W; 183 92; 2 12 32 18 8 2	75 Re; 186 31; 2 13 32 18 8 2	76 Os; 190 2; 2 14 32 18 8 2	77 Ir; 192 2; 2 15 32 18 8 2	78 Pt; 195 23; 1 17 32 18 8 2	
84 Po; 210; 6 18 32 18 8 2	85 At; [210]; 7 18 32 18 8 2				86 Rn; 222; 8 8 32 18 8 2
(U)					

NIDES

65 Tb	66 Dy	67 Ho	68 Er	69 Tu	70 Yb	71 Lu
158 93	162 46	164 94	167 2	168 94	173 04	174 99
2 8 27 18 8 2	2 8 28 18 8 2	2 8 29 18 8 2	2 8 30 18 8 2	2 8 31 18 8 2	2 8 32 18 8 2	2 9 32 18 8 2

NIDES

97 Bk	98 Cf	99 En	100 Fm	101 Mv
[245]	[246]	[253]	[255]	[255]
2 8 27 32 18 8 2	2 8 28 32 18 8 2	2 8 29 32 18 8 2	2 8 30 32 18 8 2	2 8 31 32 18 8 2

Atomic number — Electron layers — Atomic weight — Symbol

सबसे अधिक स्थायी समस्थानिकों (isotopes) की द्रव्यमान-संख्या कोष्ठकोंमें दिखाई गई है।

Table)मे उसने परमाणुओको उनके भारके अनुसार इस क्रममे रखा कि समान गुणोवाले मूलतत्त्व एक-दूसरेके नीचे रहे। इस सारणीमे किसी एक मूलतत्त्वके स्थानके आधार पर हम उसके गुणोको बता सकते है। मेण्डलीफने लिखा है "जब मैंने कम-से-कम परमाणुभार वाले मूलतत्त्वोसे आरम्भ किया और उन्हे उत्तरोत्तर बढते हुए परमाणुभारके क्रममे रखा तो मुझे पता चला कि मूलतत्त्वोके गुणोमे एक प्रकारका आवर्तन होता है। इसलिए यदि मूलतत्त्वोको परमाणु-भारके अनुसार क्रमबद्ध किया जाए तो नियमित रूपसे समान गुणोवाले तत्त्वोका पुनरावर्तन होता है।" मेण्डलीफकी आवर्त-सारणी ऊर्ध्वाधर (vertical) और क्षैतिज (horizontol) रेखाओसे बने चौखटोमे बँटी हुई है। खडे चौखटे वर्ग या समूह (groups) और आडे चौखटे आवर्त (periods) कहलाते है। कुछ वर्गोके 'अ' और 'ब' ऐसे दो भाग किये गए है। एक वर्गमे 'अ' अथवा 'ब के नीचे आनेवाले मूलतत्त्वोके गुण एक जैसे होते है, परन्तु 'अ' और 'ब' वर्गके मूलतत्त्वोके गुणोमे अन्तर होता है। हर आवर्तके मूलतत्त्वोके गुण क्रमश बदलते जाते है।

किसी भी वैज्ञानिक सिद्धान्तका महत्त्व और विशेषता केवल इस बातमे नही है कि उसमे प्रचलित जानकारीको समझा जा सके, बल्कि इसमे है कि उस सिद्धान्तसे अब तक प्रकाशमे न आई हुई वस्तुओको खोजनेमे सहायता मिले और खोजी जानेवाली वस्तुओके गुणो इत्यादिकी भविष्यवाणी की जा सके। इस भविष्यवाणीके सच होने पर ही उस सिद्धान्तका समर्थन किया जाता है। मेण्डलीफकी आवर्त-सारणीमे कुछ जगहे खाली रह गई थी। वे रिक्त स्थान किन वर्गोमे हो, उनके ऊपर और नीचे आनेवाले मूलतत्त्वोके गुण क्या हो आदिका अपने सिद्धान्तके आधार पर विचार कर मेण्डलीफने रिक्त स्थानवाले जो मूलतत्त्व तबतक खोजे नही जा सके थे, उनके भी परमाणुभार और गुणोके बारेमे भविष्यवाणी की थी। जो मूलतत्त्व तबतक खोजे नही जा सके थे उन्हे उसने एकबोरोन, एकअल्युमीनियम और एकसिलिकोन नाम दिये थे। वर्षो बाद उनकी खोज हुई और आज वे स्कैंडियम, गेलियम और जर्मेनियमके नामसे जाने जाते है। उनके गुणोके सम्बन्धमे मेण्डलीफकी भविष्यवाणी सच साबित हुई।

मेण्डलीफके वर्गीकरण (आवर्त-सारणी)मे कुछ दोष भी थे। उदाहरणके लिए गुणोके आधार पर टेलुरियमको, जिसका परमाणुभार १२७ ५ है, १२६ ९ परमाणुभारवाले आयोडिनसे पहले छठवे समूहमे रखना पडता है। जब हीलियम, आर्गन, नियोन आदि निष्क्रिय गैसोकी खोज हुई तो यह समस्या उठ खडी हुई कि उन्हे कहाँ रखा जाए, उनकी सयोजकता शून्य होनेके कारण उनके लिए एक नया शून्य वर्ग बनाना पडा और ३९ ९ परमाणुभारवाले आर्गनको उसके गुणोके आधार पर ३९ १ परमाणुभारवाले पोटेसियमके पहले रखना पडा। और विरल मृदु मूलतत्त्वो (rare earths)के पन्द्रह सदस्योको बेरिलियम और हाफनियमके बीच एक ही स्थान (चौखटे)मे रखना पडता है।

२०वी शताब्दीमे परमाणु-रचना-सम्बन्धी जो गवेषणाएँ हुई, उससे इस आवर्त-सारणीमे यह सशोधन हुआ कि परमाणुभारका कोई महत्त्व नही रह गया और मूलतत्त्वोके गुण उनकी परमाणु-सख्या (क्रमाक) पर निर्भर माने जाने लगे। परमाणुभारके बदले परमाणु-सख्या लेनेसे कुछ त्रुटियोका निराकरण हो जाता है। आगे चलकर इस वर्गीकरणमे परिवर्तन होगा या नही, यह आज बताना सम्भव नही है। परिवर्तन अगर हो तब भी इस सारणीने इस पृथ्वी पर उपलब्ध

अनेक मूलतत्त्वो और उनके असख्य यौगिकोका विधिवत वर्गीकरण कर अव्यवस्थाकी स्थितिमे जो व्यवस्था लानेका महान प्रयास किया, उसके लिए इसका (सारणी) महत्त्व बना रहेगा।

१९वी शताव्दीमे अनेक रासायनिक उद्योगोकी नीव रखी गई, जिनमेसे कुछ उद्योगोका उल्लेख अगले अध्यायोमे किया गया है।
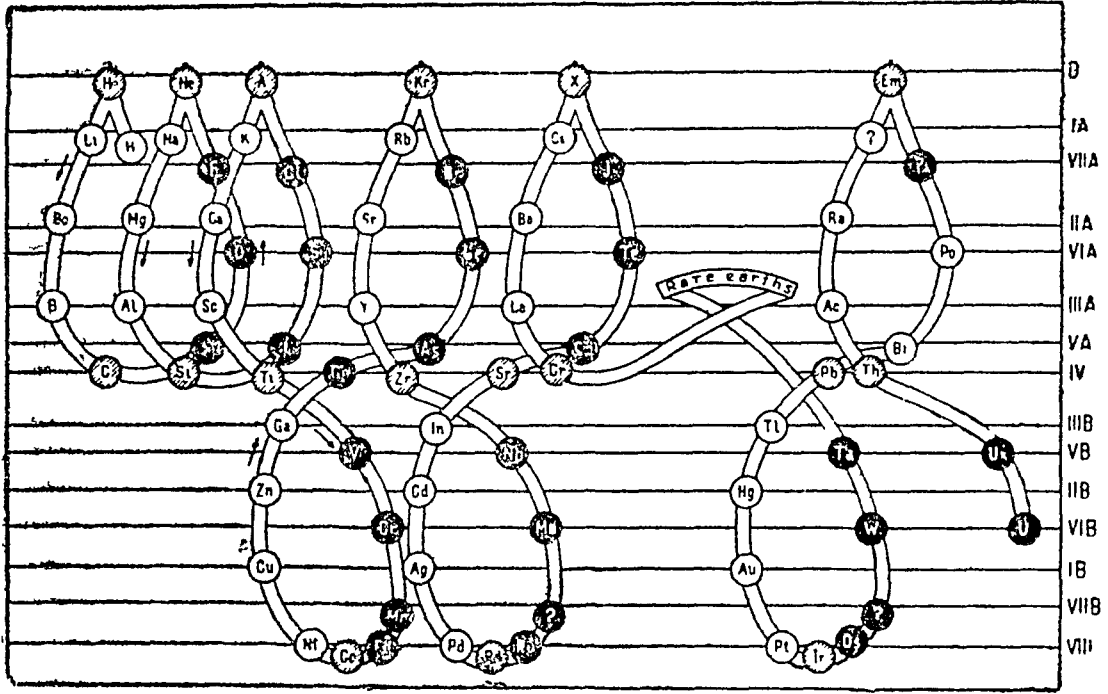
फ्रेडरिक सोडीकी आवर्त-सारणीकी रूपरेखा

[अनुप्रस्थ रेखाओमे समान गुणोवाले परमाणु, श्वेत गोलकोमे धातुएँ, काली बिन्दियोमे अर्ध धातुएँ और भूरे वर्तुलोमे निष्क्रिय मूलतत्व दिखाए गए है। नोवेल गैस और ऐम्फोटेरिक आक्साइड सबसे ऊपर की रेखामे दिखाए गए है]

फ्रेडरिक सोडी
(१८७७–१९५६)

बीसवी शताब्दीमे अनेक नये विचार प्रवर्तित हुए, जिनके द्वारा कार्बनिक पदार्थोकी रचना, उनकी रासायनिक क्रियाओ और उनके गुणो आदिके सम्बन्धमे और भी अधिक जानकारी मिली। इनमे इलेक्ट्रॉनवाद (Electionic Theoiy), अणुकक्षावाद (Moleculai oibits Theory) आदिका समावेश है। बीसवी शताब्दीके इस वैज्ञानिक विकास पर इस ग्रन्थके अन्तिम भागमे दृग्पात किया जाएगा।

महान दानी, स्वदेशाभिमानी, दूरदर्शी,
साहसी उद्योगपति

जमसेदजी नसरवानजी ताता

[१८३५–१९०४]

जीते-जागते स्मारक

- ताता हाइड्रोइलेक्ट्रिक वर्क्स
  [ताता जलविद्युत् प्रतिष्ठान]
- जमशेदपुरका लोह नगर
- नेशनल मेटेलर्जिकल लेबोरेटरी
  [राष्ट्रीय धातुकर्मक प्रयोगशाला]
- वगलोर इण्डियन इन्स्टीट्यूट आफ सायन्सेज
  [भारतीय विज्ञान परिषद्]

तथा अनेक सस्थाएँ और न्यास (ट्रस्ट)

५ : धातु-रसायन

धातु और अधातु

मनुष्यका पहला रासायनिक हथियार था अग्नि। ठण्डसे अपने शरीरकी रक्षा करनेके लिए मनुष्य आग जलाता था। हिंसक प्राणियोसे अपनी रक्षा करनेके लिए मनुष्य अग्नि और हथियारोका उपयोग प्रागैतिहासिक कालसे करता आया है। आरम्भमे उसने लकडी और हड्डीके हथियार बनाए। उसके बाद पाषाण युगमे औजार बनानेके लिए उसने पत्थरका उपयोग किया। लगभग सात हजार वर्ष पहलेकी यह बात है।

फिर जैसे-जैसे सभ्यताका विकास होता गया उसने मिट्टीकी ईंटे और बरतन बनाना शुरू किया। आरम्भमे इन चीजोको पकानेके लिए वह सूर्यकी गर्मीका उपयोग करता था। उसके बाद तो मिट्टी पकानेके लिए भी वह अग्निका उपयोग करने लगा। इस तरह मिट्टीको पकाते हुए ही उसे एक दिन अकस्मात् धातु मिल गई। फिर तो धातुओका उपयोग हथियार बनानेमे किया जाने लगा। कुछ धातुएँ तो प्रकृतिसे ही शुद्ध रूपमे मिल जाती थी, इसलिए उनमे उसे रासायनिक दृष्टिसे विशेष कुछ करना नही होता था। ऐसी धातुओमे सोना, चाँदी और ताँबा मुख्य थी। कभी-जभी तारोके टूटनेसे बहुत थोडी मात्रामे शुद्ध लोहा भी मिल जाया करता था। इन धातुओने मनुष्यका ध्यान आकर्षित किया, परन्तु उस समयके जन-समाजमे पत्थरके हथियारो-का ही उपयोग होता रहा।

ताँबेकी कच्ची धातुको उस समयका मनुष्य पत्थर ही समझता था। पत्थरकी तरह उसने उसके औजार बनाना शुरू किया, तब उसे उनके गुणोका पता चला। पत्थरको धारदार बनानेकी क्रियामे कितने ही पत्थर टूट जाते तब किसी एक पत्थरमे काम लायक धार बन पाती थी। लेकिन यह नई जातिका पत्थर टूटता नही था। जितना ही पीटा जाता चपटा होकर फैलता जाता था। इससे बने हथियार ज्यादा समय तक चलते थे। धार बोथरी हो जाने पर घिसनेसे धार भी बन सकती थी। इसके परिणामस्वरूप पाषाणयुगका अन्त और ताम्रयुग का प्रारम्भ हुआ।

कही-कही ताँबा और राँगा (वग) कच्ची धातुके रूपमे पास-पास मिल जाते थे। इन कच्ची धातुओसे अग्निके ताप द्वारा ताँबा निकालनेके प्रयत्नमे आकस्मिक रूपसे काँसेका आविष्कार हुआ। काँसा ताँबेसे भी कडा था, वह कटता नही था और उसकी धार भी अच्छी बनती थी। इसलिए कास्ययुग शुरू हुआ। यह ईसा पूर्व ५०००की बात है।

ईसा पूर्व ३००० वर्ष पहले रागेकी खोज हुई। मृदुधातु होनेके कारण इसका स्वतन्त्र उपयोग नही हो सकता था, परन्तु कमोबेश मात्रामे ताँबेके साथ मिलानेसे काँसा बनता था, और काँसेके ज्यादा अच्छे और ज्यादा अच्छी तरह औजार बनाये जा सकते थे।

क्रमश लोहेके खनिजसे लोहा वनानेका ज्ञान मनुष्यने अर्जित किया। उसमे निहित पेचीदा रासायनिक क्रियाएँ ज्यादा अच्छी तरह समझमे आती गई। धीरे-धीरे लोहेका सिक्का जमने लगा। मनुष्य कास्ययुगसे लोहयुगमे आया। लोहेके हथियारो और औजारोका प्रचलन वढने लगा। आज भी अफ्रीकाकी कुछ नीग्रो (हब्शी) जातियाँ पुराने ढगसे अपने उपयोग लायक लोहा वना लेती है। उस पुरातन कालमे भी भारतमे लोहा बनानेकी कला उच्चकोटि तक विकसित हुई थी। दिल्लीके समीप कुतुबमीनारके पास साढे छह टनका लोहस्तम्भ इसकी सजीव साक्षीके रूपमे आज भी खडा है।

हमारे आधुनिक जीवनमे लोहेका प्रमुख स्थान है। हमारे उद्योगोका विकास ओर समृद्धि लोहे पर ही निर्भर है।

धातु	ग्रह	चिह्न
सोना	सूर्य	☉
चांदी	चन्द्र	☽
ताम्र	शुक्र	♀
लोह	मंगल	♂
सीसा	शनि	♄
रांगा	गुरु	♃
पारद	बुध	☿

प्राचीनकालमे केवल सात धातुओकी जानकारी थी। उस कालके कीमियागरोकी ऐसी मान्यता थी कि इन धातुओपर ग्रहोका असर होता है। इसलिए ग्रहोके नाम उन धातुओसे जोडे जाते थे, यथा सोनेको सूर्य, चाँदीको चन्द्र, ताँवेको शुक्रके साथ आदि-आदि। रसायनशास्त्रमे उस कालमे प्रत्येक धातुको भी ग्रहका सांकेतिक चिह्न अथवा संकेत प्रदान किया जाता था।

उन प्राचीन नामोके अवशेष आज भी विद्यमान है। सिल्वर नाइट्रेटको आज भी ल्युनर कॉस्टिक कहा जाता है (लैटिन भाषामे चन्द्रको ल्युना कहते है)। इन पुराने नामोमेसे पारेके लिए मरक्युरी (वुध ग्रहका नाम) शब्द अभी भी प्रचलित है।

समयके साथ धातुओको गलानेकी कला भी वैज्ञानिक ढगसे प्रगति करती गई। रसायन-वेत्ता रसायन-सम्बन्धी सिद्धान्तोका वरावर विस्तार करते जा रहे थे। प्राचीन दार्शनिको और चिन्तकोके द्वारा स्थापित और निर्धारित मर्यादाएँ प्रयोगोके द्वारा टूटती जाती थी। पदार्थोके सरलतम रूपको खोजनेके प्रयत्न हो रहे थे। इन प्रयत्नोके परिणामस्वरूप मूलतत्त्व (elements) अस्तित्वमे आये। पाँच महाभूतोके सिद्धान्तका अन्त हुआ।

शुरू-शुरूमे चूना और लवण मूलतत्त्व माने गए, लेकिन १८०७ ईसवीमे विद्युतकी सहायतासे चूनेमेसे कैल्सियम और लवणमेसे सोडियम पृथक् किये गए। पानीको भी मूलतत्त्व

समझा जाता था, लेकिन वह आक्सीजन और हाइड्रोजनका यौगिक साबित हुआ। इस प्रकार मूलतत्त्वोकी सख्या क्रमश बढती गई।

इन मूलतत्त्वोके अनेकविध सयोगोसे हजारो पदार्थोके अस्तित्वमे आनेकी मान्यता प्रचलित हुई। प्रत्येक मूलतत्त्व अपने परमाणुओका बना होता है। इन परमाणुओको अविनाशी और अविभाज्य माना जाता था। लेकिन मेरी क्यूरी द्वारा आविष्कृत रेडियमने इस मान्यता पर उल्कापात किया। रेडियम और उसके जैसे अन्य मूलतत्त्व स्वय टूटते रहते है और उनसे दूसरे मूलतत्त्व पैदा होते हैं। यह प्रक्रिया अपने आप चलती रहती है। उसमे ऊष्मा या अन्य किसी प्रकारकी रासायनिक क्रियाकी सहायताकी आवश्यकता नही होती। इससे यह विकट समस्या उठ खडी हुई कि रेडियमको मूलतत्त्व माना जाए अथवा नही ? यदि उसे मूलतत्त्व माने तो मूलतत्त्वकी प्रचलित परिभाषामे परिवर्तन करना आवश्यक हो जाता है।

विश्वकी रचनामे कुल मिलाकर ९२ मूलतत्त्व है। इनके अतिरिक्त कुछ मूलतत्त्व प्रयोगशालामे भी बनाये गए है। लेकिन वे अस्थायी है, और एक खास मुद्दतके बाद टूट जाते है। रसायनज्ञ मूलतत्त्वोके दो विभाग करते है एक धातु और दूसरा अधातु। यह विभागीकरण पूरी तरह शास्त्रीय (वैज्ञानिक) नही केवल सुविधाजनक है।

अब हम यह समझनेका प्रयत्न करेगे कि धातुएँ किसे कहते है। हथौडेसे पीटे जाने पर चद्दर बनाने योग्य घातवर्ध्य (malleable), तार खीचे जाने योग्य तन्य (ductile), साफ करने पर सतह चमकीली हो जानेवाले पदार्थोकी गणना धातुओमे की जाती है। मोटे तौर पर वे ऊष्मा और विद्युतकी सुसवाहक होती है। ये गुण धातुओकी पहचानके लिए पर्याप्त हैं, परन्तु वैज्ञानिक दृष्टिसे सन्तोपजनक नही। ताँबा, लोहा, राँगा, सोना, चाँदी, जस्ता और निकल आदि मूलतत्त्वोको धातुके रूपमे इसी प्रकार पहचाना जाता था और आज भी पहचाना जाता है।

साधारण तापपर धातुएँ ठोस अवस्थामे रहती है, केवल पारा अपवाद है—वह द्रव है। प्राचीनकालमे पारेको धातु नही माना जाता था, उसे रस कहा जाता था।

किस मूलतत्त्वको धातु और किसे अधातु कहा जाए, यह एक टेढा सवाल था। रसायनज्ञोने इसका एक हल खोज निकाला। जिस मूलतत्त्वका आक्साइड पानीमे घुलकर अम्ल प्रदान करे वह अधातु, और जिसके आक्साइड पानीमे घुलकर बेस-अल्कली (क्षार) बनाएं वे धातुएँ। अम्ल किसे कहा जाए ओर क्षार (अल्कली) किसे कहा जाए, इसका निर्णय करनेके लिए लिटमस नामक एक बैंगनी रगकी वनस्पतिके रसका उपयोग किया जाता था—आज भी किया जाता है। अम्लके विलयनमे लिटमस लाल हो जाता है और अल्कली (क्षार)के विलयनमे नीला। इस प्रकार धातु और अधातुका निर्णय करनेका काम लिटमस एक हद तक करता है, लेकिन अविलेय आक्साइडके बारेमे क्या किया जाए ?

फिर इसमे—अम्ल और क्षारकी ऊपर दी हुई व्याख्यामे—अपवाद तो है ही। पानी हाइड्रोजनका आक्साइड है, परन्तु लिटमसवाली कसौटी उसपर लागू नही होती। अम्ल-क्षारके परीक्षणमे पानी अपवाद है।

जमीनके अन्दरसे खोदकर निकाली हुई मिट्टी अम्लीय है या क्षारीय इसका निर्णय लिटमसके द्वारा किया जा सकता है। क्षारका गुण प्रदर्शित करनेवाली मिट्टी क्षारीय मृत्तिका

(alkaline earth) कहलाती है। इस मिट्टीसे किसी मूलतत्त्वको पृथक् किया जाए तो ऊपर बताई हुई परिभाषाके अनुसार उसे धातु कहना होगा, चाहे वह न तो घातवर्ध्य (कुट्टय), न चमकीली और न तन्य—तारकसमे तार खीचे जाने योग्य—ही हो।

अधातुओमे सामान्यत धातुओकी तरह चमक (चमकीलापन) नही होती, उन्हे गढा नही जा सकता, वे कठोर (कडी) नही होती, उनका आपेक्षिक घनत्व धातुओकी तुलनामे कम होता है, वे ऊष्मा सवाहक नही होती और विद्युत सवाहकताका गुण उनमे नामको ही होता है—यद्यपि इसमे कुछ अपवाद भी है। आयोडिन और ग्रेफाइट अधातुए है, फिर भी उनमे चमकीलापन होता है। ग्रेफाइट तो विद्युत सवाहक भी है। इसके विपरीत धातुओमे धातुई चमक—धातुद्युति होती है, उन्हे पीटकर चद्दरे (पतरे) बनाई जा सकती है। परन्तु एण्टिमनी (सुरमेकी धातु) और बिस्मथ धातुएँ होते हुए भी उनको पीटकर चद्दरे नही बनाई जा सकती, पीटनेसे वे भुरभुरी होकर चूर्ण बन जाती है। धातुएँ कठोर होती है, इसलिए उनके तार खीचे जा सकते है—तारके रूपमे भी वे टूटती नही।

फिर कुछ धातुएँ वजनमे बिलकुल हलकी होती है। सोडियम, पोटेसियम, मेग्नेसियम, केल्सियम और एल्युमीनियम धातुओका घनत्व कम होनेसे वे वजनमे हलकी होती है। परन्तु सबसे हलकी धातु तो लिथियम है। उसका आपेक्षिक घनत्व केवल ० ५३ है। धातुएँ सामान्यत ऊष्मा-सवाहक होती है।

यह तो हुई भौतिक गुणोकी बात। रासायनिक गुणोकी दृष्टिमे धातुओ और अधातुओको एक-दूसरेसे भिन्न करनेवाली चार बाते है

(१) अधातुओको हवा या आक्सीजनमे जलानेसे उनके आक्साइड अम्लीय गुण प्रदर्शित करते है। परन्तु पानी, कार्बन, डाइआक्साइड और नाइट्रस आक्साइड—जैसे कुछ यौगिकोका लिटमस पर कोई असर नही होता। मतलब यह कि उनके गुण न तो क्षारीय होते है और न अम्लीय ही। धातुओको इस तरह जलानेसे जो आक्साइड प्राप्त होते है वे बेसिक (समाक्षारीय) गुण प्रदर्शित करते है। परन्तु जस्ता (जिक) और एल्युमीनियमके आक्साइड उभयधर्मी होनेके कारण अम्लीय और समाक्षारीय दोनो ही गुण प्रदर्शित करते है। क्रोमियम और मैगेनीज धातुओके आक्साइडो (जिनमे धातुकी सयोजकता ६ और ७के बराबर है)मे CrO_3 और Mn_2O_7 अम्लीय गुण होते है।

(२) फ्लोरिन, क्लोरिन, ब्रोमिन, आयोडिन हेलोजन कहलाते है। इनके योगिकोको हेलाइड कहते है। इस प्रकारकी अधातुओके हेलोजन-यौगिकोका पानीमे पूरी तरह विघटन होता है। केवल कार्बन-टेट्राक्लोराइडका पानीमे विघटन नही होता। धातुओके हेलोजन-योगिकोका पानीमे विघटन हुए बिना ही विगलन हो जाता है। कुछ धातुओके हेलोजन-यौगिकोका (एण्टीमनी, बिस्मथ, राँगा) पानीके साथ सीमित अशमे प्रतिवर्ती विघटन होता है। यथा, बिस्मथ क्लोराइडमे पानी डालनेसे सफेद अवक्षेप (precipitate) पैदा होता है।

$$BiCl_3 + H_2O \rightleftharpoons BiOCl + 2HCl$$
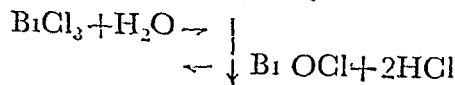
पानी डालने पर दाहिनी ओरकी क्रिया और HCl मिलाने पर बायी ओरकी क्रिया होती है।

(३) धातुओके यौगिकोके किसी विलयनको ले और उसमे विद्युत इलेक्ट्रोड (विद्युदग्र)को रखकर विद्युत पारित करे तो उस विलयनका विद्युत् विश्लेषण (विच्छेदन) होता है। घोलमे आयनके रूपमे रहनेवाला धातुका अश ऋणाग्रकी ओर आकर्षित होता है और अधातुका अश धनाग्रकी ओर आकर्षित होता है। इसीलिए धातुएँ इलेक्ट्रो-पाजिटिव अर्थात् विद्युत्-धनात्मक (+) और अधातुएँ इलेक्ट्रो-निगेटिव अर्थात् विद्युत्-ऋणीय (−) कहलाती है।

(४) अधातुएँ जटिल लवण (complex salts) प्रदान नही करती, परन्तु अपवाद इनमे भी है। वोरोन (वोरिक अम्लका मूलतत्त्व) और सिलिकोन (बालूका मूलतत्त्व) KBF_4, K_2SiF_6 जैसे जटिल लवण वनाती है। इसके विपरीत धातुएँ जटिल लवण प्रदान करती है, जिनमे धातुका विद्युत्-आवेश कभी धनात्मक तो कभी ऋणात्मक होता है। उदाहरणार्थ कोवाल्ट धातु कोवाल्ट-एमाइन्स प्रदान करती है, जिसमे $[CO(NH_3)_6]^{---}$ऋणात्मक विद्युत् आवेश दिखाता है।

$$4\ CO(OH)\ NO_3+28\ NH_4OH+O_2=4[Co\ (NH_3)_6]^{+++}(OH)_2+$$
$$4NH+NO_2+22H_2O$$
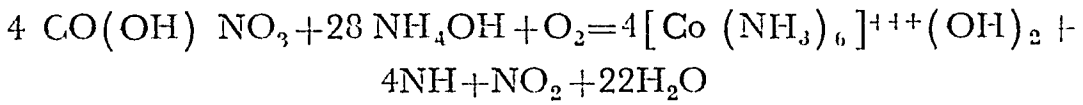
पोटेसियम फेरोसाइनाइडमे फेरोमाइनाइड $[Fe\ (CN)_6]$ आयन ऋणात्मक विद्युत् आवेश दिखाता है। इस प्रकार रसायनज्ञोने धातु और अधातुके अन्तरको स्पष्ट करनेके लिए कई प्रयत्न किये, परन्तु उनकी हर व्याख्या और परिभाषामे कोई-न-कोई अपवाद निकल ही आया। इसलिए धातु और अधातुकी स्पष्ट और निर्णयात्मक परिभाषा सभव नही हो पाती थी। परन्तु आधुनिक इलेक्ट्रॉन वादके सुस्थापित हो जानेके बाद धातु और अधातुकी परिभाषाएँ भी बदल गई।

जिन मूलतत्त्वोके परमाणुओमे बाह्य इलेक्ट्रानोकी सख्या १, २, ३ होती है उन सभी मूल-तत्त्वोको धातु माना जाता है। उनका अधातुतत्त्वोसे सयोग होने पर विद्युत् विलयनमे अपनेसे सयोग करनेवाले परमाणुओको वे अपने इलेक्ट्रॉन दे देते है और धनात्मक विद्युत् आवेश धारण करते है। उदाहरणार्थ, सोडियम धातु अपना एक इलेक्ट्रॉन क्लोरिनको देती है इसलिए सोडियम धनात्मक आयन (Na^+) वनती है, और क्लोरिन एक इलेक्ट्रॉन मिलनेसे ऋणात्मक आवेश धारण करती है अर्थात् क्लोरिन ऋणात्मक आयन (Cl^-) क्लोराइड वन जाती है। पानीमे विगलित नमक (NaCl) Na^+ ओर Cl^- आयन देता है।

अधातु वह है जिसके परमाणुके वाह्य इलेक्ट्रॉन ५, ६, ७ होते है और वह सयोग करने वाली धातुके परमाणुसे शेष इलेक्ट्रॉन लेकर अपने वाह्य वर्तुलमे आठ इलेक्ट्रॉनोकी सख्या पूरी करती है।

इस दृष्टिसे देखने पर भी धातु-अधातुका भेद पूरी तरह स्पष्ट नही हो पाता। जिन मूलतत्त्वोके वाह्य इलेक्ट्रॉनोकी सख्या चार हो उनका क्या किया जाए?

इस शताब्दीमे कुछ धातुओके कार्वधात्विक यौगिक (organometalic compounds) वनाये गए है। इन्हे धातुकार्वनिक-यौगिक भी कहते है। कई धातु-कार्वनिक-यौगिक पिछले कुछ वर्षोंसे दवाइयो, खेती-बाडीके क्षेत्रमे फसलो और पौधोको हानि पहुँचानेवाले जीव-जन्तुओ एव फफूंदो (फुगस)के जन्तुनाशक पदार्थो, उद्योगो तथा कलाओमे एव पेट्रोलमे 'एण्टिनोक' पदार्थके

रूपमे इस्तेमाल किये जाने लगे है। इतना ही नही, ऊष्मा और रसायन अवरोधक रबरके उत्पादनमे और मकानोमे पानीके पसीजनेको रोकनेके लिए ईंटो पर परत लगानेमे भी उनकी उपयोगिता और महत्त्व प्रमाणित हो चुके है। धातु-कार्वनिक-यौगिक प्रकृति प्रदत्त नही है। इनके पेड नही होते, प्रशिक्षित, वुद्धिमान, उत्साही अन्वेषको-अनुसन्धानकर्ताओके अथक परिश्रमके परिणामस्वरूप ये उपलव्ध किये जा सके है।

धातु-शोधनकी सामान्य विधियाँ

खनिज पृथ्वीके गर्भसे कच्ची धातुओ (ores)के रूपमे निकाले जाते ह। इनके साथ मिट्टी, वालू और अन्य विजातीय पदार्थ लिपटे हुए होते ह। इसलिए खनिजोमेसे धातु निकालनेके लिए सबसे पहले उनमे लिपटे हुए विजातीय पदार्थोको अलग कर खनिजोको साफ करना पडता है। इससे अयस्क (ore)मे धातुके अनुपातका सकेन्द्रण या सान्द्रण (concentration) होता है। विजातीय पदार्थोसे उपयोगी खनिजको पृथक् करना 'धातुक-सॅवार' अथवा 'अयस्क-प्रसाधन' (ore dressing) कहलाता है।

खनिज यदि ढोकोंके रूपमे हुआ तो उसका चूर्ण करनेके लिए उसे दलित्रो (crushers)मे पीसा जाता है। फिर उस चूर्णको पानीमे नियारकर उसमे मिली हुई मिट्टी, वालू आदि अपद्रव्योको निकाल दिया जाता है।

तेल उत्प्लावन विधि
[१ घूमनेवाला पखा, २ हवा, ३ अनुपयोगी कचरा, ४ फेन, ५ सकेन्द्रित कच्ची धातु]

कई वार अयस्क दो-तीन भिन्न-भिन्न खनिजोके मिश्रणके रूपमे प्राप्त होते है। उनका आपेक्षिक घनत्व भिन्न-भिन्न होनेके कारण घनत्वके अन्तरोका उपयोग कर उन्हे एक-दूसरेसे पृथक् (विलग) किया जाता है।

ग्रेफाइटमे फेल्स्पार (घनत्व २ ५७), अभ्रक (घनत्व २ ८५) ओर क्वार्ट्ज (घनत्व २ ६५) होता है। उन्हे विलग करनेके लिए वेनजिन (घनत्व ० ८७९) और मिथिलिन-आयोडाइड (घनत्व ३ ३३)के मिश्रणका उपयोग किया जाता है। इसमे ग्रेनाइटका चूर्ण डालनेसे फेल्स्पार उसमे तैरता है, लेकिन अभ्रक और क्वार्ट्ज भारी होनेके कारण पेदीमे वैठ जाते है।

कई वार द्रवके पृष्ठ तनाव (surface tension)के अन्तरका उपयोग भी रसायनज्ञ कर लेते है। जस्तका खनिज जिकब्लेण्ड और साथमे मिले हुए वालूके कचरेवाले चूर्णको पानीकी सतह पर छिटका जाए तो वालू तुरत गीलित

होकर नीचे बैठ जाती है। जिक ब्लेण्ड पानीसे गीला नही होता और इसलिए पानीसे भारी होते हुए भी सतह पर तैरता रहता है। जिक ब्लेण्ड और सीसेके खनिज गेलिनाका भी इसी प्रकार पृथक्करण किया जा सकता है। इसमे पानीके साथ-साथ कई बार न्यूनाधिक मात्रामे तेलका भी उपयोग किया जाता है, इसलिए इसे तेल उत्प्लावन विधि (oil floatation method) कहते है। कुछ विशेष तैलीय पदार्थोको पानीमे डालकर वायुकी सहायतासे फेन उडाया जाता है। कुछ खनिजोके कण तेल-आवरित हो जाते है और फेनके साथ ऊपर आ जाते है, शेष अपद्रव्य और अशुद्धियाँ पानी द्वारा गीलित होकर नीचे बैठ जाती है। चुम्बकका उपयोग करके भी खनिजोको पृथक् किया जा सकता है। राँगे (वग)का खनिज टिनस्टोन (घनत्व ६ ४से ७ १) और टग्स्टन धातुका खनिज वोल्फ्राम (घनत्व . ७ १ से ७ ९) मिश्रित रूपमे निकलते है। दोनोका घनत्व लगभग एक-जैसा है इसलिए उन्हे तेल उत्प्लावन विधिसे विलग नही किया जा सकता। परन्तु टिनस्टोन पर चुम्बकका प्रभाव नही होता, वह अचुम्बकीय है। और वोल्फ्राम चुम्बकीय है, इसलिए इस खनिज-मिश्रणके चूर्णको चुम्बकीय वेलन पर घूमने वाले पट्टे पर गिराया जाता है। टिनस्टोन तो सीधा गिरता है परन्तु वोल्फ्राम चुम्बककी ओर आकर्षित होनेके कारण उसका ढेर अलग लगता जाता है। इसे इलेक्ट्रो-मैग्नेटिक अथवा चुम्बकीय विधि कहा जाता है। इस क्रियाके बाद धातु-शोधनका काम आगे बढता है। धातु-शोधनकी कुछ सामान्य विधियोको भी देख लिया जाए।
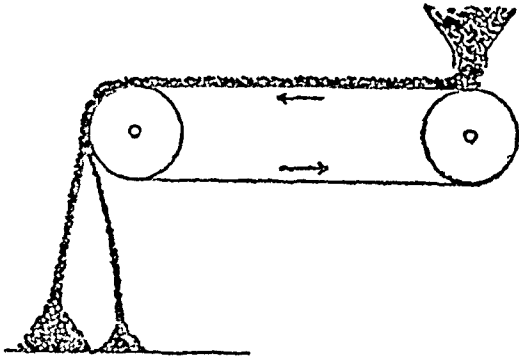
चुम्बकीय पद्धति

स्वर्ण और प्लेटिनम प्रकृतिमे अपनी धातु अवस्थामे—आदि धातुके रूपमे प्राप्त होनेवाली धातुएँ है। ताम्र, रजत और पारा-जैसी कुछ धातुएँ भी यदा-कदा असयुक्त अवस्थामे (आदि धातुके रूपमे) मिल जाती हे। बाकीकी सभी धातुएँ सामान्यत आक्साइडो और सल्फाइडो अथवा कार्बोनेटो और सल्फेटोके रूपमे प्राप्त होती है।

खनिजोमेसे धातु निकालनेकी विधिको धातु-शोधन कहते है।

प्रकृत ताँबा, सोना और प्लेटिनम धातुएँ महीन कणोके रूपमे प्राप्त होनेसे उन्हे अन्य पदार्थोसे विलग करना-भर रह जाता हे। इसलिए इसमे किसी विशेष प्रकारकी रासायनिक क्रियाकी आवश्यकता नही होती।

धातुओको उनके आक्साइडोमेसे शुद्ध स्वरूपमे प्राप्त करनेके लिए उनका अपचयन या अवकरण करना होता हे। अवकरणका अर्थ है उनमेसे आक्सीजनको अलग करना। इस क्रियाके लिए आक्सीजनको आसानीसे ग्रहण कर सके, ऐसे पदार्थोके साथ उन खनिजोको गरम किया जाता है। जस्ता, लोहा, मैगनीज, सीसा, ताँवा आदि धातुओके आक्साइड कोयलेसे सयोग करके कार्बन डाइ-आक्साइड बन जाते है ओर खनिजोसे धातु पृथक् हो जाती है। इस क्रियामे तेजी लानेके लिए कभी-कभी सुहागा, चूना आदि गालक (flux) मिलानेकी जरूरत होती हे। टग्स्टन और मैगनीजसे अधिक अणुभारवाली धातुओका आक्सीन्यूनीकरण करनेमे कोयला काम नही देता, इसलिए उन्हे

खूब गर्म करके उनमे हाइड्रोजन पारित किया जाता है। हाइड्रोजन धातु-आक्साइडके आक्सीजनमे सयोग करके वाष्पके रूपमे पानी बन जाता है और धातुएँ पृथक् हो जाती है।

क्रोमियम, मैंगेनीज, मालिब्डेनम, वेनेडियम आदि कुछ धातुओका आक्सीन्यूनीकरण न तो कार्बनसे हो पाता है और न हाइड्रोजनसे ही। ऐसी धातुओके शोधनके लिए उनके खनिजोको एल्यूमीनियमके चूर्णके साथ तपाया जाता है। इस विधि को स्मिटकी तापोपचार विधि (Thermite Process) कहते है। कभी-कभी एल्युमीनियमके चूर्णके बदले मैग्नेसियम या मिचमेटल (mischmetal) का भी उपयोग किया जाता है।

जहाँ अत्यधिक तापकी आवश्यकता होती है वहाँ विद्युत् भट्ठियोका उपयोग किया जाता है।

सल्फाइडके रूपमे प्राप्त होनेवाली कच्ची धातुका हवामे भर्जन—सिकाव (roasting) करनेमे सल्फर यानी गन्धक हवाकी आक्सीजनसे सयोग करके धातुको पृथक् कर देता है। इसके अतिरिक्त अनेक खनिजोका पानी या अन्य किसी द्रव या किसी अन्य पदार्थके रसमे आवश्यक ताप पर विलयन बनाकर उसमे विद्युत् पारित करनेसे विद्युत् विश्लेषण (विच्छेदन) के द्वारा शुद्ध धातु प्राप्त की जाती है। सोडियम, पोटेसियम, एल्युमीनियम और अन्य कई धातुओके क्लोराइडमेसे विद्युत् विश्लेषणके ही द्वारा धातुओका निस्सारण (extraction) किया जाता है।

कुछ धातुओके निस्सारणके लिए विशिष्ट विधियाँ काममे लानी पडती है। निकलको विशुद्ध रूपमे प्राप्त करनेके लिए कार्बन मोनो आक्साइड गैसके साथ उसका सयोग करनेसे निकल कार्बोनिक नामक द्रव बनता है, जिसका ऊष्माके द्वारा विघटन करनेसे शुद्ध निकल तैयार हो जाता है। यह विधि मॉण्डकी विधिके नामसे विख्यात है।

इस प्रकार रसायनज्ञोने धातु-शोधनकी कई भिन्न-भिन्न विधियाँ विकसित की है। उद्योगोमे उनका समुचित उपयोग किया जाता है और विश्वकी धातु-सम्बन्धी माँगको पूरा किया जाता है।

धातु-कर्मकी अभिनव विधियाँ

धातुओका शोधन कर लेने मात्रसे उससे बननेवाली चीजे तैयार नही हो जाती। विविध प्रकारके उपयोगके अनुसार धातु पर अनेक प्रकारकी क्रियाएँ करनी पडती है। एक छोटीसी आल-

धातु-कर्मकी विस्फोटक विधि
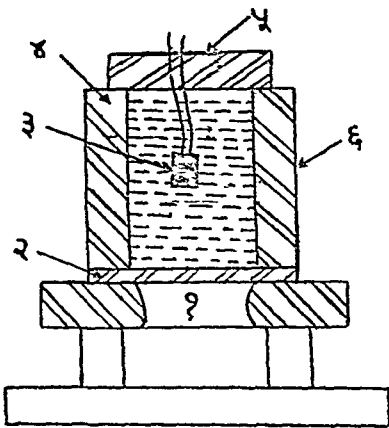
[१ ठपा (डाई), २ धातुकी चादर (प्लेट), ३ पानी से भरी हुई पोलिथिलिनकी थैलीमे विस्फोट पदार्थ, ४, ५, ६ धातुके वजनी निपिण्ड (ब्लाक)।

पीन बनानेमे ही कई प्रक्रियाएँ अपनानी पडती है। तार बनाना, एक-जैसे टुकडे करना, छोर दबाकर

मत्था बनाना, नोक तैयार करना, पालिश करना आदि। छोटे-बडे यत्रोके पुर्जे बनानेमे कही पर छेद करना पडता है और किसी हिस्सेकी ढलाई भी करनी पडती है।

कुछ धातुएँ सख्त होती है। उन पर काम करनेके लिए उनसे भी सख्त धातुओके औजारोकी जरूरत होती है। ऐसी सख्त धातुओके बने औजार बार-बार खिर जाते है। कुछ मिश्र धातुएँ इतनी कडी होती है कि उन पर काम करना बहुत ही मुश्किल और खर्चीला होता है। कामके दौरान उत्पन्न होनेवाली गर्मीके कारण ऐसी मिश्र धातुओ के गठनमे ढीलापन आ जाता है, जिससे नई-नई परेशानियाँ खडी हो जाती है और समय भी बहुत अधिक लग जाता है।

इन सब कठिनाइयोके कारण वैज्ञानिकोको धातु-कर्मके लिए नई-नई विधियाँ आयोजित करनी पडती है अथवा पुराने जमानेकी भूली हुई विधियोको पुनर्जीवित करना पडता है। फिर धातुओको आकार प्रदान करनेके लिए पराश्रव्य (कर्णातीत) तरगो, लासर किरणो, इलेक्ट्रॉन किरणो आदि आधुनिक आविष्कारोका भी उचित उपयोग किया जाता है।

धातुकर्मकी नवीनतम विधियोमे विस्फोटक पदार्थोका उपयोग, चूर्ण (पाउडर) विधि ओर विद्युत्-रासायनिक (इलेक्ट्रो-केमिकल) मशीनियरिग प्रमुख है।

यात्रिक सामग्रियोमे कुछ स्थानो पर रिवेट लगानेके लिए विस्फोटक पदार्थोका उपयोग किया जाता है। मजबूत टकीमे पानी या तेलकी सतह पर ठीक तरहसे जमाकर रखी हुई धातुकी चादरके ऊपर ठप्पे या साँचे (डाई)को रख कर उचित प्रकारके विस्फोटकका प्रस्फोट करनेसे टकीके अन्दरके द्रव पर एक-सा दवाव पडता है और उस दवावके कारण धातुकी चादर साँचेमे अच्छी तरह दवकर साँचेके अनुरूप आकृति ग्रहण कर लेती है। यह विधि अभी अपने आरम्भिक रूपमे है, परन्तु दिनोदिन विकसित होती जा रही है।

चूर्ण-धातु कर्ममे धातुओके चूर्णसे धातुकी छोटी-बडी चीजे बनाई जाती है। इस विधिमे धातु-का चूर्ण बनाकर उसे यथावश्यक आकृतिमे ठोस धातुमे बदलना होता है। प्रचलित विधियोमे इस नई विधिने खूब ध्यान आकर्पित किया है और लोगोकी रुचिके साथ-साथ दिनोदिन इसका प्रचलन भी बढता जाता है। यह कहा जा सकता है कि समयके साथ चूर्ण-धातु शोधन-विधि बहुत महत्त्वपूर्ण हो जाएगी।

विस्फोटक विधिसे बनाई हुई धातुकी चीजे

वैसे धातुओके चूर्ण या चूरेसे धातु बनानेकी विधि बहुत पुराने समयसे चली आती है। दक्षिण अमेरीकाकी इन्का सभ्यताके समयके बने हुए सोने-चाँदीके बहुतसे आभूपण मिले है। प्रकृतिमे मिलनेवाले प्लेटिनम धातुके चूर्णसे धातु बनानेके लिए १८वी सदीके अन्तमे यूरोपमे
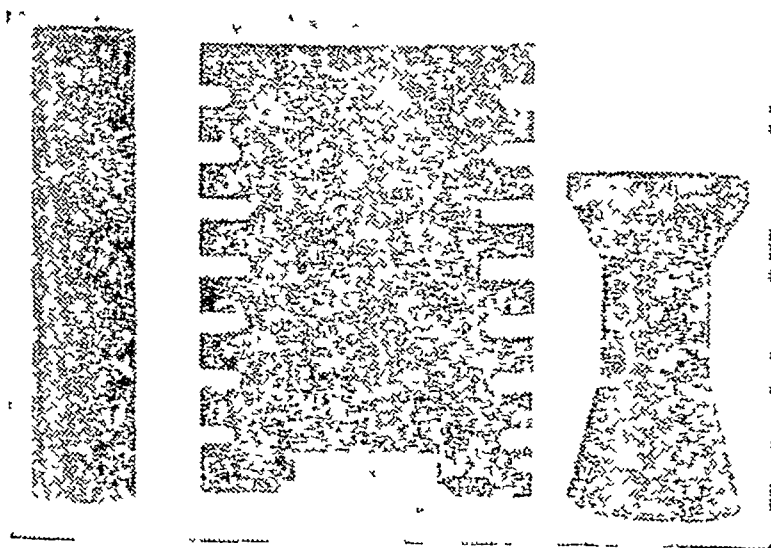
चूर्ण-धातुशोधन-विधि काममे लाई जाती थी। इस विधिमे थोडी मात्रामे कुछ किलोग्रामके धातुके नमूने बनाये जा सकते है। वैसे १६०० वर्ष पूर्व दिल्लीमे कुतुबमीनारके समीप निर्मित लोहस्तम्भ (६-७ टन वजनका) लोहेके चूर्णसे ही बनाया गया था।

चूर्ण-धातुशोध विधिका पहला आधुनिक प्रयोग बिजलीके लट्टूमे काम आनेवाले धातुके महीन तार बनानेमे किया गया। ऑस्मियम धातुके चूर्णसे पहले-पहल इस धातुका महीन तार बनाया गया। इसी प्रकार टंग्स्टन, वेनेडियम, जिर्कोनियम, टेण्टालम और अन्य धातुओ पर भी चूर्ण-धातुशोधकी यह विधि लागू की गई। इनमे भी सबसे पहले टेण्टालम धातुका महीन तार बनाया गया था। इसके बाद कुलीजने यह खोज की कि टंग्स्टनके चूर्णसे बनाई हुई टंग्स्टन धातुको एक खास ताप पर गर्म करे तो ठण्डे होने पर सामान्य ताप पर भी उसके तार खीचे जा सकते है। इस प्रकार वह अपनी तन्यताको बनाये रखती है, इसीलिए इस धातुका उपयोग किया गया।

सहज ही प्रश्न उठता है कि धातुका चूर्ण बनानेकी आवश्यकता ही क्या है? धातुको गलाकर उससे चीजे बनानेकी प्रचलित विधिसे इसमे क्या विशेषता है?

टंग्स्टन जैसी कुछ धातुओको गलाकर द्रव बनानेके लिए अत्यन्त ऊँचे तापकी जरूरत होती है, लेकिन उनका चूर्ण बहुत आसानीसे बनाया जा सकता है। फिर चूर्णके रूपमे उपयोग करनेसे अपव्यय भी नही होता, आवश्यकतानुसार ही उपयोग होता है। और इस विधिसे धातुकी तैयार चीजे आसानीसे बनाई जा सकती है।
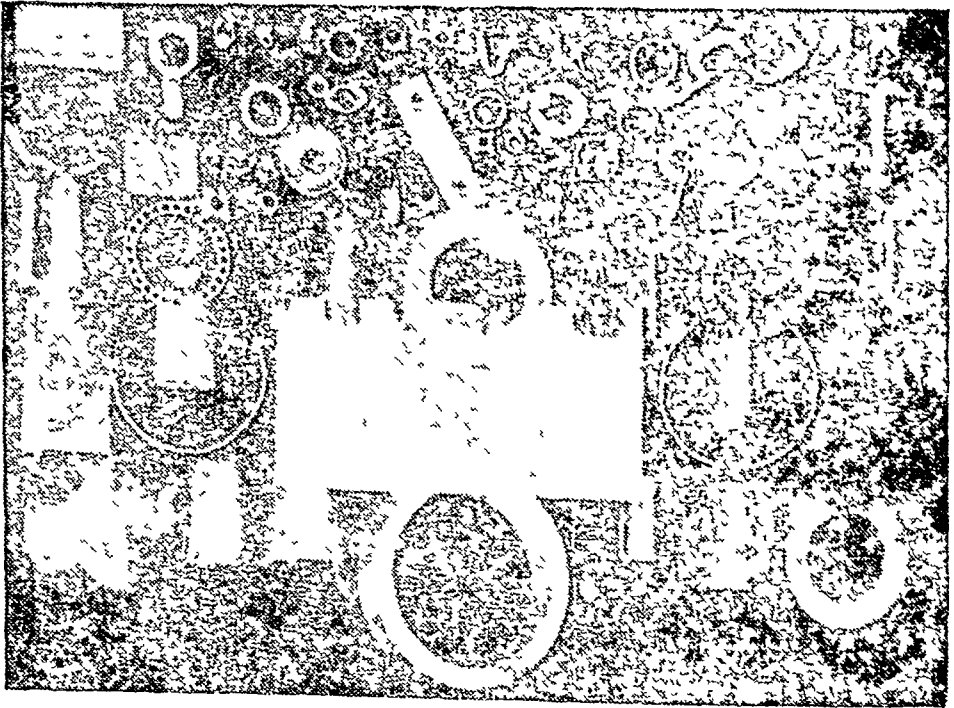
चूर्ण विधिसे बने यांत्रिक पुर्जे

इस विधिमे धातुको पीसकर या विद्युत्-विश्लेषण विधिसे उसका चूर्ण बनाया जाता है। धातुके इस चूर्णको मनचाहे साँचेमे खूब जोरका दाब दिया जाता है। दाबके कारण चूर्ण आपसमे सिमट

और चिपककर साँचेके आकारकी पूरी चीज बन जाती है। उसे सख्त बनानेके लिए भट्ठीमे तपाया जाता है। धातुके गलनाकसे कुछ ही कम ताप तक गर्म करनेसे उस वस्तुका चूर्ण आपसमे मजबूतीसे चिपककर पूरी वस्तु बन जाती है।

१९३० ईसवीमे व्लाडीमीर गुस्सेफने एक खास प्रकारकी विधिको पेटेंट (एकस्व) करवाया, जो धातु कर्मकी इलेक्ट्रोकेमिकल (विद्युत्-रासायनिक) मशीनिर्यारिग विधिके नामसे प्रख्यात है। सक्षेपमे इसे ई० सी० एम० कहते है। विद्युत्-विश्लेषणके द्वारा धातुओ पर मुलम्मा (कलई चढाना) किया जाता है, उसीसे मिलती-जुलती यह विधि है। इसमे भी द्रव विद्युत्-विलयन (घोल), धनाग्र (ऐनोड) और ऋणाग्र (कैथोड) होते है। सामान्यत विद्युत् विलयनमे विद्युत् पारित करनेसे धनाग्र पर रखी हुई धातुका क्षरण (छीजन) होकर विद्युत्-विलयनमे आता है और विद्युत्-विलयनमेसे धातुका अवक्षेपण ऋणाग्र पर होता है। परन्तु ई० सी० एम० विधिमे मुलम्मा चढाना नही होता, उलटे, इस बातकी सावधानी रखना पडती है कि कही ऋणाग्र पर अवक्षेपण न होने लगे। धनाग्र पर रखी हुई धातुके टुकडेके स्थान-विशेषसे ही धातु विद्युत्-विलयनमे आये, यह सावधानी भी रखनी पडती है। ऋणाग्रके रूपमे रखे हुए औजारके ठीक अनुरूप ही आकार-प्रकार, गडहा, कटाव और छेद आदि धनाग्र पर उभरना चाहिए और ऋणाग्रकी तरह प्रयुक्त औजार पर अवक्षेपण न होकर उसे यथावत् रहना चाहिए। साथ ही, इस विधिमे विद्युत्के बहुत तेज और उच्च आवेशकी जरूरत पडती है, जिससे काफी उच्च ताप पैदा होता है और उस तापके कारण विद्युत्-विलयनका वाष्पायन हो
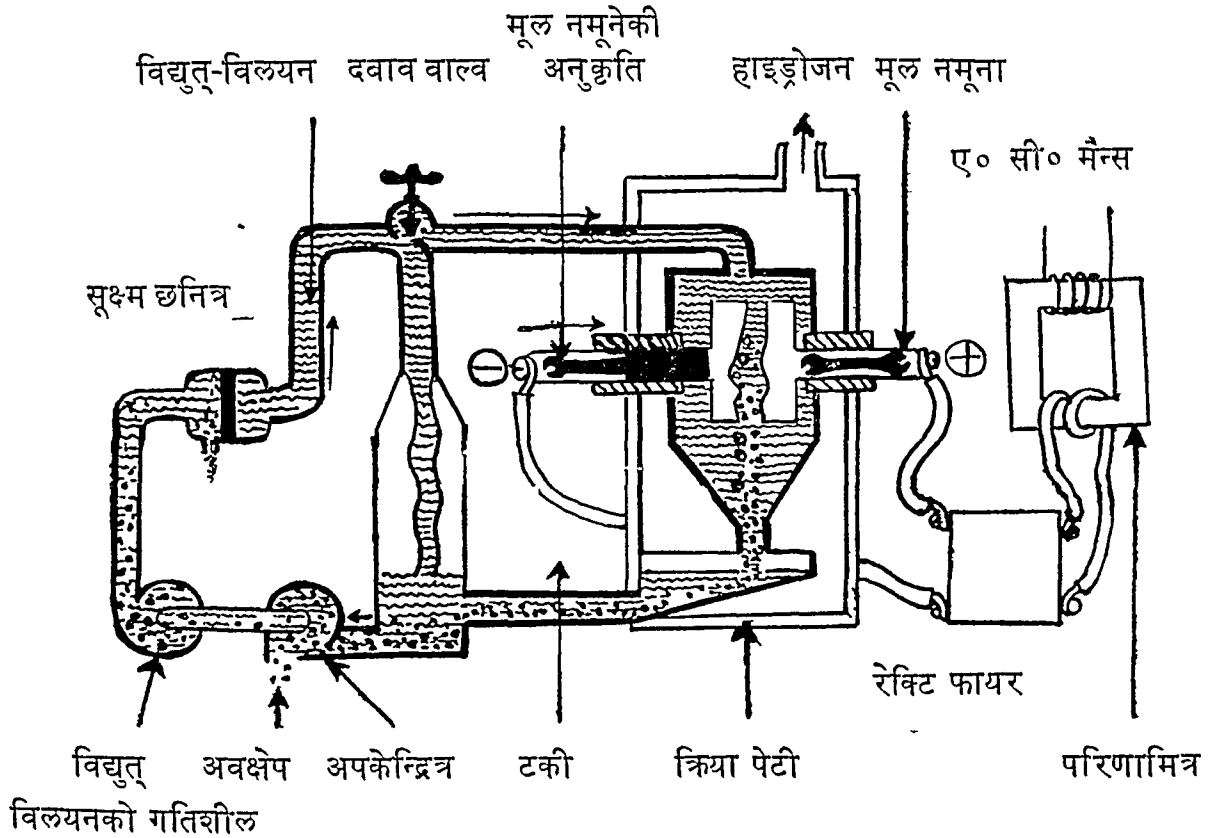
ई० सी० एम० विधिसे किया जानेवाला धातु कर्म

जाता है। फिर इस क्रियाके दौरान उत्पन्न होनेवाली गैसे भी सरल रीतिसे चल रही रासायनिक क्रियामे कठिनाइयाँ पैदा कर देती है। इन कठिनाइयोको दूर करनेके लिए दो बुनियादी परिवर्तन

आवश्यक है। एक तो ई० सी० एम०मे विद्युत्-विश्लेष्यको सतत गतिशील रखना चाहिए, और दूसरे, उसे खूब तेजीसे यान्त्रिक छनित्रसे छान लेना चाहिए। इससे क्रियामे रुकावट डालनेवाले पदार्थ दूर हो जाएँगे और विद्युत्-विश्लेष्यके लगातार घूमते रहनेसे उच्च विद्युत् आवेशसे उत्पन्न होनेवाली गर्मी छँट जाएगी।

विद्युदग्रोके बीच बढती हुई दूरीकी समस्या ऋणाग्रको धीरे-धीरे धनाग्रकी ओर बढाते रहनेसे हल हो जाती है। इससे दोनोके बीचका फासला हमेशा एक-जैसा बना रहता है और क्रिया भी निरन्तर चालू रहती है।

धातुकी अन्तिम आकृति ऋणाग्रकी आकृति और धनाग्र एव ऋणाग्रके बीचके अन्तर पर निर्भर करती है। धनाग्र और ऋणाग्रके बीचके अन्तरको अत्यन्त परिशुद्धतासे नियन्त्रणमे रखना पडता है। यदि वे तेजीसे एक-दूसरेके समीप आ जाते है तो विद्युत्-चाप (arc) उत्पन्न होनेका भय रहता है, जिससे मूल्यवान उपकरण नष्ट हो जाते है। यदि अन्तर बढता गया तो ओजार निर्धारित आकार-प्रकार ग्रहण नही कर पाता। इसलिए द्रवचालित पद्धतिसे बराबर उसका नियन्त्रण किया जाता है। ऋणाग्र और धनाग्रके फासलेमे जरा-सा भी फर्क पडनेसे विद्युत्-विश्लेष्यके दबावमे अन्तर आ जाता है, जिससे द्रवचालित नियन्त्रणकी त्रुटि फौरन पकडमे आ जाती है।

इस प्रकार ई० सी० एम० विधि द्वारा एक ही प्रक्रियामे धातुको मनचाहा आकार प्रदान किया जा सकता है। प्रचलित विधिके विपरीत इस विधिमे औजार और धातुके बीच सीधा सम्पर्क न होनेसे औजार घिसता नही है, केवल फोटोग्राफकी निगेटिव फिल्मका काम करता है। इसमे धातुकी कठोरता (कडेपन)का कोई महत्त्व नही, क्योकि न तो छीलने, न काटने और न ही छेदनेकी जरूरत होती है। फुर्ती, कार्यविधिकी सरलता और परिशुद्धताके कारण मशीनके पुर्जोको समग्र रूपमे तैयार करनेमे ई० सी० एम०की उपयोगिता स्वयसिद्ध है।

लेकिन इससे यह मान बैठना कि ई० सी० एम० धातुशोधनकी सभी प्रचलित विधियोका स्थान ले लेगी, गलत होगा। इस पद्धतिकी भी अपनी कुछ सीमाएँ है। बहुत बडे आकारकी चीजे इस विधिसे बनाना मुश्किल है। इसलिए ई० सी० एम० और सभी प्रचलित विधियाँ विविध व्यावहारिक उपयोगोकी दृष्टिसे अपना-अपना योगदान करती रहेगी।

स्वर्ण, रजत, प्लेटिनम

स्वर्ण, रजत और प्लेटिनम—ये तीनो कीमती धातुएँ है। इनका उपयोग सिक्के तथा गहने बनाने और वैज्ञानिक क्षेत्रमे होता है। ये तीनो प्रकृतिमे अधिकाशत स्वतन्त्र अवस्थामे प्राप्त होती है। ये तीनो धातुएँ अन्य धातुओके मिश्रणमे भी दिखाई देती है। स्वर्णको धातुओका राजा कहा जाता है। रासायनिक दृष्टिसे अत्यन्त उदासीन-अक्रियाशील होनेके कारण इसे जग नही लगता और लम्बे समय तक इसकी चमक और आभामे कोई अन्तर नही आता। इसीलिए रसायनमे इसे 'श्रेष्ठ धातु' कहा जाता है। अपनी लुभावनी चमक, स्वाभाविक सुन्दरता और गढनमे सरलताके कारण इसने आदि-मानवका ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया होगा और शोभा एव शृगारकी वस्तुएँ बनानेमे इसका उपयोग होने लगा होगा। काहिराके सग्रहालयमे रखे हुए सुन्दर गहने, चूडियो, कडो, अँगूठियो आदिसे पता चलता है कि शृगारिक वस्तुओके रूपमे सोनेका उपयोग ई० पू० ३०००मे मिस्रवासियोको ज्ञात था।

स्वर्ण यो तो प्रकृतिमे अत्यन्त व्यापक रूपसे फैला हुआ है, लेकिन विशेष रूपसे दक्षिण अफ्रीका (ट्रान्सवाल), रूस, अमरीका और कैनाडामे अधिक मात्रामे पाया जाता है। भारतमे मैसूर और कोलारकी सोनेकी खाने प्रसिद्ध है। पुराने समयमे, वर्षाकालमे, बारिशसे धुली हुई जमीनमेसे कुछ लोग[1] मिट्टी छान-निथारकर सोनेकी किरचे इकट्ठी किया करते थे। लेकिन श्रमकी दृष्टिसे इसमे लाभ बहुत कम होता है, इसलिए अब तो अधिकाश सोनेकी शिलाओमेसे ही सोना निकाला जाता है। कोलारमे स्वर्ण चकमकके साथ उसके चूर्णरूपमे मिला हुआ निकलता है। यह स्वर्णमय चकमक पृथ्वीके गर्भमे ठेठ आठ हजार फुट नीचेसे निकाला जाता है।

स्वर्ण वजनमे भारी होनेके कारण इस स्वर्णमय चकमकको कूट-पीटकर बनाया हुआ चूरा पानीके प्रवाहमे धोनेसे मिट्टी इत्यादि बह जाते है और सोना नीचे रह जाता है। इस क्रियाके दौरान उसमे पारा डाला जाता है और सोनेका पारेके साथ पारद मिश्रण बनता है, जिसे इकट्ठा कर सोनेको शुद्ध कर लिया जाता है। बहुत ही अल्प मात्रामे जो सोना धोवनके साथ चला जाता है उसे भी धोवनमे पोटेसियम सायनाइड नामक रसायन मिलाकर, क्योकि सोना सायनाइडसे सयोजित हो जाता है, और फिर जस्तेसे पृथक् करके शुद्ध कर लिया जाता है।

सोनेकी शुद्धता—विशुद्धि, 'फाइननेस'—हजारके हिसाबसे आँकी जाती है। उदाहरणके लिए ८०० 'फाइन' सोनेमे ८ भाग स्वर्ण और २ भाग अन्य धातुएँ रहती है। 'वल्ल', 'वाल' या 'बानी'के द्वारा भी सोनेकी शुद्धता दिग्दर्शित की जाती है। सोलहवल्लुं, सोलहवाल या सोलह-बानी सोनेका मतलब एकदम शुद्ध सोना होता है। बारह बानी या बारह वाल (वल्लुं) सोनेका यह मतलब हुआ कि उसमे चार बानी या वाल (वल्लुं) अन्य धातुका मिश्रण है। कही-कही सोनेकी शुद्धताको व्यक्त करनेके लिए 'टच'का भी उपयोग किया जाता है। सौ टचका सोना शत प्रतिशत शुद्ध होता है। गुणवत्ताकी दृष्टिसे २४ 'कैरेट'का सोना शुद्ध माना जाता है। इसलिए १००० 'फाइननेस' = १६ 'बानी' (वाल—वल्लुं) = १०० टच = २४ कैरेट यानी एकदम शुद्ध सोना हुआ।

रजत—गहने बनाने और गढाईकी दृष्टिसे रजत (चादी) सोनेसे दूसरे क्रम पर आता है। ई० पू० ४००० वर्ष पहलेके बने चाँदीके गहने खाल्डियाकी शाही कब्रमेसे मिले है। कुछ देशोमे चादीको सोनेसे भी कीमती समझा जाता है।

प्रकृतिमे रजत स्वतन्त्र धातुके रूपमे और अन्य धातुओके मिश्रणके रूपमे भी मिलता है। अफ्रीकाकी सोनेकी खानोसे जो स्वर्ण निकलता है, उसमे लगभग १० प्रतिशत रजत सयुक्त धातुके रूपमे रहता है। दुनियामे निकाला जानेवाला आधेसे अधिक रजत चाँदीकी खानोमेसे नही, बल्कि सीसे, जस्ते और ताँबेके खनिजोमेसे उन-उन धातुओको निकाल चुकनेके बाद बाकी बचे अपद्रव्योसे प्राप्त किया जाता है। यह अन्दाज लगाया गया है कि इस प्रकार निकाला जाने वाला रजत चाँदीकी खानोसे निकाले जानेवाले रजतकी कुल मात्रासे कही अधिक होता है। दुनिया-भरमे मेक्सिकोमे सबसे अधिक रजत निकलता है। उसके बाद अमरीकाका नम्बर आता है। भारतमे कही भी रजत नही निकलता। बर्मामे अवश्य चाँदीकी खाने है।

गहनो और सिक्कोके अतिरिक्त चाँदीके विश्व-उत्पादनका चतुर्थांश कला-कारीगरी और

---

१ इन लोगोको न्यारिया, धूलिये, धूलधोवने अथवा धूलागर कहा जाता था।

उद्योगोमे काम आता है। सिने-उद्योगके विकासके वाद फोटोग्राफीमे चाँदीके उपयोगमे बहुत वृद्धि हुई है। अमरीकामे सरकारी कोष-विभाग (ट्रेजरी)के वाद चाँदीका सर्वाधिक उपयोग कोडककी फिल्मे वनानेवाली रसायनशाला (लेवोरेटरी) ही करती है। चाँदीके विविध क्षार, दवाओके रूपमे भी काम आते है--खासतौर पर सिल्वर नाइट्रेट। एक करोड भाग पानीमे केवल एक ही भाग रजत हो तो भी उस पानीके सब कीटाणु नष्ट हो जाते है, ऐसा दावा किया जाता है। सम्पन्न हिन्दू परिवारोमे चाँदीके वरतनसे पानी पीनेकी प्रथा सम्भवत इसी विश्वास पर आधारित होनी चाहिए। प्रशीतको (रेफ्रिजरेटरो), विमानो आदिके लेप (Coating)मे रजत-रेणुका उपयोग होता है। दाँत भरनेके लिए भी चाँदी काम आती है। सादे काँच-सा दीखने-वाला शीशा (दर्पण, आरसी) बनानेके लिए चाँदीका उपयोग किया जाता है। चाँदी विद्युतकी सुसवाहक है इसलिए विजलीके बहुतसे उपकरण वनानेमे भी उसका उपयोग होता है।

> XXXIII I I take the freedom to incloſe to you an account of a ſemi metal called *Platina di Pinto*, which, ſo far as I know, hath not been taken notice of by any writer on minerals Mr *Hill*, who is one of the moſt modern, makes no mention of it Preſuming therefore that the ſubject is new, I requeſt the favour of you to lay this account before the *R S* to be by them read and publiſhed, if they think it deſerving thoſe honours I ſhould ſooner have publiſhed this account, but waited, in hopes of finding leiſure to make further experiments on this body, with ſulphureous and other cements, alſo with Mercury, and ſeveral corroſive *menſtrua* But theſe experiments I ſhall now defer, until I learn how the above is received The experiments which I have related were ſeveral of them made by a friend, whoſe exactneſs in performing them, and veracity in relating them, I can rely on however, for greater certainty, I ſhall myſelf repeat them
>
> *Several Papers concerning a new* Semi Metal, *called* Platina; *communicated to the* Royal Society *by Mr* Wm Watſon, *F R S* Nº 496 p 584 &c 1750 *Read* Dec 13 1750. *Extract of a Letter from* Will Brownrigg *M D F R S to* Wm Watſon, *F R S Dated* Whitehaven, Dec 5, 1750.

प्लेटिनमकी खोज

प्लेटिनम--हिन्दी रसायनशास्त्रमे प्लेटिनमके लिए 'श्वेतस्वर्ण' शव्दका प्रयोग किया जाता है। गर्मी अथवा सर्दीमे, शुद्ध या अशुद्ध हवाके वातावरणमे प्लेटिनम पर किसी प्रकारका कोई असर नही होता।

१७३८ ईसवीमे कोलम्बियाके निक्षेपोमेसे यह स्वर्णके साथ मिला और इसे स्वर्णसे पृथक किया गया। १९वी सदीके अन्त तक कोलम्बियाकी खाने ही दुनियाको प्लेटिनमकी आपूर्ति करती थी।

रूस (युराल प्रदेश), कैलिफोर्निया, ब्राजील, वोर्नियो और आस्ट्रेलियामे भी प्लेटिनमके निक्षेप है। पूरी एक शताव्दी तक रूसने प्लेटिनमकी माँगकी लगभग ९६ प्रतिशत और शेष ४ प्रतिशत पूर्ति कोलम्बियाकी खानोने की थी। अब कैनाडाकी निकलकी खाने सारी दुनियाकी प्लेटिनम सम्वन्धी माँगको पूरा करती है।

पैलेडियम, आस्मियम, इरीडियम, रुथेनियम और रेडियम---इन पाँच धातुओके साथ प्लेटिनम मिलता है। इनके अतिरिक्त सोना और लोहा भी उसके साथ रहता है। ये धातुएँ महीन कणो या रवोके रूपमे मिलती है।

प्राकृतिक प्लेटिनमको पारेके साथ मिलाकर पहले उसमेसे सोना निकाल लिया जाता है। फिर हाइड्रोक्लोरिक और नाइट्रिक अम्लोके मिश्रण (ऐक्वा रेजिया--अम्ल राज)मे छाना

जाता है। इस क्रियासे आस्मियम और इरीडियम पृथक् हो जाते है। अब प्लेटिनम अपने क्षार क्लोराइडके रूपमे रह-जाता है। इस क्षारको गर्म करनेसे प्लेटिनम धातु पृथक् हो जाती है, जिससे शुद्ध प्लेटिनम बनाया जाता है। प्लेटिनमको कार्बन और फास्फोरसके साथ गर्म करनेसे वह भगुर हो जाता है। प्लेटिनमका खास उपयोग आभूषणोमे (३६ प्रतिशत), दॉतके काममे (२३ प्रतिशत), बिजलीके उद्योगमे (२२ प्रतिशत) और रासायनिक उद्योगोमे (१४ प्रतिशत) तथा फुटकर कार्योमे (५ प्रतिशत) होता है।

प्लेटिनम और कॉचका प्रसार-गुणाक (coefficient of expansion) लगभग एक ही जैसा होनेके कारण गर्म कॉचमे प्लेटिनमको बिठानेके बाद ठण्डे हो जाने पर कॉचके टूटने अथवा कमजोर पडनेका भय नही रह जाता। बिजलीके लट्टूमे लगनेवाले महीन तार पहले प्लेटिनमके बनाये जाते थे, लेकिन बहुत कीमती होनेके कारण उसका उपयोग बन्द करना पडा। अब निकल-लोहेकी मिश्र धातु 'प्लेटिनाइट'का उपयोग किया जाता है। इसमे ४२ या ४६ प्रतिशत निकल और शेष लोहा रहता है।

यूरेनियम, रेडियम और जर्मेनियम

विनाशक परमाणु बम बनानेमे काम आनेवाले यूरेनियमका नाम सभी जानते है। परमाणु-भारके आरोही क्रममे ९२ मूलतत्त्वोमे यूरेनियमका परमाणुभार सबसे अधिक (२३८ ०७) है।

रासायनिक दृष्टिसे वह टग्स्टनसे मिलता है। यूरेनियमके क्षारोका उपयोग मुख्यत रगीन कॉच बनानेमे किया जाता है। गजवल्ली (कान्तिसार लोहा) बनाते समय थोडा-सा यूरेनियम

एण्टोइन हेनरी बैकवेरल (१८५२–१९०८)
[यूरेनियमकी रेडियधर्मिताका आविष्कारक]

मेरी क्यूरी (१८६७–१९३५)
[रेडियमकी आविष्कर्त्री]

मिलानेसे जो फेरो-यूरेनियम तैयार हुआ, उसके गुणोके अध्ययनने विज्ञानके इतिहासमे एक नया अध्याय ही शुरू कर दिया। १८९६ ई०मे बैकवेरलने यह खोज की कि यूरेनियम और उसके

क्षारोमे विशिष्ट प्रकारकी किरणोके विकिरणका अद्भुत गुण होता हे। फोटोग्राफिक प्लेटको काले कागजसे सुरक्षित रूपमे ढँककर यूरेनियम अथवा उसके क्षारोके पास रख देनेसे उसपर चित्र लेने-जैसा प्रभाव होता है। अगर उसके पास विद्युद्दर्शी (electιo-scope) रखा हो तो उसमेसे विद्युत्-आवेश चला जाता है। थोरियम, रेडियम ओर पोलोनियममे भी ऐसे ही गुण होते है। ऐसे पदार्थोको रेडियो-एक्टिव (ιadιo-actιve) अर्थात् रेडियधर्मी अथवा विकिरण-शील कहा जाता है। उनके परमाणुओसे खास प्रकारकी किरणे निकलती हैं।

वैकवेरलकी खोजके वाद मादाम मेरी क्यूरीने यह खोजकी कि यूरेनियमका खनिज (पिचब्लैण्ड) शुद्ध किये हुए यूरेनियमसे भी अधिक रेडियधर्मी होता है, इसलिए उसमे कोई अज्ञात विकिरणशील तत्त्व होना चाहिए। तीन-चार साल तक अनवरत शोध-खोज करनेके वाद उन्होंने उसमेसे जिस मूलतत्त्वको पृथक किया वह रेडियम नामसे जाना जाता है।

रेडियम——रेडियम प्राप्त करनेका साधन भी यूरेनियमका खनिज पिचब्लैण्ड ही हे। उसमेसे ३० लाख भाग यूरेनियमके अनुपातमे केवल एक भाग रेडियम निकाला जा सकता है। पहले तो वेल्जियम अधिकृत अफ्रीकाकी खाने दुनियाको यूरेनियमकी आपूर्ति करती थी। परन्तु १९३०मे कैनाडामे ग्रेट वेर लेककी प्रसिद्ध खानोका पता चला। अमरीकाके पश्चिमी हिस्सेमे भी यूरेनियमके खनिज मिलते है। चेकोस्लोवाकियाके खनिजोसे यूरेनियम वहुत कम मात्रामे प्राप्त होता हैं। भारतमे भी यूरेनियमके निक्षेप विहारमे मिले है।

वैज्ञानिक शोध-खोजमे रेडियम वहुत ही महत्त्वपूर्ण सावित हुआ है। परमाणुके अविभाज्य और अविनाशी होनेकी पुरानी मान्यता अव खत्म हो गई है ओर उसके स्थान पर यह वात मानी जाने लगी है कि परमाणुकी सरचनामे इलेक्ट्रॉन, प्रोटॉन ओर न्यूट्रॉन कण होते है। इतना ही नही, यह भी प्रमाणित हो चुका है कि इन कणोकी सख्यामे परिवर्तन करनेसे नये मूल तत्त्वोके परमाणु वनाये जा सकते है।

रेडियमके चिकित्सा-सम्वन्धी उपयोग——कैन्सर और अन्य रोगोकी रेडियम-चिकित्सा तो प्राय सभीको मालूम है। रेडियममेसे क्ष-किरणोके समान गुणोवाली गामा किरणे उत्सर्जित होती रहती है उन्ही किरणोमे उपर्युक्त वीमारियोको मिटानेके गुण है।

लेकिन शुद्ध रेडियमको निकाल पाना वहुत ही मुश्किल है। आज सारी दुनियामे केवल ५००से १००० ग्राम रेडियम होगा। रातके समय देखे जा सकनेवाले घडियोके डायलोके अकोमे जिक सल्फेटके साथ न्यूनातिन्यून मात्रामे रेडियमका मिश्रण किया रहता है। शुद्ध रेडियमकी द्युति नीलाभ होती है। अधेरे कमरेमे रेडियमके प्रकाशमे चीजे जगमगाने लगती है। रेडियमकी खोजके दौरान मादाम क्यूरीको पिचब्लैण्डमेसे एक और रेडियधर्मी मूलतत्त्व प्राप्त हुआ था। उन्होने अपनी मातृभूमि पोलैण्डके सम्मानमे उसका नाम पोलोनियम रखा। खनिजमेसे रेडियम निकालनेके वाद जो अश वचा रहता है उसमेसे ओक्टिनियम निकलता है। वह भी रेडियधर्मी होता है और उसका अपने आप रूपान्तर होता रहता है, अन्तमे वह सीसा वनकर सीसेके ही रूपमे स्थिर हो जाता है। रेडियधर्मी मूलतत्त्वोकी खोज विज्ञानके इतिहासमे मीलके एक पत्थरकी तरह हे। इससे हमारे ज्ञानमे प्रचुर वृद्धि हुई ओर नये क्षेत्र विकसित हुए। कई पुरानी मान्यताओ-को साघातिक चोट लगी और वहुतसे प्रयोगसिद्ध परिणाम प्राप्त हुए।

परमाणु बम बनानेमे दो मूलतत्त्व काममे आते है।

(१) यूरेनियम--२३५ (U-२३५) और

(२) प्लुटोनियम--यूरेनियम-२३८को तोडकर बनाया हुआ एक कृत्रिम मूलतत्त्व।

प्राकृत यूरेनियम U-२३८ है। यूरेनियमका यह प्रकार परमाणु बमके लिए अनुपयुक्त है। इसके अणु टूटते नही है। खनिजमे यूरेनियमका यह प्रकार (U-२३८) लगभग ९९ ३ प्रतिशत होता है। परमाणु बममे टूट सकने योग्य केवल ० ७ प्रतिशत U-२३५ होता है। लेकिन मजेकी वात यह है कि U-२३८ पर न्युट्रॉनकी वौछार करनेसे प्लुटोनियम बनता है। प्लुटोनियम विखण्डनीय है और U-२३५के समान नाभिकीय ईंधन (nuclar fuel)के रूपमे इसका उपयोग किया जा सकता है। यूरेनियम और रेडियम परमाणुयुगकी महत्त्वपूर्ण धातुएँ है।

जर्मेनियम--पचास वर्ष पहले वैज्ञानिक जगत् जर्मेनियम धातुसे सर्वथा अपरिचित था, फिर सामान्य जनताको उसकी जानकारी हो ही कैसे सकती थी! १८७१मे महान रूसी वैज्ञानिक मेण्डलीफने मूलतत्त्वोकी आवर्त-सारणीके चौथे समूहमे एक नये मूलतत्त्वकी भविष्यवाणी की थी। उस समय तक वह धातु खोजी नही जा सकी थी, इसलिए उसका स्थान खाली था और उसका नाम 'एक्सिलिकोन' रखा गया था। १८८६मे आर्जिरोडाइट नामक विरल खनिज पदार्थमेसे जर्मन वैज्ञानिक सी० ए० विकलरने इस धातुका पता लगाया और इसके सारे गुण मेण्डलीफके
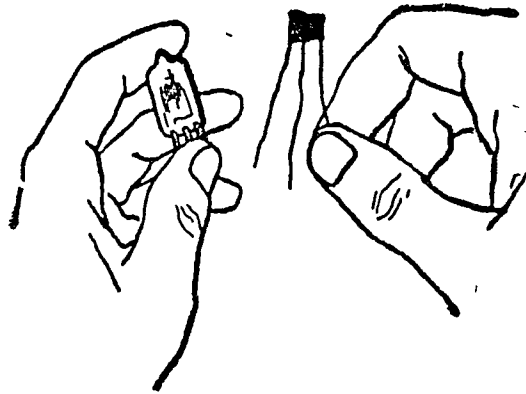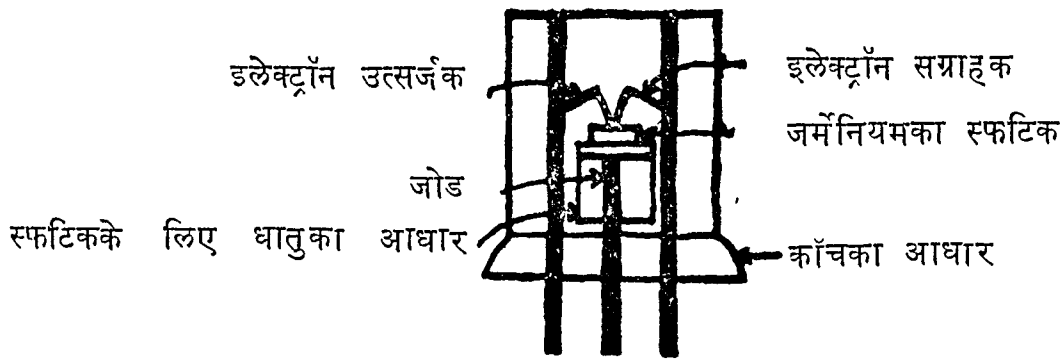
छोटे-से-छोटा वाल्व और ट्राजिस्टर

'एक्सिलिकोन'से मिलते थे। इस धातुका नाम जर्मेनियम (जर्मनीके सम्मानमे) रखा गया। अभी तक ऐसा कोई खनिज नही मिला है जिसमे जर्मेनियम धातु प्रचुर मात्रामे रहती हो। विविध खनिजोमे उसका अस्तित्व थोडे-थोडे अनुपातमे रहता है। कोयलेकी गैस बनानेवाले कारखानोकी चिमनियोके धुएँमेसे इस धातुको निकाला जाता है। जर्मेनियम धातुकी मात्रामे

वृद्धि होने तक धुएँको सघनित किया जाता है। फिर जर्मेनियमको उसके क्लोराइडके रूपमे पृथक् कर उसका पानीके द्वारा विच्छेदन करनेसे जर्मेनियम डाइआक्साइड वनती है, इसे हाइड्रोजन गैसमे गर्म करनेसे जर्मेनियम धातु निकल आती है।

धातुएँ सामान्यत विद्युत्-सुसवाहक होती हे। परन्तु जर्मेनियम इस मामलेमे अद्वितीय है। वह विद्युत्का अर्ध-सवाहक (semi conductor) है। इस अद्वितीय गुणके कारण उसके कई व्यावहारिक उपयोग निकल आए है। उदाहरणार्थ, विद्युत्की उच्च वोल्टताको धारण कर सकने वाले एकदिशकारियो (rectifiers) और विद्युत्के प्रवाहको उच्च शक्ति सम्पन्न करने वाले त्रयग्र (triode) वाल्वोके निर्माणमे इसका उपयोग किया जाता हे। ट्राजिस्टर रेडियोमे प्रयुक्त होनेवाले ट्राजिस्टर्स मुख्यत जर्मेनियमके ही वनाये जाते हैं। इन महत्त्वपूर्ण उपयोगोके अतिरिक्त जर्मेनियमका इस्तेमाल दाँतके चौखटे बनानेमे भी किया जाता है। यो इस विरल धातुने वर्तमान युगमे अत्यन्त ही महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर लिया है।

लोहा और इस्पात

हम लोग लोहयुगमे जी रहे है। विश्वकी समस्त धातुओमे लोहेका अश ९० प्रतिशत है। आज किसी भी देशकी प्रगतिका मापदण्ड उसका इस्पातका उत्पादन है। लोहेका मुख्य खनिज
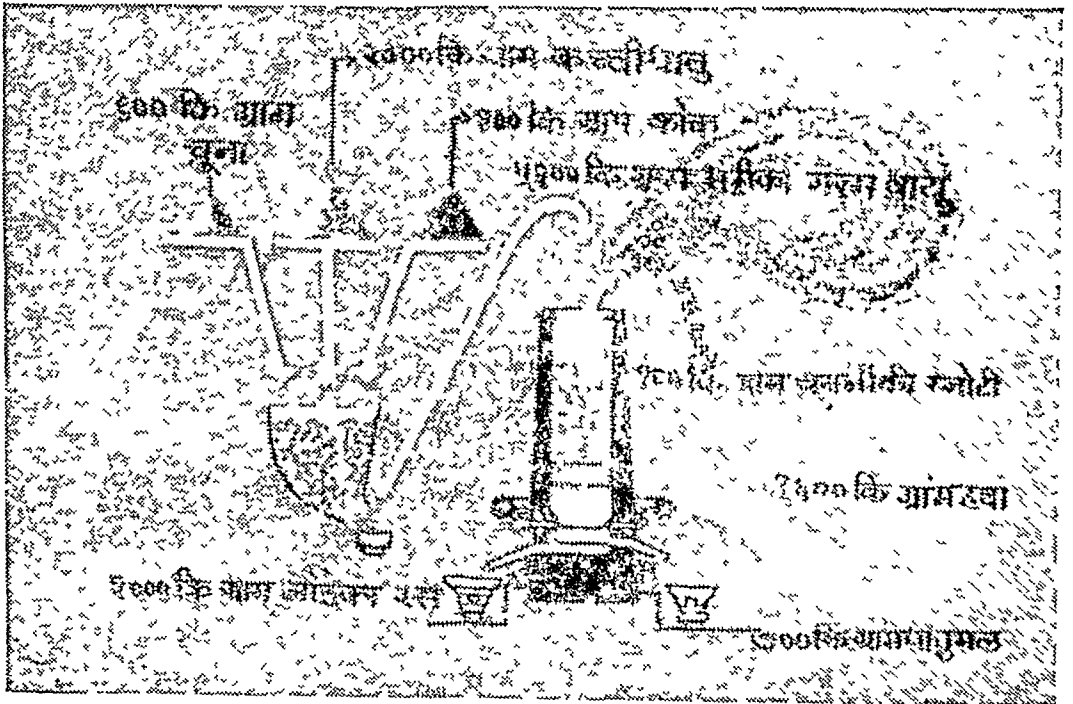
१००० किलोग्राम 'पिग आयर्न'मे प्रयुक्त होनेवाला कच्चा माल

हेमेटाइट (F_2O_3) है, यदि शुद्ध हुआ तो उसमे ७० प्रतिशत लोहा होता है। जल सयुक्त हेमेटाइटको लिमोनाइट कहते हे। शुद्ध लिमोनाइटमे ६० प्रतिशत लोहा रहता है। मैग्नेटाइट

और सिडेराइट भी लोहेके खनिज है, परन्तु मैग्नेटाइट (Fe_3O_4) काफी मात्रामे उपलब्ध नही होता और सिडेराइट ($FeCO_3$) खनिजमे लोहेका अनुपात बहुत कम होनेसे उसका विशेष उपयोग नही किया जाता। लोहेके खनिजोमे पाये जानेवाले सामान्य अपद्रव्य बालू, टिटेनियम, फास्फोरस, गन्धक आदि है। जिस खनिजमे ये अपद्रव्य जितने ही कम होगे वह उतना ही अच्छा और कीमती समझा जाता है। स्वीडनमे मिलनेवाले लोह खनिजमे फॉस्फोरस और गन्धक लगभग होता ही नही, इसलिए वहाँका लोहा और इस्पात बहुत उच्चकोटिके समझे जाते है और इसीलिए उनकी इतनी माँग और प्रतिष्ठा है। अमरीकाके लेक सुपीरियर जिलेमे प्राप्त लोह खनिजोमे ६८ प्रतिशत लोहा होता है। हेमेटाइटमे लोहा अपने आक्साइडके रूपमे होता है। लोहेको आक्सिजनसे पृथक् करनेके लिए कोयलेको उसके खनिजके साथ मिलाकर काफी ऊँचे तापमान पर गर्म किया जाता था। इस क्रियाके मूल आविष्कारकका आज तक पता नही चल पाया। अब तो बडे पैमाने पर लोहेका शोधन हेमेटाइटको कोयलेके साथ मिलाकर धमन या वात भट्ठी (blast furnace)मे किया जाता है।

धमन भट्ठी बहुत (१०० फुट या इससे भी अधिक) ऊँची होती है और उसके अन्दरका हिस्सा लगभग अण्डाकार होता है। उच्चतापके कारण भट्ठीको कोई हानि न पहुँचे इसलिए उसके निर्माणमे अग्निरोधक ईंटोका उपयोग किया जाता है। भट्ठीमे आग जलानेके बाद जब भट्ठी गर्म हो जाती है तो उसमे ऊपरसे हेमेटाइट, खनिज कोयला (कोक) और चूना पत्थर (calcium carbonate)के मिश्रणका भरण (charge) किया जाता है और नीचेसे पपोके द्वारा गरम हवाके झोके (blasts) अन्दर भेजे जाते है। इससे अन्दरका ताप बहुत ऊँचा हो जाता है, कोक जलने लगता है और कोकके लाल अगारोकी उपस्थितिके कारण कार्बन मोनोआक्साइड ($CO_2+C=2CO$) बनती है।

तप्त भरणके ढेरेमेसे होकर यह गैस ऊपर आती है और इसके अपचायक (अवकारक reducing agent) होनेके कारण खनिजका आक्सिजनसे सयोग होकर लोहा पृथक् हो जाता है। भट्ठीकी तेज गर्मीमे लोहा पिघल जाता है और भट्ठीके तलमे इकट्ठा होता है। साथ ही चूना पत्थरसे बना चूना ($CaCO_3=CaO+CO_2$) खनिजमे मिले हुए बालू आदि अन्य अपद्रव्योसे सयोजित होकर काँच-जैसे पदार्थकी तरह दिखाई देनेवाले धातुमल (slag)को अलग कर देता है। यह धातुमल भी भट्ठीके तलमे इकट्ठा होता है, मगर पिघले हुए लोहेसे हलका होनेके कारण लोहेके द्रव पर तैरता रहता है और समय-समय पर मलछिद्रोसे बाहर निकाल दिया जाता है। पिघले हुए लोहेको साँचोमे भरा जाता है। ठण्डा होकर वह जम जाता है (सघनित हो जाता है) और 'पिग आयर्न' या कच्चा लोहा बनता है। इसमे २ २से ४ ५ प्रतिशत तक कार्बनके अतिरिक्त सिलिकोन, मैगेनीज, सल्फर और फॉस्फोरस रहता है। धातुमल (slag)का उपयोग पोर्टलैण्ड सीमेण्ट बनानेमे किया जाता है। पोर्टलैण्ड सीमेण्ट वस्तुत कैल्सियम सिलिकेट और कैल्सियम एल्युमिनेटका मिश्रण है। भट्ठीके शीर्षभाग (charging arrangement)से प्रचुर मात्रामे कार्बन मोनोआक्साइड गैस निकलती है, जिसका उपयोग हवाके झोको (blast)को गर्म करनेमे और इजिनोको चलानेके लिए ईंधनकी तरह किया जाता है।

उद्योगोमे कभी विशुद्ध लोहेका उपयोग नही किया जाता, उसमे हमेशा अन्य पदार्थ न्यूनाधिक मात्रामे मिले होते है।

लोहेके तीन मुख्य प्रकार है

(१) ढलवॉ (या वीडका) लोहा (cast iron),

(२) पिटवॉ लोहा (wrought iron), और

(३) इस्पात---गजवल्ली-कान्तिसार फौलाद (steel)

धमन भट्ठीमे जो 'पिग आयर्न' या कच्चा लोहा वनता हे वह वस्तुत ढलवाँ अथवा वीडका लोहा है। उसमे २ ५ प्रतिशत कार्वन ग्रेफाइटके रूपमे रहता है। 'पिग आयर्न'को फिर गलाकर उसमे कार्वन, सिलिकोन और फास्फोरसका अनुपात इस तरह कर दिया जाता है कि जिस कामके लिए उपयोगमे लाना हो वह उसके उपयुक्त हो जाए। इस लोहेके रस (द्रव)से ढलाई करके वरसातके पानीकी निकासी करनेवाले नलके (pipe), स्टोव आदि वनाये जा सकते है। यह लोहा कठोर परन्तु भगुर किस्मका होता हे।

इस्पात वनानेकी वेसेमर विधि

धुरी पर झुके हुए परिवर्तित्रमेसे कोठीमे द्रव इस्पात उँडेला जा रहा है।
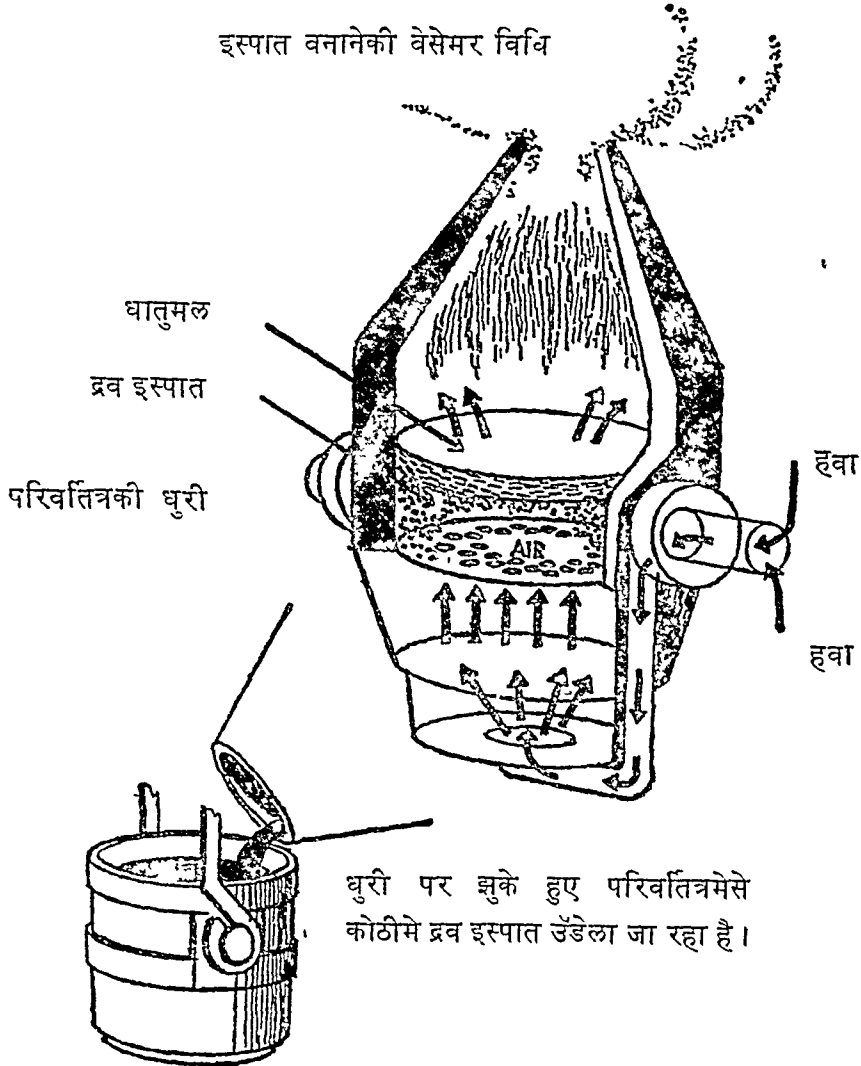
साधारण 'कास्ट आयर्न' पर मन्द हाइड्रोक्लोरिक और सल्फ्युरिक अम्लोकी क्रिया शीघ्रतासे होती है। १२-१९ प्रतिशत सिलिकोनवाला कास्ट आयर्न अम्लसह (acid proof) होता है, इसलिए उसमे सिलिकोनकी मात्रा बढाकर उसे अम्लसह बनाया जाता है। 'तान्तीरन', 'ड्युरीन', 'आयर्न द', 'नर्की' आदि नामोसे प्रख्यात लोहेकी जातियोमे सल्फ्युरिक अम्लका वाष्पायन करनेके लिए विशिष्ट प्रकारके बरतन बनानेके काम आती है। लेकिन इन जातियोका लोहा अत्यधिक भगुर होता है।

उद्योगमे काम आनेवाले लोहेकी विभिन्न जातियोमे पिटवॉ लोहा सर्वाधिक शुद्ध होता है। पिग आयर्नको हेमेटाइटके साथ मिलाकर उस मिश्रणको भट्ठीमे तपानेसे पिटवॉ लोहा (wrought iron) बनता है। हेमेटाइट कार्बन, सिलिकोन और फास्फोरस तथा सल्फरका आक्सीकरण (अपचयन) करता है। पिटवॉ लोहा मृदु और तन्तुमय गठनवाला होनेके साथ-साथ कठोर भी होता है और उसे आसानीसे गढा भी जा सकता है। लोह खनिजमे फॉस्फोरसकी उपस्थिति होनेकी दशामे भट्ठीमे मैग्नेसाइट ($MgO+CaO$)का अस्तर लगाना पडता है जिससे फॉस्फोरसका आक्सीकरण होकर फास्फेट बनता और समाक्षारीय धातुमल (basic slag) प्राप्त होता है। यह धातुमल कृपिमे खादके रूपमे काम आता है।

ऊपर बताई गई लोहेकी दोनो जातियोकी अपेक्षा इस्पात (steel) अधिक मजबूत होता है। उसे उच्च तापमान पर गर्म करके पानी या तेलमे बुझाकर 'पानी चढाया' (tempering) जाता है। इस्पात पर चढाया हुआ 'पानी' उसकी गठन पर नही अपितु उसे गर्म किये जाने वाले ताप और बुझान-पर (ठण्डा किये जानेकी रफ्तार) पर निर्भर करता है।

उस्तरोकी ब्लेडे बनानेके लिए उसे २३०° से० तक गर्म करना पडता है। इस ताप पर इस्पातका रग घासके जैसा साधारण पीला हो जाता है। २५५° से० ताप पर उसका रग भूरा-पीला हो जाता है। इस तरहका इस्पात चाकू, छुरियॉ और यत्रोकी धुरियॉ बनानेके काम आता है। इस्पातको २७७° से० ताप पर गर्म करके कर्तनोपकरण (कटलरी सामान) बनाये जाते है। घडियोकी कमानियॉ और उच्चकोटिकी तलवारे बनानेमे काम आनेवाला इस्पात चमकीले नीले रगका होता है। बढईके औजार बनानेके लिए तो उसे और भी उच्चताप (२९०°-से ३१६° से० तक) पर 'पानी' चढानेकी जरूरत होती है। उद्योगोके लिए कई प्रकारका इस्पात बनाया जाता है, लेकिन वे सब लोहे और कार्बनकी मिश्र धातुएँ होती है, उनमे कार्बनका अनुपात ० १से ० २ प्रतिशत और वह भी सिमेण्टाइट (Fe_3C) यौगिकके रूपमे रहता है।

प्राचीनकालमे लोहेको कोयलेके अगारो पर गर्म करके और पीट-पीटकर इस्पात बनाया जाता था। बडे पैमाने पर इस्पात बनानेकी दो विभिन्न विधियॉ १८५५मे हेनरी बेसेमर और १८६४मे सिमेन्स एव पार्करने विकसित की, जो क्रमश बेसेमर और खुली चुल्ली भट्ठी (open hearth) विधियोके नामसे जानी जाती है। आजकल सर्वत्र बेसेमर विधिका ही उपयोग होता है।

बेसेमर विधिमे खास प्रकारकी कोठी या नाशपातीके आकारके एक पात्रका उपयोग किया जाता है, जिसे बेसेमर परिवर्तित्र कहते है। उसमे धमन भट्ठीमे पिघला हुआ द्रव लोहा भरा जाता है और फिर उसमे यात्रिक धौकनीसे हवाके जोरदार झोके प्रवाहित किये जाते है। खुली चुल्ली

भट्ठीमे द्रव लोहेमे कच्चा हेमेटाइट मिलाया जाता हे। गर्म हवाके प्रभावसे द्रव लोहेमे विद्यमान अतिरिक्त कार्वन जल जाता है और गन्धक तथा फास्फोरस जैसे अपद्रव्योका आक्सीकरण
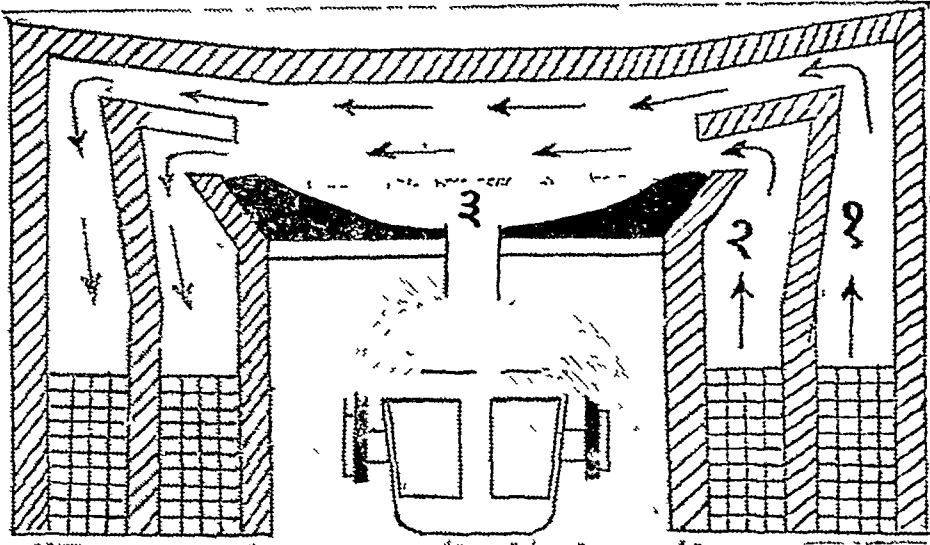
इस्पात बनानेकी खुली भट्ठी

होकर वे धातुमल बनते तथा उच्चकोटिका इस्पात प्राप्त होता हे। उच्चकोटिका इस्पात बनानेके लिए उसे शून्यावकाशमे भट्ठीमे गलाया जाता है। इससे सामान्य विधिमे बनाये जाने वाले इस्पातमे जो गैसे रह जाती है वे निकल जाती है और साथ ही कई अशुद्धियाँ भी दूर हो जाती है।

लोहेमे अन्य पदार्थोको मिलाकर जो इस्पात तैयार किया जाता है उसके गुणोमे होनेवाले परिवर्तनोके प्रभावके वारेमे धातु-कोविदोने काफी अनुसन्धान करके मानव जातिकी सेवामे विशिष्ट गुणोवाले कई नये-नये इस्पात प्रस्तुत किये है। इस्पातमे क्रोमियम मिलानेसे उसकी कठोरतामे वृद्धि होती है। इस्पातमे दो प्रतिशत क्रोमियम मिलानेसे क्रोमस्टील बनता है। इसका उपयोग इस्पातके टायर, कठोरीकृत छर्रे (वाल वेयरिग), रेतियाँ, पत्थर फोडनेकी मशीनें, कवच जैसी अनेक वस्तुएँ बनानेमे किया जाता है। क्रोमस्टीलमे थोडा-सा निकल मिला देनेसे उसकी स्थिति स्थापकतामे वृद्धि होती है।

निष्कलक अथवा निष्कलुष (stainless) इस्पातमे १२से १५ प्रतिशत क्रोमियम रहता है। इससे उसकी चमक वनी रहती और जग नही लगता। १८ प्रतिशत क्रोमियम और लगभग ८ प्रतिशत निकलकी मिलावटवाला इस्पात 'स्टेब्राइट' कहलाता है। उसपर समुद्री जलका मक्षारक प्रभाव नही होता। वह अम्लसह भी होता है। रसायनोका उत्पादन करनेवाले उद्योगो एव घरेलू उपयोगके लिए वनाई जानेवाली वस्तुओमे इसका खूब इस्तेमाल होता है। निष्कलक इस्पातकी एक जाति ४४६के नामसे जानी जाती है, उसमे एक प्रतिशत इट्रियम होता है। १३५०° से०के वरावर उच्चताप पर भी ४४६ निष्कलक इस्पात पर आक्सीजनका असर नही होता और उसे पीटकर पतरे वनाये जा सकते है।

१ वैगनमें कच्ची धातु खाली करता हुआ ऊँटडा (क्रेन)। २ कच्ची धातु रखनेका अहाता। ३ कच्ची धातुको ले जानेवाला ट्रान्सपोर्टर। ४ कच्ची धातु, कोक, चूना रखनेका अहाता। ५ कोक, कच्ची धातु, चूनाभरी कोठियाँ (पात्र)। ६ कोक भट्ठीमे कोककी कोठी ले जारही ट्राली। ७ आठ नम्बरकी ट्रालीमे माल खाली करती हुई कोठी। ८ तोला हुआ माल ले जारही ट्राली। ९ मालको ऊपर ले जानेवाले यान्त्रिक उपकरणोका कक्ष। १० कोक, चूना और कच्ची धातुओकी ट्रालीको खीचनेवाले रस्से। ११ ट्रालीमेसे माल भरी हुई कोठी भट्ठीके मुहके पास। १२ ट्रालीको सतुलित रखनेवाला सन्तुलक। १३ ट्रालीमेसे लटकाया हुआ घटाकार ढक्कन। १४ घटाकार ढक्कनसे होती हुई कोठी भट्ठीके अन्दर प्रवेश करती है। १५ उसके जोरसे भट्ठीका ढक्कन नीचे ढकेला जाता है और कोठीका माल भट्ठीमे भरा जाता है। १६ मालका भरण होनेके वाद भट्ठीका ढक्कन यथावत करनेवाला लीवर। १७ मालका भरण होनेके वाद ऊपर आनेवाली गैसोमे आर्द्रता ऑर कार्वन डाइआक्साइड खिच आती है। १८ कच्ची धातुमेसे आक्सीजन विलग होती है, लोहा कार्वनका अवशोषण करता है। १९ विगलित द्रव लोह निथरता है, धातुमल उसके ऊपर तैरता है। २० धातुमल भट्ठीके वाहर खाली होता है। २१ धातुमलको द्रवलोहमे मिलनेसे रोकनेवाली युक्ति। २२ कोठीमे खाली होता हुआ द्रवलोह। २३ खाली होता हुआ धातुमल। २४ कोठीमेसे द्रवलोह साँचेमे उँडेला जाता है। २५ साँचेके यन्त्रका वाहक-पट्टा, जो भरे हुए साँचेको ले जाता है और भरे जानेवाले खाली साँचेको वहाँ ले आता है। २६ साँचे-मे ढले हुए लोहेके इनगाट (ingot) वाहर आते है। २७ गर्म द्रवलोहको इस्पात वनानेवाले परिवर्तित्रमे ले जानेवाली ट्राली। २८ धमन भट्ठीके शीर्षसे निकलनेवाली गैसोका वहन करने-वाली नली। २९-३० गरम गैसोमेसे महीन रेणुका अवशोषण करनेवाले यन्त्र। ३१-३२-३३-३४ गैस यान्त्रिक रीतिसे घुलकर शुद्ध होती है। ३५ गैस भरी जानेवाली टकी। ३६ गैस ले जानेवाली नली। ३७ गैस द्वारा चलनेवाला वाष्पित्र (stern boiler)। ३८ वाष्पित्रकी भापसे चलनेवाली टरवाइन। ३९ टरवाइनसे विद्युतका उत्पादन करनेवाला सयत्र। ४० टरवाइन द्वारा भट्ठीमे फूकी जाती हवा। ४१ काउपर स्टोवमे हवाको गर्म करनेके लिए जानेवाली नलियाँ। ४२ काउपर स्टोवमे जानेवाली गर्म गैसे। ४३ ब्लास्ट स्टोवमे गरम होनेवाली हवा। ४४ गैसोसे गर्म हो रहा काउपर स्टोव। म्यू-चिमनीमे गैसोको वहा ले जानेवाली नली। ४६ हवाको गर्म होने पर धमन भट्ठीमे ले जानेवाली मुख्य नली। ४७ धमन भट्ठीमे खुलनेवाले मुख्य नलीके दहाने।
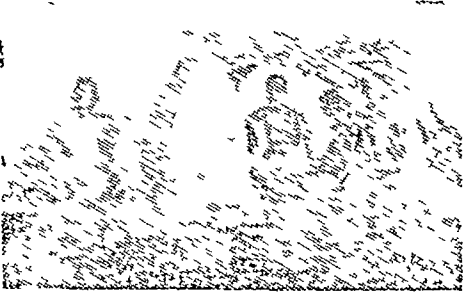
भारतमे ब्रिटिश राज्यके आगमनके समय लोहेकी भट्ठी—सलेम (तमिलनाडु)
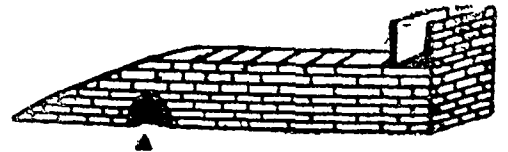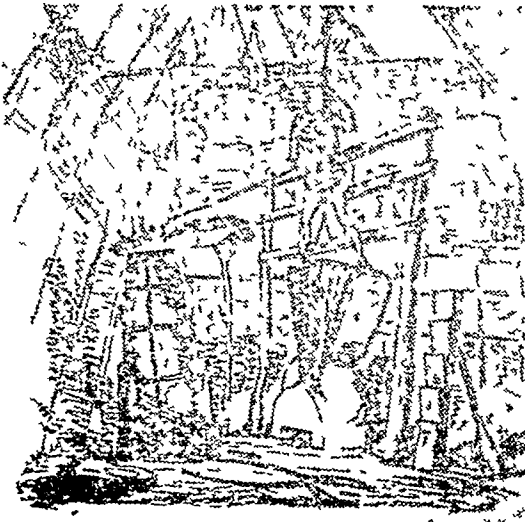
सौराष्ट्र (तत्कालीन काठियावाड) मे स्थानीय लोह-उद्योग

इस्पातमे निकल मिलानेसे उसकी कठोरता और स्थिति स्थापकतामे वृद्धि होती है, इसलिए निकल मिश्रित इस्पात कवच, नोदकघुरीदण्ड (propeller shath) आदि बनानेके काम आता है। निकलकी मात्रा बढा देनेसे विशिष्ट गुणोवाला अत्यन्त उपयोगी इस्पात तैयार होता है। ३६ प्रतिशत निकल और केवल ० २–० ५ प्रतिशत कार्वनवाला इस्पात 'इन्वार' कहलाता है। इसका ऊष्मा प्रसरणाक वहुत न्यून होनेसे यह मापक उपकरण, सर्वेक्षरकी पट्टी, वैज्ञानिक प्रयोगोमे काम आनेवाले परिशुद्ध उपकरण, घडियोके लोलक आदि बनानेके काममे लिया जाता है। इस्पातकी एक ऐसी ही अन्य मिश्र धातु 'ऐलिन्वार' घडियोकी कमानियाँ बनानेके काम आती है। ४६ प्रतिशत निकलवाले इस्पात 'प्लैटिनाइट' और कॉचका प्रसरणाक एक समान होनेके कारण बिजलीके उपकरणोमे कॉचके साथ उसके तारको जोडकर मुहर किया जा सकता है। ५३ ८ प्रतिशत लोहा, ८९ प्रतिशत निकल, १७ प्रतिशत कोवाल्ट और ० २ प्रतिशत मैगेनीज वाली मिश्र धातुका प्रसरणाक नहीके बरावर अर्थात् ४×१०^{-६} होता है।

सभी प्रकारके इस्पातमे अल्पमात्रामे मैगेनीज रहता है। लेकिन यदि उसका अनुपात ९ १४ प्रतिशत कर दिया जाए तो वह इस्पात अत्यन्त कठोर और मजवूत हो जाता है। इसका उपयोग रेलकी पटरियोकी सन्धि (cross over), न टूटनेवाली चोर-प्रूफ तिजौरियो और सैनिकोके शिरस्त्राण बनानेमे किया जाता है। यह इस्पात चुम्बकीय गुणविहीन (निश्चुम्बकीय) होता है।

क्रोमस्टीलमे टगस्टन अथवा मालिप्डीनमकी मिलावट करनेसे जो मिश्र धातु बनती है। वह तपाकर लाल कर दिये जाने पर भी अपनी कठोरताको सुरक्षित रखती है। इस जातिके इस्पातका उपयोग अभियात्रिक कामोमे किया जाता है।

लोहेकी आर्द्रता अथवा आर्द्रहवामे रखनेसे उसका आक्सिकरण होता है, जिसे वोलचालकी भाषामे 'जग' अथवा 'मोरचा' लगना कहते है। जग लगनेसे वचानेके लिए लोहेको रग दिया जाता है। इसके अलावा उसे जस्तीकृत (galvanised) अथवा कलईकृत (tinplating) करके भी जग लगनेसे वचाया जाता है। लोहे और इस्पातके सक्षारणका विषय धातुकीमे अत्यन्त महत्त्वपूर्ण माना जाता है।

लोहेको जस्तीकृत करनेके लिए जस्तेकी आवश्यकता होती है। लेकिन हमारे देशमे जस्तेकी वडी कमी है, इसलिए जमशेदपुरकी राष्ट्रीय धातुकर्मक रसायनशाला (National Metallurgical Labortory) ने जस्तेके स्थान पर एल्युमिनियमका उपयोग करके 'एल्युमिनिकृत (aluminized) लोहा' तैयार किया जाता है, जो वहुत उपयुक्त सिद्ध हुआ है। आर्द्र हवामे लोहा जग खाकर सक्षारित होता है जिससे उसकी सतह पर ललछोहा भूरा पदार्थ पपडीके रूपमे जम जाता है, इस पदार्थमे मुख्यरूपसे जलयुक्त फेरिक आक्साइड रहता है।

लोहे और अन्य धातुओके सक्षारणकी प्रक्रियाको जानने-समझनेके लिए कई अनुसन्धान किये गए और आज भी किये जा रहे है। सक्षारण धातुकी जाति, उसकी विशुद्धता और अन्य वातो पर निर्भर है। सक्षारणके लिए आर्द्रताका होना आवश्यक माना जाता है। कुछ अनुसन्धानकर्ता कार्वन डाइआक्साइड गैसकी उपस्थितिको भी आवश्यक मानते है। ताजा लगी हुई जगमे फेरस

हाइड्रोआक्साइड और डाइआक्साइड कार्वोनेटका होना पाया गया हे, इससे पता चलता है कि सक्षारणकी आरम्भिक अवस्थामे ये यौगिक वनते होगे।

१८६७ ई०मे क्रैस काल्वर्ट और १८८८ ई०मे व्राउनने निम्न समीकरण लोहेकी जगके वारेमे वनाये थे

$$Fe + H_2O + Co_2 = FeCO_3 + H_2$$

लोहा आर्द्रता कार्वन फेरस हाइड्रोजन

डाइआक्साइड कार्वोनेट

$$4FeCO_3 + 6H_2O + O_2 = 4Fe(OH)_3 + 4CO_2$$
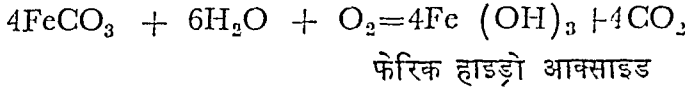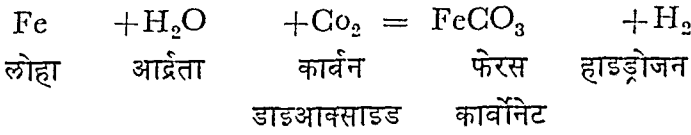
फेरिक हाइड्रो आक्साइड

१९०६ ई०मे मूडीने यह प्रतिपादित किया कि हवा ओर आर्द्रताके अभावमे लोहेको जग नही लगता। पहले कार्वन डाइआक्साइडकी उपस्थितिमे लोहेसे फेरस वाइकार्वोनेट वनता है, जिसका आक्सीकरण होनेसे कार्वन डाइआक्साइड वनता है। पानीको उवालकर उसमे पिघला हुआ कार्वन डाइआक्साइड और आक्सीजन पारित किया जाए अथवा पानीमे अल्कलीकी मिलावटसे फेरिक हाइड्रो आक्साइड दूर होता है ओर उसकी विलेयता भी घटती है। परिणामस्वरूप लोहे पर जग लगनेकी क्रियाका अवरोधन होता है।

१९१० ई०मे लेम्वर्टने यह पता लगाया कि आसुत (distilled) जलमे लोहेको जग नही लगता। वेनार्डके सिद्धान्तके अनुसार जग लगना या सक्षारण वैद्युत् रासायनिक क्रिया है।

नीलाथूथाके विलयनमे लोहेकी सलाखोको रखनेसे लोहेका सल्फेट वनता है। ताँवेकी वहुत महीन रज निकलती है, जिसे अवक्षेपण कहते है। परन्तु कई वार लोहा अक्रियाशील भी हो जाता है और वह ताँवेका अवक्षेपण नही कर सकता। लोहेको धुऍदार नाइट्रिक अम्ल, क्लोरिक अम्ल, क्रोमिक अम्ल अथवा हाइड्रोजन पेरोक्साइडमे डुवानेसे उसकी क्रियाशीलताका निवारण होता और वह अक्रियाशील हो जाता है। अर्थात् तनु अम्लके विलयनमे वह अविलेय रहता है और इसलिए तनु अम्लमेसे हाइड्रोजन निकल नही पाता, और नीलाथूथाके विलयनमेसे ताँवेका अवक्षेपण नही होता। इस घटनाको लोहेकी अक्रियाशीलता कहा जाता है।

१९३७ ई०मे पेरीअर और हमीलीओ सेग्रेने मालिव्डिनम धातुपर साइक्लोट्रोनमे न्यूट्रोनकी वौछार कर परिवर्जन किया और एक नया मूलतत्त्व वनाया। इस कृत्रिम मूलतत्त्वको, वनानेकी विधि (टेकनिक)के उपलक्ष्यमे, टेकनिशियम नाम दिया गया। अभिक्रियक (reactor) मे यूरेनियमका विखण्डन करने पर उसके कूडेमेसे भी ६ प्रतिशतके लगभग टेकनिशियम प्राप्त होता है। इस कृत्रिम मूलतत्त्वमे दो विशिष्ट गुण होते है एक तो यह सक्षारणको रोकनेवाला प्रवल कारक है और दूसरे रेडिय-धर्मी यानी विकिरणशील भी है।

सक्षारणका अवरोधन दो तरहसे किया जा सकता है—एक तो धातु और उसके चारो ओरके वातावरणके साथ होनेवाली रासायनिक क्रियाको रोककर, उदाहरणके लिए एल्युमिनियम अपनी ही सतह पर रन्ध्रहीन पटल या झिल्ली वनाकर सक्षारणका अवरोधन करता है। कुछ कृत्रिम सक्षारण-अवरोधक भी इसी प्रकारका काम करते है। दूसरी विधि है धातुकी सतहको रासायनिक ढगसे वदलकर उसे अक्रियाशील कर देना, उदाहरणार्थ पोटेसियम डाइक्रोमेटके विलियनमे लोहा जवतक

है। सखिया भी अपने आक्साइडके रूपमे पृथक् हो जाता है। लोहेके सल्फाइड अपने आक्साइडो-के रूपमे परिवर्तित हो जाते है। परन्तु आमतौर पर ताँवेके सल्फाइडमे कोई परिवर्तन नही होता।
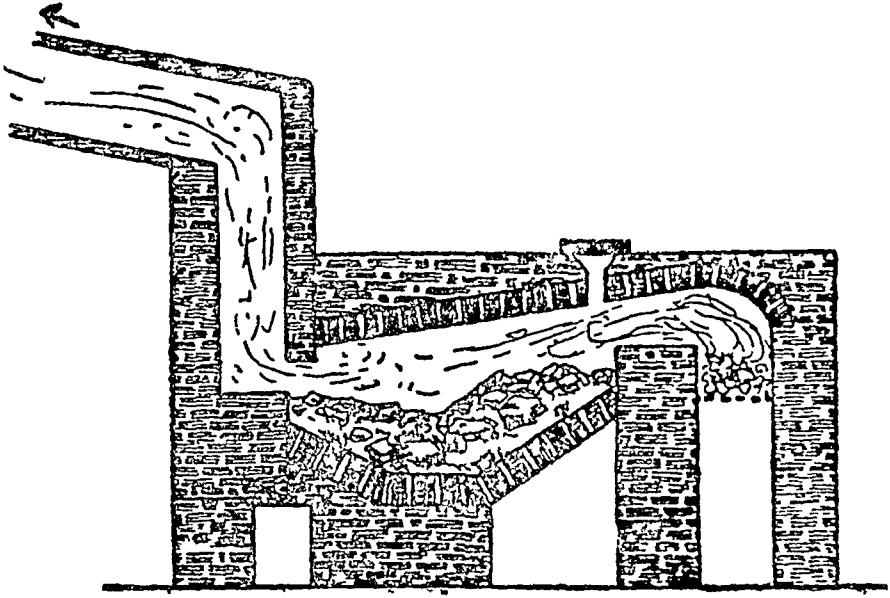
परावर्तन भट्ठी

उसके वाद लोहका अश पृथक् करनेके लिए उसे परावर्तन भट्ठी (ıcveıbcıatory fuınacc)-मे वालूके साथ गलाया जाता हे। यह क्रिया दो वार करनेसे ७०-८० प्रतिशत ताँवेवाला कॉपर-सल्फाइड वनाया जा सकता है। इस कॉपर सल्फाइडसे ताँवेको पृथक् करनेके लिए उसका हवामे निस्तापन किया जाता है। इस ताँवेको 'फफोलेदार ताँवा' (blıstei coppcı) कहते है, क्योकि इस क्रियामे द्रव ताँवेमेसे सल्फर डाइआक्साइड गैस निकलनेसे उसकी सतह पर फफोले-से दिखाई देने लगते है। इस ताँवेमे भी लगभग ३ प्रतिशत अपद्रव्य रहते है, जिन्हे विद्युत् विश्लेपण विधिसे पृथक् कर ताँवेको शुद्ध किया जाता है।

अव ताँवेके शोधनमे बिजलीका उपयोग किया जाने लगा है। सल्फ्युरिक अम्ल वनानेके लिए सल्फर डॉइआक्साइड निकालनेके वाद वचे हुए पाइराइटीजके मलका इस विधिसे उपयोग करके उसमेसे ताँबा निकाला जाता है। इस विद्युत् विधिसे ताँवा सरलतासे निकल आता है और वह एकदम शुद्ध भी होता है। सैद्धान्तिक दृष्टिसे ताँवेका इस विधिसे शोधन सरल दिखाई देता है, लेकिन प्रत्यक्ष करनेमे कठिनाइयाँ आती है और इसलिए ताँवेका शोधन खासी उलझनवाला काम समझा जाता है।

विद्युत्के इस युगमे ताँवेका मुख्य उपयोग बिजलीके तार और रस्सियाँ बनानेमे किया जाता है। ताँबा विद्युत्का सुसवाहक है। लेकिन विजलीके उद्योगके लिए ताँवेका परिष्करण वडी साव-धानीसे करना पडता है। इस कार्यके लिए ताँवेके क्षारका विलयन वनाकर विद्युत् विश्लेषण विधि-से उसका परिष्करण किया जाता है। इस विधिसे उसमे जो अत्यन्त अल्प मात्रामे स्वर्ण-रजत होता है वह भी पृथक् हो जाता है। अमरीकाकी कम्पनियाँ इस प्रकार हजारो औस सोना और

चाँदी पैदा करती है। ताँबा लोहेके समान जग नही खाता, इसलिए उद्योगोमे इसका प्रचुरतासे उपयोग किया जाता है।

शुद्ध ताँबेका महीन चूर्ण (रेणु) बनानेके लिए नीलाथोथाके विलयनमे जस्तेके टुकडे रख दिये जाते है। जस्ता नीलाथोथाके विलयनमे घुल जाता है और नीलाथोथामेसे ताँबा पृथक् होकर महीन रेणुके रूपमे विलयनके तलमे बैठ जाता है। इस चूर्णको पानी तथा अलकोहलमे धोकर निर्वात बरतनमे गर्म कर सुखानेसे शुद्ध ताँबेका चूर्ण प्राप्त होता है।

नीलाथोथा ताँबेका सल्फेट है। नीलाथोथा बनानेके कई कारखाने हमारे देशमे थे। औषधियोमे इसका उपयोग होता रहा है। खेती-बाडीमे लगनेवाली बोर्डो मिश्रण नामक जहरीली ओषधिमे आज भी इसका उपयोग किया जाता है।

ताँबेके वरकको जस्तेका धुआँ देनेसे उसका रग सोने-जैसा चमकीला हो जाता है। ऐसे वरकको डचगोल्ड कहते है और वे सस्ते वरकका काम देते है।

ताँबेका सबसे अधिक उपयोग उसकी मिश्र धातुएं बनानेमे किया जाता है। ताँबेकी मिश्रधातुओमे पीतल और काँसेका उपयोग तो पुरातन कालसे चला आता है। इधर ताँबेकी कई नई-नई मिश्र धातुएँ भिन्न-भिन्न उपयोगोमे आ रही है, जिनमे गनमेटल, बेलमेटल, मोनेलमेटल, जर्मन-सिल्वर, मुजमेटल, मेगनिन आदिका नाम उल्लेखनीय है।

ताँबेमे २ ५ प्रतिशत बेटिलियम धातुका मिश्रण करनेसे उस मिश्रधातुकी तार खीचे जानेकी क्षमतामे छहगुना वृद्धि हो जाती है। ताँबेमे ७ प्रतिशत एल्युमीनियम मिलानेसे सुनहरे रगकी 'एल्यूमीनियम ब्रॉन्ज' मिश्रधातु बनती है, जिसका उपयोग इमीटेशन गोल्डकी डिब्बियाँ, गहने और साज-शृगारकी चीजे बनानेमे किया जाता है। यह बात इस सच्चाईको प्रमाणित करती है कि 'सब चमकनेवाली चीजे सोना नही होती'।

५४ प्रतिशत ताँबा, ४५ प्रतिशत निकल और १ प्रतिशत मैगेनीजवाली मिश्रधातु 'सिल्वराइड' कहलाती है। वह चाँदी-जैसी दिखाई देती है। अब तो जहाजोमे पीतलकी नलियोके स्थान पर ७६ प्रतिशत ताँबा, २२ प्रतिशत जस्ता, २ प्रतिशत एल्युमीनियम और ० ४ प्रतिशत सखिया (आर्सेनिक) वाली मिश्रधातुकी नलियोका उपयोग किया जाता है। ये अधिक समय तक चलती है और इनका सक्षारण भी कम होता है।

निकल—निकल अर्थात् खोटा ताँबा। निकलका खनिज ताँबेके खनिजसे हूबहू मिलता है। इस खनिजसे ताँबा निकालनेके जर्मन-खनिजोके सारे प्रयत्न जब विफल हो गए तो उन्होने इसे 'कुफर निकल' (खोटा ताँबा) का व्यग्यपूर्ण नाम दिया। सस्कृतमे भी निकलको 'पिशाचताम्र' कहा जाता है। निकल धातुका सबसे पहले १७५१ ई०मे उसके खनिजमेसे निम्सारण किया गया। उसके बाद दशाब्दियो तक कोई प्रगति नही हुई। १७७४ ई०मे बर्गमानने निकलके गुणोका पता लगानेकी दिशामे काफी काम किया। ई० पू० २३५ वर्षके पुराने सिक्कोमे निकलका पता चलता है और चीनमे इससे भी पुराने समयमे निकल धातुका उपयोग किये जानेकी बात प्रकाशमे आई है।

निकलके खनिजमे निकलके अतिरिक्त लोहा, कोबाल्ट, गन्धक, सखिया आदि होते है। खनिजसे निकल धातु निकालनेकी प्रक्रिया बडी ही जटिल है। इसके लिए कई क्रियाएं करनी पडती है। निकल धातुके शोधनमे कार्बन मोनोआक्साइड गैसका उपयोग किया जाता है, जो निकलमे

सयोग करके निकल कार्वोनिल वनाती है। इसे गर्म करनेसे शुद्ध निकल पृथक् होता है। इस विधिको मॉण्ड विधि कहते हैं।

निकलके वर्तमान विश्व-उत्पादनका ८० प्रतिशतसे भी अधिक कैनाडाके ओण्टारियो राज्यके सडवरी जिलेकी खानोसे आता है। लगभग ये सभी खाने कैनाडाकी इण्टरनेशनल निकल कम्पनीके स्वत्वाधिकारमे है। नार्वे, रूस और फिनलैण्डमे भी निकलके निक्षेप है। लेकिन अभीतकके उत्पादन-मे उनका योगदान महत्त्वपूर्ण नही है। वर्मामे सीसा और जस्ता-चादीके खनिजोमे न्यून मात्रामे निकल मिलता है। मुख्य धातुओके निस्सारणके वाद वचे हुए धातुमलको जर्मनी भेज दिया जाता है।

सामान्य मनुष्यकी निकल सम्वन्धी जानकारी निकल-प्लेटिग और सिक्कोकी ढलाईमे लगने-वाली धातु तक ही सीमित है। परन्तु इन कामोमे तो कुल निकल-उत्पादनका केवल १० प्रतिशत ही खर्च होता है। पच्चीस देशोमे विशुद्ध निकल सिक्के ढालनेमे काम आता है, लेकिन इसका औद्यो-गिक उपयोग तो और भी महत्त्वपूर्ण है। मिश्र धातुओमे निकलकी मिलावटसे अभूतपूर्व और अन-मोल गुणोकी सृष्टि होती है। मिश्रधातुओमे १से लेकर ९० प्रतिशत तकके अनुपातमे निकलका उपयोग किया जाता है।

इस समय निकलका विश्व-उत्पादन १ लाख २५ हजार टनसे भी अधिक है। उसमेसे ६० प्रतिशत निकलका उपयोग लोहेकी मिश्र धातुएँ वनानेमे किया जाता है। २४ प्रतिशत निकलकी मिलावट करनेसे लोहा निश्चुम्बकीय हो जाता है और ३२ प्रतिशत मिलावट वाली मिश्रधातु विद्युत्-की प्रवल प्रतिरोधक होती है। निकल, लोहा और क्रोमियमकी मिश्रधातु निक्रोम विद्युत् तापको और अतिशय उच्च ताप पर चलनेवाली विद्युत् भट्ठियोकी वनावटमे काम आती है। निकलका महीन चूर्ण वनस्पति घी बनानेमे उत्प्रेरककी तरह इस्तेमाल किया जाता है।

निकलमे जिस प्रकारके विविध उपयोगी गुणोका एकीकरण हुआ है वह किसी दूसरी धातुमे दिखाई नही देता। निकलमे जग न लगनेका अद्भुत गुण है। झलाई (welding) करने या खोल (casing) चढानेमे उपयोग करने पर भी इसके गुणोमे कोई अन्तर नही पडता। अत्यधिक उच्च ताप पर भी इसकी यह शक्ति वनी रहती है। अतिशय मृदु-खाद्य-पदार्थ, पेय, दवाइयो इत्यादिको सडने और क्षरणसे वचानेके लिए निकलके अस्तर लगे वेष्टनो (packing) का उपयोग किया जाता है। टेलीविजन, राडार, रेडियो, तार-टेलीफोन ओर इसी तरहके अन्य उपयोगी उप-करणोको वनानेमे विद्युत-प्रतिरोधक गुणोके कारण इसका खूब उपयोग किया जाता है।

हमारे देशमे निकलका विदेशोसे आयात होता है। इस कठिनाईको दूर करनेके लिए जमशेद-पुरकी राष्ट्रीय धातु-कर्मक रसायनशालाने प्रयत्न प्रारम्भ किये ओर निष्कलक इस्पात बनानेमे निकल आवश्यक होते हुए भी विना निकलका निष्कलक इस्पात तैयार किया है, जिसमे देशमे उपलब्ध क्रोमियम, मैंगेनीज, नाइट्रोजन, एल्युमीनियम और ताँवेका उपयोग किया गया है। इस रसायन-शालाने विना निकलकी कुछ मिश्र धातुएँ भी वनानेमे सफलता प्राप्त की है।

कोवाल्ट—कोवाल्टको निकलका भाई ही समझना चाहिए। इसके खनिज भी ताँवेकी खनिजसे मिलते है। इसका निस्तापन करनेसे लहसुन-जैसी तीव्र गन्ध निकलती है। इसके खनिज-को ताँवेका खनिज मानकर उसमेसे ताँवा निकालनेके सारे प्रयत्न विफल हो जाने पर इसे 'खोटा खनिज' (कोवाल्ट) नाम दे दिया गया।

वैसे कोबाल्ट यूनानी भाषाका शब्द है जिसका अर्थ होता है 'ऊपरी भूत'। इसके खनिजमेंसे प्राप्त होनेवाली धातुको शायद इसीलिए कोबाल्ट कहा गया। संस्कृतमें इसके लिए 'शाड रंजन मणिका' शब्दका प्रयोग हुआ है। पंजाबमें इसे 'सीत' कहते हैं, जो संस्कृत 'सीति' शब्दसे आया होना चाहिए। हिन्दीमें इसके लिए 'सेत—सेरत' शब्द है जो संस्कृतके 'सैरत' शब्दका अपभ्रंश प्रतीत होता है। इस धातुका खनिज काली बालू-जैसा होता है। भारतीय रसायनशास्त्रके लेखक डॉ० देसाईका कहना है कि कोबाल्टके लिए प्रयुक्त संस्कृत शब्द बहुत ही सार्थक है। गुजरातके विद्वान् श्री बापालाल ग० वैद्यका मत भी इनसे मिलता है। कोबाल्टके खनिजका निस्तापन कर बालू और पोटैसियम कार्बोनेटके साथ गर्म करनेसे सुन्दर नीले रंगका काँच बनता था जिसके बारेमें कहा जाता था कि यह उसमें विद्यमान संखियाके धातुमलका परिणाम है। परन्तु १७३५ ई०में ब्रान्टने यह बताया कि इस खनिजमें कोई नई धातु है जिसके कारण काँच नीला रंग प्रदान करता है। १७८० ई०में बर्गमानने इस धातुको कोबाल्टके रूपमें प्राप्त किया।

धातुओंको उनके आक्साइडसे पृथक् करनेकी विशिष्ट पद्धति थर्माइट विधि कहलाती है। इस विधिमें एल्युमीनियमके चूर्णको धातुके आक्साइडकी बुकनीके साथ कुठालीमें रखकर उसके ऊपर सोडियम पेरोक्साइड और एल्युमीनियम चूर्णोंका मिश्रण छिड़का जाता है और तब विद्युत् पलीते (fuse) अथवा मैग्नेशियमसे जलाया जाता है। इससे काफी उच्च ताप पैदा होता है, एल्युमीनियमका आक्साइड बनता है और मूल आक्साइडसे धातु पृथक् हो जाती है।

मैंगनीज—हमारे प्राचीन आयुर्वेद ग्रन्थोंमें लोहेके अनेक प्रकारोंका वर्णन किया गया है, जिनमें मैंगनीज धातुका वर्णन भी मिलता है। मैंगनीजका मुख्य खनिज पाइरोल्युसाइट है। संस्कृतमें इसे कृष्णपाषाण—काला पत्थर कहा गया है। इसका दूसरा नाम 'अयस्कान्ति' भी है। लोहेसे समानता होनेके ही कारण इसे यह नाम दिया गया है और इसमेंसे निकलनेवाली धातुको लोहेका ही एक प्रकार मान लिया गया है।

काँच बनाते समय उसकी हरे रंगकी झाँईको दूर करनेके लिए उसमें अल्पमात्रा में पाइरोल्युसाइट मिला देते हैं। पाइरोल्युसाइट कोयलेकी तरह काला होनेके कारण कई लोभी व्यापारी उसमें कोयलेकी बुकनी मिला देते हैं। ऐसा विश्वासघात अनुचित होनेके साथ-साथ खतरनाक भी है, क्योंकि पाइरोल्युसाइटको गर्म करनेसे आक्सीजन गैस निकलती है और गर्म कोयला उसके संयोगसे जल उठता है, परिणाम-स्वरूप विस्फोट होनेका खतरा पैदा हो जाता है।

१७४० ई०में जे० एच० पोट्टनायक रसायन-वेत्ताने यह प्रमाणित किया कि पाइरोल्युसाइटसे बने क्षार लोहके इसी प्रकारके क्षारोंसे भिन्न होते हैं। इसके बाद १८८२ ई०में सर आर० हडफील्डने मैंगनीज-इस्पातकी खोज की। लोहेकी मिश्र-धातुओंका प्रारम्भ तबसे होता है। इस इस्पातको हडफील्डके अनुसन्धानकी स्मृतिमें हडफील्ड इस्पात कहा जाता है।

मैंगनीजका मुख्य उपयोग लोहा और इस्पात बनानेमें धातु-शोधनके लिए किया जाता है। शुद्ध मैंगनीज धातुको गर्म करनेसे उसमें लोह चुम्बकत्व गुण आ जाता है। ५५ प्रतिशत ताँबा, १५ प्रतिशत एल्युमीनियम और ३० प्रतिशत मैंगनीजवाली मिश्रधातुमें लोह चुम्बकीय गुण होता है।

विश्वकी मैंगनीज, खनिज सम्बन्धी आवश्यकताको रूस (काकेशस प्रदेश) और भारत पूरा करते हैं। ब्राजिल, पश्चिम अफ्रीका और स्पेनमें भी यह खनिज मिलता है।

गुजरातमें पावागढ़के पास शिवराजपुरमें मैंगनीजकी खानें हैं। मध्यप्रदेशमें झाबुआ जिला, दक्षिण भारतमें विशाखापट्टनम् और सन्दूरमें तथा मैसूर राज्यमें भी यह खनिज मिलता है। ब्राउनाइट, हाउसमेनाइट, सिलोमोलेइम, मैंगेनाइट और रोडोक्रोसाइट—ये मैंगनीजके अन्य खनिज हैं, परन्तु उद्योगकी दृष्टिसे उतने महत्त्वपूर्ण नहीं है।

पोटेसियम परमेंगनेटसे तो कई लोग परिचित होंगे। कुएँका पानी दूषित होने पर कीटाणुओंका नाश करनेके लिए कुएँमें डाले जानेवाले और साँपके काटने पर सर्पदंश पर रखे जानेवाले इस पदार्थको देहाती लोग भी 'लाल दवा'के नामसे बहुत अच्छी तरह जानते हैं। पाइरोल्युसाइटको कास्टिक सोडा या पोटाशके साथ मिलाकर हवा मिलती रहे इस प्रकार गर्म करनेसे सारा मिश्रण एक रस होकर हरे रंगका पदार्थ बनता है, जिसमें पानी डालकर हवामें रखने या क्लोरिन गैस पारित करनेसे लाल रंगका विलयन तैयार होता है। इसी विलयनसे पोटेसियम परमेंगनेट प्राप्त किया

जाता है। इसके अतिरिक्त मैंगेनीजका उपयोग रगरोगन, वार्निश और स्याही बनानेमे भी होता है। इसका औषधीय गुण शामक, रक्तवर्द्धक और आर्तवप्रद है। फोडे-फुन्सी और रक्तविकारोमे मैंगेनीजके इजेक्शन लगाये जाते है। पाइरोल्युसाइटसे वैद्य लोग अयस्कान्ति भस्म बनाते है।

सीसा—सीसा (lead) पुरानी धातुओमे है। ई० पू० तीन हजार वर्ष पुरानी सीसेकी वस्तुएँ पुरातात्त्विक अवशेषोमे मिली है। पुराने ग्रन्थोमे भी सीसेके विभिन्न उपयोगोके सम्बन्धमे उल्लेख मिलते है। परन्तु उस जमानेमे सीसा और राँगामे भेद नही किया जाता था, दोनोको एक ही धातु समझा जाता था। राँगेको 'सफेद सीसा' कहा जाता था। सीसा भी राँगे-जैसी ही मृदु धातु है। उसे सरलतासे मनचाहा आकार दिया जा सकता है। बेबिलोनके हैंगिंग गार्डनमे पौधोको सीसेके गमलोमे उगाया जाता था। रोमन लोग सीसेका उपयोग नल बनानेमे करते थे।

भूगर्भमे सीसेकी खान, दक्षिण मिसौरी (सयुक्त राज्य अमरीका)

सीसा प्रकृतिमे स्वतन्त्र धातुके रूपमे उपलब्ध नही होता। लेकिन इसके खनिज सर्वत्र फैले हुए है। सीसेका मुख्य खनिज गैलिना (galena) कहलाता है। यह सीसे और गन्धकका यौगिक और काले रगका चमकदार पदार्थ होता है। स्पेन, अमरीका आदि देशोमे प्रचुर मात्रामे पाया जाता है। बरमामे सीसा-खनिजकी विशाल खाने है। इसके सिवाय अन्य खनिजोमे इसके कार्बो-नेट, सल्फेट आदि यौगिक थोडी मात्रामे उपलब्ध होते है। हमारे देशमे सीसेके खनिज अधिक मात्रा-मे नही मिलते। शिमला, मदरास और राजस्थान आदि प्रदेशोमे बहुत कम मात्रामे इस धातुके खनिज मिलते है। धातुका निस्सारण करनेके लिए गैलिनाको भट्ठीमे तपानेसे गन्धक पृथक् होता और जलकर सल्फर डाइ-आक्साइड बनता है, जिसका उपयोग गन्धकका अम्ल बनानेमे किया जाता है। सीसा धातुके रूपमे द्रवस्थितिमे भट्ठीके तलमे इकट्ठा होता है। बादमे इसे शुद्ध कर लिया जाता है।

सीसेके खनिजमे बहुत कम मात्रामे चाँदी भी रहती है। दुनियाकी अधिकाँश चाँदी इसी खनिजसे निकाली जाती है। इसके अतिरिक्त सीसेके खनिजमे सामान्यत जस्तेका खनिज—जिक

ब्लेण्ड भी होता है। इसे स्फालेराइट कहते है। इस प्रकार सीसेकी खानवालेको सीसेके साथ-साथ अधिक कीमती धातुएं उपोत्पादके रूपमे मिलती है।

सीसेके खनिजमे धातु निकालनेवाले कारखानोमे चॉदी और अन्य धातुऐं निकालनेका प्रवन्ध भी होता है। इससे उन्हे सीसेसे होनेवाली आयके अतिरिक्त और भी प्रचुर लाभ होता है। लेकिन उनका यह लाभ सीसा-खनिजमे विद्यमान अन्य धातुओके अनुपात पर निर्भर करता है। चॉदीयुक्त सीसेको 'आर्जेन्टी फेरस लेड' कहते है। सीसेके तार नही खींचे जा सकते। वह ३१६° से० ताप पर पिघल जाता है। पानीमे सीसा थोडी मात्रामे विलेय है। लम्बे समय तक इस प्रकारका पानी पीनेसे अनेक तरह की बीमारियाँ हो जाती है। सीसेका जहर धीरे-धीरे शरीरमे फैलता है। मसूडो-के किनारो पर नीली रेखा शरीरमे सीसेका जहर फैलनेकी निशानी है। पहले पानी ले जाने वाले नलोको वनानेमे सीसेका उपयोग किया जाता था, परन्तु पानीमे सीसेके विषैले प्रभावके कारण इस काममे उसका उपयोग वन्द कर दिया गया।

वेरिगके उपयुक्त फारी धातु (frai metal) सीसेमे दो प्रतिशत वेरियम धातु और एक प्रतिशत कैल्सियम मिलाकर वनाई जाती है। छपाईके टाइप वनानेके लिए जो सीसा काममे लाया जाता है उसमे एण्टीमनी धातु मिली होती है। मोटरमे इस्तेमाल किये जानेवाले पेट्रोलमे सीसेका कार्वनिक यौगिक—टेट्राइथाइल लेड (TEL) मिलाया जाता है। वह प्रत्याघात (anti-knock)की तरह काम करता है। सीसे ओर रॉगेकी मिश्रधातुका उपयोग टॉका लगानेके मसाले (solder)के रूपमे किया जाता है।

सिन्दूर अथवा लाल सीसा सीसेकी भस्म है। सीसेके यौगिकोका विविध औद्योगिक उपयोग उदाहरणके लिए कपडोकी रँगाई और छपाई, ओपधियॉ वनाने, रग-रोगन तैयार करने, कॉच-को कडा करने, मिट्टीके वर्तनोको कॉचित करने, रवरको वल्कनाइज करने आदिमे किया जाता है।

मुरदासख (litharge) सीसेका आक्साइड है। इसका उपयोग आयुर्वेदमे विगडे हुए फोडो आदि त्वचा रोगोमे मरहमके रूपमे किया जाता है। मुरदा-सख और चूनेको मिलानेसे जो काला रग वनता है वह खिजावके रूपमे सफेद वालोको काला करनेके काम आता है।

सीसेकी एक विशेषता यह है कि वह सल्फ्यूरिक अम्लमे घुलता नही, इसलिए सल्फ्यूरिक-अम्लके उत्पादनके लिए 'सीसकक्ष' (lead chamber) वनानेमे इसका उपयोग किया जाता है।

रॉग।—रॉगे या वगकी जानकारी मनुष्यको वहुत पुरातनकालमे है। पहले तॉवेकी मिश्र-धातु कॉसा वनानेमे इसका उपयोग किया जाता था। पूरे कास्ययुगमे तॉवे और रॉगेका वहुत महत्त्व रहा। अव तो पीतलके वरतनो पर कलई करने-भरका महत्त्व रह गया है। और वह भी निष्कलक (स्टेनलेस) इस्पात एव एल्युमीनियमके वने वरतनोके प्रचलनसे क्रमश कम होता जा रहा है। इसका महत्त्वपूर्ण उपयोग छोटे-वडे डिव्वे वनानेमे काम आनेवाली 'टिनप्लेट' अर्थात् लोहेकी चादर या पतरे पर मुलम्मा चढानेमे किया जाता रहा।

रॉगे (tin)का प्रमुख खनिज टिनस्टोन या कार्निटेराइट मलाया ओर वरमा एव नाइ-जीरिया और दक्षिण अफ्रीकासे आता है। साफ किये हुए खनिजको 'काला टिन' कहते है, उसे कोयलेके साथ मिलाकर परावर्त्तन भट्ठीमे गर्म करनेसे टिन पृथक् हो जाता है।

$$SnO_2 + 2C = Sn + 2CO$$
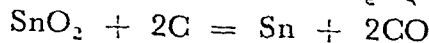
इस टिनको विगलन (liquation) विधिसे शुद्ध किया जाता है। अर्थात् परावर्त्तन भट्ठीमे अशुद्ध धातुको गर्म करनेसे शुद्ध धातु विगलित होकर पृथक् हो जाती है और अपद्रव्यो वाला धातुमल (ताँबा, लोहा, सखिया आदिकी मिश्रधातु) पीछे रह जाता है। आयुर्वेदमे राँगेकी भस्मको वगभस्म कहते है और उसका उपयोग रक्तविकारसे होनेवाले फोडे-फुन्सियोकी चिकित्सामे किया जाता है।

हमारे देशमे कलई किये हुए पतरोकी खपत लगभग तीन लाख टन है। १९७०-७१मे यह खपत बढकर पाँच लाख टनके करीव हो जाएगी। कलई करनेके लिए राँगा विदेशोसे आयात किया जाता है और विना कलई किये पतरोसे हमारा काम चल भी नही सकता। टिन-प्लेट के छोटे-वडे डिब्बोकी माँग और खपत बढती ही जाती है। खाद्य पदार्थ, फल आदि पैक करनेके लिए टिन प्लेटके जो डिब्बे बनाये जाते है उनमे कतरन बहुत निकलती है। इन कतरनो और मिट्टीके तेल, घी, खानेके तेल आदिके काममे आए हुए, काले पडे हुए, फूटे हुए और अधकचरी कलई उतरे हुए डिब्बोकी कलई यदि उतार ली जाए तो काफी कीमती विदेशी मुद्राकी बचत हो सकती है। इस प्रकार डेढसे दो करोड रुपयेके राँगेकी बचत हो जाएगी और कुल मिलाकर ५०,०००से ७५,०००टन वजनकी कतरनो और रद्दी मालको अभिसस्करित करना पडेगा, जो मिल सकता है।

पतरो पर चढी कलई उतारनेके लिए विदेशोमे क्षार-रासायनिक, (Alkali-Chemical) विधि उपयोगमे लाई जाती है। इसमे गर्म कास्टिक सोडेके विलयनमे किसी अवकरणीय (osidising) पदार्थकी उपस्थितिमे पतरोका रद्दी माल डाला जाता है। पतरो परका राँगा विलयनमे घुल जाता है और सोडियम स्टेनेट नामक पदार्थ प्राप्त होता है। इस पदार्थके विलयनका विद्युत विश्लेषण करनेसे राँगा निकल आता है।

भारतमे केन्द्रीय विद्युत रासायनिक शोध प्रतिष्ठान (Centrel Electro-Chemical Research Institute) काराईकुडीमे कलई किये हुए राँगेको उतारनेकी एक अम्ल-रासायनिक (acid-chemical) विधि खोजी गई है। इसमे खनिज अम्लके विलयनमे रद्दी माल (scrap) डाला जाता है। राँगा उतरकर नीले लौदोके रूपमे विलयनमे तैरने लगता है। इस विधिसे ८०से ८५ प्रतिशत राँगा टिनप्लेटकी कतरनो और रद्दी मालसे पुन प्राप्त किया जा सकता है। यह विधि सरल और सस्ती भी है।

जस्ता—जस्ते (zinc)के सम्बन्धमे पुराने उल्लेख वहुत मिलते है। ई०पू० ६५०के असीरियाई पुरातात्त्विक अवशेषोमे प्राप्त शिलालेखोमे जस्तेके खनिजका उल्लेख मिला है। ताँवेसे पीतल वनानेके लिए इसी खनिजका उपयोग किया जाता था। लाल रगके ताँवेसे, जस्तेकी सहायतासे, पीले रगका पीतल बनता था इसलिए कुछ भोले कीमियागर जस्तेके खनिजको पारस पत्थर कहने लगे थे।

जस्तेको एक स्वतन्त्र धातुके रूपमे अपना निराला अस्तित्व १६९५ ई०मे प्राप्त हुआ। इसके खनिजसे धातु निकालनेका काम १७३०मे जाकर शुरू हुआ। पुराने जमानेकी रासायनिक शब्दावलीमे जस्तेके लिए 'स्पेल्टर' शब्दका प्रयोग किया जाता था। अशुद्ध जस्तेको आज भी 'स्पेल्टर' कहते है।

भारतमे जस्तेके खनिज कही भी नही है। राजस्थानमे ताँबेकी खाने जब चालू थी तो काँसा अवश्य बनाया जाता था, परन्तु पीतल बनानेका कोई उल्लेख नही मिलता। बरमामे जस्तेके खनिज प्रचुर मात्रामे उपलब्ध है। खनिजसे धातु निकालनेकी विधि सरल है। खनिजका खुलेमे निस्तापन करनेसे जस्तेका आक्साइड बनता है, उसे कोयलेकी बुकनीके साथ मिलाकर गर्म करनेसे जस्ता पृथक् हो जाता है। पिछली दो-एक दशाब्दियोसे विद्युत् द्वारा जस्ता निकालनेकी विधि
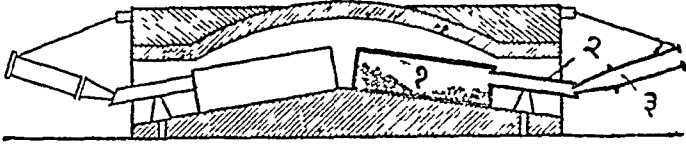
जस्ता पकानेकी भट्ठी [१ जस्तेकी कच्ची धातु २ जस्त ३ जस्तेका चूर्ण]

अधिकाधिक प्रचलित होती जा रही है। जस्तेके आक्साइडका सल्फ्यूरिक अम्लमे विलेपन कर उसमे विद्युत् पारित करनेसे जस्ता पृथक् होता है। विद्युत्-विश्लेपण विधिसे यह लाभ है कि एकदम विशुद्ध जस्ता प्राप्त होता है। जस्तेके स्फटिक षट्कोणी प्रिज्म (prism) आकारके होते है। जस्ता ४२०° से० तापमान पर विगलित होता और ९०७° से० पर उबलने लगता है। जस्तेके बरतनमे पानी भरकर रखनेसे जस्ता पानीमे घुलता है। हमारे दैनन्दिन उपयोगकी अनेक वस्तुओमे जस्तेका उपयोग निरन्तर बढता जा रहा है।

कम अनुपातवाली जस्तेकी मिश्र धातुओमे गिल्डिग मेटल (३ ८ प्रतिशत जस्ता), तोम्बाक (१० से १८ प्रतिशत जस्ता) और पिन्चबेक (७ से ११ प्रतिशत जस्ता)का उपयोग किया जाता है। जस्ता मुख्यत लोहेके पतरो (चादरो) पर मुलम्मा चढाने (जस्तीकृत करने) और पानीके नलोको जस्तीकृत करनेके काम आता है।

जैव-रासायनिक क्रियाओमे जस्ता कोई महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करता हो, ऐसा नही प्रतीत होता। फिर भी यहाँ यह उल्लेखनीय है कि साँप के विषमे ० ११ से ० ५६ प्रतिशत जस्तेके सयुक्त पदार्थ होते है।

मैग्नेशियम और एल्युमीनियम

आधुनिक युगमे धातुओमे इस्पात और गजवल्ली (कान्तिसार) पहले नम्बर पर है। अब मैग्नेशियम ओर एल्युमीनियम धातुएँ बडी तेजीसे इस्पातका स्थान ले रही है। इनकी मिश्र धातुएँ वजनमे हलकी होनेके साथ-साथ इस्पात जैसी मजबूत और अन्य अपेक्षित गुणोवाली भी होती है। जर्मनी, हालैण्ड और अमरीकामे तो पिछले पचीस बरसोमे मैग्नेशियमसे बनाई गई मिश्र धातुओका प्रचलन खूब ही बढ गया है। इस्पातके स्थानापन्नके रूपमे मैग्नेशियम और एल्युमीनियमकी उपयोगिता निर्विवाद सिद्ध हो चुकी है।

मैग्नेशियम—मैग्नेशियम एल्युमीनियमसे भी हलकी धातु है। वायुयानोके अवयव (parts) बनाने और आधुनिक युद्ध सचालनमे इसका खूब उपयोग किया जाता है। मैग्नेशियममे जरकोनियम और थोरियम-जैसी विरल धातु मिलाकर जो मिश्रधातु बनाई जाती है उसका उपयोग युद्धकालीन अग्नि बमोमे किया जाता है। तीसेक बरस पहले इस धातुका बहुत ही कम उपयोग होता था।

मैग्नेशियम धातु अपने यौगिकोंके रूपमें पृथ्वीकी सतहपर सर्वत्र बिखरी हुई मिलती है। इसके खनिजोंमें मैग्नेसाइट, डोलोमाइट और कार्नालाइट औद्योगिक दृष्टिसे उपयोगी हैं। ऊष्मा द्वारा पिघलाये हुए मैग्नेशियम क्लोराइडमें विद्युत् पारित करनेसे यह धातु पृथक् होती है। कैनाडामें आविष्कृत एक नई विधिके अनुसार डोलोमाइट और लोहयुक्त सिलिकोनका मिश्रण भट्ठीमें पैक करके गर्म करनेसे मैग्नेशियम अपने वाष्पीय रूपमें पृथक् होकर भट्ठीके मुँह पर जमा हो जाता है। इस विधिका सबसे बड़ा लाभ यह है कि मैग्नेशियमके कम अनुपातवाले अशुद्ध खनिजोंसे भी मैग्नेशियमका निस्सारण किया जा सकता है। हल्की होते हुए भी मैग्नेशियम धातु खूब मजबूत होती है। फिर इसे जंग नहीं लगता। तीन प्रतिशत नमकके विलयनमें छह वर्ष तक रखने पर भी केवल ऊपरी (बाहरी) सतह पर थोड़ा-सा मोरचा दिखाई देता है। मैग्नेशियमका उपयोग युद्धके समय अग्नि बम बनाने और शान्तिके समय बैटरी और ड्राईसेल बनानेमें जस्तेके स्थान पर किया जाने लगा है।

बिजलीकी और अन्य भट्ठियाँ बनानेके लिए काममें ली जानेवाली ईंटें मैग्नेसाइट खनिजोंसे तैयार की जाती हैं। ये ईंटें काफी तेज गर्मी सह सकती हैं। साधारण ईंटें गर्मी लगते ही भुरभुरी होकर बिखर जाती हैं। तेज आँच सहनेवाली उष्णतारोधक ईंटोंको 'ऊष्मासह' या 'रिफ्रेक्टरी' ईंटें कहते हैं। मैग्नेसाइटकी अपेक्षा प्रकृतिमें, डोलोमाइट अधिक तादादमें मिलता है। निर्माणकार्योंमें पत्थरके स्थान पर इसका उपयोग एक सर्वविदित तथ्य है।

मैग्नेशियमकी निम्न मिश्रधातुओंका उद्योगमें प्रचुर उपयोग किया जाता है

मैग्नेलियम—१० प्रतिशत मैग्नेशियम+९० प्रतिशत एल्युमीनियम।

ड्युरेल्युमिन—९४.४ प्रतिशत एल्युमीनियम+०.९५ प्रतिशत मैग्नेशियम+४.५ प्रतिशत तांबा+०.७६ प्रतिशत मेंगनीज (इसे ५२० डिग्री पानी गिलानेसे इसकी कठोरता खूब बढ़ जाती है)।

हालने इस कामको करनेका वीडा उठाया। तीन वर्षकी घनघोर मेहनत के बाद, विश्वके महान् रसायनज्ञ जो नही कर सके थे उसे इस युवक छात्रने सम्भव कर दिखाया। उसने

चार्ल्स मार्टिन हॉल (१८६३-१९१४)

एल्युमीनियमके खनिज वाक्साइट (एल्युमीनियम आक्साइड) से विद्युत्-विश्लेपण द्वारा एल्युमीनियम धातुको पृथक् किया। वाक्साइटमे अनेक अशुद्धियाँ (अपद्रव्य) होती है। धातु शोधनके लिए काममे लानेसे पहले उसमे शुद्ध एल्युमीनियम आक्साइड (एल्युमिना) बनाना पडता है।

इसके लिए वाक्साइटको गर्मीमे सोडेके साथ अगारो-जैसा लाल होने तक निस्तापित करनेसे उसमेके एल्युमीनियम आक्साइडका सोडियम एल्युमिनेटमे रूपान्तर होता है। यह क्षार पानीमे विलेय है इसलिए अपद्रव्योमे से इसका निस्यन्दन कर लिया जाता है। इस विलयनमे कार्वन डाइआक्साइड गैस पारित करनेसे शुद्ध एल्युमीनियम हाईड्राक्साइडका पृथक्करण होता है। इस हाईड्राक्साइडको गर्म करनेसे पानी निकल जाता है और शुद्ध आक्साइड बनता है। इसका गर्म कायोलाइटमे विलेयकर कार्बनके विद्युदग्रका उपयोग करते हुए विद्युत् विश्लेपण करनेसे एल्युमीनियम धातु पृथक् हो जाती है।

एल्युमीनियम सामान्यत मृदु और हलकी धातु होते हुए भी उसकी मिश्र धातुएँ इस्पात जैसी कठोर, रागे-जैसी चमकदार, जस्ते-जैसी टिकाऊ और ताँबे-जैसी विद्युत सवाहक होती है। ताँबेमे ४ ११ प्रतिशत एल्युमीनियम मिलानेसे एल्युमीनियम ब्राञ्ज नामक एक नये प्रकारका कॉसा बनाया जाता है, जिसमे रॉगा नामको भी नही होता।

एल्युमीनियमकी उपयोगी मिश्रधातुओमे मैग्नेशियम और ड्युरेल्युमिनका उल्लेख तो पीछे किया जा चुका है। वायुयानके विभिन्न अवयवोके निर्माणमे इन मिश्रधातुओका उपयोग किया जाता है। एल्युमीनियम पर कई रसायनो और गैसोका प्रभाव नही होता इसलिए मद्यके आसवन और पेट्रोलियमके परिष्करणमे एल्युमीनियमके बरतनो और उपकरणोका उपयोग किया जाता है। साधारणकोटिके उपयोगोमे सिगरेट, चाकलेट, मिठाई आदिको लपेटनेके लिए एल्युमीनियम-की पतली पत्तियाँ अधिकाधिक काम मे ली जाने लगी है। भारतमे ताँवा बहुत कम मात्रामे निकलता है। उसे विदेशोसे आयात करना पडता है। इस बातको ध्यानमे रखते हुए तारके रस्से, डाइनेमो और मोटरकी कुडलियो (coils) आदिमे एल्युमीनियमके तारका उपयोग आरम्भ किया गया है। रॉकेटमे ठोस ईंधनके रूपमे एल्युमीनियमके चूर्णका उपयोग अन्य ईंधनोके साथ

किया जाने लगा है। हमारे देशमे एल्युमीनियमका प्रचलन करनेवाले मद्रासके इजीनियरिग कालेजके प्राध्यापक सर एल्फ्रेड चेटर्टन थे। उन्होने १८९८ मे मद्रासके आर्ट स्कूलमे बरतन और

एल्युमीनियमकी मिश्र धातुको सक्षारण और जगसे बचानेके लिए उसपर शुद्ध एल्युमीनियमकी परत चढाई जाती है।
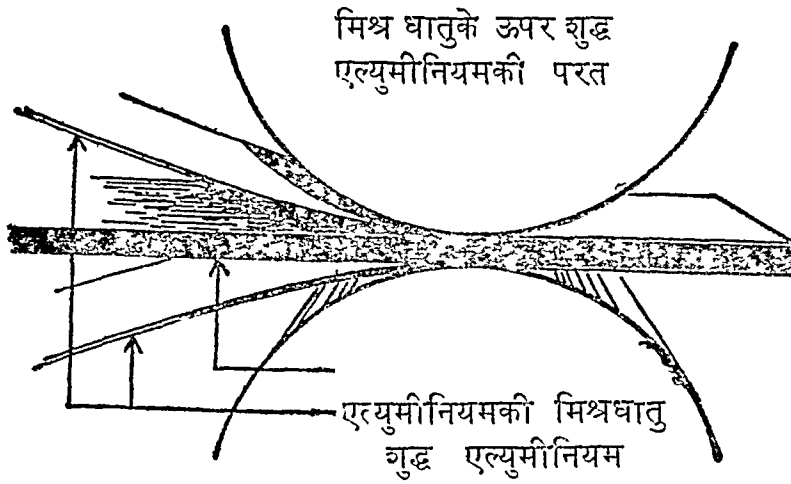
अन्य चीजे बनानेका कारखाना शुरू किया, १९०० मे इण्डियन एल्युमीनियम कम्पनीने चेटर्टनसे यह काम ले लिया।
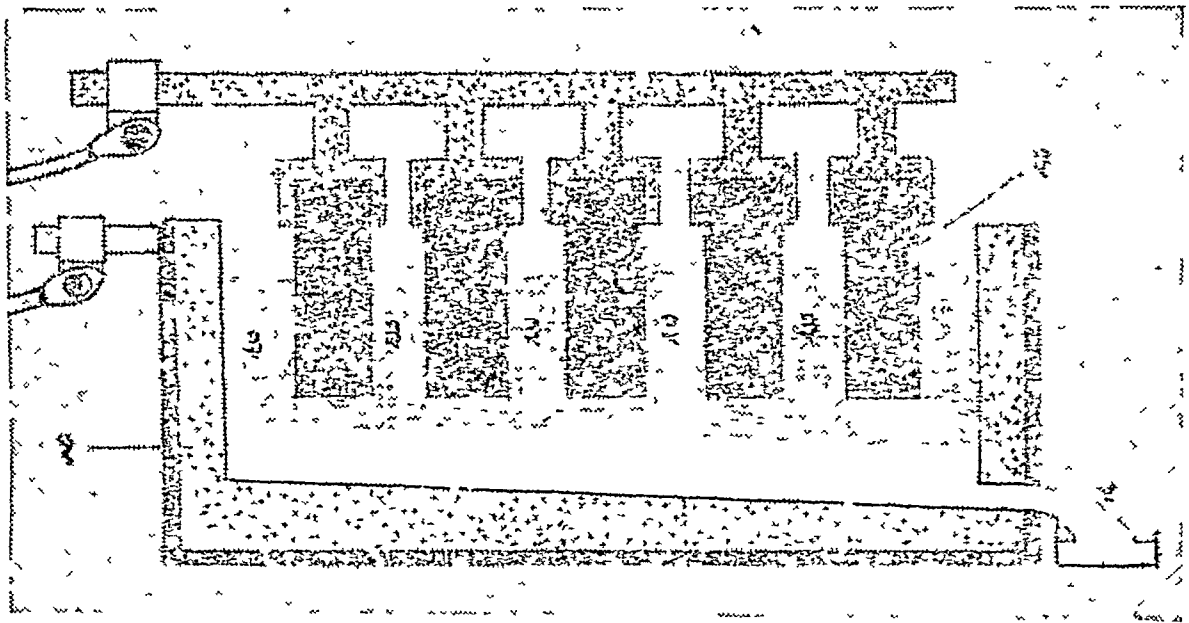
एल्युमीनियम आक्साइडके विद्युत्-विश्लेपण द्वारा एल्युमीनियम-उत्पादन
[१ कार्वनके अस्तरवाला डिव्वा, २ कार्वनकी छडे, ३ विगलित कायोलाइटमे घुला हुआ एल्युमीनियम आक्साइड, ४ विगलित एल्युमीनियमका द्रव]

एल्युमीनियमके उद्योगमे वाक्साइट और सस्ती विजलीकी विशेप रूपसे आवश्यकता होती है। हमारे देशमे कई स्थानो पर वाक्साइट सुलभ है। ताता, मैसूर और अन्य कम्पनियाँ

प्रपातके जलसे सस्ती बिजली पैदा करती है। इसलिए इस दिशामे विकासकी बहुत अच्छी सम्भावनाएँ है। स्वाधीनता के बाद हमारे देशमे एल्युमीनियमका निस्मारण करनेवाले कई कारखाने आरम्भ हुए है।

एल्युमीनियमके बरतनमे लवण रखनेसे उसमे छेद हो जाते है। उन छेदोको टाँका लगा कर बन्द करना मुश्किल होता है, क्योकि कि ताँबे-पीतलकी चीजोकी तरह एल्युमीनियमकी झलाई नही की जा सकती। लेकिन दिल्लीकी वैज्ञानिक और ओद्योगिक अनुसन्धान परिषदके भूतपूर्व निदेशक स्वर्गीय डॉ० शान्तिस्वरूप भटनागर और श्री सुन्दररावने एल्युमीनियममे टाँका लगानेके लिए निम्नलिखित माल खोज निकाला है—सुहागा (Borax) ५१ प्रतिशत, पोटेसियम क्लोराइड २५ प्रतिशत, लवण २५ प्रतिशत, टिटेनियम डाइआक्साइड २ ५ प्रतिशत और सोडियम बाइसलफाइड ११ ३ प्रतिशत—इन सभी चीजोका मिश्रण करके एल्युमीनियमके जोड पर रख ६००° सें० ताप पर गर्म करनेसे एल्युमीनियमकी झलाई हो जाती है और टाँका लग जाता है। एल्युमीनियमकी ३ ५ मिलीमीटर तककी मोटी चादरके लिए यह माल अच्छा काम देता है। इससे अधिक महीन चादरमे टाँका लगाना मुश्किल होता है और उपर्युक्त माल बेकार हो जाता है।

मोनोजाइट बालू और कुछ विरल धातुएँ

जिसने सिगरेट लाइटर न देखा हो, ऐसा आदमी आज शायद ही कोई निकलेगा। पुराने जमानेमे इस कामके लिए चकमक पत्थरका उपयोग किया जाता था। इसलिए सिगरेट लाइटरमे चिनगारी पैदा करनेवाले पदार्थको चकमक समझनेकी भूल की जाती है। परन्तु वास्तवमे वह एक मिश्रधातु है, जिसमे लोहेके अलावा सीरियम धातु मिली होती है।

सीरियम धातु प्राप्त करनेका मुख्य स्रोत मोनाजाइट नामक एक प्राकृतिक बालू है। साधारण बालूसे यह भिन्न और विशिष्ट प्रकारकी होती है और दुनियामे केवल दो ही स्थानोमे पाई जाती है। इस बालूमे सीरियमके अतिरिक्त और भी धातुएँ होती है। इस बालूका एक विशिष्ट गुण यह है कि वह रेडियधर्मी होती है। इस बालूके बारेमे हमारा देश बडा ही भाग्यवान है। त्रावणकोर (केरल) के समुद्र तटपर मोनाजाइट बालूके सघन निक्षेप है। इस धातुकी विश्व-माँगका लगभग ९० प्रतिशत अकेला त्रावणकोर पूरा करता है। बाकी ब्राजिल और ईस्ट-इण्डीज द्वीप समूहोसे आती है। इक्के-दुक्के स्थानोमे उपलब्ध होनेके ही कारण इस बालूको 'मोनाजाइट' कहते है। ग्रीक भाषामे मोनाजाइटका अर्थ है 'अकेला रहना।'

यह बालू लोहेके समान लोह-चुम्बकीय है। इसलिए अन्य पदार्थोसे इसे पृथक् करनेके लिए लोहचुम्बकीय विधियोका प्रयोग किया जाता है।

यह बालू कितनी ही विरल धातुओके फास्फेटोका मिश्रण है। सीरियमके अतिरिक्त थोरियम, लेन्थानम, प्रेसियोडियम, डाईडीमियम और अन्य उपयोगी विरलधातुएँ प्राप्त करनेका मुख्य स्रोत मोनाजाइट बालू ही है। मेजोथोरियम नामक रेडियधर्मी तत्त्व भी इसीसे निकाला जाता है। डाईडीमियमवाला चश्मा पहननेवालेकी आँखोको प्रकाश की चकाचौंधसे हानि नही पहुँचती इसलिए वेल्डिग और भट्ठीके आगे काम करनेवाले श्रमिकोकी आँखोकी रक्षाके

लिए इस प्रकारके काचके चश्मोका उपयोग किया जाता है। गैसबत्ती (पेट्रोमैक्स) के मेण्टल वनानेमे प्रयुक्त होनेवाला थोरियम नाइट्रेट मोनाजाइट बालूका उपयोग करके ही वनाया जाता है। विजलीके लट्टुओमे इस्तेमाल किया जानेवाला टग्स्टन धातुका तार भी थोरियमका मिश्रण करके ही वनाया जाता है। मोनाजाइटसे हेलियम गैस निकलती है। (एक ग्राम बालूसे एक घन सेंटीमीटर गैस प्राप्त होती है)।

मोनाजाइट बालूमे निहित रेडियधर्मी तत्त्वोके कारण परमाणुशक्तिके लिए इसका उपयोग करनेके सम्बन्धमे अनुसन्धान किये जा रहे है। इन अनुसन्धानोने इसका महत्त्व और भी बढा दिया है। युद्ध हो या शान्ति, दोनो ही अवस्थाओमे इस बालूने वैज्ञानिक जगत्मे अपना महत्त्वपूर्ण स्थान बना लिया है।

टंग्स्टन—टग्स्टन टिटेनियम, टेण्टालम, जिर्कोनियम और वेनेडियम 'विरल धातुएँ' कही जाती है। इससे शायद ऐसी धारणा वन सकती है कि ये धातुएँ बहुत कम तादादमे मिलती होगी और हमारे दैनिक जीवनमे अधिक काम न आती होगी। लेकिन वात इससे सर्वथा उलटी है। इन धातुओके खनिज अन्य सुलभ समझी जानेवाली धातुओसे अधिक मात्रामे मिलते है। जिर्को-नियम ताँबेसे दो-तीन गुना और सीसेसे तेरह गुना अधिक निकाला जाता है। गेलियम धातुके खनिज चाँदीकी अपेक्षा डेढ सौ गुना अधिक प्राप्त होते है।

इन विरल धातुओका विशेष प्रचलन न होनेका एक कारण तो यह है कि इनके खनिजोसे धातुएँ सरलता और सस्ती विधियोसे नही निकाली जा सकती, और दूसरा कारण यह कि प्रचलित धातुओके मुकाबले इनके धात्विक गुण कई बार न्यून पडते है। लेकिन फिर भी कई कामोमे इनकी उपयोगिता सिद्ध हो चुकी है। और पुरानी प्रचलित धातुओके वदले नई धातुएँ विशेप महत्त्व प्राप्त करती जा रही है।

टग्स्टनका उपयोगी खनिज वुलफ्राम राँगेके खनिजोके साथ मिलता है। इसके अलावा शालाइट और फर्बेराइट भी इसके खनिज है। वुलफ्रामकी सबसे अधिक उपज चीन और वर्मामे होती है। टग्स्टन धातुका निस्सारण करनेके लिए टग्स्टिक अम्लको कोयलेके साथ मिलाकर हाइड्रोजन गैसमे अगारेकी तरह लाल तपाया जाता है। टग्स्टनका उपयोग इस्पात उद्योगमे किया जाता है, यह उल्लेख तो पहले हो ही चुका है।

टिटेनियम—१७९० ई०मे एक अगरेज पादरी रेव० विलियम ग्रेगरने इलमेनाइट नामक एक खनिजमे टिटेनियम नामकी धातुके अस्तित्वका पता लगाया। पौने दो सौसे भी अधिक वर्पोसे ज्ञात यह धातु अन्य धातुओकी तुलनामे अभी तक अधिक उपयोगी साबित नही हो सकी थी। केवल रसायनशास्त्रके अध्येताओके अध्ययनके एक विपयके रूपमे वनी रही। परन्तु जेट विमानके इस युगमे यह धातु वैमानिक उद्योगकी मूलधातुका स्थान ग्रहण कर चुकी है। जेट विमानोको वनानेमे जिन धातुओका उपयोग किया जाता है उनमे टिटेनियमका स्थान सर्वोपरि और अद्वितीय है।

प्रकृतिमे टिटेनियम प्रचुर मात्रामे उपलब्ध है। मूलतत्त्वोमे उसका स्थान नौवाँ और धातुओमे चौथा है। लौह, एल्युमीनियम और मैग्नेशियमके बाद इसीका नम्बर आता है। १९४७मे मे टिटेनियमका उत्पादन केवल २ टन था, जो १९५४मे बढकर ५००० टन तक पहुँच गया।

प्रकृतिमे प्रचुर मात्रामे उपलब्ध इस धातुके मुख्य खनिज रूटाइल और इलमेनाइट है। इलमेनाइट बिलकुल कोयले-जैसा काला होता है। त्रावणकोरमे यह खूब होता है। दुनियाके देशोको

जेट विमानके निर्माणमे टिटेनियम धातु मूल धातुका स्थान ग्रहण कर चुकी है।

लगभग ६८ प्रतिशत इलमेनाइटकी पूर्ति अकेला त्रावणकोर करता है। उसके बाद नार्वेका नम्बर आता है। आश्चर्यकी बात तो यह है कि इस काले पदार्थसे बढिया सफेद रग बनाया जाता है। महाराष्ट्र राज्यके रत्नागिरी जिलेमे इलमेनाइटका खनिज मिला है, जिसमे २७ से ७५ प्रतिशत तक इलमेनाइट होनेका पता चला है।

रूटाइल आस्ट्रेलियामे प्रचुर मात्रामे होता है। उससे न्यून मात्रामे ब्राजिल, अमरीका और नार्वे आदि देशोमे पाया जाता है। रूटाइल सफेद पदार्थ है। चीनी मिट्टीके बरतनोपर एनैमल चढानेमे इसका खूब उपयोग किया जाता है। नकली दाँतो (बत्तीसी) पर प्रकृत रगकी पालिश चढानेमे भी इसका उपयोग होता है।

खनिजोसे टिटेनियम धातुका निस्सारण करनेके लिए खनिजोको साफ करके उनमे विद्यमान टिटेनियम डाइआक्साइडको सान्द्रित किया जाता है, फिर उसे कार्बनके साथ बिजलीकी भट्ठीमे गर्म करनेसे कार्बन युक्त टिटेनियम बनता है। शुद्ध धातु बनानेके लिए डाइआक्साइडको कैल्सियम धातुके साथ गर्म किया जाता है।

यह हुई एक विधि। एक और भी विधि प्रचलित है। उसमे पहले टिटेनियम डाइआक्साइड-से टिटेनियम क्लोराइड तैयार किया जाता है। इस क्लोराइडको मैग्नेशियम धातुके साथ गर्म करनेसे टिटेनियमका धातु रूपमे पृथक्करण होता है। इधर कुछ दिनोसे मैग्नेशियमके स्थानपर सोडियम धातुका उपयोग करनेकी विधि प्रचलित हुई है। इस विधिसे टिटेनियम धातुका 'स्पज' तैयार होता है, जिसे भट्ठीमे गर्म करके टिटेनियम धातुके ढोके बनाये जाते है।

टिटेनियम एल्युमीनियमसे केवल डेढ गुना भारी है। मजबूतीमे वह निष्कलक स्टीलके समान होता है। न तो उसे जग लगता है और न उसका सक्षारण ही होता है। एक ओर उसमे लोहेके तो दूसरी ओर एल्युमीनियम-जैसी हलकी धातुके भी गुण होते हैं। टिटेनियमकी मिश्र धातुएँ इस्पात-जैसी दृढ परन्तु उससे केवल आधे घनत्ववाली होती है। टिटेनियमका द्रवाक इस्पातमे २००° से० अधिक यानी १७२०° से० है। उपर्युक्त गुणोके कारण वायुयानोके निर्माणमे उसका उपयोग वरावर बढता जा रहा है।

अभी तक 'टिटेनियम स्पज' के उत्पादन पर अमरीका और जापान का एकाधिकार था। दोनो देशोने अपना उत्पादन खूब वढा लिया है। अव कैनाडा भी वाजारमे आया है। और रूस भी इस धातुको बनाने लगा है।

जिरकोनियम—जिरकोनियम टिटेनियमका भाई है। इसपर अम्लका असर नही होता इसलिए अम्ल-सह उपकरणोके निर्माणके लिए वह बहुत उपयोगी है। जिरकोनियम दहनशील-धातु है। यदि समान आयतनके पानीमे न रखा जाए तो जोरकी लपट और भीषण धडाकेके साथ यह जल उठता है। अग्नि वम वनानेमे इसका उपयोग किया गया था। परमाणु अभिक्रियक (atom reactor) मे यूरेनियम और थोरियम अनिवार्य होते हुए भी उनके इस्तेमालमे यह कठिनाई थी कि अभिक्रियकके उच्चतापके कारण ये धातुएँ कमजोर पड जाती थी। अन्तमे उन्हे जिरकोनियमसे मढ कर देखा गया तो काम सरल हो गया।
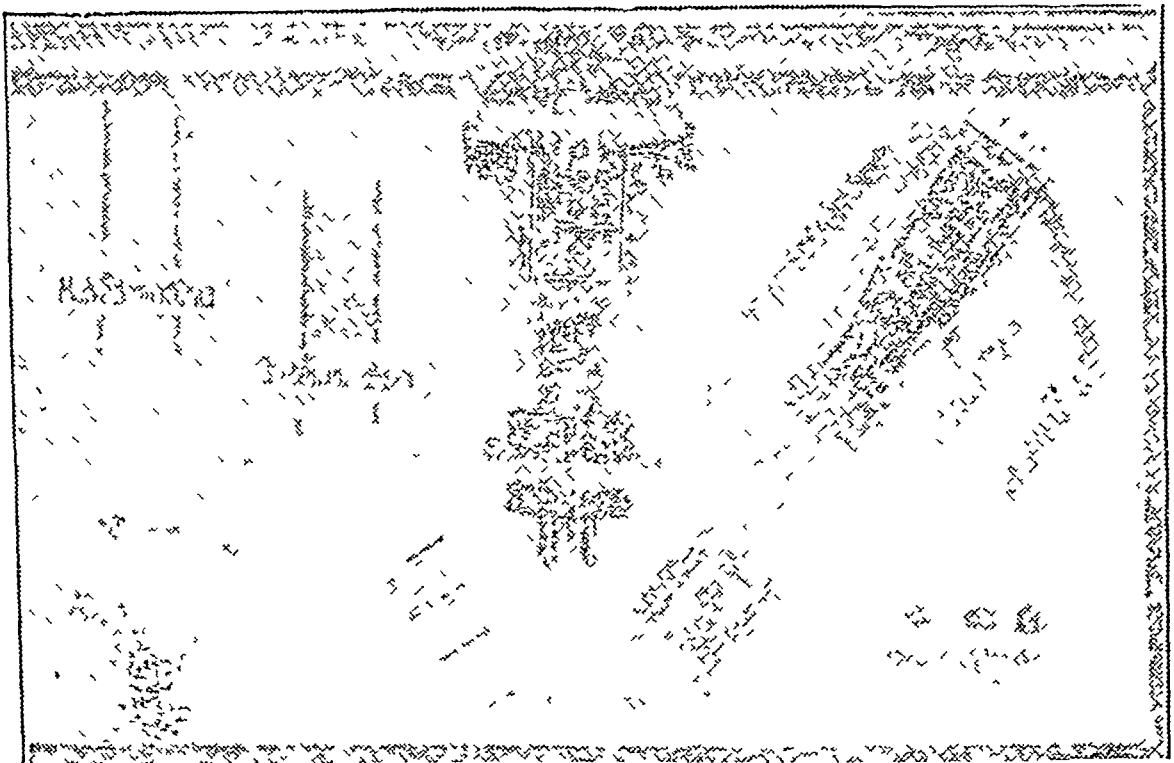
निर्वात ट्यूव (वाल्व) मे टेटालम और मालिब्डिनमका उपयोग

टेटालम—टेटालम परमाणु शक्तिके कारखानोके निर्माणकी धातुके रूपमे उपयोगी सिद्ध हुई है। टेटालमका शल्य चिकित्सामे भी खूब उपयोग होता है। शरीरके रसो, द्रवो और स्रावोका

इस पर कोई प्रभाव नही होता, इसलिए हड्डियोके पूरक हिस्सोके रूपमे और प्लास्टिक सर्जरीमे तारके टाँके लगानेमे इसका उपयोग किया जाता है। वेटरीसे चलनेवाले रेडियोसेटके एक-दिशकारी (rectifier) सेलोमे भी इसका उपयोग होता है।

टेंटालमका खनिज टेंटालाइट कठोर, काला ओर भारी होता है। हमारे देशमे मैसूरमे काश्मीर तक दसेक स्थानोमे यह मिलता है। इसके साथ-साथ कोलम्बियम धातुका खनिज कोलम्बाइट भी पाया जाता है।

मालिब्डिनम—मालिब्डिनम धातु निर्माण कार्योके लिए वहुत उपयोगी है। इससे 'मॉली स्टील' वनाया जाता है। इसके दो उपयोगी खनिजो, मालिब्डिनाइट और वुल्फेनाइटकी पूर्ति मुख्यत अमरीका द्वारा ही की जाती है। मालिब्डेनाइट ग्रेफाइटसे मिलता-जुलता और उसके साथ ही प्राप्त होता है।
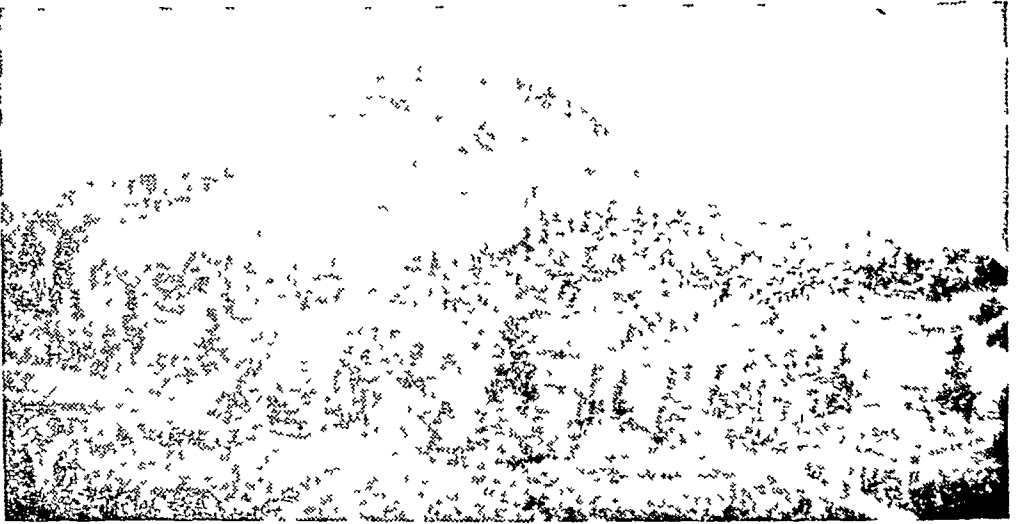
लोहेकी खान—टावर्ग स्मॉलैण्ड, स्वीडन
[इस खानके लोहेसे सेल्फस्ट्रॉमने वेनेडियमकी खोज की थी।]

वेनेडियम—वेनेडियमका धातुके रूपमे उपयोग नही किया जाता, विशेप प्रकारके इस्पातको वनानेमे यह काम आता है। पेट्रोनाइट, रोस्कोलाइट, कार्वोटाइट ओर वेनेडिनाइट इसके महत्वपूर्ण खनिज है। ये खनिज पेरूमे कोयले-जैसी काली शिलाओमे मिलते है। इस धातुके विश्व-उत्पादनका ३३ प्रतिशत पेरूसे ही आता है।

टेलुरियम—पृथ्वीके आग्नेय शैलोमे उनके दसवे भागके वरावर टेलुरियम धातु रहती है। मध्ययूरोप, कोलोरेडो, वोलीविया और जापानमे इसका उत्पादन होता है। सामान्यत टेलुरियमकी कच्ची धातुको गर्म कर गन्धकके सान्द्र अम्लमे उसका विलेय करनेसे टेल्युराइट बनता है और उसमे सल्फर डाइआक्साइड पारित करनेसे टेलुरियम धातुका पृथक्करण होता है।

$$H_2TeO_3 + 2SO_2 + H_2O \rightarrow Te + 2H_2SO_4$$
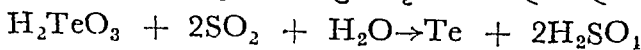
यह धातु स्फटिक और अस्फटिक दोनो ही रूपोमे प्राप्त होती है। अभी तक यह धातु

किसी खास काममे नही आती थी, परन्तु अब पता चला है कि तापान्तर युग्म (theimo-couple)के लिए यह उपयोगी है।

विस्मथ और टेलुरियम धातुके छोरकी झलाई करके उच्चकोटिका तापान्तर युग्म बनाया जा सकता है। जव उनकी सन्धिको गर्म किया जाता है तो ऊष्मा विद्युत्मे रूपान्तरित हो जाती है। फिर जव तापान्तर युग्ममे विद्युत् पारित की जाती है तो उसका एक छोर अत्यन्त गर्म हो जाता है और सामनेवाला दूसरा छोर एकदम ठण्डा हो जाता है। इस तरहके तापान्तर युग्मोका उपयोग करके सर्वथा नि शब्द प्रशीतकोका विकास किया जा रहा है। उसके अन्दरका कोई पुर्जा हिलने-डोलनेवाला नही होता।

वहरे लोग कानोमे श्रवण-सहाय (heaing aid) लगाते है। उसकी वैटरीकी शक्ति कम हो जानेसे वरावर सुनाई नही देता, इसलिए वार-वार वैटरी वदलना जरूरी हो जाता है।
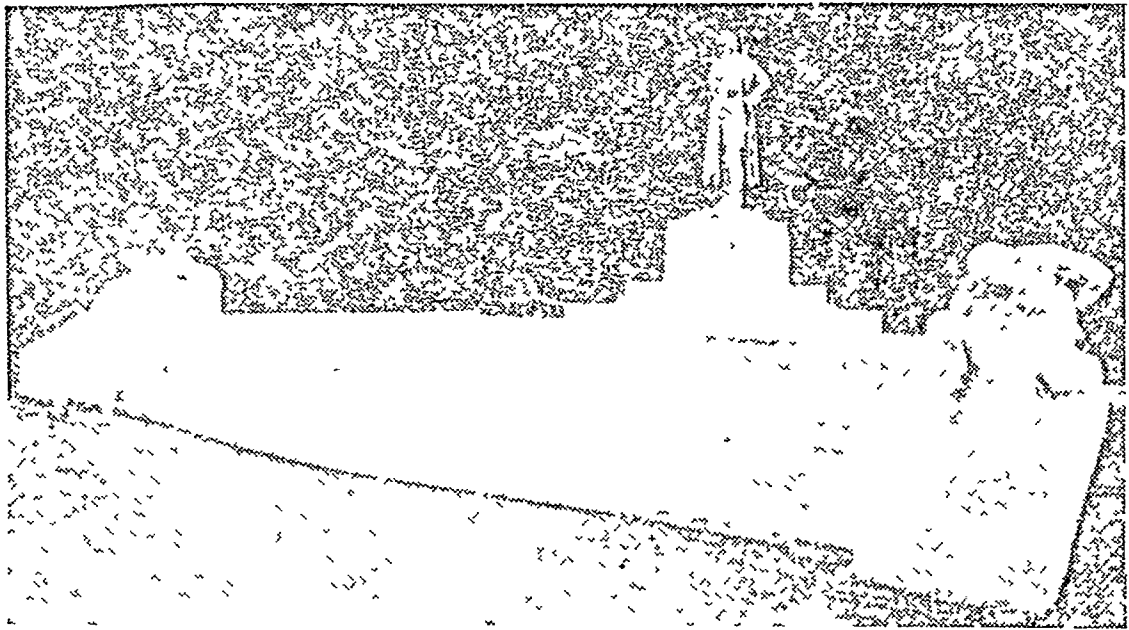
हिडन बर्गमे वन्सनका स्मारक

इस प्रकारके श्रवण-सहायमे तापान्तर युग्मका उपयोग करनेके सम्वन्धमे अनुसन्धान किये जा रहे है। शरीरकी सामान्य गर्मीसे यह तापान्तरयुग्म विद्युत् उत्पन्न करेगा और उस विद्युत्की सहायतासे श्रवण-सहाय अपना काम करेगा। इस तरह उसको चलानेके लिए किसी वैटरीकी आवश्यकता नही रह जाएगी।

रावर्ट विलियम वन्सन
(१८११–१८९९)
रुविडियमके आविष्कारक, जो केकोडिल $As_2(CH_3)_4$ पर प्रयोग करते समय अपनी आँखे गँवा वैठे।
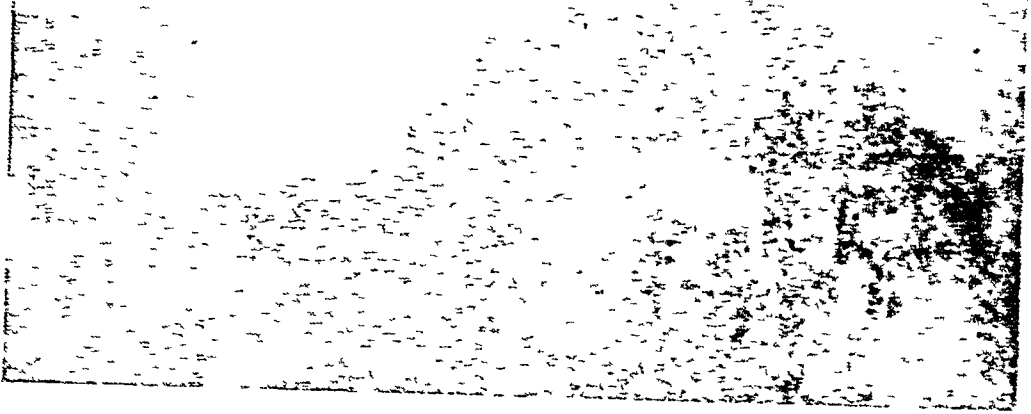
अल्फ्रेड नोबेल (१८३३–१८९६)

वसीयतनामा

मेरी वसूल की जा सकने योग्य बाकी सारी सम्पत्तिकी व्यवस्था निम्नानुसारकी जाए

मेरी सम्पत्तिके न्यासधारी सारी नकद रकमको सुरक्षित प्रतिभूतियोमे लगाएँगे और उसकी एक निधि बनाकर उसके व्याजमे पिछले वर्ष जिस किसीने भी मनुष्य जातिको सर्वाधिक लाभ पहुँचानेवाला कार्य किया हो उसे वार्षिक पुरस्कार प्रदान करेगे। उपर्युक्त व्याजके बराबर पाँच भाग किये जाएँगे और उनका विभाजन इस प्रकार होगा—भौतिकीके क्षेत्रमे सबसे महत्त्वपूर्ण आविष्कार करनेवालेको एक भाग रसायनके क्षेत्रमे महत्त्वपूर्ण अनुसन्धान अथवा गवेषणा करनेवाले व्यक्तिको एक भाग शरीर-क्रिया-विज्ञान और चिकित्साके क्षेत्रमे सबसे महत्त्वपूर्ण अनुसन्धान करनेवालेको एक भाग, जिस व्यक्तिने साहित्यके क्षेत्रमे आदर्शवादी दृष्टिकोणसे उल्लेखनीय सृजन किया हो उसे एक भाग, और जिस व्यक्तिने विभिन्न देशोके बीच पारस्परिक भाईचारा कायम करने, स्थायी सेनाकी समाप्ति या सख्या कम करने और शान्ति स्थापित करनेवाले सम्मेलनोंके द्वारा सबसे अधिक या सर्वोत्तम कार्य किया हो उसे एक भाग प्रदान किया जाए।

भौतिकी और रसायनके पुरस्कार स्वीडनकी राजकीय विज्ञान परिषद् (Royal Academy of Sciences) द्वारा, शरीर-क्रिया विज्ञान और चिकित्सा सम्बन्धी पुरस्कार स्टाकहोमकी कैरोलीन मेडिकल इन्स्टीट्यूट द्वारा साहित्यका पुरस्कार स्टाकहोमकी स्वीडीय साहित्य परिषद् द्वारा और शान्तिके लिए दिया जानेवाला पुरस्कार नार्वेकी ससद (नार्वेजियन स्टार्टिग) द्वारा निर्वाचित पाँच व्यक्तियोकी पच समिति द्वारा दिया जाएगा। मेरी विशेष रूपसे यह इच्छा है कि पुरस्कारोंके वितरणमे प्रत्याशियोकी राष्ट्रीयता पर बिलकुल ही ध्यान नही दिया जाए, जिससे सबसे योग्य प्रत्याशी पुरस्कार प्राप्त कर सके फिर वह चाहे स्केण्डिनेविया-का हो या न भी हो।

पेरिस नवम्बर २७ १८९५

—अल्फ्रेड बर्नार्ड नोबेल

६ : विस्फोटक पदार्थ

बहुत तेज आवाजके साथ कोई भी पदार्थ टूटता या फूटता है तो कहा जाता है कि 'धमाका हुआ'। ज्वाला या दहनके नामसे पहचानी जानेवाली क्रियामे पदार्थ जलता है, परन्तु आवाज नही होती और रासायनिक क्रिया एक-जैसी होती रहती है।
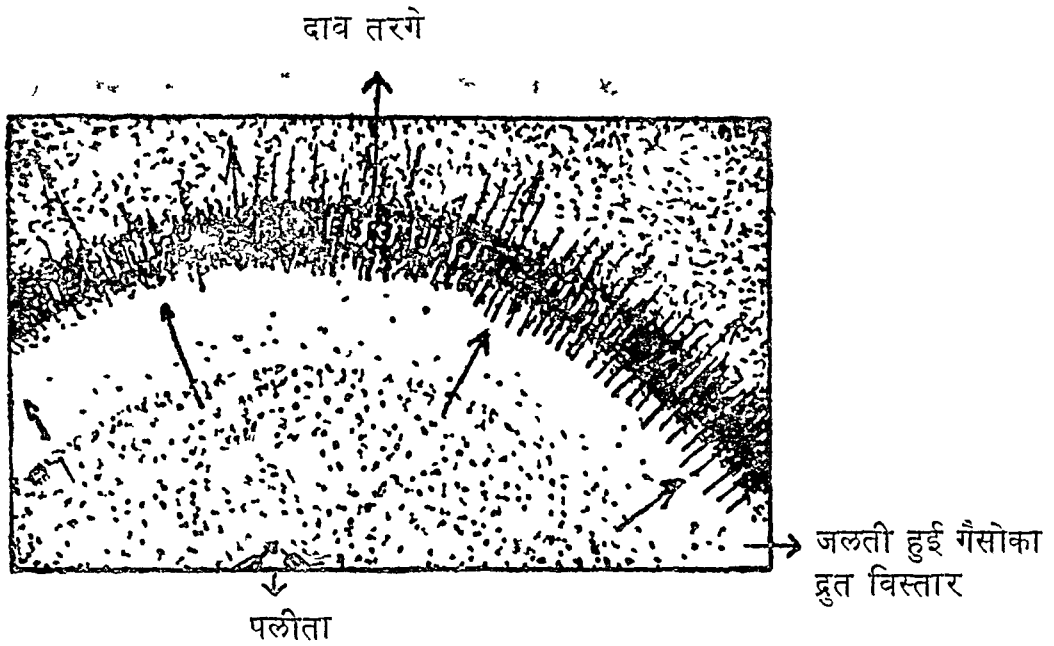
विस्फोटक पदार्थके धमाकेसे उत्पन्न दाब-तरगे

विस्फोटक पदार्थोको गर्म करने या फोडनेसे गैसकी उत्पत्तिके साथ बडी तेजीसे रासायनिक परिवर्तन होने लगते है। उत्पन्न होनेवाली गैसका आयतन बहुत अधिक होनेके कारण वह अत्यधिक दाव पैदा करती है। इस दावके ही कारण भीषण धमाका होता है। यह धमाका हवामे दाव-तरगे (pressure wave) पैदा कर देता है।

विस्फोटक दो प्रकारके होते है। एक प्रकारमे बारूद, नाइट्रोसेल्युलोज जैसे पदार्थोका समावेश होता है। ये पदार्थ हलकी किस्मके विस्फोटक कहलाते है। इन्हे एक सिरे पर जलानेसे आग प्रति सेकण्ड ४०० मीटर लम्बाई तक पहुँच जाती है। इस प्रकारके हलके विस्फोटकोका कई तरहके कामोमे और शस्त्रोकी दूरवर्ती मारके लिए प्रणोदक (propellant) पदार्थोके रूपमे उपयोग किया जाता है।

भारी विस्फोटकोकी गिनती दूसरे प्रकारके विस्फोटकोमे की जाती हैं। ये जबर्दस्त धमाकोके साथ तेजीसे फटते है। इनके फटनेसे उत्पन्न होनेवाली दाव-तरगोकी गति एक सेकण्ड-

मे १००० से ८५०० मीटर जितनी द्रुत होती हे। इस कोटिके विस्फोटकोंमे डाइनेमाइट, साइक्लो-नाइट, टी-एन-टी-जैसे प्रबल विस्फोटकोका समावेश होता है। इनसे उत्पन्न गैसोंका आयतन मूल पदार्थसे बीस हजार गुना तक हो जाता है।

बारूद मनुष्य जातिका पहला विस्फोटक माना जाता है, जिसका आविष्कार चीनमे हुआ था। पश्चिमको इससे परिचित करनेका श्रेय अरब लोगोको है। भारतमे गोला-बारूदका सबसे पहला उपयोग बाबरने इस देशपर अपनी चढाईके समय किया था। सातवी शताब्दीमे कुस्तुन्तुनियाके निवासियोने मुसलमानोसे अपने शहरकी रक्षा करनेमे तेजीसे जलनेवाले एक मिश्रणका उपयोग किया था, जिसे उन दिनो 'यूनानी आग' (Greek Fire) कहा जाता था। तेरहवी शताब्दीमे मुसलमानोने अपने जिहादो (crusades) मे गन्धक, डामर, नेफ्था आदि पदार्थोका तेजीसे जलनेवाला मिश्रण इस्तेमाल किया था। इतिहासकारोने उसका वर्णन इन शब्दोमे किया है "भयकर गर्जनके साथ बिजलीकी गतिसे हवामे उडता, सूअर-जैसी मोटी पूंछवाला पखदार जानवर-जैसा दिखाई देता था।"

पहले वास्तविक विस्फोटक बारूदका कब और किसने आविष्कार किया, इसका ठीक-ठीक पता नही चलता, परन्तु तेरहवी शताब्दीके एक फ्रान्सीसी पादरी रोजर बेकनको इसके आविष्कारका श्रेय गलतीसे दिया जाता है।

उन्नीसवी शताब्दीमे विशेषरूपसे अधिकाधिक शक्तिशाली विस्फोटकोकी खोज, विस्फोटको-मे निहित क्षमताके विपुल भडारका अच्छी तरह उपयोग और उसे नियन्त्रणमे रखने तथा शान्ति एव युद्ध दोनो ही स्थितियोमे उसका कारगर उपयोग करनेकी दिशामे प्रयत्न किये गए। १३४६ ई० मे अगरेजोने क्रेसीकी लडाईमे जिस बारूदका उपयोग किया था उसकी, आजके विस्फोटकोसे तुलना करने पर हमे इस दिशामे हुई प्रगतिका कुछ अनुमान हो सकता है। कहाँ उस जमानेकी 'घोडोको भडकानेवाले छोटे-छोटे गोले फेकनेवाली' तोपे और कहाँ ४८ किलोमीटर तक एक मीट्रिकटन वजनके गोलोकी मार करने और पूरे-के-पूरे शहरको तबाह कर देनेवाली आधुनिक विशाल तोपे ?

बारूद पोटेसियम नाइट्रेट (शोरा-साल्टपिटर KNO_3), कोयले और गन्धकका मिश्रण है। विस्फोटकके रूपमे उसका कार्य पोटेसियम नाइट्रेटसे पृथक् होनेवाली आक्सीजनकी मददसे गन्धक और कोयलेके द्रुत दहन पर अवलम्बित है।

विभिन्न देशोके बारूदके मिश्रणमे उसके अवयवो (घटको)का अनुपात एक-जैसा नही होता। थोडा-बहुत अन्तर रहता ही है। परन्तु सामान्यत उसमे ७५ प्रतिशत शोरा, १० प्रतिशत गन्धक और १५ प्रतिशत कोयला होना चाहिए।

वर्तमान कालमे बारूद बनानेकी विधियोमे काफी सुधार किये गए है, परन्तु ये सभी सुधार भौतिक अथवा यान्त्रिक है—रासायनिक नही। बारूदखानेमे काम आनेवाला बारूद काले रगका होता है। इस 'काले पाउडर'को बनानेके लिए उसके अवयवोको महीन पीसकर उनका आपसमे मिश्रण किया जाता है। फिर उस मिश्रणको ताँबे अथवा पीतलकी छलनीसे छाना जाता है। मिश्रण बराबर हो सके इसलिए उसे आर्द्र करके खास प्रकारकी चक्कियोमे पीसकर रोटियाँ बना ली जाती है। इस प्रकार तैयारकी हुई 'रोटियो'के टुकडे कर उन्हे प्रति वर्ग

इच ४०० पोण्डका दाब देकर सख्त बनाया जाता है। उसके बाद उन टुकड़ोंको विभिन्न आकारके दाँतोवाले बेलनोंमेंसे निकालकर महीन दाने बना लिये जाते हैं। फिर इन दानोंको गोल-गोल घूमनेवाले पोले सिलिण्डरमें घुमाकर ग्रेफाइटसे पालिश किया जाता है। पालिश करनेके बाद इस बारूदको ४०° सें० (१०४° फा०) ताप पर हवामें सुखाते हैं। उत्स्फोटन (blasting) विस्फोटकके रूपमें इस बारूदका उपयोग किया जाता है। दोनोंके घनत्व और आयतनके अनुसार उनकी प्रस्फोटकताकी शक्ति न्यूनाधिक होती है। खानोंमें कड़ी परतोंको तोड़ने और आतिशबाजी बनानेमें बारूदका उपयोग किया जाता है। इतना ही नहीं, शेल और टाइमबमके पलीतेकी रिंग (छल्ला) भरनेके लिए और शार्पनेल-जैसे अन्य विस्फोटकोंको फोड़नेके 'चार्ज' (आवेशक) के रूपमें भी उसका उपयोग किया जाता है।

अब तो इस तरहके बारूदसे कहीं शक्तिशाली और सक्षम विस्फोटकोंका आविष्कार हो चुका है।

गन-काटन अथवा बारूदी रूई ऐसा ही एक प्रबल विस्फोटक है। १८४६ ई०में बाल (Basle) विश्वविद्यालयके रसायनशास्त्रके प्राध्यापक क्रिश्चियन शॉन्बिन अपने घर पर एक प्रयोग कर रहे थे। सहसा उनके हाथसे एक बोतल गिर पड़ी। उसमें नाइट्रिक अम्ल और सल्फ्युरिक अम्लका मिश्रण था। वह मिश्रण फर्श पर ढुलक गया। उन्होंने अपनी पत्नीके सूती एप्रनसे उसे पोंछकर उस एप्रनको चिमनीके पास सूखनेके लिए रख दिया। सूखतेमें ही वह एप्रन सहसा जल उठा। सूती एप्रन रूईसे ही तो बना होता है। रासायनिक दृष्टिसे रूईको देखें तो वह सेल्युलोज है। इस प्रकार नाइट्रो-सेल्युलोजका आविष्कार हुआ। नाइट्रो सेल्युलोजमें दोसे चार नाइट्रोसमूह रहने पर उसे पाइरोक्सिलिन और छह नाइट्रोसमूह होने पर गनकाटन कहते हैं।
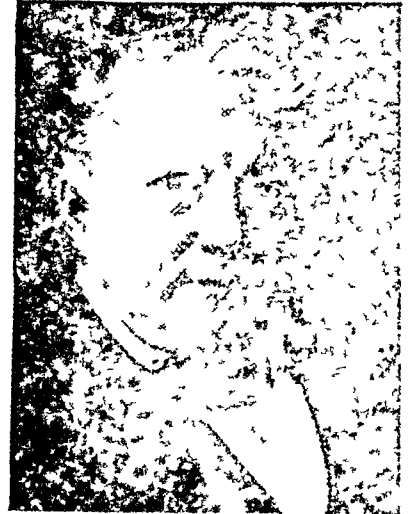
क्रिश्चियन फ्रेडरिक शान्बिन
[१७९९–१८६८]

इसे बनानेमें रूई और लकड़ीकी लुगदी अथवा घाससे निकाले जानेवाले सेल्युलोजका उपयोग किया जा सकता है। परन्तु विस्फोटक बनानेमें तो रूई निकाल लेनेके बाद बिनौलेसे लिपटे हुए नन्हे रेशोंका ही उपयोग किया जाता है। गन-काटनको सुलगानेमें वह बहुत तेजीसे जलता है, परन्तु उससे धमाका नहीं होता। हां, थोड़े मरकरी फल्मिनेट या लेड एज़ाइड-जैसे धमाका करनेवाले पदार्थसे धक्का देनेपर उसका तेजीसे विघटन होता और गैसीय पदार्थोंका विशाल आयतन बनता है। इन गैसोंमें नाइट्रोजन कार्बनके आक्साइड और वाष्प रहता है। ये सभी गैसें रंगहीन होनेके कारण गन-काटनका धमाका होता है तब धुआं नहीं निकलता। फिर गन-काटनको गीला भी इस्तेमाल किया जा सकता है। इसीलिए भारी दाब पर दबाकर ठस्स किये हुए गन-काटनके टुकड़ोंका सुरंगों और तारपीडोंमें उपयोग किया जाता है। गन-काटनका विनाशकारी प्रभाव उसके विघटनकी गति पर आधारित है। एक किलोग्राम गन-काटनको फूटनेमें

१/१०० सेकण्ड लगता है, परन्तु इतने ही वजनके गन-काटनको फूटनेमे सिर्फ १/५०००० सेकण्डका समय लगता है। ऐसे ज्वलनशील विस्फोटकको यदि तोपका गोला दागनेके प्रणोदक पदार्थकी तरह इस्तेमाल किया जाए तो तोप ही फट जाए, इसलिए उसका अति सीमित उपयोग ही किया जा सकता है। लेकिन अत्यधिक विनाशकारी विस्फोटकके रूपमे वह अवश्य बहुत ही मूल्यवान है। धूम्रविहीन विस्फोटक होनेके कारण उसका धूम्रहीन चूर्ण (smokeless powder) बनाया जाता है। गनकाटनको विलेय नाइट्रोकाटनके साथ मिलाकर ईथर (अल्कोहल)मे गूँधकर गीले आटेकी लोई–जैसा लोचदार कर लिया जाता है। उसके बाद आवश्यक आकार-प्रकारके बेलनमे दबाकर छोटे-छोटे दाने तैयार किये जाते है। इसका सबसे पहला उपयोग प्रशियन सेनाने १८६५-मे किया था। इस अत्यन्त प्रबल विस्फोटककी विघटन-दरको कम करके, तोपमे प्रणोदककी तरह इस्तेमाल करने योग्य बनानेके लिए डाइफिनाइल एमाइन मिलाया जाता है।

वानस्पतिक तेल या चरबी ग्लिसराइड है। इसलिए वानस्पतिक तेल अथवा चरबीसे बडे पैमाने पर ग्लिसरीन तैयार किया जा सकता है। पेट्रोलियम परिष्करणशाला (refinery) मे भी पेट्रोकेमिकलके रूपमे बडे पैमानेपर ग्लिसरीन बनाया जा सकता है। नाइट्रिक और सल्फ्यूरिक अम्लोकी क्रिया द्वारा ग्लिसरीन 'नाइट्रोग्लिसरीन' नामक पदार्थमे परिवर्तित हो जाता है। यह द्रव-पदार्थ अत्यन्त प्रबल विस्फोटक है।

$$\begin{array}{c} CH_2OH \\ | \\ CHOH \\ | \\ CH_2OH \end{array} \xrightarrow[\text{H}_2\text{SO}_4 \text{ (गन्धकाम्ल)}]{\text{नाइट्रिक अम्ल } 3HONO_2} 94\% \quad \begin{array}{l} CH_2-O-NO_2 \\ | \\ CH-O-NO_2 \\ | \\ CH_2-O-NO_2 \end{array}$$
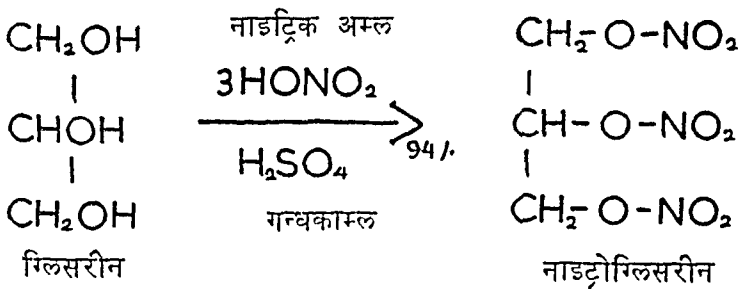
ग्लिसरीन — नाइट्रोग्लिसरीन

१८४७ ई०मे इतालवी रसायनज्ञ सोब्रेरो (१८७३-१८९६)ने इस पदार्थको बनाया था। और उसी समय इसका धमाकेके साथ जो प्रस्फोट हुआ उससे वह मरते-मरते बचा था। इस नाइट्रोग्लिसरीनका उपयोग करना बहुत मुश्किल था। जरा-सा जोर पडने, धक्का लगने या बरतनके जरा-सा टकरा जाने-मात्रसे इसका धमाकेके साथ प्रस्फोट हो जाता था। इसलिए इसे इस तरह रखना पडता था कि जरा-सा भी धक्का न लगने पाए। एक बार अल्फ्रेड नोबेल (१८३३-१८९६)ने नाइट्रोग्लिसरीनकी बोतले कीजेलगर मिट्टीमे दबाकर रखी थी। एक बोतलका द्रव ढुल गया और मिट्टीमे अवशोषित हो गया, परन्तु प्रस्फोट न हुआ। इस घटनाके बाद अल्फ्रेड नोबेलने नाइट्रोग्लिसरीनको कीजेलगर मिट्टीमे मिलाकर रखनेका फैसला किया। ऐसी मिट्टीको प्रस्फोटक पदार्थका धक्का लगने पर ही उसमे मिला हुआ नाइट्रोग्लिसरीन फूटकर धमाका करता था। इस प्रकार नोबेलने डाइनामाइटका आविष्कार कर खूब धन पैदा किया, परन्तु सारे धनका ज्ञानार्जनके हेतु उपयोग किये जानेके लिए एक न्यास बना दिया। आज भी उस न्यासके द्वारा नोबेल पुरस्कार दिये जाते है।

डाइनेमाइटका विघटन होने पर नाइट्रोजन, कार्बन डाइआक्साइड, वाष्प और आक्सीजन प्रचुर परिमाणमे निकलती है। डाइनेमाइटको फोडनेके लिए मरक्यूरी फुलिमनेटका उपयोग किया जाता है। डाइनेमाइटसे कही प्रबल विस्फोटक ब्लास्टिग जिलेटीन है। ९२ प्रतिशत नाइट्रो-ग्लिसरीनमे ८ प्रतिशत नाइट्रोकाटन अर्थात् कोलोडीओन मिलाकर ब्लास्टिग जिलेटीन बनाया जाता है। ब्लास्टिग जिलेटीनकी खोज भी अल्फ्रेड नोबेलने ही की थी। एक दिन अकस्मात् उसकी अगुलीसे खून निकल आया। उसने अगुली पर लगानेके लिए कोलोडीओन मॅगवाया। घाव पर लगाते समय सहसा एक विचार उसके मनमे कौध गया। कोलोडीओन भी नाइट्रोकाटन ही होता है। उसमे नाइट्रोजनका अनुपात डाइनेमाइटसे कम रहता है। लेकिन यदि उसे डाइनेमाइटसे युक्त कर दिया जाए तो ? और इस विचारको मूर्तरूप देकर उसने ब्लास्टिग जिलेटीनकी खोज की। उसमे नाइट्रोग्लिसरीन कीजेलगर मिट्टीके साथ नही, अपितु एक अन्य प्रस्फोटकके साथ मिला होनेसे विस्फोटकके रूपमे उसकी प्रबलता बहुत ही अधिक हो जाती है।

ब्लास्टिग जिलेटीनमे पोटेसियम नाइट्रेट, अमोनियम नाइट्रेट, लकडीका बुरादा और चाक आदि पदार्थ अलग-अलग अनुपातमे मिलानेसे जेलिग्नाइट नामक पदार्थ बनता है। यह विस्फोटक खानो आदिकी परतोको तोडनेमे इस्तेमाल किया जाता है। ब्रिटिश सर्विस पाउडर कॉर्डाइटके नामसे विख्यात है। ६५ प्रतिशत गनकाटन, ३० प्रतिशत नाइट्रोग्लिसरीन और ५ प्रतिशत वेसलीन-को ऐसिटोनके साथ मिलाकर इसे बनाया जाता है। इस मिश्रणको डोरी अथवा रस्सी (chord) के रूपमे द्रव दाब द्वारा मशीनमे निकाला जाता है, इसका कॉर्डाइट (cordite) नाम रखे जानेका यही कारण है।

ऐसिटोनका वाष्पीकरण करके उडा देनेसे कॉर्डाइट सीग-जैसा बन जाता है, जिस पर धक्कोका कोई असर नही होता और इसलिए उसे सुरक्षित रखा जा सकता है। दो अत्यधिक प्रबल विस्फोटकोका जिलेटीकरण कर देनेसे उनसे मनचाहा काम लिया जा सकता है। विस्फोटकोके विज्ञानमे यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण और विशिष्ट प्रकारकी खोज मानी जाती है। किसी-न-किसी विधिसे जिलेटीकरण (gelatynize) किया हुआ नाइट्रोकाटन सभी प्रकारके प्रणोदक बारूदोको बनानेके काममे लाया जाता है।

कोयलेका हवा सहित आसवन करनेसे कितने ही रासायनिक पदार्थ प्राप्त होते है, जिनमे-से कइयोको विस्फोटक बनाया जा सकता है। इस तरहके विस्फोटक बारूदकी तरह काममे लाये जाते है।

फिनोल (कार्बोलिक अम्ल) पर नाइट्रिक और सल्फ्यूरिक अम्लोके मिश्रणकी क्रिया होनेसे ट्रायनाइट्रो फिनोल उर्फ पिक्रिक अम्ल बनता है। वह कुछ पीला स्फटिकीय पदार्थ होता है, जो रेशम पर पीला रग चढानेके काम आता है। विस्फोटकके रूपमे उसके भिन्न-भिन्न नाम है—मेलि-नाइट, लिड्डाइट, डुनाइट, परटाइट और शिमोसाइट।

अब पिक्रिक अम्लके स्थान पर हाइड्रोकार्बन टोल्युईनसे बना टी-एन-टी० विस्फोटक ज्यादा-तर इस्तेमाल किया जाता है। इसे ट्रायनाइटोल्युईन अथवा सक्षेपमे टी-एन-टी (T N T) अथवा ट्रोटाईल कहते है। यह ठोस पदार्थ है और निरापद रूपमे एक जगहसे दूसरी जगह लाया-ले जाया जा सकता है।

इसके ढेर पर गोली दागनेसे भी कोई खास असर नहीं होता। टी-एन-टी का प्रस्फोट पिक्रिक अम्लसे जरा भी निम्न कोटिका नहीं होता। परन्तु उसके कार्बनके परमाणुओंका किसी भी तरह सम्पूर्ण आक्सीकरण न होनेसे टी-एन-टीका प्रस्फोट करने पर काजल-जैसे काले बादल उठते हैं। सम्पूर्ण आक्सीकरण हो सके इसलिए टी-एन-टीमें अमोनियम नाइट्रेट मिलाया जाता है। इस विधि-से बनाया गया पदार्थ ऐमेटोल कहलाता है। उसमें ८० प्रतिशत अमोनियम नाइट्रेट रहता है। यह विस्फोटक प्रथम महायुद्धमें इस्तेमाल किया गया था। टी-एन-टीका द्रवणांक ८१° सें० है और उसे भापमें विगलित किया जा सकता है, जिससे उसके शेल बनाये जा सकें। इस दृष्टिसे यह विस्फोटक अद्भुत गुणसम्पन्न भी है। इसीलिए अन्य कई प्रबल विस्फोटकोंका आविष्कार हो जाने पर भी शेलके रूपमें इसका उपयोग अब भी किया जाता है।

$$\begin{array}{ccc} & H_2 \quad H_2 & \\ O_2N-O-C & & C-O-NO_2 \\ & C & \\ O_2N-O-C & & C-O-NO_2 \\ & H_2 \quad H_2 & \end{array}$$

पेण्टा ऐरिथ्रिटोल टेट्रानाइट्रेट (P E T N)

$$\begin{array}{ccc} & CH_3 & \\ O_2N- & & -NO_2 \\ H- & & -H \\ & NO_2 & \end{array}$$

ट्राइनाइट्रोटोल्युईन T N T

टी-एन-टी (T N T) और पी-ई-टी-एन (P E T N) (पेण्टा ऐरिथ्रिटोल ट्रेटानाइट्रेट) का मिश्रण पेण्टोलाइट कहलाता है।

विगत महायुद्धमें 'ब्लाक बस्टर्स' के नामसे प्रसिद्ध बमोंमें भरनेके लिए टी-एन-टी और एल्यु-मीनियम धातुकी महीन बुकनीका उपयोग किया गया था, इस मिश्रणको ट्रिटोनोल कहा जाता है। अभी तक प्रस्फोटक बारूद (bursting charges) की तरह इस्तेमाल किये जाने वाले अन्य सभी विस्फोटकोंमें साइक्लोनाइट (R D X) सर्वोत्कृष्ट है। मिथेनॉल या मिथाइल अलको-हलसे इसे बनाया जाता है।

आज जो अनेक प्रकारके विस्फोटक बनाये जा रहे हैं, वे केवल युद्धमें ही नहीं शान्तिके समय भी अनेक उपयोगी कामोंमें प्रयुक्त होते हैं। उदाहरणके लिए खानों और सुरंगोंकी खुदाई करनेमें हजारों मजदूरोंका काम इनके द्वारा कुछ ही सेकंडोंमें किया जा सकता है। साथ ही, अनेक प्रकारके अभियान्त्रिक कार्योंमें भी इनका उपयोग किया जाता है। विस्फोटकका नवीनतम उपयोग धातुकर्ममें होने लगा है, जिसके बारेमें पिछले अध्यायमें लिखा जा चुका है। विस्फोटकोंको काममें लाने योग्य बनानेकी विधि खोजे जानेके बादसे उनकी उपयोगितामें बहुत वृद्धि हुई है। अनेक रसाय-नज्ञोंके अथक परिश्रमके परिणामस्वरूप विस्फोटकोंकी अभूतपूर्व सिद्धियाँ हाथ आई हैं।

परिशिष्ट

विस्फोटकों की विशिष्टताएँ और उपयोग

नाम	रासायनिक सूत्र अथवा सरचना	प्रस्फोट का आवेग मीटर/सेकड	विस्तार का आयतन सी०सी०/१० ग्राम	आघात क्षमता	विशिष्टताएँ और उपयोग
नाइट्रोग्लिसरीन (N.G)	$C_3H_5\ (ONO_2)_3$	७४५०	५१५	अति उच्च	तेलीय द्रव, ५०° से०पर वाष्पशील। नाइट्रोकाटनको ,प्लास्टिक वनाता है। जिलेटीकरण या कोलोइड करता है। तेलके कुएँ खोदनेमे, डाइनेमाइटका अवयव, दुहरे पाउडरो मे।
सीधे डाइनेमाइट	लकडीकी लुगदीमे १५ से ६० प्रतिशत N. G $NaNO_3$ और अम्ल विरोधी पदार्थके साथ	N G के अनुपातके अनुसार न्यूनाधिक	N G के अनुपातके अनुसार	सामान्यत निम्न	पनीर-जैसा प्लास्टिक पदार्थ कागजके कारतूसमे भरा हुआ स्फोटक (डिटोनेटर)के द्वारा फोडा जा सकता है। जमनेके बाद निकालना भयकर। गर्मी और घर्पणके प्रभावसे फूटता है। पानी N G. को स्थानान्तरित करता है। कठोर चट्टानो, शिलाओ, कोयला और अन्य खनिजोको तोडनेके लिए। भयकर विनाश कर सकता है।

ऐमोनिया डाइनेमाइट	ऊपरकी तरह N G के खास अश के बदले $NH_4 NO_3$	९१००-१३००० N G के अनुपातके अनुसार वदलता है।	—	सामान्यत निम्न	इतनी ही विस्फोटक क्षमता वाले सीधे डाइनेमाइटसे सस्ता। नरम शिलाओ, चट्टानो ओर कठिन जमीनको तोडनेके लिए उपयुक्त, कोयलेकी खानोमे कोयलेकी परतोको तोडनेमे काम आता है।
जिलेटीन डाइनेमाइट	२ ६ प्र०श० कोलोडीओन काटन, लकडी की लुगदी या वुरादा, नाइट्रेट आदिके साथ N G का मिश्रण	६१०० N G के अनुपातके अनुसार वदलता रहता है।]	४१५	निम्न	जेली-जैसा पदार्थ। अति प्रवल विस्फोटक, जलाभेद्य (वाटर प्रूफ)। विशेप विनाशकारी प्रभावके लिए उपयोग किया जाता है। पनडुब्डियोको उडा देता है।
निम्न हिमाक वाले डाइनेमाइट	सीधे डाइनेमाइट या ऐमोनिया डाइनेमाइटके समान परन्तु N. G के वदले इथिलिन ग्लायकोल डाइनाइट्रेट	—	—	निम्न	०° से०से नीचे हिमाक, अमरीकाके सभी डाइनेमाइट निम्न हिमाक वाले होते है।
ब्लास्टिंग जिलेटीन	N G + ७ ८ प्रतिशत कोलोडीओन काटन	७८००	५२०	सामान्यत निम्न	व्यापारिक विस्फोटकोमे सबसे प्रवल और द्रुत। जलाभेद्य। सुरगे वनाने, गहरे कुए खोदने और पनडुब्डियोके कार्योमे प्रयुक्त (समुद्रके तलको तोडनेके लिए)।

नाम	रासायनिक सूत्र अथवा सरचना	प्रस्फोटक का आवेग मीटर/सेकड	विस्तार का आयतन सी०सी०/१० ग्राम	आघात क्षमता	विशिष्टताएँ और उपयोग
टी० एन० टी० ट्रायनाइट्रोटोल्युईन	$CH_3C_6H_2(NO_2)_3$	६८००	२६०	निम्न	शेल या ब्लाकके लिए आसानी से पिघाला जा सकता है। (द्रवणाक ८० ३° से०) स्फोट होनेपर काला धुआँ निकलता है। शेल और बममे चार्जके रूपमे मकान तोडनेके लिए, और पानी के अन्दर स्फोट करनेके लिए ब्लाक, ढलाईका तापमान कम करनेके लिए मिश्रणमे प्रयुक्त होता है।
सेमेटोल	(१) D ५० प्रतिशत TNT ५० प्रतिशत NH_4NO_3	६९,०	३००	निम्न	(१) शेल सरलतासे ढाले जा सकते है। शेलको फोडनेके लिए चार्जके रूपमे। द्रवणाक ८५ से०।
	(२) २० प्रतिशत T N.T ८० प्रतिशत $NaNC_3$	५१००	३०० निम्न	निम्न	(२) शेलमे दबाकर भरा जाता है। ये दोनो सफेद धुआँ छोडते है। T N T के समकक्ष शक्तिवाले बडे शेलमे T N T के स्थानपर इस्तेमाल किया जा सकता है। ऐसी अमरीकी सैन्य विशेषज्ञोकी राय।

ऐमोनियम नाइट्रेट मिश्रित विस्फोटक	६० प्रतिशत NH_4NO_3 १५ प्रतिशत T N T १८ प्रतिशत Al [illegible] ७ प्रतिशत कोयला	आवश्यकतानुसार मिश्रणके अवयवोमे परिवर्तन किया जाता है। रजकणोके आकारपर आधारित है।	—	निम्न	प्रणोदक पदार्थके रूपमे कभी-कभी असफल सिद्ध होता हैं। सरकारी अनुमतिके विना स्वतन्त्रतासे उपयोग किये जा सकने वाले विस्फोटकोमे अतीव लोकप्रिय।
D N T डाइनाइट्रोटोल्यूइन	$CH_3C_6H_3(NO_2)_2$	—	—	”	अन्य प्रवल विस्फोटकोके साथ मिलानेसे उनके स्फोटक वेग और शक्तिको कम करता है। T N T के साथ इसका २० प्रतिशत मिश्रण चट्टानो आदिको उडानेमे प्रयुक्त होता है। ५ प्रतिशत तकका मिश्रण F H N प्रणोदको और गनकाटनके साथ ६ प्रतिशत मिश्रण हल्की किस्मके वारूदमे इस्तेमाल किया जाता हे।
R D X साइक्लोनाइट	सममित (सिमेट्रिकल) ट्रायमेथिलिन ट्रायनाइट्रामाइन	८४००	—	साधारण उच्च	गर्म करने पर २००°से० तापमानपर विघटन होता है। T N T-से ५० प्रतिशत अधिक प्रवल वम और शेलके चार्जके लिए T N T के साथ मिलाकर इसकी ढलाई की जाती है।
टोर्पेक्स (Torpex)	R D X, T N T ओर Al के पाउडर का मिश्रण	—	—	निम्न	अत्यन्त प्रवल पानीके अन्दर इस्तेमाल किये जानेवाले विस्फोटकके रूपमे पनडुब्वियोको नष्ट करनेके काम आता हे।

नाम	रासायनिक सूत्र अथवा सरचना	प्रस्फोटक का आवेग मीटर।सेकट	विस्तार का आयतन सी०सी०/१० ग्राम	आघात क्षमता	विशिष्टताएँ और उपयोग
हेक्सोनिट (Hexonit)	N G और P E. T. N के साथ कम-से-कम १० प्रतिशत R D X का मिश्रण	—	—	निम्न	सबसे प्रबल विस्फोटकोमेसे एक।
हैलीट (E D. N. A.)	इथिलिन डाइनाईट्रामाइन $O_2N.\ NH.\ CH_2\ CH_2\text{-}NH\text{-}NO_2$	—	—	R D X से न्यून	T N T से अधिक प्रबल परन्तु R D Xसे न्यून। R D X के ही समान इस्तेमाल किया जाता है।
पिक्रिक अम्ल २ : ४ : ६ टाइनाइट्राफिनोल	$(OH)\ C_6\ H_2\ (NO_2)_3$	७०००	३००	साधारण उच्च	इसकी ढलाई जोखिम वाली। गर्मियोके उच्च तापमानमे अस्थायी। ताँबे-जैसी धातुओके सहारक पिक्रेट बनाता है। मरक्यूरी फुल्मिनेटके बदले पलीता लगाने-भरका सीमित उपयोग किया जा सकता है। इसका द्रवणाक कम करने वाले अन्य विस्फोटकोके साथ मिलाकर उपयोग किया जा सकता है।
ऐमोनियम पिक्रेट (एक्स्प्लोजिव)	$(NOH_4)\ C_6\ H_2(NO_2)_3$	६५००	२३०	अत्यन्त निम्न	घर्षण और पटके जानेका असर नही होता, इसलिए शेलमे ठूँस-ठूँसकर और दबाकर भरा जा सकता है। T N T.से कम शक्तिवाला। कवचका भेदन करनेवाले शेलमे काम आता है।

नाइट्रो स्टार्च	स्टार्च के विविध नाइट्रिक ऐसिटेटो का मिश्रण	—	—	निम्न	अत्यन्त सरलतासे जल उठनेवाली सफेद बकनी। खानोको तोडनेमे अन्य विस्फोटकोके साथ मिलाकर इस्तेमाल किया जाता है।
टेट्रील ट्राइनाइट्रोफिनाइल मिथाइलनाइट्रामाइन	$(NO_2)_3 C_6 H_2 N CH_3 NO_2$	७२००	३४०	साधारण उच्च	अत्यन्त प्रबल होनेके कारण इसे अन्य विस्फोटकोके साथ मिलाकर सहायक चार्जके रूपमे शेलमे भरा जाता है। विमान-विरोधी तोपोको दागनेमे चार्जके रूपमे।
P E T N पेंटाइरिथ्रिटोल टेट्रा-नाइट्रेट	$C(CH_2 ONO_2)_4$	८०००	—		अत्यन्त प्रबल विस्फोटकोमेसे एक। टेट्रीलकी भाँति सहायक चार्जके रूपमे।
पेंट्रीटोल	T N T और P E T N का समान भागवाला मिश्रण	—	—	निम्न	अत्यन्त प्रबल बर्स्टिग चार्जके रूपमे।
मरक्यूरी फुलिमनेट	$Hg(ONC)_2$ १/२ H_2O	३९२०	२१३	फोडने वाले के रूप मे अति उच्च	चिनगारी या गर्म टाँकीके साथ घिसनेसे बडी सरलतासे फूटता है। अन्य विस्फोटकोके साथ मिलाकर ज्वाला पैदा करनेके काम आता है। औद्योगिक ब्लास्टिगके मुखाग्रमे, शेलके मुखाग्रके फ्यूजके रूपमे, छोटे कारतूसोकी टोपियोमे फोडनेके लिए फुलिमनेटसे अधिक तापमान चाहिए। अधिक सुरक्षित। प्राइमरो (रजको) और फ्यूजके लिए उपयोगी।

नाम	रासायनिक सूत्र अथवा संरचना	प्रस्फोटका आवेग मीटर/सेकंड	विस्तारका आयतन सी०सी०/१०	आघात क्षमता	विशिष्टताएँ और उपयोग
लेड ऐजाइड	$Pb(N_3)_2$	५०००	२५०	फुल्मिनेट की आधी	
लेड स्टिफ्नेट	$C_6H(NO_2)_3O_2Pb$	—	—	उच्च	लेड ऐजाइडकी अपेक्षा सरलतासे प्रज्वलित किया जा सकता है। रजको आदिमे उपयोगी।
प्रणोदित्रों (नोदकों) के रूप में इस्तेमाल किये जाने वाले विस्फोटक					
[illegible] नाइट्रोसेल्युलोज (NC) [illegible]	पाइरो काटन सेल्यूलोज नाइट्रेट १२.६% N वाला	सतहके क्षेत्रके अनुसार न्यूनाधिक		निम्न	आर्द्रताग्राही, दानोंके आकारपर दहन-दरका नियन्त्रण। तेज चमकके साथ निर्धूम ज्वाला निकलती है। अलकोहल-ईथरके साथ इसका जिलेटीकरण होता है।
	गन काटन सेल्यूलोज नाइट्रेट १३.२ N वाला	—	—	—	तोप, छोटे हथियार और गोल-तमंचोंमे इस्तेमाल किये जाने-वाला बारूद बनानेमे निर्धूम विस्फोटका पाइरोकाटन और गनकाटन मिलाकर १३.१५ प्रतिशत वाला बारूद बनाया जाता है। विद्युत् द्वारा सुलगाये जाने वाले (प्राइमरो) मे तारके रूपमे काम आता है।

	५ प्रतिशत वेसलीन				[illegible] लिए प्रणोदक (इग्लैण्डमे)।
द्वि समीक्षारीय चूर्ण Doule bace Powder	६०-८०% N C ४० २० N G	—	—	—	तेजीसे सुलगता है। तोपके छेदो का सक्षारण करता है। मोर्टर और खेल-तमाशेके बारूदके लिए। प्रणोदक (अमरीकामे इस्तेमाल नही होता)।
आल्वा नाइट DINA चूर्ण	डाइ-(२—नाइट्रोआक्सि इथाइल नाइट्रामिन)	—	—	—	समुद्री वारूदमे काम आता है।
राकेट पाउडर (विलायकहीन चूर्ण)	५०% N G द्वारा प्लास्टिसाइड नाइट्रो सेल्यूलोज स्थिरता लाने वाले पदार्थ और पोटेसियम क्षार	—	—	—	एक-जैसा जलनेवाला बारूद ४ ५ इच तकके राकेटमे इस्तेमाल किया जाता है।
रासायनिक प्रणोदक	८०-९०%हाइड्रोजनपेरो-क्साइड +Ca, Na या K परमेगनेट पोटास (या पानी वाला)	—	—	—	पेट्रोल ईंधनके आक्सीजनकी की पूर्ति करता है। टरवाइन या या पनडुब्वीके लिए। वी-२ राकेटमे। जेट मोटरोमे।
	हाइड्रेझीन सल्फेट+ मिथाइल ऐलकोहल	—	—	—	त्वरित दहन। टारपीडो टर-वाइन चलानेके लिए।
	सधूम नाइट्रिक अम्ल+एजामीन	—	—	—	गर्मी और गैस पैदा करता है।
	अम्ल मिश्रण+मोनोइथाइल ऐन्थालीन	—	—	—	वायुयानो के लिए। ऊपर के समान
काला चूर्ण	७५ प्रतिशत KNO_3 या $NaNO_3$ १५ प्रतिशत कोयला १० प्रतिशत गन्धक	४००	५०	प्रकीर्ण निम्न	सस्ता। सधूम ज्वाला। कोयले की खानोमे ब्लास्टिंग कारतूस। आतिशवाजी और अभ्यासके लिए वम आदि बनानेमे।

सच्चा हीरा कोयलेका स्फटिकमय रूपान्तर है। लोहेको खूब गर्म करके और बहुत अधिक दाब पर रखनेसे जो स्थिति पृथ्वीकी सतहके नीचे है (भूगर्भीय स्थिति) कोयले—कार्बनका उसमें विलेय होकर हीरेमें रूपान्तर हो जाता है। रासायनिक विधिसे बनाये गए और खानमेंसे खोदकर निकाले गए हीरेकी उत्पत्तिका ढंग एक ही है। हीरेकी सबसे प्रसिद्ध खानें दक्षिण अफ्रीकामें किम्बर्ली-में है। वहाँके हीरे दुनियाभरमें जाते हैं। भारतमें गोलकुण्डा और पन्नाकी हीरेकी खानें प्रसिद्ध हैं, लेकिन आज उनका महत्त्व अफ्रीकाके आगे बहुत कम हो गया है। आज तो दुनियाकी हीरेकी ९६ प्रतिशत पूर्ति अकेला अफ्रीका करता है। किम्बर्लीने दुनियाको लगभग १० टन हीरा दिया है। हीरोंका साज-सजावटमें, राजा-महाराजाओंके मुकुटोंकी शोभा बढानेमें और धनवानोंके आभूषणोंमें उपयोग किया जाता है। लेकिन इन सामान्य उपयोगोंके अतिरिक्त विज्ञानके आजके युगमें हीरा और भी बहुतसे काम आता है। हीरा सबसे कठोर पदार्थ है। जिस प्रकार बढईका रन्दा लकडी-की छीलन उतारता है उसी प्रकार हीरा कठोर वस्तुको छील सकता है। इसलिए कठोर चीजोंको काटनेके लिए हीरेका उद्योगोंमें उपयोग किया जाता है। सिर्फ एक टेण्टेलम नामकी धातु इस मामले-में हीरेसे बढकर होती है।

यह तो बताया ही जा चुका है कि पहलू तराशनेके बाद ही हीरेकी कीमत आँकी जाती है। खानमेंसे निकला हुआ हीरा एकदम बदसूरत और कोयले-जैसा दिखाई देता है। उसके पहलू-तराशना भी एक कला है। हालैण्डकी राजधानी एमस्टर्डमके कारीगर इस काममें सबसे कुशल है। हीरेको हीरेसे ही काटा जाता है। काले या भूरे रंगके हीरोंको कार्बनाडो कहा जाता है। हीरे-के रूपमें उनका अधिक मूल्य नहीं उठता। लेकिन उनका उपयोग पत्थर काटनेवाले बरमोंकी धार, धातुके तार खींचनेकी डाई आदि बनानेमें किया जाता है। बोर्टका चूर्ण हीरेकी पालिश करने या पहलू तराशनेके काममें लिया जाता है।

प्राकृतिक हीरेके समान बनावटी हीरे बनानेके प्रयत्न १८२०से किये जा रहे हैं। १८९६ ई०में महान फ्रेंच वैज्ञानिक एच० मोइजॉने इस दिशामें जो सफलता अर्जित की वह उल्लेखनीय है। इस कार्यके लिए आवश्यक अत्यधिक ऊष्मा प्रदान करनेवाली विद्युत्-भट्ठी बनानेकी विधि उन्होंने खोज निकाली। प्रयोगशालामें हीरा बनानेकी मुख्य समस्या थी कार्बनका हीरेके रूपवाले षट्कोणी स्फटिकोंमें रूपान्तर करना। ग्रेफाइट कार्बनका स्फटीय रूपान्तर है अवश्य, परन्तु हीरे-जैसा नहीं। हीरा बनानेके लिए एकदम शुद्ध कार्बन चाहिए। मोइजॉने अपनी विद्युत्-भट्ठीमें अत्यन्त उच्च तापमान पर विगलित लोहमें चीनीसे तैयार किए हुए शुद्ध कार्बनका विलयन कर उस मिश्रणको ठण्डा किया तो लोहकी ऊपरी परतें ठोस हो गईं और अन्दरके द्रव लोहको बराबर शिकंजेमें पकडे रखनेसे काफी मात्रामें दाब उत्पन्न हुआ। परिणाम-स्वरूप उसमें जो कार्बन था वह अत्यन्त सूक्ष्म पारदर्शी
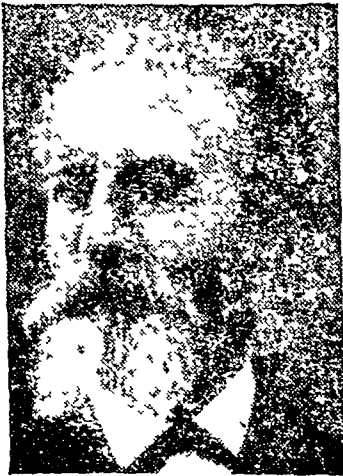
फर्डिनैण्ड फ्रेडरिक हेनरी मोईजाँ
(१८५२-१९०७)

हीरेके रूपमे रूपान्तरित हो गया। इसमेसे हीरेका पृथक्करण करनेके लिए अम्लके द्वारा लोहका विलयन कर अविलेय हीरेको पृथक् कर लिया गया। यह हुई मोइजाँ द्वारा हीरा बनानेकी प्रक्रियाकी रूपरेखा। मोइजाँ द्वारा बनाया हुआ बडे-से-बडा हीरा ०.७ मिलीमीटरका था। प्रकृतिमे मिलनेवाले बडे हीरो-जैसे जाज्वल्यमान हीरे अभी तक प्रयोगशालामे बनाये नही जा सके है।

आजकल बाजारमे कृत्रिम हीरे प्रचुर मात्रामे मिलते है। एक प्रकारके जगमगानेवाले (द्युतिमान) काँचसे ये हीरे बनाये जाते है। सच्चे और कृत्रिम (इमिटेशन) हीरोकी पहचानमे रेडियम खूब उपयोगी होता है। रेडियमकी स्थितिमे, अँधेरेमे, सच्चा हीरा फॉस्फोरसकी तरह चमकने लगता है। कृत्रिम हीरेमे यह गुण नही होता। वैद्य लोग हीरेकी भस्म बनाते और टानिक-की तरह उसका उपयोग करते है। अच्छी प्रकार बनाई हुई हीरेकी भस्म सर्वोत्कृष्ट रसायन समझी जाती है।

एक हीरेको छोडकर बाकी रत्नोके मामलेमे विज्ञानने प्रयोगशालामे प्रकृतिका हूबहू अनु-करण कर दिखाया है। नीलम और माणिक बनानेके उद्योग खूब जोरोसे चल रहे है। फ्रान्स, स्वीडेन और जर्मनीमे प्राकृतिक नीलम और माणिकसे हूबहू मिलते-जुलते नग बनाये जाते है। द्वितीय महायुद्धके बाद इग्लैण्डमे भी यह उद्योग विकसित हुआ। माणिक बर्मामे—खासतौर पर माडलेमे और स्याममे मिलता है। रग उसका खूब चमकीला—चटक—लाल होता है। इसीसे मिलते हुए आसमानी रगके रत्न स्याममे निकलते है, जो नीलम कहलाते है। गहरे नीले रगके नीलमको शनिका नग या पत्थर भी कहते है। माणिकका रग उसमे विद्यमान क्रोमियमके कारण है। नीलमका रग टिटेनियमके कारण है। ये पदार्थ खनिज कोरण्डम या घुरुन्द एल्युमीनियम आक्साइडका पारदर्शी रूप है।

शुद्ध एल्युमीनियम आक्साइडमे उचित अनुपातमे अन्य आवश्यक पदार्थ मिलाकर विद्युत्-भट्ठीमे अत्यधिक ऊष्मा पर गर्म करके नीलम और माणिक बनाये जा सकते है। इन कृत्रिम पदार्थोका रासायनिक सघटन प्राकृतिक नमूनो-जैसा ही होता है।

पुखराजका रग सफेद होता है। कोई-कोई पीले रगका भी होता है। पीले पुखराजको वृहस्पति कहते है। इस जातिके रत्न श्रीलकासे प्राप्त होते है।

सुन्दर हरे रगका पन्ना (मरकत) आपने देखा है? सभी रत्नोमे पन्ना सर्वाधिक कीमती समझा जाता है। यह पन्ना बेरिलियम नामकी एक विरल धातुके खनिज बेरिलकी जातिका है। पन्नेका हरा रग उसमे उपस्थित क्रोमियमका आभारी है। बेरिलमे एल्युमीनियम और बालूका बेरिलियमसे सयोजन हुआ है। विज्ञान प्रयोगशालामे पन्ना बनानेमे सफल हो गया है। पन्नाको सस्कृत भाषामे मरकत कहते है। महाकवि कालिदासने मेघदूतमे यक्षके घरका वर्णन करते हुए 'मरकत-

शिलाबद्ध सोपानमार्गो' कहा है। इससे पता चलता है कि पन्ना बहुत पुरातन कालमे ज्ञात रहा है।

पन्ना रासायनिक शब्दावलीमे बेरिलियम एल्युमीनियम सिलिकेट है। इस पदार्थको स्फटीय बनानेकी एक विधि यह हो सकती है कि अत्यधिक ऊष्मा पर ज्यादा विलेय विलायक इसके लिए खोज निकाला जाए। इस विलयनको ठण्डा करनेमे वह पदार्थ स्फटीय रूपमे पृथक् हो जाता है। पन्ना पानीमे एकदम अविलेय है। इसलिए पानीमे अविलेय पदार्थ बनानेका अनुसन्धान १९१२मे जर्मनीमे फ्राकफुर्ट विश्वविद्यालयके खनिज-विज्ञानके प्राध्यापक नाकेनने आरम्भ किया। विज्ञानकी परिभाषामे जिसे पानीका क्रान्तिक ताप (critical temperature) कहते है उस ताप पर पन्ना और उसकी तरहके अन्य अविलेय पदार्थोका विलयन कर उसमेसे स्फटिकोको पृथक् करनेमे वे १९२८मे सफल हुए। बेरिलियम आक्साइड, एल्युमीनियम और बालूको बराबर आवश्यक अनुपातमे मिलाकर गजवल्लीके बन्द भाप विसक्रामक (auto clave)मे कास्टिक सोडेवाले पानीके साथ ३७०-४०० अश सेंटिग्रेड ताप पर गर्म किया गया। यह क्रिया थोडे दिन चालू रखी गई। इस परिस्थितिमे सारे भाप विसक्रामकमे पानी क्रान्तिक तापके आसपास रहता है। इस विधिसे एक केरेट (० २ ग्राम) वजनके कृत्रिम पन्ने वे बना सके। आगे चलकर अनेक प्रयोगोके उपरान्त एक सेंटीमीटर लम्बे और २ ३ मिलीमीटर चौडे पन्ने बनानेमे वे सफल हो गए। इस प्रकार विज्ञानने पन्ने-जैसा कीमती जवाहर भी अपनी प्रयोगशालामे बनाना शुरू कर दिया।

उत्तम मोती गोल, चमकीला और वजनमे भारी होता है। आजकल बाजारमे नकली मोती बहुत मिलने लगे है। मोती कैल्सियमका यौगिक है। बढिया मोती सौराष्ट्र, ईरान ओर रामेश्वरम्के पास समुद्रमे छिछले पानीके किनारे होते है। मोती अपनी सीपमे पकता है। वैद्य मोतीकी भस्म बनाकर शक्तिवर्धक औषधिके रूपमे उसका उपयोग करते है।

प्रवाल या मूगा समुद्रमे रहनेवाले जीवोके द्वारा पैदा किया जाता है। मूँगोकी उत्पत्तिका क्रम बडा ही रोचक है। मूँगा उत्पन्न करनेवाले जीव कई जातियोके होते है। एक जीवके मर जाने पर उसका जो अवशेष रह जाता है, वही हमारा मूँगा है। ये जीव गोल आकारके होते है। इनकी एक मादा एक बारमे करोडो अण्डे देती है। ये अण्डे अत्यन्त सूक्ष्म होते है और समुद्रके पानीमे पडे रहते है। कुछ समयके बाद अण्डेसे पूर्ण विकसित जीव बनता है। समुद्रके तलमे किसी उपयुक्त स्थानसे वह चिपक कर बैठ जाता है। उसके ऊपर लाखो जीव बैठ जाते है और एक-दूसरेको बहुत मजबूतीसे पकडे रहते है। कुछ समयके बाद नीचेवाला जन्तु मर जाता है। लेकिन ऊपरवाले नये-नये जन्तुओमे बराबर वृद्धि होती रहती है। यह प्रक्रिया निरन्तर चला करती है। परिणामस्वरूप समुद्रमे मूँगेके बडे-बडे पहाड बन जाते है। मृत जन्तुओकी अस्थियोका अवशिष्ट भाग ही हमारा मूँगा है। मूँगा पैदा करनेवाले जन्तुओका रग सामान्यत लाली लिये हुए गुलाबी होता है, इसीलिए मूगा आमतौर पर लाल रगका होता है। मूँगेमे कैल्सियम प्रचुर मात्रामे रहता है। सफेद मूँगे भी होते है। प्रवाल भस्म मूँगेसे ही बनाई जाती है, परन्तु सफेद मूँगा

औषधिके काम नही आता। काले रगके मूँगे ईरानकी खाडीमे, गुलाबी और लाल रगके मूँगे भूमध्य-सागरमे होते है। भारत और इटलीके निवासी उन्हे पवित्र मानते है।

अब क्षुद्र रत्नोको लिया जाए। फ्लुअरस्पारको हिन्दीमे बिल्लौर नाम दिया गया है। सस्कृतमे इसे वैक्रान्त कहते है। दिखनेमे यह हीरे-जैसा लगता है। खूब गर्म करनेसे इसमे चमक आ जाती है, लेकिन अत्यधिक गर्मी पाकर पिघल जाता है। खनिजोसे धातुशोध करनेमे इसका उपयोग प्रद्रावको (flux) के रूपमे किया जाता है। तुरमेरीन और वैक्रान्त एक-जैसे प्रतीत होते है। वैक्रान्तमे फ्लोरिन होता है, वह कैल्सियम और फ्लोरिनका यौगिक है। तुरमेरीन एल्युमीनियम और बालूका यौगिक है। फ्लुअरस्पार उत्तर भारतमे सर्वत्र मिलता है। सामान्यत वह स्फटिक पत्थरोके साथ देखनेमे आता है। गुजरातके सुप्रसिद्ध वैद्य श्री बापालाल भाई अपने 'रस-शास्त्र'मे लिखते है कि पहले इसका दवाइयोमे खूब उपयोग किया जाता रहा होगा। ऐसा अनमोल पदार्थ आज सन्देहास्पद हो गया है।

सूर्यकान्त सोडियम, एल्युमीनियम और कैल्सियम धातुओका बालूके साथ जटिल प्रकार-का यौगिक है। बर्मा, रूस और नार्वेमे यह प्राप्त होता है। वैद्य लोग इसकी भस्म बनाते है। चन्द्रकान्त बर्मा और श्रीलकामे मिलता है।

लाजवर्द या लाजावर्तका सस्कृत नाम राजावर्त है। हिन्दीमे इसे रावट भी कहते है, जो इसके गुजराती नाम 'रेवटी'से मिलता-जुलता है। राजस्थानमे अजमेरसे थोडी दूर पहाडियोमे-से निकाला जाता है। इसका मुख्य उपयोग रगमे किया जाता है। इसकी महीन बुकनी मकानोकी पुताई और घरको सुशोभित करनेके काम आती है। इसका रग नीलसे मिलता-जुलता होता है, इसलिए इसे 'अल्ट्रामरीन' भी कहा जाता है।

फीरोजा या पीरोजाका रग नीला अथवा हरिताभ-नीला होता है। यह ईरानमे मिलता है। यह रत्न बहुत दीप्तिमान नही होता। गर्मियोमे इसका रग धूसर हो जाता है।

स्फटिक पहलूवाली सिकता (बालू)के रूपान्तरण है। अपने रगोके लिए वे अपने अन्दर विद्यमान कतिपय धातुओके अशोके आभारी है। शुद्ध स्फटिकको अग्रेजीमे 'रॉक क्रिस्टल' (rock-crystle) कहते है। प्रकृतिमे स्फटिकके नाना विध रूप मिलते है।

इनके अतिरिक्त कुरुविन्द (कोरण्डम corundum)के पत्थर भी होते है, जो एमरी पत्थरोकी कोटिमे आते है। कुरुविन्दको कही-कही बोलचालकी भाषामे कुरज अथवा करजका पत्थर भी कहते है। यह लाल रगका बहुत ही कठोर पत्थर होता है। कुरुविन्दकी पारदर्शक और

रंगीन जातियाँ रत्नोकी तरह इस्तेमाल की जाती है। अपारदर्शक कुरुविन्द अपनी कठोरताके कारण कड़ी चीजोको काटनेके लिए अपघर्षक (abrasives) की तरह काम आते है।

एक ही स्फटिक—भिन्न-भिन्न प्रकाशमे

खंड : ३
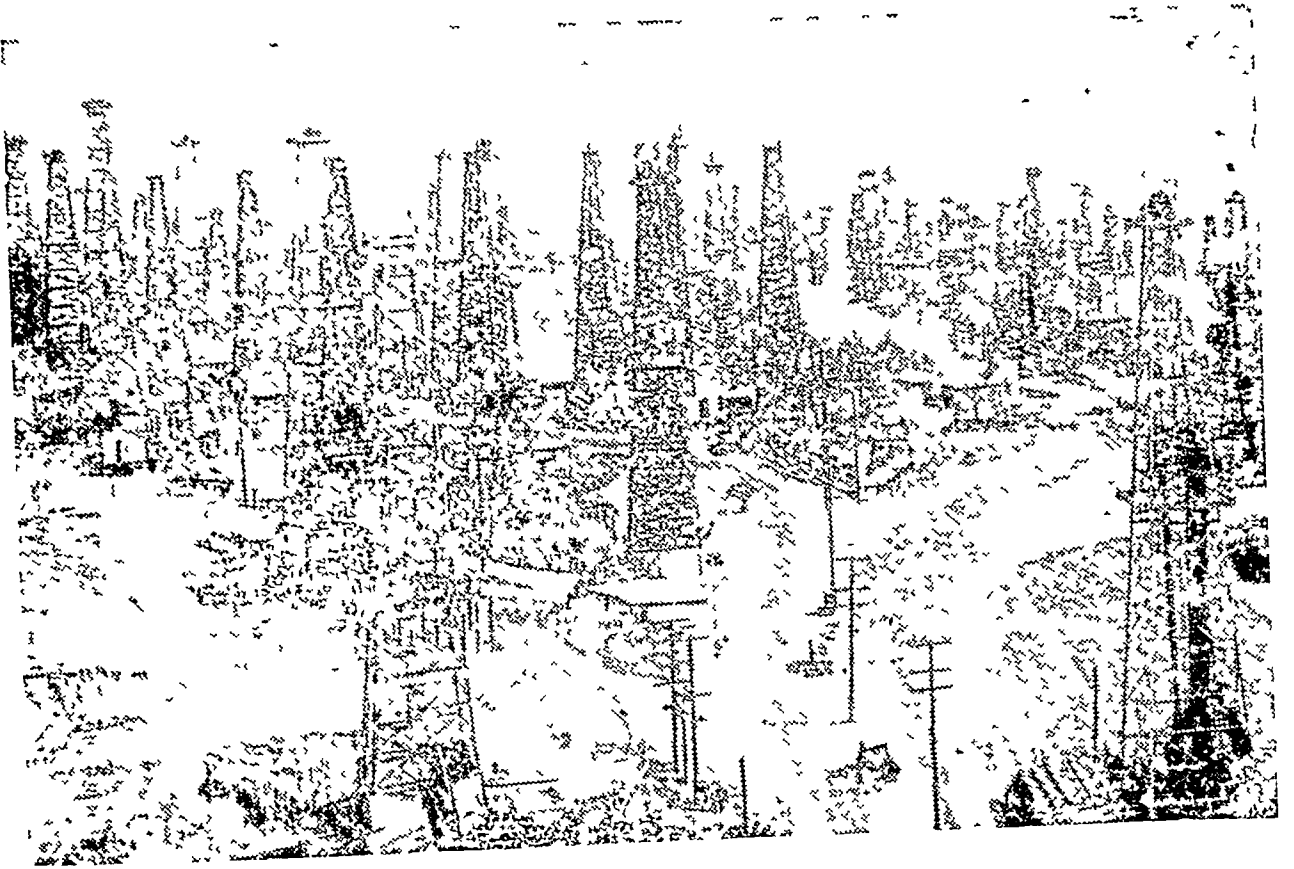
डेरिकका जगल (केलिफोर्निया)
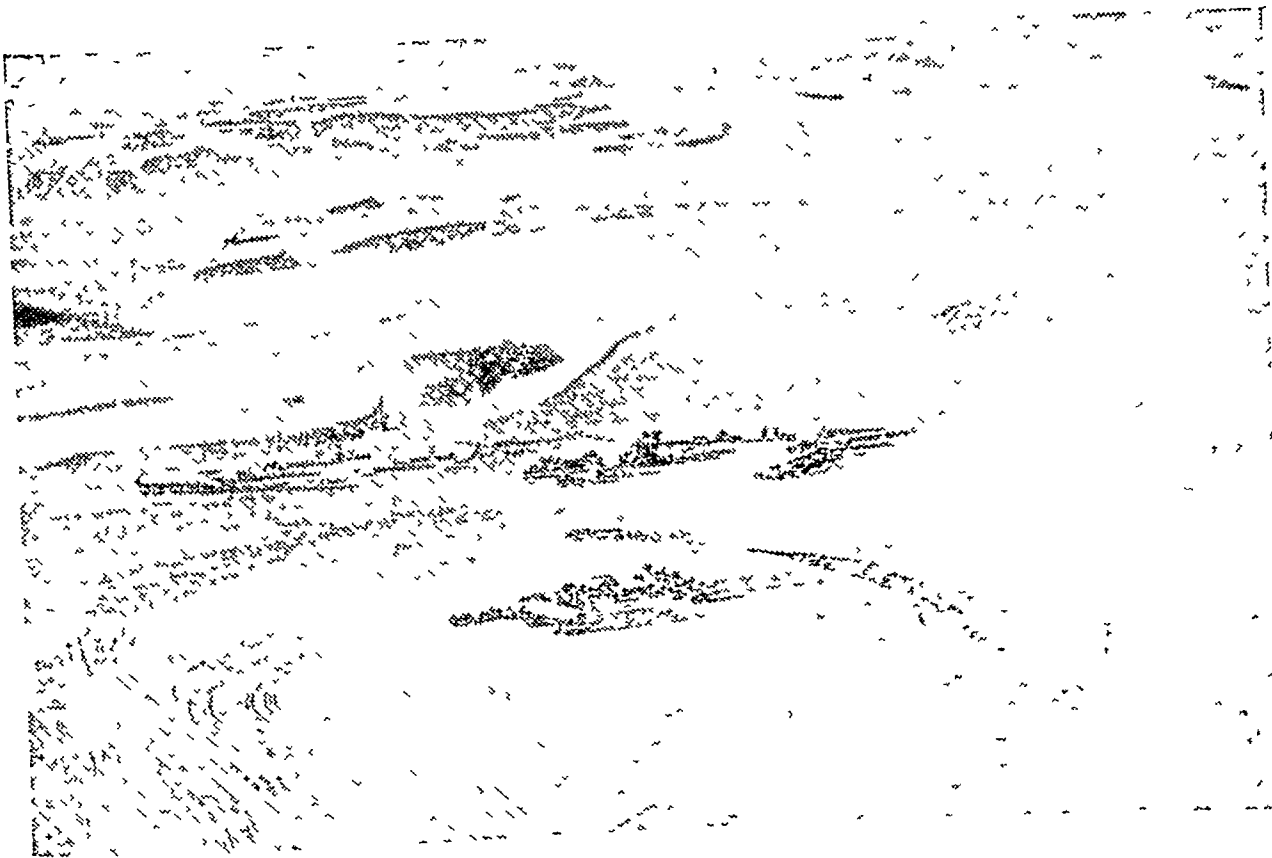
रब अल-खाली (साऊदी अरब)मे तेलकी खोज—भूकम्प-लेखीय सर्वेक्षण

८ : कार्बनिक रसायनकी भूमिका

इतना तो हम जानते ही है कि प्रत्येक द्रव्य परमाणुओ और उनके अणुओसे बना होता है। परमाणुओके अन्दर प्रोटॉन, न्यूट्रॉन और इलैक्ट्रॉन-रूपी विद्युत्कण होते है। परमाणुकी आन्तरिक रचना वहुत-कुछ हमारे सौर-मण्डलसे मिलती-जुलती है। परमाणुमे एक केन्द्र (नाभिक—nucleus) रूपी सूर्यके चारो ओर भिन्न-भिन्न कक्षाओमे परिभ्रमण करते हुए ग्रहरूपी इलैक्ट्रॉन होते है। परमाणुकी यदि सौर-मण्डलके रूपमे कल्पना करे तो उसके मध्य भागकी निकटस्थ कक्षा पर उसके इर्द-गिर्द घूमते हुए इलैक्ट्रॉनकी सूर्यसे ३६ लाख मीलकी दूरी पर स्थित प्लूटो ग्रहसे तुलना की जा सकती है। परमाणुके केन्द्रमे प्रोटॉन और न्यूट्रॉनका बना हुआ नाभिक (न्यूक्लीऑन) अवस्थित रहता है। प्रोटॉनमे केवल धन विद्युत् रहती है, जबकि न्यूट्रॉनमे धन और ऋण (positive and negative) दोनो ही समान मात्रामे रहती है। ग्रहोके रूपमे घूमते हुए इलैक्ट्रॉनोमे ऋण विद्युत् रहती है, जिसकी मात्रा प्रोटॉनकी धन विद्युत्के बराबर होती है। इसलिए कोई भी अखण्डित परमाणु विद्युत्-भारवाला नही होता। लेकिन यदि इन दोनोमेसे किसी एक प्रकारकी विद्युत्को पृथक् कर दिया जाए तो शक्ति अथवा ऊर्जा उत्पन्न होती है। परमाणु ऊर्जा अथवा परमाणु शक्तिका रहस्य विद्युत्के इस पृथक्करणमे निहित है।

सभी मूलतत्त्वोमे हाइड्रोजन सवसे हलका है। हाइड्रोजनके एक परमाणुमे १ प्रोटॉन केन्द्रकमे और उसके आसपास १ इलैक्ट्रॉन घूमता रहता है। हाइड्रोजनका अन्तर्राष्ट्रीय सकेत H (एच) है। रसायन शास्त्रमे प्रत्येक मूलतत्वके लिए निश्चित सकेतका उपयोग किया जाता है। उदाहरणके लिए आक्सीजनका सकेत O (ओ), नाइट्रोजनका N (एन) और कार्वनका C (सी) है। भिन्न-भिन्न मूलतत्त्वोके परमाणुओके आयतन और गुणोमे भी भिन्नता होती है। पदार्थोके अणुओमे भिन्न-भिन्न प्रकारके परमाणुओका अस्तित्व हो सकता है, उदाहरणके लिए पानीके अणुमे दो हाइड्रोजनके और एक आक्सीजनका परमाणु होते है। सकेतोके द्वारा 'पानी'के अणुको निम्न प्रकारसे प्रदर्शित किया जा सकता है

$$H—O—H \text{ अथवा } H_2O$$
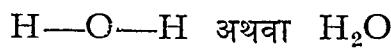
पानीको इसीलिए हाइड्रोजन और आक्सीजनका यौगिक (compound) कहा जाता है।

परमाणुकी वाह्यतम कक्षाके इलैक्ट्रॉनके विनिमयके परिणामस्वरूप अर्थात् परमाणुके द्वारा वाह्यतम कक्षाके इलैक्ट्रॉनोका त्याग अथवा ग्रहण करने पर सयोग अथवा सयोजन होता है। इसे सह-सयोजकता (co-valency) कहते है, और एक मूलतत्त्वका दूसरे मूलतत्त्वके साथ रासायनिक सयोग उत्पन्न करनेकी शक्ति (क्षमता) सयोजकता (valency) कहलाती

है। इस सयोजकताकी कल्पना यदि हम भुजाओके रूपमे करे तो विषय को समझनेमे सरलता होगी। कार्वनकी सयोजकता चार है, इसलिए उसके साथ हाइड्रोजनका सयोग निम्न प्रकार होगा

$$\begin{array}{c} H \\ | \\ H-C-H \\ | \\ H \end{array} \quad \text{अथवा} \quad CH_4$$
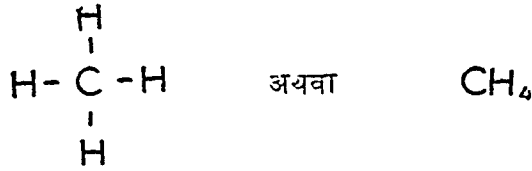
यह पदार्थ मेथैन अथवा आर्द्र गैस है, जो खनिज तेल अथवा कोयलेकी खानोमे प्राप्त होने वाली गैसमे रहता है।

कार्वनिक यौगिको (रासायनिक पदार्थो)को प्रदर्शित करनेके लिए विभिन्न परमाणुओकी पारस्परिक सयोजकता 'इलैक्ट्रानके एक जोडके लिए एक रेखा'के रूपमे दिखाई जाती है। इस रेखा-को सयोजकताका वन्ध (valency bond) कहते है। एकवन्व (single bond) एक रेखाके द्वारा, दो वन्ध (double bond) दो रेखाओके द्वारा और तीन वन्ध (triple bond) तीन रेखाओके द्वारा, निम्नानुसार दिखाया जाता है

$$C-C \quad C=C \quad C\equiv C$$

एक वन्ध दो वन्ध तीन वन्ध
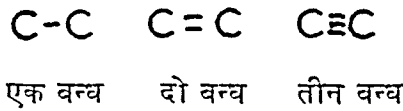
इस वातको याद रखना चाहिए कि कार्वनका परमाणु 'चतुर्भुज' (चार मयोजकतावाला) होनेके कारण एक सयोजकतावाले हाइड्रोजनके चार परमाणुओसे सन्धि (सयोग) कर सकता है। नीचेके चित्रमे नाइट्रोजन और आक्सीजनके सकेतोके साथ उनकी सयोजकता रेखाके द्वारा दिखाई गई है -

$$-O- \qquad\qquad \begin{array}{c} | \\ N \\ | \end{array}$$

आक्सीजन नाइट्रोजन

मेथैनका सूत्र CH_4 है, यह हम देख आए है। इस गैसके चार हाइड्रोजन परमाणुओमेसे एकके स्थान पर क्लोरिनका प्रतिस्थापन करनेसे CH_3Cl पदार्थ वनता है। यह पदार्थ मेथाइल क्लोराइड कहलाता है। इस गैसका उपयोग प्रशीतको (रैफ्रिजेरेटरो)मे ठण्डक उत्पन्न करनेके लिए किया जाता है। मेथैनके दो हाइड्रोजन परमाणुओके स्थान पर क्लोरिनके दो परमाणुओका प्रतिस्थापन करनेसे CH_2Cl_2 वनता है। इसे मेथिलीन डाइ-क्लोराइड कहते है। यदि हाइड्रोजनके तीन परमाणुओको हटाकर क्लोरिनके तीन परमाणुओका प्रतिस्थापन किया जाए तो $CHCl_3$ पदार्थ मिलता है, जिसे क्लोरोफार्म कहते है और जिसका उपयोग आपरेशन करनेसे पहले रोगीको वेहोश करनेमे किया जाता है। इस प्रकार मामूली मेथैन गैससे इतने उपयोगी पदार्थ वन सकते है। अव हम मेथैन-जैसे कुछ पदार्थोको लेकर उनकी सूत्र-रचना और नामकरणकी विधिको समझने-का प्रयत्न करेंगे।
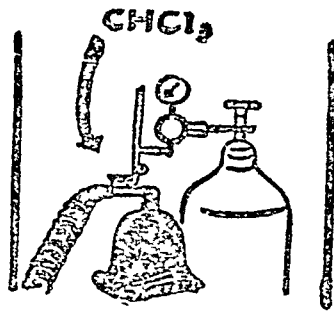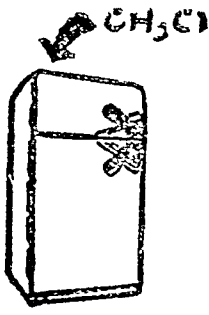
मेथाइल क्लोराइड (प्रशीतकर)

क्लोरोफार्म (निश्चेतक)

कार्वन टेट्राक्लोराइड (अग्निरोधक एव दाग मिटाने-के लिए काममे आनेवाला द्रव)

CH_4	मेथैन	C_4H_{10}	व्यूटेन
C_2H_6	एथेन	C_5H_{12}	पेण्टेन
C_3H_8	प्रोपेन	C_6H_{14}	हेक्सेन

CH_4मेसे एक Hका क्लोरिन द्वारा विस्थापन करनेसे CH_3Cl वनता है। इसे मेथाइल क्लोराइड कहते है, यह हम देख आये है। इसमे CH_3 अणु समूह अथवा मूलक (radical)-की तरह आचरण करता है और मेथाइल मूलक (रेडिकल) कहलाता है। इसे और इसके-जैसी अन्य इकाइयोको मूलक कहते है। इस तरहके अणुसमूहको सक्षेपमे लिखनेके लिए रोमन वर्णमाला-के R (आर) अक्षरका उपयोग किया जाता है।

अव हम कुछ मूलको (रेडिकलो)का परिचय प्राप्त करेगे।

एथेनसे C_2H_5, प्रोपेनसे C_3H_7 और व्यूटेनसे C_4H_9 आदि रेडिकल प्राप्त होते है। ये सव क्रमश एथिल, प्रोपिल, व्यूटिल आदि नामोसे पुकारे जाते है।

मेथेनमेसे हाइड्रोजनके दो अणु कम करनेसे जो रेडिकल वनता है वह मेथिलीन कहलाता है। इसी प्रकार C_2H_4 एथिलीन, C_3H_8 प्रोपिलीन, C_4H_8 व्यूटिलीन नामोसे पुकारे जाते है।

जिस रेडिकल (मूलक)के अन्तमे OH जुडता है उसे ऐलकोहल कहते है। जैसे कि CH_3OH मेथाइल ऐलकोहल, C_2H_5OH एथिल ऐलकोहल, C_3H_7OH प्रोपिल ऐलकोहल आदि। नामकरणकी आधुनिक पद्धतिके अनुसार जिस हाइड्रोकार्वनसे ऐलकोहल वनता है उसमे 'ol' लगाकर ऐलकोहल-का नाम दे दिया जाता है। इसीलिए मेथाइल ऐलकोहलको मिथेनॉल, एथिल ऐलकोहलको एथेनॉल और उसके वाद प्रोपेनॉल आदि कहा जाता है।

मेथेन, एथेन, प्रोपेन आदि हाइड्रोकार्वनके पूरे समूहको सूचित करनेके लिए सामान्य सूत्र है— C_nH_{2n+2} इस सूत्रमे Nके स्थान पर १, २, ३ आदि अक रखनेमे जुदे-जुदे हाइड्रो-कार्वनके सूत्र बनते है। इस प्रकारके यौगिकोको ऐलकोहल या पैरैफिन कहते है। हाइड्रोकार्वन-के कतिपय अन्य वर्गोकी एक तालिका इस अध्यायके अन्तमे दी गई है।

पैरैफिन अथवा ऐलकाइन पदार्थ

इस श्रेणीका सामान्य सूत्र C_nH_{2n+2} है। इसमे प्रथम CH_4—मेथेन है, जो मुख्यत प्राकृतिक गैसमे रहता है। इसके एक हाइड्रोजनके स्थान पर CH_3—मेथाइल समूह रखनेसे श्रेणीका दूसरा पदार्थ C_3H_6—एथेन होता है। इसी तरह एथेनसे तीसरा पदार्थ प्रोपेन C_3H_8, प्रोपेनमे

चौथा पदार्थ व्यूटेन C_4H_{10} आदि क्रमानुसार इस श्रेणीके पदार्थ रहते हे। अगर किसी रासायनिक पदार्थमे परमाणुओकी सख्या एक-जैसी हो, परन्तु उनकी आन्तरिक सरचनामे भिन्नता रहे तो ऐसे रासायनिक पदार्थोको क्रमश प्रकृत (normal) और सम (iso) कहा जाता है। उदाहरणार्थ

$CH_3CH_2CH_2CH_3$ ——→ $CH_3CH_3CH_3$ (with | CH below)

प्रकृत व्यूटेन — सम व्यूटेन (आइसो व्यूटेन)
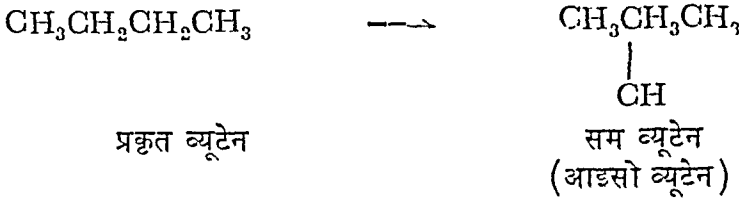
जैसे-जैसे अणुका विस्तार होता जाता है उसके समावयवो (isomer)की सख्या भी वढती जाती है। व्यूटेनके ऊपर दिखलाये अनुसार दो समावयव हे, आक्टेनके १८ और ट्रायडिकेनके तो ८०२ समावयव होते है।

इस श्रेणीके प्रत्येक पदार्थके नामके अन्तमे 'ane' प्रत्यय लगता हे। नामके अन्तमे 'yl' प्रत्यय जुडा होनेसे उस पदार्थके प्रकृत होनेका पता चलता हे। ऐल्काइन पदार्थसे एक हाइड्रोजन परमाणु हटा दिया जाए तो शेष भागके नामके पीछे 'आइल' (yl) लगाकर वोला जाता है, जैसे कि

$—CH_3$	मेथाइल
$—C_4H_7$	व्यूटाइल
$—C_nH_{2n+1}$	ऐल्काइल (ऐल्काइन परसे ऐल्काइल सामान्यत)
$—CH—CH_3$ (with CH_3 below)	आइसो प्रोपाइल
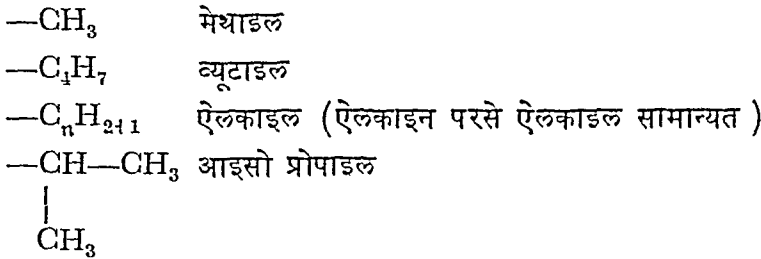
विवृत श्रृंखलावाले असंतृप्त हाइड्रोकार्बन

इस श्रेणीमे आनेवाले पदार्थ ओलेफीन, डाइओलेफीन और एसिटिलीन प्रकारके हाइड्रो-कार्वन है। ओलेफीन अथवा ऐल्काइन वर्गके पदार्थोका नामकरण ईन (-ene) अथवा ईलीन (-ylene) प्रत्यय लगाकर किया जाता है, यथा एथिलीन (ethylene) ओर प्रोपिलीन (propylene)। डाइओलेफीनके नामोके अन्तमे डाईन (-diene) प्रत्यय लगता है, उदाहरणार्थ व्यूटेडाईन (butadiene)। ओलेफीनमे कार्वनके परमाणु एक द्विवन्ध, डाइओलेफीनमे दो द्विवन्ध और एसिटिलीनमे एक त्रिबन्ध होता है। परमाणुओके अन्दर इलेक्ट्रॉनोके विनिमयके कारण ये वन्ध (bonds) अस्तित्वमे आते है और इनके परिणामस्वरूप एक मूलतत्त्वका दूसरे मूलतत्त्वके साथ रासायनिक सयोग सम्भव होता है।

ऐलिचक्रिक—नैफ्थीन अथवा चक्र-पैरैफिन

(Alicyclic-Naphthene or Cyclopataffin)

इन पदार्थोकी सामान्य सरचना दिखलानेके लिए C_nH_{2n} सूत्रका प्रयोग किया जाता है। पैरैफिनकी तरह ये पदार्थ सतृप्त हाइड्रोकार्वन है, लेकिन प्रत्येक अणुमे कार्वनके परमाणु

विवृत शृखलाके स्थान पर वलयाकार जुडे रहते है। इसीलिए इन पदार्थोको चक्रीय-चक्र-पैरेफिन कहा जाता है। इनमेसे कुछेकके नाम इस प्रकार है चक्र-प्रोपेन (साइक्लो प्रोपेन), चक्र-ब्यूटेन (साइक्लो ब्यूटेन), चक्र-हेक्सेन (साइक्लो हेक्सेन) आदि।

सुरक्षित (aromatic) हाइड्रोकार्बन

कार्बनके परमाणु सीधी (विवृत) शृखलामे और वलयाकार भी जुड सकते है। सीधी शृखलामे जुडनेवाले पदार्थोकी चर्चा हम ऊपर कर आए है। अब हम वलयाकार जुडनेवाले बेनजिन जैसे रासायनिक पदार्थोकी चर्चा करेगे।

ऐरोमेटिक हाइड्रोकार्बन श्रेणीके अधिकाश पदार्थ सुगन्धित होनेके कारण सुरभित अथवा सौरभीय पदार्थ कहलाते है। इनके नामके अन्तमे 'ईन' (-ene) प्रत्यय लगता है। बेनजिन, टोल्युईन, जाइलीन, नैफ्थेलीन, एन्थ्रेसीन आदि पदार्थ सुरभित कोटिके है और भूगर्भमे निकाले जानेवाले पेट्रोलियममे पाये जाते है।

कोलतार अथवा तारकोल या कोयलेके डामरसे बेनजिन नामक द्रव पदार्थ निकलता है। यह छह कार्बन और छह हाइड्रोजन परमाणुओका बना होता है—वैज्ञानिकोको इस तथ्यका पता तो चल गया, लेकिन इसके सूत्रको शृखलाके रूपमे प्रदर्शित नही किया जा सकता था, इसलिए वैज्ञानिक बडी कठिनाई मे पड गए। अन्तमे जर्मन रसायनज्ञ केक्युलेने बेनजिनके सूत्रको नीचे लिखे ढगसे निर्धारित किया
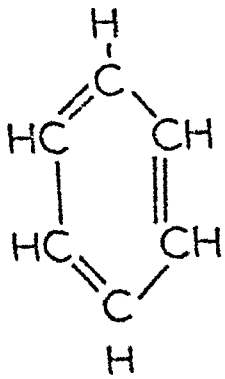
इस सूत्रको केवल इस रूपमे भी प्रदर्शित किया जाता है।

बेनजिनका सूत्र

अभी तक हमने बेनजिन और नैफ्थेलीन-जैसे चक्रीय पदार्थोका अध्ययन किया। इन सबमे कार्बन परमाणु एक दूसरेसे जुडे रहते है। इस प्रकारके यौगिक समचक्रीय (homocyclic) कहलाते है। कार्बन परमाणुओके साथ नाइट्रोजन गन्धक या आक्सीजन-जैसे अन्य मूलतत्त्व भी यदि चक्रकी रचनामे भाग ले तो इस तरहके यौगिकोको विषमचक्रीय (heterocyclic) कहते है। क्लोरोफिल, हिमोग्लोबिन, कई तरहके वानस्पतिक रग [illegible] आदि इसी प्रकारके विषमचक्रीय यौगिक है। यहा यह तथ्य विशेष रूपसे उल्लेखनीय है कि कार्बन पदार्थोकी [illegible] विषमचक्रीय होता है।

हाइड्रोकार्बनोंकी रासायनिक क्रियाएँ

ताप और दाब पर आधारित अनेक रासायनिक क्रियाएँ हाइड्रोकार्बन पर की जा सकती है, जिनमेसे प्रमुख इस प्रकार है

(१) पोलिमेराइजेशन (बहुलीकरण) दो असंतृप्त अणुओंके बीच होनेवाली रासायनिक क्रियाको पोलिमेराइजेशन कहते है। इस क्रियाके द्वारा दो अणु आपसमे सयुक्त होकर एक बडा असतृप्त अणु बनाते है, उदाहरणार्थ

$$C_4H_8 + C_4H_8 \longrightarrow C_8H_{16}$$
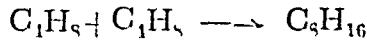
(२) ऐल्काइलेशन (ऐल्काइलीकरण) ओलेफीन और आइसोपैरैफिनकी पारस्परिक क्रियाके परिणामस्वरूप एक बडी शाखावाला पैरैफिन पदार्थ उत्पन्न होता है, उदाहरणार्थ

$$C_4H_8 + C_4H_{10} \longrightarrow C_8H_{18}$$
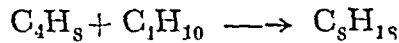
(३) हाइड्रोजिनेशन (हाइड्रोजनीकरण) इस क्रियामे असतृप्त हाइड्रोकार्बन और हाइड्रोजन गैसके सयोगसे पैरैफिन उत्पन्न होता है, उदाहरणार्थ

$$C_8H_{16} + H_2 \longrightarrow C_8H_{18}$$
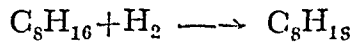
(४) डी-हाइड्रोजिनेशन (डी-हाइड्रोजनीकरण) इस क्रियाके द्वारा पदार्थमेसे हाइ-ड्रोजनके परमाणुओका अवस्थापन होता है, उदाहरणार्थ

$$C_4H_{10} \longrightarrow C_4H_8 + H_2$$
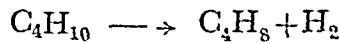
(५) ऐरोमेटाइजेशन (सुरभितकरण) . इस रासायनिक क्रिया द्वारा विवृत श्रृखलामे जुडे पदार्थोंसे वलयाकार पदार्थ बनाये जाते हैं, जिसके परिणामस्वरूप हाइड्रोजनके परमाणुओका अवस्थापन होता है, उदाहरणार्थ

$$C_7H_{16} \longrightarrow C_6H_5CH_3 + 4H_2$$
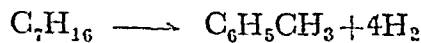
(६) क्रैकिग (भजन) इस क्रियामे बडे अणु टूटकर छोटे अणुओमे रूपान्तरित होते हैं। पैरैफिन हाइड्रोकार्बन पर क्रैकिगकी क्रिया करनेसे उसमेसे पैरैफिन ओर ओलेफीन वर्गके पदार्थोंकी उत्पत्ति होती है, उदाहरणार्थ

$$C_{16}H_{34} \longrightarrow C_8H_{18} + C_8H_{16}$$
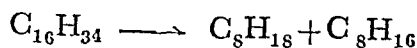
इस क्रियाके द्वारा उपोत्पादके रूपमे अन्य पदार्थ भी मिलते है, जिनमे कार्बन ओर ऊपर (१)से (५) तक वर्णित क्रियाओसे उद्भवित पदार्थ प्राप्त होते है। तापमान, दवाव और समयके नियन्त्रण-के द्वारा कई भिन्न-भिन्न क्रियाएँ की जा सकती है। उत्प्रेरको (Catalysius)की सहायतासे ये क्रियाएँ सुगम हो जाती है। इस प्रकारकी क्रियाओको उत्प्रेरकीय भजन (catalytic cracking) कहते हैं। उच्च तापमान पर केवल गर्मीके सहारे किये जानेवाले भजनको ऊष्मीय

भजन (thermal cracking) कहते हैं। इस प्रकारकी भजन क्रियामें ताप १०००° फा० तक होता है और दाब प्रति वर्ग इंच पर १००० पौण्ड तक रखना पड़ता है।

(७) आइसो मेटाइजेशन (समावयवीकरण अथवा स्वरूपान्तरण) इस क्रियामें अणुओंकी संरचना ही बदल जाती है

$$CH_3.CH_2.CH_2CH_2.CH_3 \longrightarrow CH_3CH_2CH<\begin{matrix}CH_3\\CH_3\end{matrix}$$

प्रकृत (नार्मल) पेण्टेन सम (आइसो) पेण्टेन

(८) रिफार्मिंग (पुनर्गठन) इस क्रियामें एक पदार्थको उसके समावयव (isomer) अथवा विवृत शृंखलावाले पदार्थको चक्रीयस्वरूपमें परिवर्तित किया जाता है।

सजात श्रेणी (homologous series)

नाम	सामान्य सूत्र n-कोई संख्या $R=C_nH_{2n-1}$	प्रकार अथवा क्रियाशील भाग
ऐल्काइन अथवा पैरैफिन	C_nH_{2n+2}	तृप्त विवृत शृंखला
ऐल्काइन्स अथवा ओलेफिनो	C_nH_{2n}	विवृत शृंखला १ द्विबन्धन
ऐल्काडिएन्स अथवा डाइओलेफिनो	C_nH_{2n-2}	" " २ "
ऐल्किन्स अथवा एसिटिलीन्स साइक्लोऐल्किन्स	C_nH_{2n-2}	" " १ त्रिबंधन चक्रीय (साइकिलक)
साइक्लो पैरैफिन अथवा नैफथीन्स	C_nH_{2n}	तृप्त (सेचुरेटेड)
साइक्लो ओलेफिन्स	C_nH_{2n-1}	चक्रीय (साइकिलक) तृप्त
ऐरोमेटिक्स (सुरभित)	C_nH_{2n-6}	
ऐल्कोहल	R—OH	—OH (हाइड्रोक्सिल) रेडिकल
ईथर	R—O—R′	—O— रेडिकल
एसिड	$R-\overset{\overset{O}{\|}}{C}-OH$	—COOH (कार्बोक्सिल) रेडिकल
कीटोन	$R-\overset{\overset{O}{\|}}{C}-R'$	—CO— (कार्बोनिल)
ऐल्डीहाइड	$R-\overset{\overset{H}{\|}}{C}=O$	—CHO
ऐमाइन	RR″R‴X	≡X
मर्केप्टन	R—S—H	—SH
क्लोराइड	R—Cl	—Cl

९ : स्निग्ध द्रव्य

घृत अथवा घीका उल्लेख ऋग्वेदमे भी मिलता है

मित्र हुवे पूतदक्ष, वरुण चऽरिशादस।
धियं घृता ची साधन्ता ॥

[ऋग्वेद, १-२-७]

पवित्र ओर दक्ष मित्रदेवको और शत्रुओका भक्षण करनेवाले वरुणदेवको—घी झरती हुई उज्ज्वल वुद्धि धारण करनेवाले (इन दोनो)को आमन्त्रित करता हूँ।

ऋग्वेदका समय ई० पू० २००० वर्ष माना जाता हे, इसलिए घी आदि स्निग्ध द्रव्योका परिचय मनुष्यको वेदकालसे रहा होगा, यह ऊपरके उद्धरणसे प्रमाणित होता है। श्रीमद्भागवतमे भी श्रीकृष्णकी वाललीलामे माखनचोरीका सरस वर्णन किया गया हे। सवमे पहले इन स्निग्ध द्रव्योका ज्ञान मनुष्यको कव और कैसे हुआ, इसका इतिहास भूतकालके गर्भमे विलीन हो चुका है। परन्तु इन पदार्थोका उपयोग पुरातनकालसे खाद्यके रूपमे, यज्ञादि धार्मिक कृत्योमे, प्रकाशके हेतु दीपक जलानेमे, शारीरिक अग रागो और प्रसाधन (शृगार) सामग्रियो आदिमे होता आया है, इस वातको निश्चयपूर्वक कहा जा सकता हे।

ईसाके एक हजार वर्ष पूर्व मिस्र देशमे पुरानी कब्रोको खोदकर मिट्टीके जो वरतन निकाले गए उनमे तैलीय पदार्थसे भरा हुआ एक वरतन भी मिला था। सार्टनकृत "विज्ञानके इतिहासकी भूमिका" (Intıoductıan to the Hıstoı v of Scıencc) नामक ग्रन्थसे पता चलता है कि यूनानी और हिब्रू सस्कृतियोके दौरान, जिनका कार्यकाल ईसा पूर्व ९वी और १८वी सदीसे लेकर ठेठ मध्ययुग तक फैला हुआ है, तेलका उपयोग कला, उद्योग-धन्धो और औषधियो आदिमे किया जाता था। रोमन कालमे चर्वी (वसा) और मोमसे वनी मोमवत्तियोके चलनका उल्लेख इतिहासकारोने किया है। रोमन विद्वान प्लीनी (२७-७९ ई०)ने तेलसे वनाये हुए सावुनका वर्णन किया है। इस आशयके कई उल्लेख मिलते है कि चित्राकनकी ऐनकोस्टिक नामक एक शैलीमे मिस्री ममीके आच्छादनके ऊपर वनाये गए चित्रोमे मोममे घुले हुए रगोका उपयोग किया जाता था, तथा टेम्पेरा शैलीके चित्राकनमे मोम, पानी और अण्डेकी जर्दीके मिश्रणका उपयोग किया जाता था। थियोफिलिस प्रेसविटर (१२वी शताब्दी) नामक एक कलाकारने तैलीय रगोको वनाने और उनका उपयोग करनेकी विधिके सम्बन्धमे एक पुस्तक लिखी और उसमे रग तथा वार्निश वनानेके अनुपात भी दिये थे। और यह तथ्य तो प्राय सभी-को ज्ञात है कि जव समुद्रमे तूफान उठता था तो विक्षुब्ध लहरोको शान्त करनेके लिए यूनानी

नाविक लहरो पर तेल उडेल दिया करते थे। १२वी सदीमे भारतीय गणितज्ञ भास्कराचार्यने तेल-पानीके पृष्ठ-तनाव (Surface tension)को नापा था। निकटके भूतकाल पर नजर डाले तो पता चलता है कि तेल-सम्बन्धी विज्ञानका विकास ई० स० १७७९मे होने लगा। इसी वर्ष स्वीडनके रसायनज्ञ शीलेने जैतूनके तेल और सिन्दूरको एक साथ तपाकर उसमेसे ग्लिसरीनको पृथक् किया था। लेकिन एम० ई० शेवेरुल (M. E. Cheverul)को तेल और वसा (चर्बी)के रसायनशास्त्रका जनक माना जाता है। १८१३मे १८२३के बीचके वर्षोंमे उन्होने जो शोध-खोज और अध्ययन किया उसमे यह बात सिद्ध हुई कि ये पदार्थ कार्बनिक अम्ल तथा ग्लिसरीन (अथवा ग्लिसरोल)के 'एस्टर' (estar) है। ब्यूटिरिक, वेलेरिक, कैप्रोइक, कैप्रिक, स्टिरिक आदि वसाम्लो (fatty acids)को उन्होने तेल-चर्बीमेसे पृथक् किया। ये १०३ वर्षकी लम्बी आयु तक जीवित रहे ओर १८८९मे जब इनका स्वर्गवास हुआ तो कार्बनिक रसायनका विषय काफी विकसित हो चुका था। १८५४मे बर्थलोट नामक रसायनज्ञने यह साबित कर दिखाया कि ग्लिसरीन ट्राइहाइड्रिक ऐल्कोहल है। प्राकृतिक तेलोके सम्बन्धमे यह अनुमान कि वे ट्राइग्लिसराइड यौगिक है, आगे चलकर सच साबित हुआ। उन्नीसवी शताब्दीके उत्तरार्धमे तेलके पृथक्करणकी दिशामे अच्छी प्रगति हुई। इस समय तक विभिन्न देशोमे विविध प्रकारके तिलहनोको पीसकर तेलके उत्पादनका उद्योग बडे पैमाने पर विकसित हो चुका था।

मार्सेलिन बर्थलोट
(१८२७–१९०७)

आधुनिक कालमे इस विषयके प्रमुख अध्येताओ और अन्वेषकोमे टी० पी० हिल्डीच, टी० मूर, जे० बी० ब्राउन प्रभृति वैज्ञानिको एव उनके सहयोगियोका नामोल्लेख किया जा सकता है। तेलकी औद्योगिकी (टेक्नोलॉजी)के विकासके साथ-साथ उस पर आधारित अनेक कारखानो-की स्थापना हुई (उदाहरणके लिए खाद्य-सामग्री, साबुन, रग ओर वार्निश आदि)।

रसायनशास्त्रमे तैलीय पदार्थोकी गणना 'लिपाइड' वर्गमे की जाती है। जैव (सेन्द्रिय-organic) पदार्थ तीन प्रमुख भागोमे बाटे गए है, उनमे लिपाइड्ज (lipids)का एक वर्ग है (दूसरे दो कार्बोहाइड्रेट ओर प्रोटीनके वर्ग है)। लिपाइड्ज वर्गके पदार्थोके मुख्य लक्षण दो है: (१) वे मुख्यत वसाम्लके एस्टर अथवा तज्जन्य पदार्थ है, ओर (२) पानीमे अघुलनशील (अविलेय) है। लेकिन बेनजिन अथवा ईथर-जैसे विलायकोमे घुल जाते है। सादे लिपाइड ऐल्कोहल तथा अम्लोके सयोगसे उद्भवित एस्टर है। तेल, चर्बी तथा मोम ऐसे ही सादे लिपाइड है। लेकिन फास्फोलिपाइड, ग्लायकोलिपाइड आदि सकीर्ण (जटिल) लिपाइड है। कितने ही वसाम्ल, प्रोटीन हाइड्रोकार्बन केरोटिनोइड सादे तथा सकीर्ण लिपाइडोसे उद्भवित पदार्थ है।

इन तेलोकी गणना खनिज तेलो अथवा सगन्ध बाष्पी तेलो (essential oils)के वर्गसे अलग की जानी चाहिए। खनिज तेल हाइड्रोकार्बन वर्गके है ओर सगन्ध तेल टर्पिन वर्गके।

विविध प्रकारके तेलोको एक-दूसरेसे पृथक् करनेमे उनमे जो वसाम्ल रहता है उनकी एक खास मात्राका उपयोग किया जाता है। वसाम्लमे द्वितीय अनुक्रमके कार्बनके परमाणु होते हैं। पामिटिक और स्टिरिक अम्ल सतृप्त अम्ल है जबकि ओलिक और लिनोलिक असतृप्त अम्ल होते हैं। मनुष्यके शरीरकी ५७ प्रतिशत चर्बीमे असतृप्त ओलिक और लिनोलिक अम्ल होते है और पामिटिक और स्टिरिक अम्ल केवल ३२ प्रतिशत। मकई अथवा मक्काका तेल वानस्पतिक सादे लिपाइडका अच्छा उदाहरण है। उसमे ८० प्रतिशत लिनोलिक और ओलिक अम्ल रहता है और बहुत कम अनुपातमे अन्य वसाम्ल भी पाये जाते है। एरण्डी (castor)मे ८०मे ९० प्रतिशत रिसिनोलिक अम्ल होता है जो ओलिक अम्लमेसे हाइड्राक्सी अम्लके रूपमे निखरा हुआ है। मक्खनमे मुख्य ब्यूटिरिक अम्ल है। प्रमुख वसाम्लोकी सूची इस अध्यायके अन्तमे दी गई है।

चर्बी और तेलमे जो अन्तर है उसे ठीकसे समझ लेना आवश्यक है। साधारण ताप पर चर्बी (वसा) ठोस (घन) अवस्थामे रहती है, जबकि तेल द्रव (तरल)। दोनोमे यही मुख्य अन्तर है। यह स्थिति भौतिक है तथा ताप, रासायनिक असतृप्तता और अणुओकी ज्यामितीय (भौमितिक) सरचना एव वसाम्लोकी अणु-शृखलाकी लम्बाई (chain length) पर आधारित है। वसाम्लोका गलनाक अणुभार पर आधारित है। अणुभार जितना ही अधिक होगा गलनाक उतना ही उच्च होगा। गलनाक अधिकाशमे रासायनिक असतृप्तता पर निर्भर करता है। चर्बीकी अपेक्षा तेलोमे रासायनिक असतृप्तताकी मात्रा अधिक होती है।

विविध प्रकारके लिपाइडोको आसवनके द्वारा एक-दूसरेसे पृथक् नही किया जा सकता, क्योकि उनके क्वथनाक एक-दूसरेके बहुत निकट होते है। फिर उबालनेसे उनकी रासायनिक सरचना भी भग हो जाती है। सादे लिपाइडोको पृथक् करनेके लिए उनके विलेय गुणोका उपयोग किया जाता है। पेट्रोलियम ईथर, बेनजिन, हेक्सेन कार्बन टेट्राक्लोराइड आदि विलायकोमे उनका निस्सारण (solvant extraction) करके उन्हे विशुद्ध रूपमे प्राप्त किया जाता है।

तेल अथवा चर्बीको जब कास्टिक सोडेके विलयनमे गरम किया जाता है तो उसमे क्षार और ग्लिसरोल प्राप्त होते है। इस क्रियाको 'सेपोनिफिकेशन' अथवा साबुनीकरण (साबुन बनाने-की क्रिया) कहते हैं, इसमे होनेवाला उत्पाद तेल अथवा चर्बीका क्षार (साल्ट) है। सेपोनि-फिकेशनकी क्रियासे प्राकृतिक तेल अथवा चर्बीका रूपान्तर ऐसे पदार्थमे होता है जो पानीमे विलेय है। लेकिन इस क्रियाके उपरान्त भी दो-एक प्रतिशत भाग अविलेय रह जाता है, जो 'स्टेरोल'-का अश हो सकता है (उदाहरणार्थ कोलेस्टेरोल) अथवा हाइड्रोकार्बन पदार्थ या रगका भी कोई अश हो सकता है।

तेल या चर्बी पर की जानेवाली अन्य रासायनिक क्रिया 'हाइड्रोलिसिस' (hydrolysis) है। इस क्रियामे ताप, प्रकिण्व (enzyme) अथवा उत्प्रेरक (catalyst)का उपयोग किया जाता है। इस क्रियासे तेलकी दुर्गन्ध खटवास (rancidity) और खास प्रकारके जीवाणुओ (bacterias)का नाश होता है।

लिपाइड पानीकी अपेक्षा हलके होते हैं। उनमे विटामिन 'ए' 'डी', 'ई' और 'के' विलेय हो सकते है। जैतूनके तेलका हरा रग उनमे घुले हुए क्लोरोफिलके कारण है।

तेल रगोके उत्तम वाहक हो सकते है। जल्दी सूखनेवाले तैलीय रग बनानेके लिए तेल पर आक्सीकरण (oxidation)की क्रिया की जाती है। इस क्रियासे अणुओका सघनन होकर पदार्थ गाढा हो जाता है और तब वह बडी जल्दी सूखता है।

हाइड्रोजनीकरण (hydrogenation) नामक क्रियाका उपयोग तेलको घीसे मिलता-जुलता पदार्थ, जिसे 'वनस्पति' कहा जाता है, बनानेमे किया जाता है। तेल उद्योगमे इस क्रियाका आजकल विशाल पैमाने पर उपयोग होने लगा है और तेल-सम्बन्धी यह औद्योगिकी बहुत विकसित भी हुई है।

१९०१मे विल्हेल्म नोर्मान नामक जर्मन रसायनज्ञने यह खोज की कि गरम किये हुए ओलिक अम्लमे निकलकी बुकनीकी उपस्थितिमे हाइड्रोजन गैस पारित करनेसे ओलिक अम्ल जम जाता है और उससे स्टिरिक अम्ल बनता है। इस खोजका उपयोग अन्तत वनस्पति तेलोको जमाकर 'घी' बनानेमे किया जाने लगा। और इस प्रकार हाइड्रोजनीकरणकी रासायनिक क्रियाके द्वारा मूँगफली, सोयाबीन, बिनौले आदि प्रमुख वानस्पतिक तेलोसे घीके जैसा पदार्थ बनानेका उद्योग आजके विश्वमे इतना विकसित और उन्नत हो गया है कि उसके व्यापारसे प्रतिवर्ष अरबो रुपए मूल्यका उत्पादन होने लगा है।

उद्योगमे इस क्रियाको नीचे लिखे अनुसार किया जाता है

निकलकी अत्यन्त महीन बुकनीको बहुत थोडी मात्रामे १२०-५०० अश से० तापमान तक गरम किये हुए तेलके अन्दर छोड दिया जाता है। इस क्रियाके लिए निर्धारित बरतन ऊँची टकीके समान होता है और उसमे इस मिश्रणको पम्पकी सहायतासे ऊपरसे नीचेकी ओर चलाया जाता है। इस मिश्रणको खूब हिलता हुआ रखनेके लिए खास तरहके यात्रिक उपकरण काममे लाये जाते है। फिर इसमे हाइड्रोजन गैस पारित की जाती है। निकलकी बुकनीका अनुपात तेलकी कुल मात्राका केवल आधा या एक प्रतिशत होता है। निकलका उपयोग, इस क्रियामे, केवल उत्प्रेरकके रूपमे ही किया जाता है। क्रियाके अन्तमे निकलको पुन प्राप्त कर उसका फिरसे उपयोग कर लिया जाता है। इस क्रियाके दौरान काफी गरमी उत्पन्न होती है। तेलकी गन्ध मिटानेके लिए उसमे कार्बन डाइआक्साइड पारित की जाती है। इस प्रकार उपचारित तेल ठण्डा होने पर घीकी तरह जम जाता है। खाद्य तेलका शारीरिक ताप पर तरल रूपमे रहना आवश्यक है, इसलिए 'हाइड्रोजनीकरण'की क्रिया इस तथ्यको ध्यानमे रखकर केवल उतने ही अनुपातमे की जाती है। इस क्रियामे रासायनिक असतृप्तता कुछ अशोमे सतृप्त हो जाती है। उदाहरणके लिए ग्लिसेरोट्राइओलिएट नामक तरल पदार्थका हाइड्रोजनीकरण करनेसे वह ग्लिसेरोट्राइस्टियरेट नामक ठोस पदार्थ बन जाता है।

वनस्पतिके फल, बीज तथा गूदे (गर्भ)मे, यहाँ तक कि मूल, पत्तो और टहनियोमे भी तेल रहता है। अधिकाश अनाजोके अकुरके अन्दरूनी हिस्सोमे तेल रहता है। तिलहनोके दानोमे तो वह प्रचुर मात्रामे होता ही है। तेलको तैलीय पदार्थोसे मुक्त करनेके लिए पीसना, दबाना, कुचलना, कुरेदना अथवा विलायको द्वारा निस्सारित करना आदि कई विधियोका अवलम्बन किया जाता है। तेलको शुद्ध करनेके लिए उसे ऊँचे बरतनोमे भरकर कूडे अथवा 'गाद'को नीचे बिठा देनेकी एक क्रिया की जाती है। इसके लिए सबसे पहले तेलको गरम किया जाता है। फिर

कास्टिक अथवा धोनेके सोडेके विलयनको उसमे मिलाकर ठण्डा करनेमे मुक्त अवस्थामे रहनेवाले वसाम्ल साबुनके रूपमे पेंदेमे बैठ जाते है। तेलको रगहीन बनानेके लिए कोयला, सक्रियित मृत्तिका (activated earth) मुलतानी मिट्टी (fuller's earth) आदि अवशोषकोका उपयोग किया जाता है। अखाद्य तेलोको शुद्ध करनेके लिए रासायनिक विरजकोका भी उपयोग किया जा सकता है। तेलको निर्गन्ध करनेके लिए उसे टावर (मीनार)-जैसी ऊँची टकियोमे भरकर ऊपरसे नीचे बूँद-बूँद टपकाते ओर टकियोको उत्तरोत्तर अधिक ताप पर रखते हुए उसके (तेलके) अन्दरकी समस्त गैसे निकाल दी जाती है। तेल ज्यो-ज्यो नीचे उतरता जाता है वह गरम भापसे ससर्गित होता हुआ निर्गन्ध होता जाता है। उसमेसे सतृप्त ग्लिसराइडोको दूर करनेके लिए 'विण्टराइजिग' नामक क्रिया की जाती है। बिनौलेके तेल-जैसे कतिपय खाद्य तेल, सर्दियोमे, उनमे रहनेवाले सतृप्त ग्लिसराइडोके अस्तित्वके कारण गाढे ओर गदले हो जाते हैं। इस 'गदलेपन'-को दूर कर उन्हे स्वच्छ और पारदर्शक बनाना आवश्यक होता है। यह काम 'विण्टराइजिग' नामक विशिष्ट क्रियाके द्वारा किया जाता है। इस क्रियामे तेलोको धीमे-धीमे शीतलता देकर ठण्डा किया जाता है, जिससे उनमे रहनेवाले ग्लिसराइड भी ठण्डे होकर स्फटिक बन जाते है। फिर इन तेलोको छानकर उन्हे शुद्ध, स्वच्छ और पारदर्शक बना लिया जाता है। वास्तवमे यह क्रिया परिष्करण (refining)की ही एक विधि है। परिष्करणकी क्रियाको सर्वागपूर्ण ओर सम्पूर्ण बनानेके लिए 'हाइड्रोलिसिस'की ऊपर बताई हुई क्रियाका उपयोग भी किया जाता है। इस क्रियासे विभिन्न लम्बाईकी अणु श्रृखलावाले जो वसाम्ल प्राप्त होते है उन्हे प्रभाजी (विभागीय) स्फटिकीकरण (fractional crystallisation)के द्वारा अलग कर लिया जाता है।

तेल पर सल्फ्यूरिक अम्लकी क्रिया करके 'टर्की रेड आइल' बनाया जाता है। यह पानीमे विलेय है और सूती कपडा मिलोमे कपडा धोने और रगनेके काम आता है। इस क्रियाको 'सल्फोनिक प्रवेशन' (सल्फोनेशन sulphonation) कहते है। धुलाईके आधुनिक पदार्थोके निर्माण (प्रक्षालक अथवा अपमार्जक – डिटरजेण्ट – उद्योग) मे इस क्रियाका खूब उपयोग किया जाता है।

प्रमुख वानस्पतिक तेलोमे जैतून (olive)का तेल, तीसी या अलसी (linseed)का तेल, बिनौले (cotton seed)का तेल, गरी या नारियल (coconut)का तेल, महुएका तेल, सरसोका तेल, रेडी या एरेण्ड (castor)का तेल, तिलका तेल, मूँगफलीका तेल आदिके नाम गिनाये जा सकते है। इन सब तेलोको निकालनेकी विधि लगभग एक ही जैसी है। इनके बीजोको पेरा जाता है। पहला घान उत्तम होता है। दूसरे घान विलायको द्वारा निस्सारणकी विधि काममे लाकर निकाले जाते है। अन्तिम घानोका तेल अखाद्य होता है, इसलिए उसे साबुन आदि औद्योगिक वस्तुएँ बनानेके काममे लाया जाता है। अलसीके तेलका उपयोग मुख्यत रगोके वाहकके रूपमे होता है। वह जल्दी सूख सके, इसके लिए उसपर एक खास प्रकारकी रासायनिक क्रिया की जाती है। इस विधिसे तैयार किये हुए तेलको बेल तेल कहते है।

तेलमे की जानेवाली मिलावटकी जाँचके लिए कुछ विधियाँ काममे लाई जाती है, जिनमे 'क्रोमेटोग्राफी'की विश्लेषण पद्धति सबसे आधुनिक है। एक पुरानी पद्धति तेलमे सल्फ्यूरिक अम्ल छोडकर उससे उत्पन्न होनेवाली गर्मीको नापना भी है। साबुनीकरण (saponification) विधिमे पोटैसियम हाइड्रोआक्साइड मिलानेसे जो साबुन बनता है उसका वजन कर लिया जाता

है। खनिज तेलोका साबुन नही बनता इसलिए इस विधि द्वारा खाद्य तेलोमे खनिज तेलोकी मिलावट फौरन पकड ली जाती है।

अब प्राणिज तेलो और चर्बीकी चर्चा भी कर ली जाए। सबसे पहले तो ह्वेल (तिमिंगिल) मछलीके तेलको ले। एक साधारण मोटी ह्वेल मछलीसे १००से २०० पीपे तक तेल प्राप्त होता है। ह्वेलकी चर्बीके टुकडे करके और उन्हे तपाकर तेल निकाला जाता है। इस तेलका हाइड्रोजनीकरण करके उसकी चर्बी भी बनाई जाती है। मछलीका एक और प्रकारका तेल कॉडलिवर आइल कॉड नामक मछलीके यकृत (जिगर liver)को भापमे गर्म करके और विशेष प्रकारके बरतनोमे उबालकर निकाला जाता है। इस तेलका महत्त्व इसमे पाये जानेवाली विटाविन 'ए' और 'डी'के कारण है। इसका हलकी किस्मका तेल चमडेको नर्म करनेके काम आता है। अन्य मछलियोके, उदाहरणार्थ हेलिबट, शार्क, ट्युना आदिके तेलोका भी उपयोग किया जाता है। ये तेल भी कॉडलिवर आइलकी ही तरह निकाले जाते है।
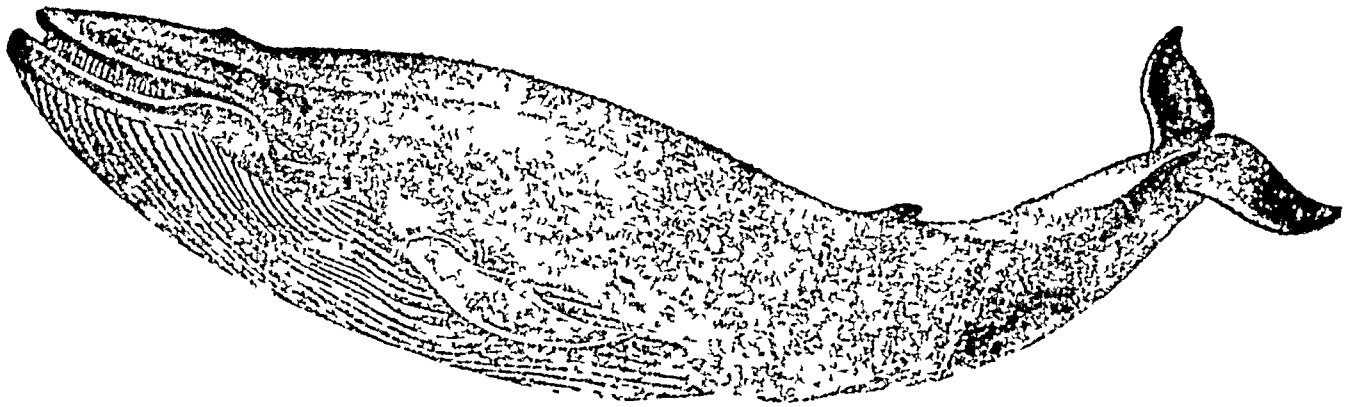
नील ह्वेल . लम्बाई ९० फुट; वजन १२० टन, तेल १२० पीपे, यकृतका वजन १ टन, क्रीम ३ टन, पेटके अवयव ३ ५ टन

प्राणिज चर्बी प्रचुर मात्रामे सूअरसे प्राप्त होती है। सूअरके शरीरसे कच्ची चर्बीको निकाल लिया जाता है, फिर उसे पानीके साथ दाब देकर गर्म करके लोहेकी कढाहियोमे तैयार किया जाता है। इसे बडे पैमाने पर तैयार करनेके लिए यान्त्रिक साज-सरजामकी आवश्यकता होती है, जिससे द्वारा भापका ५० पौण्ड तकका दाब दिया जा सके।

इसके अतिरिक्त मटनटैलो (बकरीकी चर्बी), बीफ टैलो (गाय-भैंसकी चर्बी), भेड़की चर्बी आदि भी निकाली जाती है। इस टैलो या गोवसाका उपयोग साबुन बनाने तथा वस्त्रोद्योगमे सूतको माडी चढानेमे किया जाता है।

प्राणिज चर्बी युक्त पदार्थमे मक्खन सबसे महत्त्वपूर्ण है। दूधको अपकेन्द्रित (centrifuge) से उच्चतर घुमानेसे मलाई अलग हो जाती है। मलाईको पानी तथा नमकके साथ बिलोनेसे 'टेबल बटर' (खानेका मक्खन) बनता है। मक्खनमे ८० प्रतिशत वसा (fat) और शेष पानी

होता है। इसे तो सभी जानते है कि मक्खनको ठीकसे गर्म करने पर पानी उड जाता और उसका घी वन जाता है। परन्तु घी अथवा तेलका स्थानापन्न 'मार्गारिन' 'सेरेटेड-फ्रिम्ड' (महीन दानेदार मखनिया) दूव और वनस्पति तेलसे वनाया जाता है। उसमे विटामिन 'ए' और 'डी' मिलाये जाते है और वसाका अनुपात ८० प्रतिशत रखा जाता है। उसमे २ या ३ प्रतिशत लवण, दूवके चर्वी रहित पदार्थ १ प्रतिशत और १६ प्रतिशत पानी रहता है। अन्य सत (essence) और रग भी उसमे आवश्यक मात्रामे मिलाये जा सकते है।

मोम (wax) भी तैलीय पदार्थ है। यह स्पर्म नामक ह्वेलके मस्तककी खोखलमेंसे निकाला जाता है। यह ठोस होता है और दवाइयाँ तथा मोमवत्ती वनानेके उद्योगमे काम आता है। 'स्पर्मासिटी' नामसे विख्यात यह पदार्थ 'सेटिलपामिटेट' नामक कार्वनिक (organic) एस्टर है। इसके विपरीत 'कारनोवा वैक्स' नामक मोम दक्षिण अमरीकाके एक देश व्राजीलमे उगनेवाले ताड वृक्षके पत्तोसे निकाला जाता है। इन पत्तोको इकट्ठा करके घिसनेमे उनके अन्दरका मोम वाहर आ जाता है। इस मोमका गलनाक काफी ऊँचा—१०५° सें० है। वार्निश, जूतापालिश, कार्वन पेपर आदि चीजे वनानेमे इस मोमका उपयोग किया जाता है। यह मोम सव मोमोसे अधिक कडा होता है। परन्तु जिस मोमवत्तीको हम जलाते है वह प्राय. मधुमक्खियोंके उस मोम (bee wax)की वनी होती है, जिसे मधुमक्खियाँ अपने छत्तोमे तैयार करती है। लेकिन अव तो मोमवत्तियाँ भी खनिज तेलसे प्राप्त होनेवाले मोमसे वनने लगी है।

मोम 'मोनोहाइड्रिक ऐलकोहल'का एस्टर है (जव कि तेल और चर्वी ट्राइहाइड्रिक ऐलकोहलके एस्टर है—इस अन्तरको अच्छी तरह ध्यानमे रखना चाहिए)। मोमका मूल्य उसमे रहनेवाले ऐलकोहलकी मात्रापर निर्भर करता है।

लाखको भी मोमका एक प्रकार ही माना जाता है। यह एक तरहके जन्तुओसे पैदा होती है। इसका मूल प्राप्तिस्थान भारत और चीन है। लाखका गलनाक ८०° से० है और इसका उपयोग विद्युत्-उद्योगोमे तारपर विसवाहक (insulation) अस्तर लगानेमे किया जाता है।

एशियाई देशोमे उत्पन्न होनेवाला 'जापान वैक्स' नामक मोम वस्त्रोद्योगमे खूव इस्तेमाल किया जाता है। यह एक फलसे निकाला जाता है। रवर, सावुन और अगरागो (cosmetics) आदिमे इसका उपयोग किया जाता है। जापानमे इसका वार्षिक उत्पादन ६ हजार टन और चीनमे इसका आधा है। क्यूवामे गन्नेसे भी मोम निकाला जाता है। वह पीलापन लिये हुए और भगुर होता है।

सारणी—१ कुछ महत्वपूर्ण वसाम्ल

१	२	३	४	५
कार्बनके अणुओंकी संख्या	चालू नाम (प्रचलित) अम्ल	शास्त्रीय नाम अम्ल	रासायनिक सूत्र	गलनांक °से०
४	n-ब्यूटिरिक	ब्यूटेनोइक	$CH_3(CH_2)_2$ COOH	–८
६	n-केप्रोइक	हेक्सेनोइक	$CH_3(CH_2)_4$·COOH	–२
८	n-केप्रिलिक	ऑक्टोनोइक	$CH_3(CH_2)_6$·COOH	१६
१०	n-केप्रिक	डेकानोइक	$CH_3(CH_2)_8$ COOH	३१
१२	लॉरिक	डोडेकानोइक	$CH_3(CH_2)_{10}$ COOH	४४
१४	मिरिस्टिक	टेट्राडेकानोइक	$CH_3(CH_2)_{12}$·COOH	५४
१६	पामिटिक	हेक्साडेकानोइक	$CH_3(CH_2)_{14}$ COOH	६३
१८	स्टिरिक	ऑक्टाडेकानोइक	$CH_3(CH_2)_{16}$·COOH	७०
२०	एरेचिडिक	आइकासेनोइक	$CH_3(CH_2)_{18}$ COOH	७७
१८	ओलिक	सिस-ओक्टाडेसीनोइक	$CH_3(CH_2)_7CH{=}CH(CH_2)_7$ COOH	१६
१८	लिनोलिक	सिस-सि–९-१२ ओक्टाडीकेडायोनिक	$CH_3(CH_2)_4$ $CH{=}CHCH_2CH{=}CH(CH_2)_7COOH$	–९

सारणी—२ सामान्य प्राणिज अथवा वानस्पतिक चर्बी-तेलोंमे पाये जानेवाले वसाम्लोंका अनुपात प्रतिशतमे

मूल	पामिटिक	स्टिरिक	अन्य (संतृप्त)	कुल संतृप्त	ओलिक	लिनोलिक	अन्य असंतृप्त	कुल असंतृप्त	सन्दर्भ
बीफ (गाय)	२९	२०	१	५०	४६	२	२	५०	Fats and Fatty Acids Year book of Agriculture USDA, 1959
पॉर्क (पालतू सूअर)	२२	१४	२	३८	४४	९	९	६२	
चिकन (मुर्ग)	२६	७	१	३४	४७	८	११	६६	
मछलीका तेल	१६	३	६	२५	१६	४	५५	७५	
अण्डे	२६	७	१	३४	४०	२१	५	६६	
मूगफलीका तेल	८	६	५	१९	५०	३१	०	८१	
अलसीका तेल	७	३	०	१०	२२	१८	५०	९०	
जैतूनका तेल	९	२	१	१२	८०	८	०	८८	
सेफ्फलावर तेल[1]	३	४	१	८	१५	७६	१	९२	
वनैलेसूअरकेपेटकीचर्वी	३२	८	०	४०	४८	११	१	६०	
मक्खन	२७	१२	२०	५९	३५	३	३	४१	
मार्गारिन	२२	३	२	२७	६०	९	४	७३	

१ कुसुम या करडाका तेल।

रसायन विज्ञानके कुछ ज्योतिर्धर

आर्थर रूडोल्फ हेज
(१८५७–१९३५)
जिन्होने डायाजो-ऐजो यौगिकोमे C–N, प्रकाशके अवशोषणके आधार पर पदार्थकी सरचना निश्चित करनेकी दिशामे और थायोफिन तथा वेनजिन, थायोजोन और पायरिडिन–जैसे पदार्थोमे रासायनिक अनुहरण (chemical mimicry)के सम्बन्धमे उल्लेखनीय कार्य किया।

थेलियमके अन्वेषक विलियम क्रूक्स
(१८३२–१८९९)

नेविल विन्सेण्ट सिजविक
(१८७३–१९५२)
'को-आर्डिनेशन कम्पाउण्ड्स आफ बोर' तथा 'केमिकल एलिमेण्ट्स एण्ड देर कम्पाउण्ड्स'के लेखक, ख्यातनामा विज्ञान शिक्षक।

१० : पेट्रोलियम

पेट्रोलियमकी उत्पत्ति

पृथ्वी पर पेट्रोलियमकी उत्पत्तिके सम्बन्धमे वैज्ञानिकोने कई तरहके मत प्रतिपादित किये है, जिनमे सबसे विश्वसनीय मान्यता यह है कि पेट्रोलियम सजीव पदार्थोसे (जान्तव और वानस्पतिक स्रोतोसे) बनता है। अर्थात् पेट्रोलियमका मूल जैव (organic) यानी कार्बनिक पदार्थ है। इस मान्यताके अनुसार पेट्रोलियमका मूलस्रोत वृक्ष और वनस्पति है। इनसे जो कोयला बना उस पर पत्तो अथवा वृक्षकी अश्मीभूत (fossil) आकृतियोको अंकित देखा जा सकता है। वही कोयला अन्तमे पेट्रोलियममे रूपान्तरित हुआ। इसके अलावा, आजसे करोडो वर्ष पहले फोरामिनाफेरा आदि जो अनगिनत सूक्ष्मातिसूक्ष्म समुद्री जीव थे और डाइएटम-जैसी सामुद्रिक वनस्पतियाँ थी, उनका अवशेष भी पेट्रोलियम है। जब इन समुद्री जीवो और वनस्पतियो-का विनाश हुआ तो उनके शव समुद्रमे गिरनेवाली नदियोके पानीके साथ बहकर आई हुई काली मिट्टी और कीचडकी परतोके नीचे दबते चले गए, और जीवाणुओ (बेक्टिरीया)के प्रभावके कारण उनका पेट्रोलियममे रूपान्तरण हो गया। दलदली भूमिमे इस तरहके परिवर्तनमे प्राकृतिक अथवा आर्द्रगैस (methane-marsh gas) उत्पन्न होती है। पेट्रोलियमके कुओमे भी यह गैस पाई जाती है। उसके बादकी अवधिमे समुद्री प्राणियोके मृत शरीरोसे भरपूर तेलवाली काली मिट्टी पर नई-नई परते बराबर चढती चली गई, और दाबके परिणामस्वरूप नीचेके तैलीय स्तरोमे सख्त पपडे (shale) बने। फिर इन परतो पर नदियोके पानीका सतत बहाव होते रहनेसे पपडोका मुलायम पत्थरोमे कायान्तरण हुआ, जो पोले और छेदवाले होनेके कारण छिद्रल या सरन्ध्र शैल कहलाए। भूगर्भमे तेल इन्ही शैलोमे कैद रहता है। ऊपरके वजनके कारण जहाँ दाबकी मात्रा कम हो जाती है उस जगह तेल रिसकर ऊपर आ जाता है, और बूँद-बूँद रिसकर ऊपर आता हुआ तेल कालान्तरमे मोटी धारा बनकर पानीमे हल्का होनेके कारण पानीकी सतह पर तेलके स्तर बना लेता है। इस तरह भूगर्भमे सरन्ध्र शैलोके अन्दर पेट्रोलियम सग्रहित होता रहता है। पेट्रोलियमकी उत्पत्तिसे सम्बन्धित यह मान्यता वैज्ञानिक आधार लिये हुए है।

पानी अथवा शैलकी अपेक्षा तेलका घनत्व कम होनेके कारण यदि किसी प्रकारका अवरोध न हो तो तेलकी प्रवृत्ति ऊपर उठनेकी होती है। अपनी इस स्वभावगत विशेषताके कारण तेल नीचेसे बाहरी सतह तक कितना ऊपर उठ सकता है इसका सही-सही अन्दाज लगा पाना मुश्किल ही है। परन्तु तेलके भूगर्भीय भण्डारोकी सीमाओ, शैलोकी सरन्ध्रता और गठन तथा भूगर्भीय

परतोके गुणधर्मोके अध्ययनसे पता चलता है कि भूगर्भमे सचित तेल सौ फुटसे अधिक ऊपर नही आ सका है। कुछ तेल क्षेत्रोमे तेल ओर गैसके भण्डार परस्पर व्यापी भी होते है, लेकिन उन्हे आपसमे ऊपर-नीचे जोडनेवाले सम्बन्धोका कोई प्रमाण उपलब्ध नही होता। भूगर्भीय निरीक्षणके अनुसार तो जिस स्थान पर पेट्रोलियम निकलता हे, उससे एक या दो मीलकी दूरी पर ही पेट्रोलियमके सग्रह-स्थल होनेकी बात सिद्ध होती है।

तेलका इस प्रकारका पार्श्वीय वितरण ओर विस्तार उसकी निर्माणकालीन गठन, शैलकी सरन्ध्रता, भूकम्पके धक्के, तापमान, पानीके हिलने-डोलनेकी गति और भूगर्भीय इतिहासके दोरान निर्मित होनेवाली अनेक प्रकारकी परिस्थितियो पर निर्भर करता हे। इनके कारण शैलके अन्दर प्रवाहित तेल अपने मार्गमे पडनेवाले अनेक गडहोमे भरकर वही कैद हो जाता हे। और इसीलिए गडहोमे बन्द तेल आमतोर पर उद्भव स्थानसे प्रवाहित होकर ही वहाँ पहुँचा होना चाहिए। शैलोके अन्दर तेलके विशाल सचय पानीके (या पानीके ऊपर) ही होते हे।

सामान्यत ५००० फुट गहरी कडी जमीनके नीचे प्रतिवर्ग इच २५०० पोण्ड दाव पर तेल मिल जाया करता है। वास्तवमे तो जहाँ पर प्रतिवर्ग इच १००० पोण्ड दाव हो उस जगह क्रूड आइल मिलनेकी सम्भावना रहती है।

जैव द्रव्योसे भरपूर पानीवाली काली मिट्टीमे सजीव जीवाणुओकी सख्या प्रचुर मात्रामे होती है। प्रतिवर्ग इच १५ हजार पोण्ड दाव और १००° से० तापमान पर भी हजारो फुटकी गहराइयोमे जीवाणु जीवित रह सकते है। जीवाणु क्योकि सभी प्रकारके जैव द्रव्यो पर अतिक्रमणकी सामर्थ्य रखते है इसलिए भूगर्भस्थित काली मिट्टीके कीचडमे रहनेवाले जैव द्रव्योसे वे पेट्रोलियम पैदा कर सकते है।

विकिरण (radiation) वैज्ञानिक एच० सी० लिण्डेने आजसे लगभग ४५ वर्ष पूर्व यह खोज की थी कि विकिरण (रेडियधर्मिता radioactivity)के प्रभावसे मेथेन अपनेसे उच्च वर्गके हाइड्रोकार्बन पदार्थमे परिवर्तित हो जाता है। जैव द्रव्यके तैलीय पदार्थ पर आल्फा किरणोके प्रभावसे पैरैफिन वर्गके हाइड्रोकार्वन, हाइड्रोजन, कार्बन डाइआक्साइड आदि उत्पन्न होते है, इसका समर्थन भूरसायनज्ञ (भूवैज्ञानिक) भी करते हे। इसलिए यह कहना सर्वथा अकारण तो नही है कि पेट्रोलियमकी उत्पत्तिमे जीवाणुओ ओर रेडियधर्मिताका सयुक्त रूपसे योगदान रहा होगा। पृथ्वीके गर्भमे तेलका विपुल भण्डार हे। लेकिन उसकी मात्राका सही अनुमान करना लगभग असम्भव ही है। अन्तिम जानकारीके अनुसार ३ खरव १४ अरव पीपोका (१ पीपा=१९० लीटर) अनुमान किया जाता है।

पेट्रोलियमकी खोज और सर्वेक्षण

पेट्रोलियमकी प्रारम्भिक खोजके बारेमे पता चलता है कि पहले-पहल पृथ्वीकी सतह पर या वहुत कम गहराई पर इसके कुण्ड, सरोवर या तालाब देखे गए थे। इसमे भी सबसे पहले डामरका पता चला था। डामरकी खोज वहुत मूल्यवान समझी गई थी। तेलके वाष्पी द्रव्य उड जानेके वाद जो काला गाढा द्रव तलछटके रूपमे वचा रह जाता है उसे डामर (या तारकोल) कहते है।
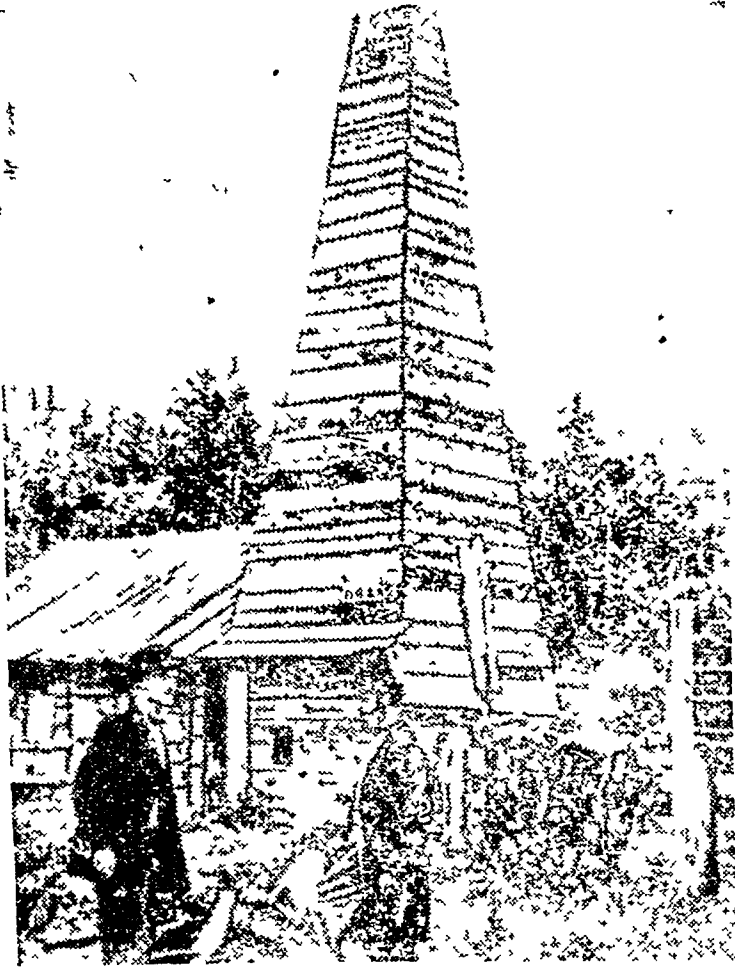
कर्नल एडविन एल० ड्रेकका कुआँ (१८५९)

मध्यपूर्वमे किये गए पुरातात्त्विक उत्खननसे पता चलता है कि वहाँके ईसापूर्व ६००० वर्ष पुराने नगरोकी दीवारोकी ईटोकी जुडाई इसी काले रगके तारकोलसे की गई थी। कृष्ण सागरके पूर्वी किनारे पर बाकूके समीप और इराकके समृद्ध तेल क्षेत्रोका पता उन्नीसवी शताब्दीमे चला। अमरीकामे टाइटसविले नामक स्थान पर १८५९के अगस्त महीनेकी २८वी तारीखको कर्नल एडविन एल० ड्रेकको एक कुऍकी खुदाई करते समय ६९ फुटकी गहराई पर तेल मिला था। इसीलिए यह तारीख अमरीकामे पेट्रोलियम उद्योगकी जन्मतिथि मानी जाती है। ड्रेककी खोजके बाद अमरीकामे कई स्थानो पर विशाल तेलक्षेत्र खोज निकाले गए और उनका ताँता ही
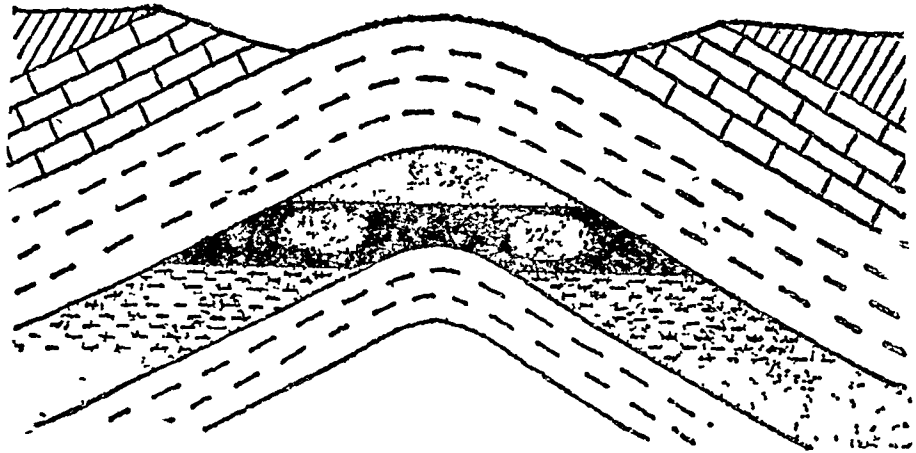
अभेद्य शैल

अपनत (anticline)—तेलका भडार

[काली पट्टी तेलकी सूचक है। उसके ऊपरके बिन्दुवाले भागमे खनिज गैसे और नीचेके बिन्दु वाले भागमे पानी है। इनके ऊपर और नीचे अभेद्य शैल है।]

बँध गया। अब तो विश्वमें यह उद्योग दिन-दूनी और रात-चौगुनी तरक्की करता जा रहा है। आरम्भमें तेलका स्थान अनुमानके आधार पर निश्चित किया जाता था। इस तरहकी भाग्याधीन परिस्थितिके कारण इस कामको 'वाइल्ड कैटिंग' (जंगली बिलावको पकड़ना) कहा जाता था। परन्तु धीरे-धीरे वैज्ञानिक प्रणालियोंका सहारा लेनेकी आवश्यकताको समझा जाने लगा और पिछले ५० वर्षोंमें विशेषज्ञोंने निश्चित प्रणालियोंका आविष्कार कर उन्हें विकसित किया। अब वैज्ञानिक प्रणालियोंके परिणामस्वरूप पेट्रोलियमकी प्राप्तिकी सम्भावनाएं काफी बढ़ गई हैं और बेकार कुओंकी खुदाईमें लगनेवाले समय, श्रम और पैसेके व्ययमें आंशिक बचत और रोक हुई है। इस कार्यमें भूगर्भवेत्ताओं (वैज्ञानिकों)का योगदान अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होता है। तेलके कुओं-की खुदाई करते समय तेलके साथ चट्टानों और शैलखण्डोंके टुकड़े भी निकलते हैं। भूगर्भवेत्ता उनका अध्ययन और परीक्षण करके तेल-प्राप्तिकी सम्भावनाएँ बतलाते हैं। ये शैलखण्ड मुलायम और छिद्रल (सरन्ध्र) होते हैं, और जिस प्रकार स्पंज अपने छिद्रोंमें पानीको चूस लेता है, उसी प्रकार इन शैलखण्डोंके छिद्रोंमें तेल भरा रहता है। इन छिद्रल शैलोंके ऊपर अभेद्य शैलोंकी परतें बिछी रहती हैं। यह अभेद्य परत छिद्रोंमें कैद पेट्रोलियमके भण्डारके लिए ढक्कनका काम देती है। इससे पेट्रोलियम अथवा उसकी गैस बाहर उड़ने नहीं पाते, अन्दर ही बने रहते हैं। शैलोंकी इस

ट्रिनिदाद (वेस्ट इंडीज)का तारकोल-सरोवर

[एक मजदूर लकड़ीके टुकड़ेको तारकोलमें डुबोकर ऊँचा उठा रहा है। उसके साथ तारकोलका गाढा द्रव भी ऊपर उठ आया है। प्रतिवर्ष १ लाख ५० हजार टन तारकोल (asphalt)का विदेशोंको निर्यात किया जाता है।]

आच्छादक परतको अंग्रेजीमे कैप राक (cap rock) और हिन्दीकी पारिभाषिक शब्दावलीमे छत्रक शैल कहते है 'कैप'का अर्थ है टोपी और 'छत्रक'का छाता। कई बार यह छत्रक शैल चूना पत्थरका होता है और कई बार लवणका भी, जो अत्यधिक दाबके कारण अभेद्य हो जाता है। इस प्रकार पेट्रोलियमका भडार (सचय) दो अभेद्य शैलोके बीच ठीक उसी तरह बन्द रहता है जिस प्रकार कचौरीके दो पुडोके बीच उसका मसाला। अभेद्य शैलोके सम्पुटमे रहनेके कारण न तो तेल ऊपर जा सकता है और न नीचे ही।

भूगर्भ वेत्ताओके मतानुसार पृथ्वीके लम्बे इतिहासमे अनेको बार भूपृष्ठ पर बडी-बडी हलचले हुई और उनके कारण नये पर्वत अस्तित्वमे आये और 'बलुआ पत्थर' एव 'चूना पत्थर'की परतोकी सतहे ऊँची-नीची हो गई तथा उनमे बडी-बडी दरारे पड गई। स्थान भ्रष्ट हो जानेके कारण ये परते एक ओर तो कमानकी तरह ऊपर उठ गई और दूसरी ओर तश्तरीकी तरह गहरी गडहेवाली हो गई। भूगर्भवेत्ता इन्हे अपनी पारिभाषिक शब्दावलीमे क्रमश अपनति (anticline) और अभिनति (syncline) कहते है। अपनतिकी आकृति उलटे तसले-जैसी होती है, जबकि अभिनतिकी सीधे तसले-जैसी। अपनति और अभिनतिके बीच पेट्रोलियम ऐसा लगता है मानो अभिनतिके दोनो बाजुओसे उफन कर अपनतिके गुम्बद मे कैद हो गया हो। कई बार दाब अधिक हो जाने या वजन बढ जानेसे 'छत्रक शैल'मे दरार पड जाती है और उसके नीचेका पेट्रोलियम उस

वायुयानके नीचे लटकाया हुआ चुम्बकत्वमापी

चुम्बकत्व-मापी

दरार की राह ऊपर आकर वातावरणमे 'उड' जाता है। कई बार हवा, वर्षा और धूपके कारण 'छत्रक शैल'के छीज या घिस जाने पर भी उसके नीचे का पेट्रोलियम बाहर निकलने या रिसने लगता है और उसमेके वाष्पी द्रव्य हवामे उड जाते है और केवल तारकोल बचा रह जाता है। इससे उस जगह तारकोल की झील या

सरोवर निर्मित हो जाता है। वेस्ट इडीजके ट्रिनिदाद और वेनजुएलाके तारकोल सरोवरोका निर्माण इसी तरह हुआ है।

कई बार शैलो और चट्टानोका सचलन इतना शक्तिशाली होता है कि कमजोर स्थानो पर वे कूबडकी तरह उठकर गुम्बद-जैसा छत्र बना देती है, जिसके नीचे तेल चारो ओर फैल जाता है। इस प्रकारकी भूगर्भीय हलचलोके कारण तेलके गुप्त भडार भूपृष्ठके नीचे भर जाते है। वैज्ञानिक पद्धतिसे ऐसे स्थानोकी खोज करके सही स्थानो पर कुएं खोद कर इस तेलको बाहर निकाला जाता है।

पेट्रोलियमकी खोज करनेकी एक प्रणालीके अन्तर्गत पृथ्वीके अन्दरकी शैलोके चुम्बकत्वको नापा जाता है और अलग-अलग स्थानो पर उनमे पाये जानेवाले सूक्ष्म परिवर्तनोको अकित कर शैलोकी सरचनाको निश्चित किया जाता है। शैलोकी गहराईमे वृद्धि होनेके साथ-साथ उनके चुम्बकत्वका अनुपात घटता जाता है। जिस यन्त्रसे चुम्बकत्व नापा जाता है उसे 'चुम्बकत्वमापी' (magnetometer) कहते है, यह यन्त्र अत्यधिक सुग्राही (sensitive) होता है, अर्थात् चुम्बकत्वके अल्पातिअल्प अन्तरको भी अकित कर सकता है। चुम्बकत्वमापीको वायुयानके नीचे एक तारसे लटका कर निश्चित ऊँचाई पर उडान भरी जाती है, जिससे नीचेकी जमीनके शैलोकी चुम्बकत्व रेखा इस यन्त्रमे अकित हो जाती है। समुद्रतलके नीचे पाये जानेवाले पेट्रोलियमकी खोजमे यह प्रणाली बहुत ही उपयोगी सिद्ध हुई है।
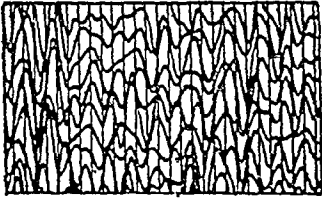
भूकम्प लेखी

एक दूसरी प्रणालीके अन्तर्गत गुरुत्वाकर्षण मापी यत्र (gravitometer)के द्वारा उस प्रदेशके गुरुत्वाकर्षणको नापा जाता है। भिन्न-भिन्न प्रदेशोका गुरुत्वाकर्षण भी भिन्न-भिन्न
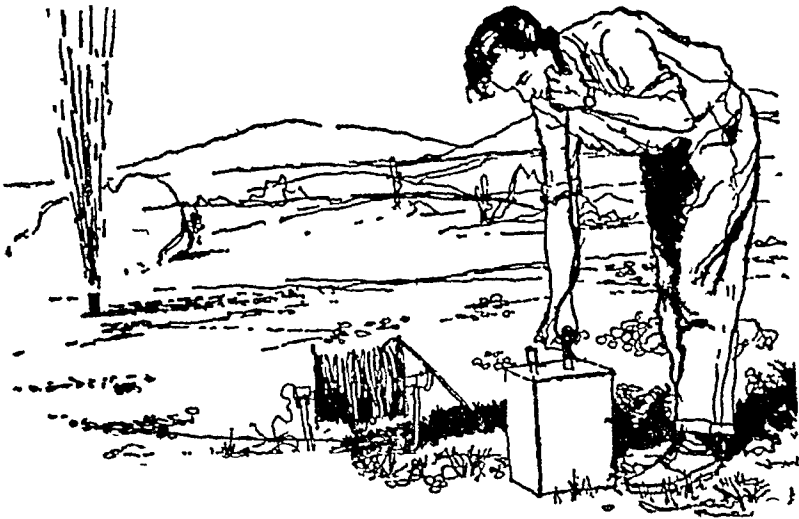
कृत्रिम भूकम्प द्वारा तेलकी खोज

[जमीनके अन्दर गहराईमे विस्फोट द्वारा उत्पन्न भूकम्पकी तरगोको जियोफोन द्वारा सुनता और अनुमान लगाता हुआ वैज्ञानिक]

होता है। कडे शैलोका गुरुत्वाकर्षण मान नर्म और कोमल भूमिकी अपेक्षा अधिक होता है। गुरुत्वाकर्षणमापी इतना नाजुक और सुग्राही होता है कि गुरुत्वाकर्षणमे पाये जानेवाले दस करोडवे भागके अन्तरको भी अकित कर सकता है।

तीसरी प्रणालीके अन्तर्गत जमीनके अन्दर कृत्रिम भूकम्पके धक्के पैदा कर उन्हे नापा जाता है। इन धक्कोको नापनेवाला यन्त्र भूकम्पलेखी (seismograph) कहलाता है। इसके उपयोगकी विधि इस प्रकार है जमीनके अन्दर ५०से १०० फुटकी गहराईमे डाइनामाइट पाउडर दबाकर उससे 'जियोफोन' अथवा 'पिक-अप' नामक उपकरणको सम्बद्ध कर दिया जाता है, जो सुरग द्वारा डाइनामाइटका विस्फोट होने पर जमीनके अन्दर होनेवाले और भिन्न-भिन्न दूरियोसे परावर्तित होनेवाले कम्पनोकी प्रतिध्वनियोको अकित करता है। ये कम्पन कठोर शैलोसे शीघ्र परावर्तित होते है, जबकि साधारण शैलोसे परावर्तित होनेमे इन्हे अधिक समय लगता है। भूकम्पलेखी कम्पनोके इस तरहके सूक्ष्मातिसूक्ष्म अन्तरोको भी अकित कर लेता है। जियोफोनमे इन कम्पनोको बडा करके कैमेरासे उनके चित्र ले लिये जाते है ('टाकीज'मे ध्वनि-पथ Sound trackका अकन करनेकी तरह)। यह यन्त्र एक सेकण्डके हजारवे भागका भी अकन कर सकता है। इस तरहके सूक्ष्मातिसूक्ष्म अन्तरो और परिवर्तनोकी सही गणना करके भूगर्भीय शैलोकी रचनाका नकशा तैयार किया जाता है और उसके आधार पर वेधनका उपयुक्त स्थान निर्धारित होता है।

भूगर्भीय जानकारी और भी सरलतासे प्राप्त करनेके लिए 'इलेक्ट्रिक लॉगिग' (विद्युत अवरोध लेखन)की सबसे अधुना प्रणाली उपयोगमे लाई जाती है। इस प्रणालीके अन्तर्गत विभिन्न गहराइयो तक पहुँचनेमे विद्युत्-सचारको जितने अवरोधका सामना करना पडता है उसको नापकर भूगर्भस्थित शैलोकी परतोकी गठनका निश्चय किया जाता है। फिर उन शैलोकी रेडियर्धार्मिताको नापकर उसकी मात्रा तय की जाती है। चूना पत्थर, मैग्नेशियमका पत्थर और बलुआ पत्थर गामा किरणोका अल्प उत्सर्जन करते है, इसके विपरीत खनिज तैल-जैसे जैव पदार्थो वाले शैलोसे गामा किरणोका उत्सर्जन अधिक मात्रामे होता है। फिर गामा किरणोको किसी गैसमे पारित करनेसे वह गैस विद्युत् संवाहक हो जाती है, और तब उसमेसे विद्युत् पारित की जा सकती है। यह गुण 'आयनीकरण' (ionisation) कहलाता है। गामा किरणोको जब आयनीकरण कक्षमेसे पारित किया जाता है तो किरणोकी मात्राके अनुपातके अनुसार कक्षमे विद्युत्का आवेश होने लगता है। यह कक्ष दस फुट लम्बा और इसका व्यास तीन इच होता है और इसमे गैस भरी होती है। विभिन्न शैलोके सम्पर्कमें जब इस कक्षको लाया जाता है तो शैलोसे उत्सर्जित गामा किरणोकी मात्राके अनुपातके अनुसार कक्षस्थित गैसमे विद्युत्का आवेश होता है। विद्युत्के आवेशमे होनेवाले इस परिवर्तनको एक यन्त्र द्वारा कागजकी पट्टी पर अकित कर लिया जाता है।

पेट्रोलियमकी खोजमे आजकल काममे ली जानेवाली तीनो भिन्न-भिन्न प्रणालियोका महत्त्व और मूल्याकन अच्छी तरह समझ लेना चाहिए।

अनुक्रम	प्रणाली	सफलताकी सम्भावना
१	अनुमान पर आधारित वेधन	२७ मे १
२	केवल भूगर्भीय (भूवैज्ञानिक) परीक्षण	१० मे १
३	भूभौतिकीय एव भूगर्भीय सयुक्त परीक्षण	५ मे १

वेधन

पेट्रोलियमके निकालनेका स्थान निश्चित हो जानेके बाद वहाँ वेधन (खुदाईका काम) करनेके लिए नियुक्त कर्मचारी अपना साज-सामान लाकर काम शुरू करते है। इसके लिए सबसे पहले तो उस स्थान तक पहुँचनेके लिए कच्चे रास्ते बनाने पडते है, नदी-नालो पर पुल बाँधने होते है और आवश्यकता होने पर जगलके वृक्षोको काटकर रास्ता तैयार करना होता है। साथ ही लोगोंके रहनेके लिए काम चलाऊ प्रबन्धके रूपमे तम्बू और छोलदारियोंकी व्यवस्था भी करनी पडती है। विद्युत्-उत्पादनके लिए जनित्रो, पम्पो और वेधनके लिए आवश्यक बरमे आदि औजारोको वहाँ पर पहुँचाना पडता है।

कार्यारम्भमे सबसे पहले इस्पातका एक मीनारनुमा मचान बनाया जाता है, जिसे 'डेरिक' कहते है। यह १५० फुट ऊँचा होता है और जमीन पर इसके चारो पायोका फासला एक-दूसरेमे ३०-३० फुट रखा जाता है। इसके सिरेपर तारके मजबूत रस्सेसे बरमेको बाँधनेवाला विशाल 'फन्दा' लटकाया जाता है। इस्पातके लम्बे नलकोसे जुडा हुआ बरमा इसी फन्देके सहारे रहता है। इस्पातके नलके एक-दूसरेसे जुडे होते है और जब बरमा जमीनमे प्रवेश कर कुआँ खोदता हुआ अन्दर उतरता है तो ये नलके भी उसके साथ जमीनमे उतरते जाते है। बरमेके रस्सोको ऊपर-नीचे चलानेवाले यत्र डेरिकके पायोंके समीप जमीन पर रखे जाते है। बरमेको चक्राकार घुमाने वाला यत्र घूमचक्कर (turn table) कहलाता है, जो डेरिकके पायेके समीप रहता है और जिससे बरमेके साथ जुडी हुई नली (इसे 'कैली' कहते है)को सम्बद्ध कर दिया जाता है। घूम चक्कर यत्रको बिजलीकी मोटर और योक्त्रो (दन्तचक्र gears)के सहारे गोल-गोल घुमाया जाता है, बरमा भी गोल-गोल घूमता और छेद करता हुआ जमीनमे उतरने लगता है। इस बरमेके फले कई प्रकारके होते है। कुछ फलोमे कठोर इस्पातके दाँते बने होते है तो कुछमे कृत्रिम हीरे लगे होते है। कडी चट्टानोमे प्रति घण्टा एक फुटसे अधिक गहराईकी गतिसे वेधन नही हो सकता, परन्तु मुलायम परतोमे प्रति घण्टा १५० फुटकी गहराई तक भी पहुँचा जा सकता है। बरमा जैसे-जैसे नीचे उतरता जाता है उससे जुडी हुई इस्पातकी नली (कैली)का सिरा भी कुएँमे प्रवेश करता जाता है। जब यह पूरी नली कुएँमे उतर जाती है तो घूमचक्करको बन्द कर देते है और नलीको बाहर निकालकर दूसरी नली (३० फुट लम्बी) उससे जोड दी जाती है। फिर जोडकर बढाई हुई पूरी नलीको कुएँमे अधिक गहरी खुदाईके लिए चालू कर दिया जाता है। कुएँकी गहरी खुदाईके लिए इस क्रियाको कई बार दुहराया जाता है, और कैलीकी लम्बाईको उत्तरोत्तर बढाते जाते है। बरमा और उससे जुडे हुए रस्सोका वजन ५० टनसे भी अधिक हो जाता है।
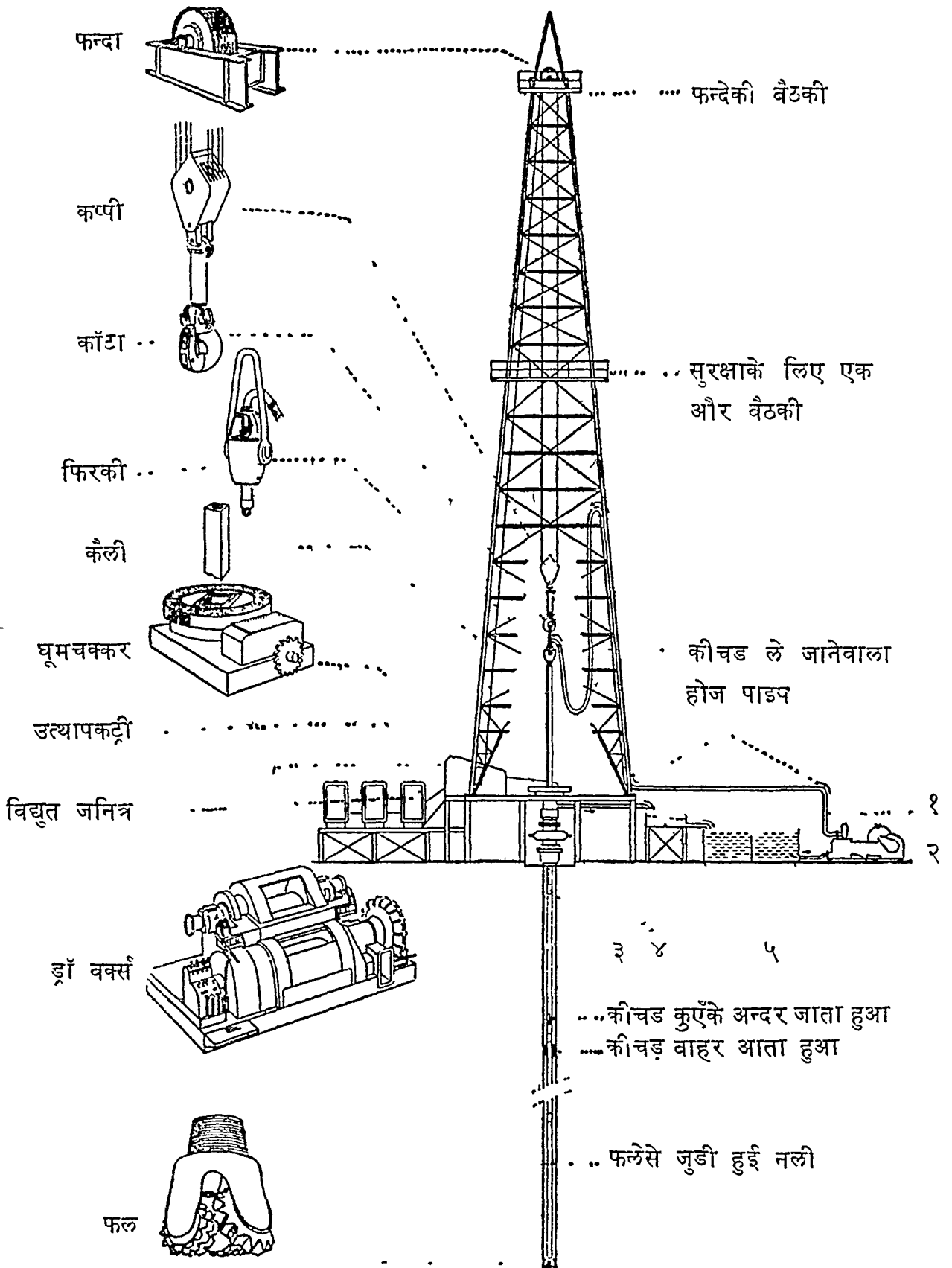
१. कीचडकी टकी, २ पम्प, ३ कैली और वरमेकी नलीका जोड, ४. निर्धमन निरोधक (blow-out preventer), ५ कीचडको एक-जैसी स्थितिमे रखनेवाला हलोर-यत्र।

इस वोझको थामनेके लिए डेरिक पर 'ड्रॉ वर्क्स' नामक उपकरण लगा रहता हे। कुआँ खोदते समय चट्टानोके वेधनमे पत्थरोका जो चूरा वनता हे उमे और अन्य कूडेको छेदमेसे वाहर निकालते रहना आवश्यक है। यह काम विशेष विधिसे तैयार किये गए कीचडसे लिया जाता है। रवरकी नलीके सहारे इस कीचडको छेदके अन्दर पहुँचाया जाता है। वरमेसे जुडी नलीमे होकर कीचड नीचे पहुँचता और वरमेके फलकी वाजूसे होता हुआ जव ऊपर आता है तो अपने साथ वेधित चट्टानके प्रस्तरीय चूरे ओर कूडेको भी वाहर ले आता हे। इसके अतिरिक्त इस कीचडके दो उपयोग ओर भी है एक तो यह वरमेको गर्म नही होने देता, वेधन प्रक्रियामे उसे वरावर ठण्डा बनाये रखता है और दूसरे, कुएँमसे वेगके साथ ऊपर आती हुई गैसोको वाहर निकलनेसे रोकता है। कीचडके साथ पत्थरके जो टुकडे वाहर निकलते है, भूगर्भ-वेत्ता उनका परीक्षण करते और उनमे तेलकी मात्राका अनुमान लगाते हे।

खुदाई (वेधन)मे कुएँकी चट्टाने खिसक न जाएँ, इसलिए उसके अन्दर लोहेके नल फँसा दिये जाते है, इससे पानीका रिसना भी वन्द हो जाता है। खुदाई हो जाने पर वरमेको उसकी नलीके साथ वाहर निकाल लिया जाता हे और उसकी जगह लोहेकी मोटी चद्दरोके तीस-तीस फुट लम्वे लोहेके नल कुएँमे उतार दिये जाते हे। फिर इन नलो ओर कुएँकी दीवालके वीचकी जगहमे सीमेण्ट कक्रीट भर दिया जाता है, जिसके पक जाने पर लोहेके नल ठीकसे जमकर अपनी जगह स्थिर हो जाते है। इसके वाद और भी गहरी खुदाईके लिए कम व्यासवाला वरमा कुएँके अन्दर उतारा जाता है। ज्यो-ज्यो कुआँ गहरा होता जाता है उसमे लोहेके नल दूरवीनकी तरह एक-दूसरेमे पिरोकर विठाते जाते है। यहाँ तक कि १५ हजार फुट गहरी खुदाईमे वरमेका व्यास दो फुटसे घटता-घटता सिर्फ आधा फुट ही रह जाता है। जव तक 'वरमा नली' (drill-pipe) छत्रक शैल तक नही पहुँच जाती वेधन चालू रखा जाता है। वरमा जव छत्रक शैलसे टकराता हे तो तेल पानेकी आशासे उत्तेजना, उत्साह और अधीरता वढ जाती है। अन्तमे वरमा छत्रक शैलको वेधता है ओर तेलका फव्वारा उठता है। पेट्रोलियम निकालनेके आरम्भिक दिनोमे यह तेल वडे वेगसे ऊपर आता था, और इसीलिए इसे 'गशर' नाम दिया गया था। इससे पेट्रोलियमका भारी मात्रामे अपव्यय होता था और प्राय आग भी लग जाया करती थी। अव तो कीचड डालकर तेलके इस आवेग (गशर)को नियन्त्रित कर लिया जाता है। इस नियन्त्रणको सतत वनाये रखनेके लिए एक खास किस्मके कपाट (वाल्व)का, जो 'निर्धमन अवरोधक' (blow-out preventer) कहलाता है, उपयोग किया जाता है। ठीक इसी समय वरमा नलीको सावधानीसे ऊपर खीच लिया जाता है।

इसके वाद पेट्रोलियम कूप-शीर्ष (well-head) नामक एक उपकरणको कुएँके ऊपर विठाया जाता है। इस शीर्षमे कपाट (वाल्व), दाब मडलक (pressure), गोल हत्थे आदि रहते है, जिससे यह देखनेमे वृक्षकी तरह लगता है, इसीलिए विज्ञानकी ठेठ भाषामे इसे 'क्रिसमस ट्री' भी कहते है। कूप-शीर्षको कुएँ पर चढानेके बाद कीचडके दावको कम करनेके लिए उसमे पानी मिला देते है, जिससे वह पतला और हलका होकर पेट्रोलियमकी ऊर्ध्व गतिके

साथ धीरे-धीरे ऊपरकी ओर धकेला जाने लगता है। जब इस विधिसे सारा कीचड बाहर निकल आता है तो पेट्रोलियम उसके अन्दरको विलेय गैसके कारण फेनिल रूपमे सतह पर दिखाई देता है। यह सारा फेन निकल जानेके बाद ही पेट्रोलियम बाहर आता है, और उसे नलतत्र (pipe-line)के द्वारा एक मध्यवर्ती केन्द्रीय सग्रहालयमे ले जाया जाता है।
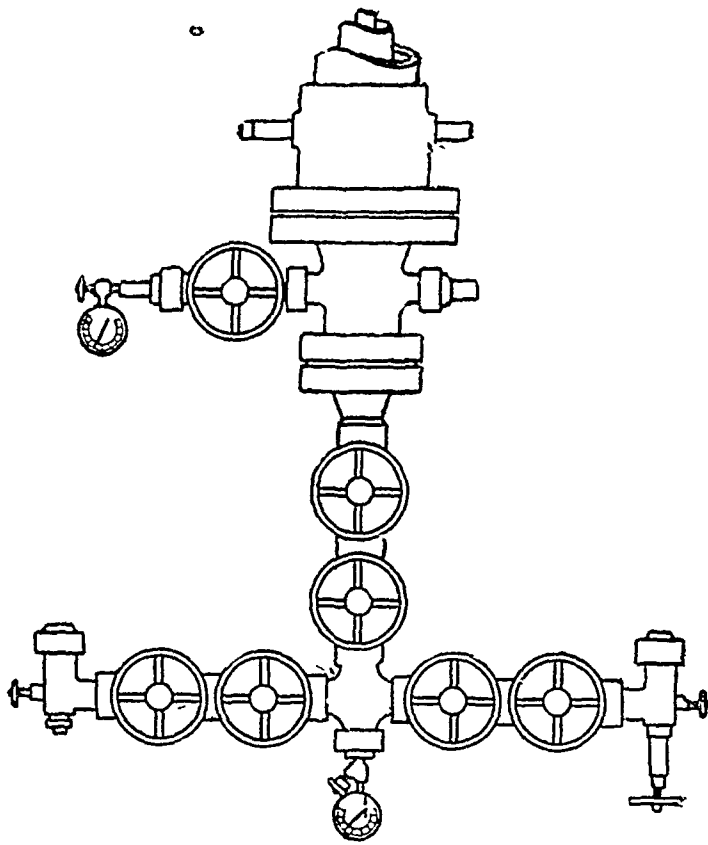
'क्रिसमस ट्री'

कच्चा तेल (crude oil) परिष्करणी (refinery)मे

कुएँसे निकलनेवाला पेट्रोलियम क्रूड आयल (कच्चा तेल) कहलाता है। कच्चे तेलका परिष्करण करनेवाले कारखानेको 'रिफाइनरी' अथवा परिष्करणी कहते है। परिष्करणीमे लगातार चौबीसो घण्टे काम होता रहता है। यहाँका मुख्य काम क्रूड आयलमे रहनेवाले विभिन्न हाइड्रोकार्वनोको उपयोगमे लाये जाने योग्य स्वरूपमे प्राप्त करना है। कच्चे तेलमे रहनेवाले इन समस्त रासायनिक पदार्थोको सामूहिक रूपसे हाइड्रोकार्वन कहते है। कार्वन और हाइड्रोजन नामक मूलतत्त्वोके परमाणुओके सयोगसे हाइड्रोकार्वन बनते है। पेट्रोलियमके हाइड्रोकार्वनोमे सवसे हलका हाइड्रोकार्वन 'मेथेन' है, जिसमे हाइड्रोजनके चार और कार्वनके एक परमाणुका रासायनिक सयोग हुआ है।

पेट्रोलियममे एक कार्वन परमाणुसे लेकर ४० कार्वन परमाणु तकके हाइड्रोकार्वन होते है। इनके अतिरिक्त चक्रीय पैरैफिन (नैफ्थीन) और सुरभित (aromatic) हाइड्रोकार्वन (वेनेजिन आदि) भी होते है। इन हाइड्रोकार्वनोके अतिरिक्त आक्सीजन, नाइट्रोजन और सल्फर (गन्धक)के परमाणुओवाले अन्य यौगिक भी रहते है।

हाइड्रोकार्वनोकी श्रेणीमे कार्वन तथा हाइड्रोजनके परमाणुओकी सख्यामे उत्तरोत्तर वृद्धि होती जाती है। मेथेनके वाद दूसरा हाइड्रोकार्वन एथेन है, एथेनके वाद प्रोपेन और उसके वाद व्यूटेन, पेण्टेन, हेक्सेन, ऑक्टेन आदि आते है। सामान्य ताप और दाव पर मेथेनसे व्यूटेन तकके हाइड्रोकार्वन गैसीय रूपमे, पेण्टेनसे सेप्टेन तकके द्रव अवस्थामे और हेप्टाडेकेन तथा उसके वादके ठोस रूपमे रहते है। परिष्करणीमे जो अनेक पदार्थ सामान्य ढगसे प्राप्त किये जाते है उनकी सूची इस प्रकार है

हाइड्रोकार्बन	क्वथनांक (°से०)	संरचना	उपयोग
हलका पेट्रोल	२०–१००	C_5H_{12}–C_7H_{16}	विलायक
बेंजाइन	७०–९०	C_6—C_7	निर्जल धुलाई (शुष्क धावन)
लिग्रोइन	८०–१२०	C_6—C_8	विलायक
पेट्रोल (गेसोलिन)	७०–२००	C_6—C_{11}	मोटरका ईंधन
केरोसीन (पैरैफिन तेल)[१]	२००–३००	C_{12}—C_{16}	कन्दीलोंमे जलानेके लिए
गैसतेल (डीजेल या भारी तेल)	३००से अधिक	C_{13}—C_{18}	ईंधन
स्नेहक (खनिज तेल)	,, ,,	C_{16}—C_{20}	स्नेहक
ग्रीस, वैसलिन, पेट्रोलियम जेली आदि	,, ,,	C_{18}—C_{22}	औषधि निर्माणमे
मोम आसुत (पैरैफिन वैक्स—सख्त)	,, ,,	C_{20}—C_{30}	मोमबत्ती, मोमी कागज कार्बन पेपर आदि बनानेमे
अवशिष्ट तारकोल (अलकतरा या 'पिच')	,, ,,	C_{30}—C_{40}	रास्ते बनानेमे

इनके सिवा समुचित रासायनिक क्रियाओंके द्वारा इन पदार्थोंमे दूसरे अनगिनत रसायनक बनाये जाते है, जो 'पेट्रो-केमिकल्स' कहलाते है। परिष्करणी जितनी ही बडी होगी वहाँ परिष्कृत

प्रभाजक स्तम्भ
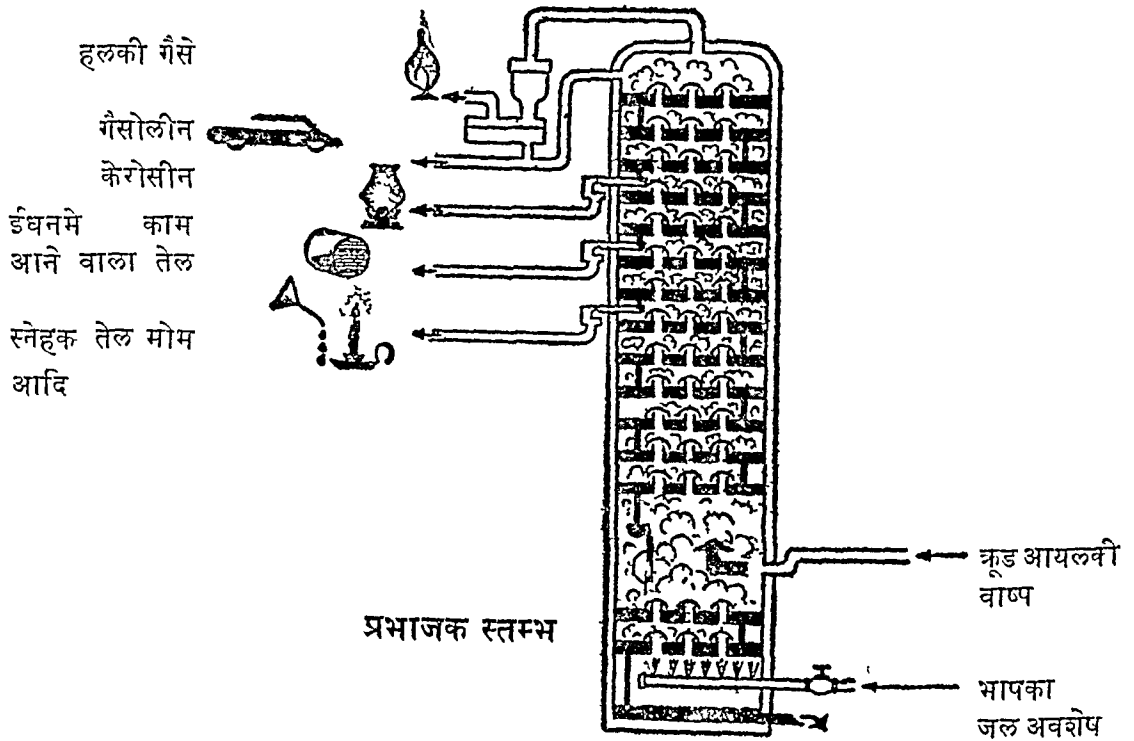
१ इसे दीपन तेल या मिट्टीका तेल भी कहते है।

किये जानेवाले पेट्रोलियम पदार्थोकी सख्या भी उतनी ही अधिक होगी। परिष्करणीकी कार्य-प्रणालीका सिद्धान्त बहुत ही सीधा-सादा है। अलग-अलग पदार्थोके क्वथनाक भी अलग-अलग होते है। क्वथनाकके अनुसार ही पेट्रोलियम पदार्थोका निस्सारण किया जाता है। इस विधिको प्रभाजी आसवन (fractional distillation) कहते है। इस कार्य विधिके लिए परिष्करणीमे इस्पातके बडे-बडे प्रभाजक स्तम्भ (fractionation towers) होते है। इन स्तम्भोमे थोडे-थोडे अन्तर पर बडे-बडे तसलोकी थप्पियाँ लगी होती है। जिन पदार्थोका क्वथनाक उच्च होता है वे नीचेके तसलोमे ठण्डे होकर इकट्ठा होते है। निम्न ताप पर उबलनेवाले द्रव तेल ऊपरके तसलोमे इकट्ठा होते है। इन सब तेलोका पृथक्करण करनेके लिए इतने बडे प्रभाजक स्तम्भकी आवश्यकता होती है जिसमे ४० तसले रखे जा सके।

परिष्करणीके तीन प्रमुख सिद्धान्त है

(१) कच्चे तेलसे प्रभागो (fractions)का विना किसी पूर्व उपचारके सामान्य आसवन द्वारा पृथक्करण किया जाता है और समान प्रकारके कच्चे तेलसे प्राप्त होनेवाले द्रव्योकी मात्रा और उनके गुणधर्म भी निश्चित होते है।

(२) कच्चे तेलसे प्राप्त होनेवाले पदार्थोका उपर्युक्त विधिसे पृथक्करण करनेके वाद उनका अधिक परिष्करण करनेके लिए अन्य उपचार करना होता है, यथा रासायनिक पुनर्योजन (chemical reforming पुनरुत्पादन), उत्प्रेरक पुनर्योजन (catalytic reforming), वहुलीकरण (polymerisation) आदि क्रियाएँ।

(३) कम तादादमे खपत होनेवाले द्रव्यके अपव्ययको रोकनेके लिए उससे अन्य उपयोगी पदार्थ बनानेका प्रवन्ध भी किया जाता है।

पेट्रोलियमसे विविध रसायनक (पेट्रो-केमिकल्स) बनानेका उद्योग वर्तमान युगकी एक महान उपलब्धि है। दूसरे विश्वयुद्धके दौरान (१९३९-४५) परम्परागत पदार्थोसे रसायनक प्राप्त करनेमे पग-पग पर कठिनाइयाँ उपस्थित होने लगी तो नये रास्ते खोजनेकी आवश्यकता महसूस की गई। पेट्रोलियम इसके लिए एक आदर्श और अखूट स्रोत साबित हुआ। इससे दूसरे महायुद्धके बाद पेट्रो-केमिकल्स अथवा पेट्रोलियम जन्य रसायनक वनानेका उद्योग आश्चर्यजनक रूपसे विकसित हुआ। दूसरे महायुद्धसे पहले दवाइयाँ, कृत्रिम रवर, प्लास्टिक, विस्फोटक पदार्थ और अन्य रसायनकोका पितृ पदार्थ (मूलद्रव्य) कोयला था। अव उसकी जगह पेट्रोलियमने ले ली है। यह चमत्कार 'भजन' (cracking) नामक रासायनिक क्रियाकी खोजके कारण सम्भव हो सका। इस क्रियाके द्वारा पेट्रोलियमके उच्च अणुभारवाले हाइड्रोकार्वन टूटकर निम्न-अणुभारवाले हाइड्रोकार्वन वनते है, जो अधिक अभिक्रियाशील (re-active) होते है। गैसोलीन अथवा पेट्रोलका उत्पादन बढानेकी आवश्यकता अनुभव किये जाने पर इस क्रियाकी खोज की गई। दूसरी महत्त्वपूर्ण खोज थी वहुलीकरण क्रिया (polymerisation), जिसके द्वारा अधिक मात्रामे विशुद्ध गैसोलीनकी प्राप्ति सम्भव हुई। भजन द्वारा उत्पन्न होनेवाली प्रोपेन तथा व्यूटेन गैसोसे क्रमश प्रोपेलीन और व्यूटिलीन नामक महत्त्वपूर्ण रसायनक प्राप्त किये गए। इस प्रकार यह उद्योग धीरे-धीरे विकसित होता गया। आज तो पेट्रो-केमिकल उद्योग एक स्वतन्त्र और सर्वथा अलग उद्योग वन गया है।

सामान्यत पेट्रो-केमिकल उन रसायनकोको कहते है जो पेट्रोलियम अथवा प्राकृतिक गैस (natural gas) मूल वाले रसायनकोसे या तज्जन्य हाइड्रोकार्बनोमे बनाये जाते है। मूल हाइड्रोकार्बनकी गणना पेट्रोलियम केमिकलके अन्तर्गत की जा सकती है, परन्तु उससे उत्पादित नायलोन, कृत्रिम रबर आदि अन्तिम पदार्थोका समावेश पेट्रोलियम रसायनकोके अन्तर्गत नही किया जा सकता। इस तरहके वर्गीकरणसे कई बार भ्रान्तियाँ भी पैदा हो जाती है, क्योकि जिस रसायनकका अन्तिम पदार्थके रूपमे वर्गीकरण किया जा रहा है वह मध्यस्थ पदार्थ (intermediate product) भी हो सकता है और सम्भवत अन्तिम पदार्थ भी, उदाहरणार्थ 'टेरेलिन'का कृत्रिम रेशा बनानेमे काम आनेवाला रसायनक एथेलीन ग्लायकोल 'हिमायन रोधी' (anti-freeze)के रूपमे तो अन्तिम, परन्तु टेरेलिनकी दृष्टिमे केवल मध्यस्थ पदार्थ (रसायनक) है।

सिद्धान्तत क्रूड आयल अथवा प्राकृतिक गैससे सारे-के-सारे कार्बनिक पदार्थ बनाये जा सकते है। अभी हालमे, मनुष्यके खाद्य पदार्थमे नितान्त उपयोगी पोषक तत्त्व प्रोटीन तकको इससे बनानेमे सफलता मिल चुकी है। फ्रान्सके पेट्रोलियम विशेषज्ञ डॉ० शेगेलियरने इस दिशामे फ्रान्सकी सफलताकी घोषणा करते हुए यह राय जाहिर की है कि भारत अपनी प्रोटीन-सम्बन्धी आवश्यकताको इस विधिसे पूरा कर सकेगा। देहरादूनकी इडस्ट्रियल इन्स्टीट्यूट और जोरहाटकी नेशनल रीजनल रिसर्च लेबोरेटरीमे प्रति दिन ५० कि० ग्रा० प्रोटीन बनानेवाले दो प्रायोगिक सयत्रो (pilot projects)की स्थापना की जा चुकी है।

जोरहाटकी रीजनल रिसर्च लेबोरेटरीने यह दावा किया है कि तेलके कुएँकी मिट्टीके नमूनोके मोमी प्रयोगोको मनुष्यके खाद्यके लिए उपयोगी प्रोटीनमे परिवर्तित किया जा सकता है। इस तेलके किण्वन (fermentation)से उत्पादित पदार्थोमे ७० प्रतिशत तक प्रोटीन होनेका पता चला है। कई बार कच्चे मालसे अन्तिम पदार्थका उत्पादन करने तक या तो खर्च बहुत बैठता है या उसके व्यापारिक उत्पादनकी विधि बहुत जटिल हो जाती है। इसलिए पेट्रो-केमिकल पदार्थोका उत्पादन प्राय पेट्रोलियमके ऐसे ही प्रभागोसे किया जाता है जो प्रचुर मात्रामे कम मूल्य पर उपलब्ध हो सके और साथ ही व्यापारिक दृष्टिसे भी उनका उत्पादन किया जा सके।

मूल हाइड्रोकार्बनोके पितृ पदार्थोको यदि महत्त्वकी दृष्टिसे क्रमबद्ध किया जाए तो सबसे पहले आती है प्राकृतिक गैसे, उसके बाद तरल पेट्रोलियम गैस (liquefied petrolium gas-L P.G) और परिष्करणीकी गैसे तथा क्रूड आयलके विविध प्रभाग। मूल हाइड्रोकार्बनोकी सख्या अधिक नही है। उनमेसे कुछ प्रमुख नाम नीचे दिये जा रहे है

एसिटिलीन ओलेफीन वर्ग	ऐरोमेटिक वर्ग	पैरैफिन वर्ग	नैफ्थीन वर्ग
एसीटिलीन	बेनजिन	मेथेन	साइक्लो हेक्सेन
एथिलीन	टोल्यूइन	एथेन	
प्रोपेलीन	जाइलीन	प्रोपेन	
ब्यूटिलीन			
आइसो-ब्यूटिलीन			
ब्यूटाडाइन			

इनके अतिरिक्त परिष्करणीकी सामान्य क्रियाओसे उद्‌भवित पदार्थ भी 'पेट्रो-केमिकल' कहलाते है। इनमे इलेक्ट्रोड (विद्युदग्र) बनानेमे प्रयुक्त कोक, कैलसियम कार्बाइड, अपघर्षक (abrasives), रगोके शुष्कको (driers) मे प्रयुक्त नैफ्थिनिक अम्ल, कपडेके जन्तुनाशक अस्तरोमे प्रयुक्त किये जानेवाले पदार्थ, प्लास्टिक, विलायक, धुलाईमे काम आनेवाले अपमार्जक (प्रक्षालक) पदार्थ आदि गिनाये जा सकते है।

पेट्रो-केमिकल उद्योगके विकासमे महत्त्वपूर्ण योगदान करनेवाले ओलेफीन, एरोमेटिक, पैरैफिन और नैफ्थीन वर्गके रसायनोका अब हम क्रमश अध्ययन करेगे।

ओलेफीन वर्गके रसायनोका पेट्रोलियम अथवा प्राकृतिक गैसमे स्वतन्त्र अस्तित्व नही होता। उन्हे बनाना पडता है। गैसोलीन पर 'भजन' क्रिया करनेसे गैसीय स्वरूपवाले ओलेफीन प्राप्त होते है। परिष्करणीमे भजन-क्रियासे प्रोपेलीन, आइसो-ब्यूटिलीन और नार्मल-ब्यूटिलीन प्रचुर मात्रामे उत्पन्न होते है, एथिलीन कम मात्रामे उत्पादित होता है, ब्यूटाडाइन तथा आइसोप्रीन बहुत ही कम मात्रामे बनते है, और एसीटिलीन तो बिलकुल ही नही बनता। एथिलीनकी बात सर्वथा भिन्न है। जैव-रसायनकोके उत्पादनमे एथिलीन प्रमुख और मूल हाइड्रोकार्बन है। पेट्रो-केमिकल उद्योगमे लगभग ८० प्रतिशत एथिलीन उच्च ताप पर की जानेवाली भजन-क्रियाके द्वारा प्राप्त किया जाता है। इसके आदि पदार्थ एथेन और प्रोपेन है, परन्तु इस क्रियामे तरल पेट्रोलियम गैस—प्रोपेन तथा ब्यूटेन, नैफ्था और गैसके तेलोका भी उपयोग किया जाता है।

यदि केवल एथिलीन ही बनाना हो तो एथेन और उससे अल्प मात्रामे प्रोपेनका मूल पदार्थोके रूपमे उपयोग किया जाता है। ब्यूटाडाइन, आइसोप्रीन, गैसोलीनके प्रभाग, एरोमेटिक पदार्थ, ओलेफीनके जटिल पदार्थ (complexes) और अलकतरा (कोलतार) बनानेके लिए भी अधिक भारी द्रव्योसे आरम्भ करना चाहिए। गैसीय पदार्थोके उत्पादनके लिए द्रव पदार्थोको बार-बार भजक भट्ठीमे उपचारित करना पडता है। भट्ठीसे भजित होकर बाहर निकलनेवाले पदार्थोमे मेथेनसे लेकर ब्यूटाडाइन तक सभी प्रकारके हाइड्रोकार्बनोका मिश्रण होता है और तारकोल जैसे भारी बहुलक (polymer) पदार्थ उसमेसे पृथक् हो जाते है। गैसोको सीपीडित (compress) करके उन्हे शून्य अश फे० तक ठण्डा किया जाता है और उसके बाद अवशोपित्र (absorber tower) मे पम्पके द्वारा पहुँचा दिया जाता है। इस ताप पर भी गैसीय रूपमे रहनेवाले मेथेन और हाइड्रोजनको अवशोपित्रके ऊपरले भागमेसे बाहर निकाल लिया जाता है, एथिलीन और भारी गैसे अवशोपित्रके निचले भागमे प्रवहमान द्रव-तेलोमे अवशोपित्र रहती है, उन्हे उनमेसे पृथक् कर लिया जाता है।

एथेन और प्रोपेनको सयुक्त करके अलग भट्ठीमे भजन करनेसे 'एथिलीन' बनाया जा सकता है।

एथिलीनसे बननेवाले कुछ उपयोगी रसायनकोका वशवृक्ष देखने योग्य है, जो इस अध्यायके अन्तमे दिया गया है।

बहुलक (पोलिमर) गैसोलीन बनानेके लिए बहुत समयसे प्रोपेलीन काममे लाया जा रहा है। आइसो-प्रोपेल ऐलकोहल, एसीटोन, अपमार्जक (detergents) पदार्थोके लिए आवश्यक पोलिमर (बहुलक) डो-डेसिल बेनजिन और अन्य पेट्रो-केमिकल बनानेमे भी इसका उपयोग किया गया है।

व्यूटिलीन चार प्रकारका होता है व्यूटिलीन-१, व्यूटिलीन सिस-२, और ट्रान्स-२ तथा आइसो व्यूटिलीन। पहले तीन समानधर्मी है। आइसो व्यूटिलीनके गुण विल्कुल भिन्न है और वह अधिक क्रियाशील भी है। आइसो व्यूटिलीनका आइसोप्रीन (डाइ-ओलेफीन)के साथ सह-बहुलीकरण (co-polymerisation) करके पोली व्यूटिलीन वनाया जा सकता है। इससे कृत्रिम रवर वनता है। अन्य मध्यस्थ रासायनिक पदार्थोंके लिए भी आइसोव्यूटिलीन महत्त्वपूर्ण मूल पदार्थ है। प्रोपेलीनसे प्राप्त होनेवाला सबसे महत्त्वपूर्ण पदार्थ आइसोप्रोपेल ऐलकोहल है, जो विलेयनो, हिमायनरोधियो, आदिका उत्पादन करनेके लिए वहुत ही उपयोगी है। उसके जलीय अंशको पृथक् करके एसीटोन नामक पदार्थ वनाते है। यह एसीटोन एसीटेट रेयन और प्लास्टिक वनानेमे वडा उपयोगी है। प्रोपेलीन ट्राइमर (नोनेन) और प्रोपेलीन ट्रेट्रामर (डो-डेसेन) प्रोपेलीनके अल्प अणुभारवाले बहुलक पदार्थ हैं। इन दोनोसे अपमार्जक (प्रक्षालक) पदार्थ वनते है। प्रोपेलीन आक्साइड पर 'क्लोरोहाइड्रोनेशन' नामक क्रिया करनेसे प्रोपेलीन ग्लायकोल और ड्राइप्रोपेलीन ग्लायकोल नामक पदार्थ वनते है, जिनमे अन्तमे 'पोलीयुरेथेन फोम' वाला प्लास्टिक वनाया जाता है। प्रोपेलीन पर क्लोरिनकी क्रिया करनेसे एलिल क्लोराइड नामक रसायनक वनता है, जिससे एलिल ऐलकोहल और एपिक्लोर हाइड्रिन नामके रसायनक वनाये जा सकते है, इनसे ग्लीसरीन और इपोक्सि प्रकारके प्लास्टिक वनते है। प्रोपेलीन पर आक्सीजनकी सीधी क्रिया करनेसे 'ऐकिलन' वनता है, जो एकिलिक वर्गके वस्त्र-रेशे और प्लास्टिक वनानेमे काम आनेवाला मूल पदार्थ है। प्रोपेलीनसे अभी हालमे एक और महत्त्वपूर्ण पेट्रो-केमिकल वनाया गया है, जो पोलीप्रोपेलीनके नामसे विख्यात है। इससे सर्वथा नये ही ढगके वस्त्र-रेशोका निर्माण किया जाता है।

व्यूटाडाइनका व्यापक उपयोग कृत्रिम रवर, प्लास्टिक और नायलोन वनानेमे किया जाता है। एथिल ऐलकोहल पर भाप्प-भजन-क्रिया (steam cracking) करनेमे व्यूटाडाइन उत्पन्न होता है। व्यूटेनसे व्यूटिलीन वनाकर सपरिवर्तन प्रक्रिया (conversion process) द्वारा उसे व्यूटाइनमे रूपान्तरित किया जा सकता है।

एथिलीनकी तरह एसीटिलीन भी कई रसायनकोका जनक है। उससे वाइनिल क्लोराइड (प्लास्टिक), नियोप्रीन (कृत्रिम रवर), ट्राइक्लोरो एथेलीन (विलेयन), एकिलोनाइट्रिल (प्लास्टिक ओरलोन, डाइनेल, एकिलान) आदि वनाये जा सकते है। परन्तु सामान्य परिष्करणीमे इनका उत्पादन वहुत कम होता है, इसलिए इन पदार्थोंको वनानेके लिए खास तरहका प्रवन्ध करना पडता है। पेट्रोलियमसे एसीटिलीन वनानेके लिए गैसीय पैरैफिन हाइड्रोकार्वनका क्षण-भरके लिए अत्यन्त उच्च ताप दिया जाता है।

इनके अतिरिक्त ऊपरकी सूचीमे पेण्टेन, साइक्लोहेक्सेन, हेप्टेन आदि कई पेट्रोलियम रसायनकोका नाम जोडा जा सकता है। प्रतिदिन नये-नये रसायनकोका नाम जुडनेसे यह सूची विस्तृत होती जाती है। एक भी ऐसा जैव-रसायनक नही है जो पेट्रोलियमसे वनाया न जा सके। पेट्रोलियमका महत्त्व एक इसी वातसे प्रतिपादित हो जाता है। यह निर्विवाद है कि पेट्रोलियम और उसके रसायनक भविष्यमे महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करेगे। विश्वमे खनिज तेलका उपभोग प्रतिवर्ष साढे पाँच प्रतिशतके हिसावसे वढता जाता है, इसलिए दुनियामे अधिकाधिक खनिज तेल प्राप्त करनेके प्रयत्न भी निरन्तर होते रहेगे, और वह प्रत्येक राष्ट्रके स्वावलम्वनका मूलमन्त्र वन जाएगा।

एथिलीनका वंश-वृक्ष

(एथिलीनसे बननेवाले कुछ उपयोगी रसायनक)

एथिलीन

- इथेनाल
  - एसीटाल्डिहाइड
    - ऐसेटिक अम्ल
      - ऐसेटिक एन्हाइड्राइड
    - क्लोरल
      - डी० डी० टी० (जन्तु नाशक)
- एथिलीन आक्साइड
  - एथिलीन ग्लायकोल
    - हिमायनरोधी द्रवपदार्थ
    - टेरेलिन वस्त्र-रेशे
- पोलीएथिलीन
  - फिल्म ओर भिन्न-भिन्न प्रकारके प्लास्टिक पदार्थ
- इथाइल वेनेजिन
  - स्टाइरिन
    - पोली-स्टाइरिन
      - रंग और अस्तरके इमलशन (पायस)
      - प्लास्टिक पदार्थ
- इथाइल क्लोराइड
  - T E L टेट्राइथाइल लेड-एटिनोक पदार्थ
  - इथाइल सेल्युलोज (फिल्म, लेकर आदि)
- एथिलीन डाईक्लोराइड
  - वाइनिल क्लोराइड
    - पोली वाइनिल क्लोराइड
      - पी० वी० सी० प्रकारके प्लास्टिक
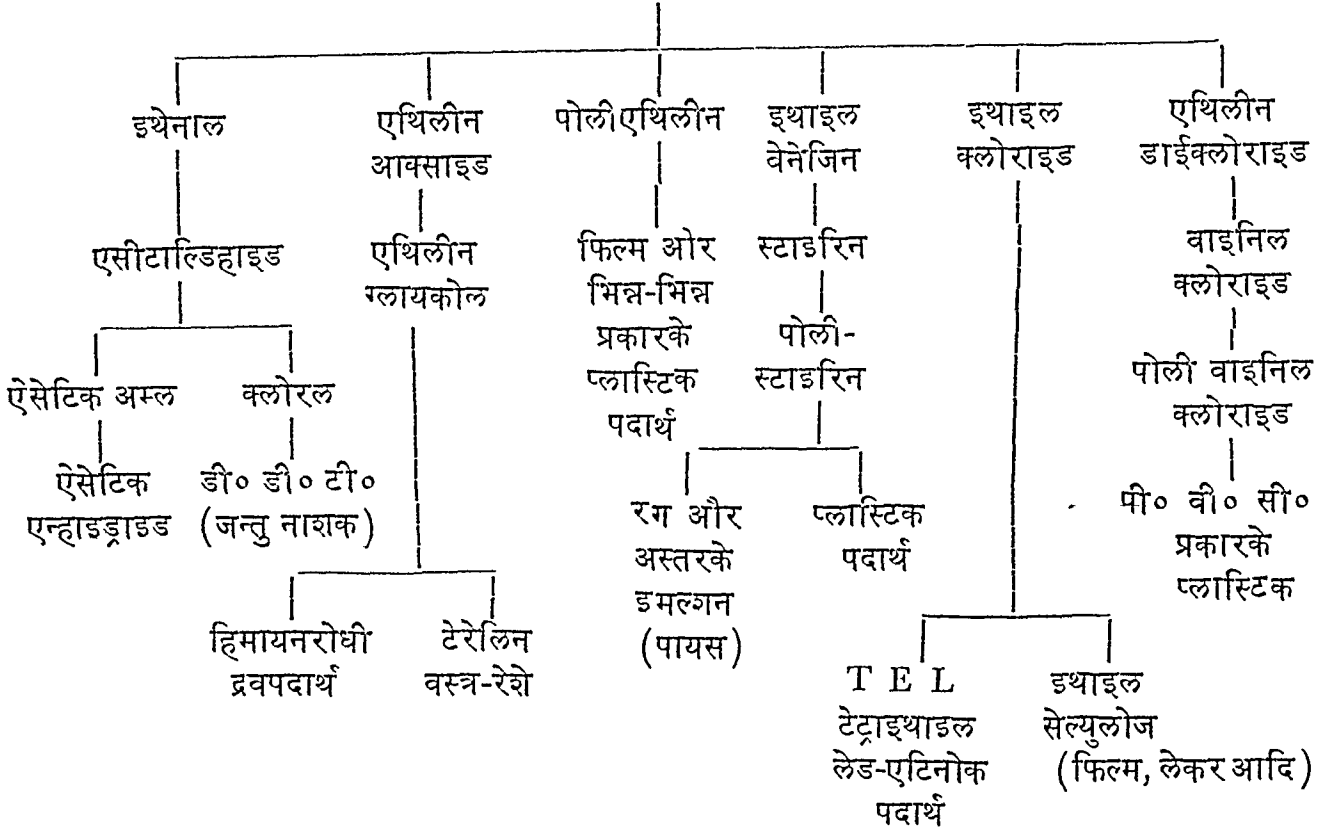
प्रोपेलीनका वंश-वृक्ष

(प्रोपेलीनसे बननेवाले कुछ उपयोगी रसायनक)
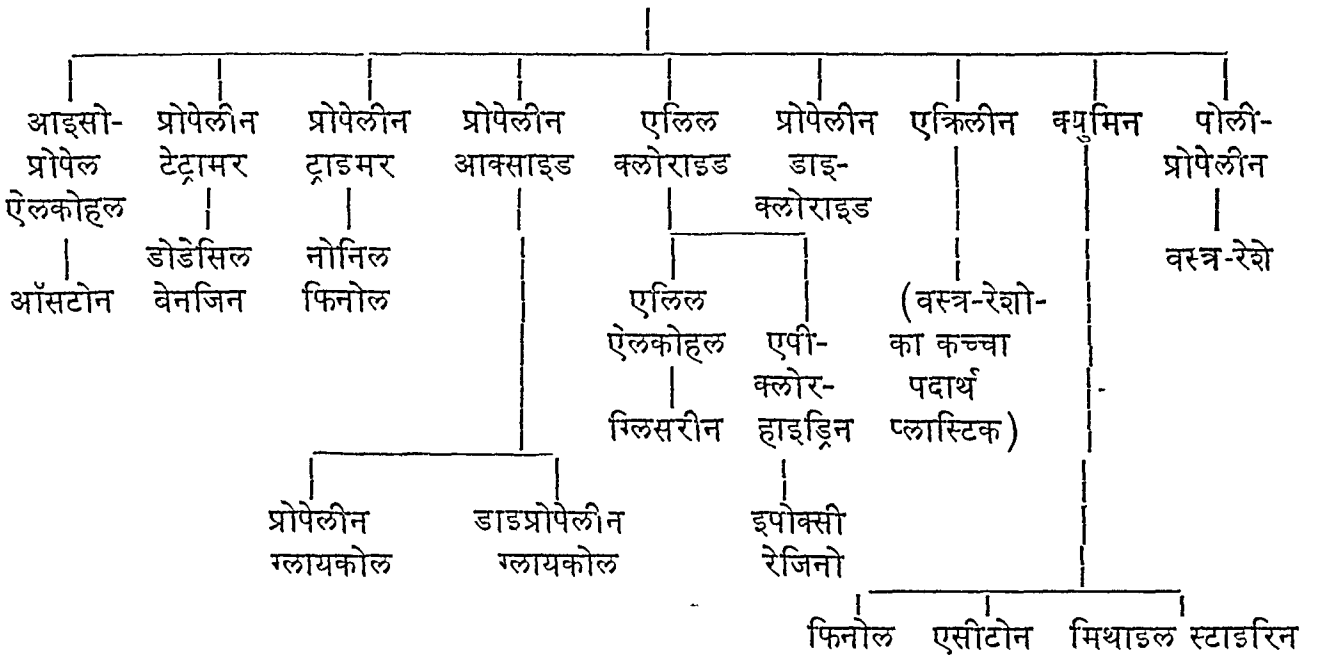
इनके अतिरिक्त दूसरे और भी पेट्रोलियम रसायनक, जैसे कि पेण्टेन, साइकलहैक्सेन आदि।

एरोमेटिक द्रव्योका वंश-वृक्ष

- वेनजिन
  - इथाइल वेनेजिन → स्टाइरिन कृत्रिम रवर
  - क्युमिन → मिथाइल स्टाइरिन पोली स्टाइरिन (प्लास्टिक)
  - डोडेसिल वेनजिन → डिटरजेण्ट (डेट) धुलाईका चूर्ण
  - फिनोल → फिनोल किस्मके प्लास्टिक
  - मेलिक एन्हाइड्राइड
  - एडिपिक अम्ल → नायलोन वस्त्र-रेशे
  - वेनजिन हेक्सा क्लोराइड (BHC) जन्तुनाशक
- टोल्युइन
  - ट्राइनाइट्रो टोल्युइन (TNT) विस्फोटक
  - विलेयन
  - टोल्युइन डाइआइसोसाइनेट्स → पोली युरेथेन (फोम प्लास्टिक)
- जाइलिन
  - पैराजाइलिन → टेरेफथेलिक अम्ल → टेरेलिनके रेशे,
  - मेटाजाइलिन → आइसोफ्थेलिक अम्ल → प्लास्टि साइजर
  - आर्थोजाइलिन → थेलिक एन्हाइड्राइड → प्लास्टि साइजर एस्टर आदि
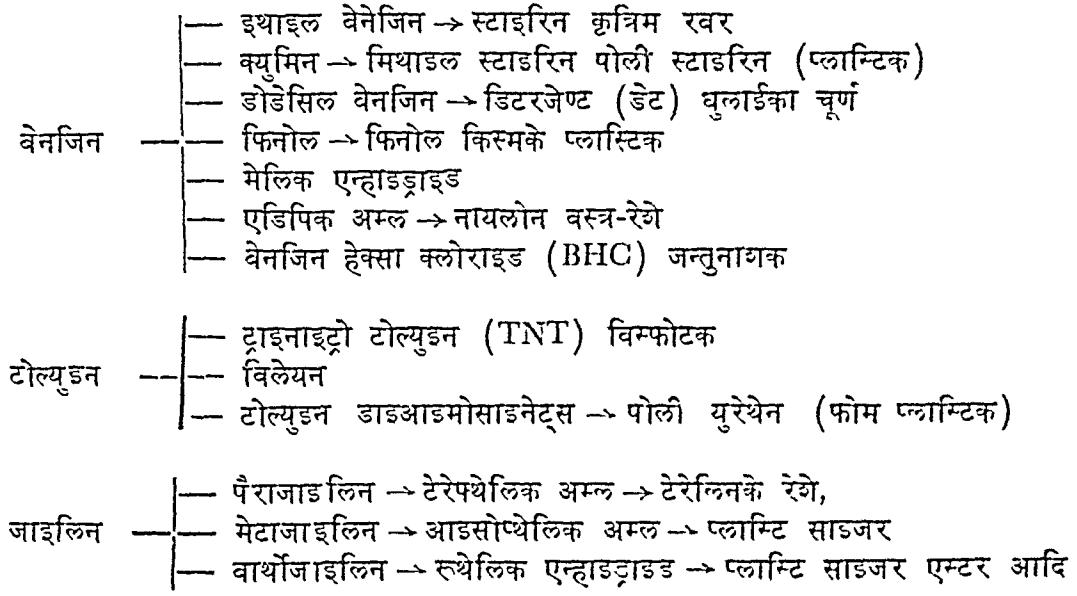
पैरैफिन द्रव्योका वंश-वृक्ष
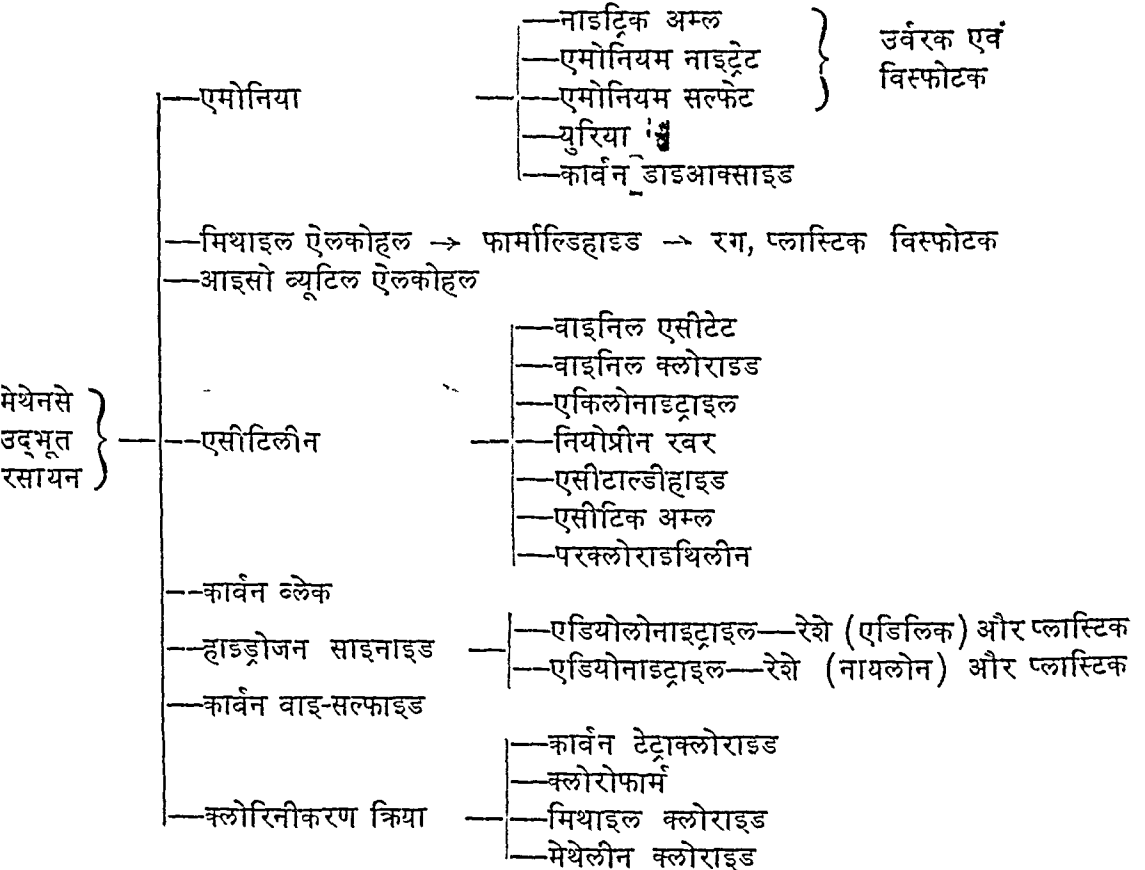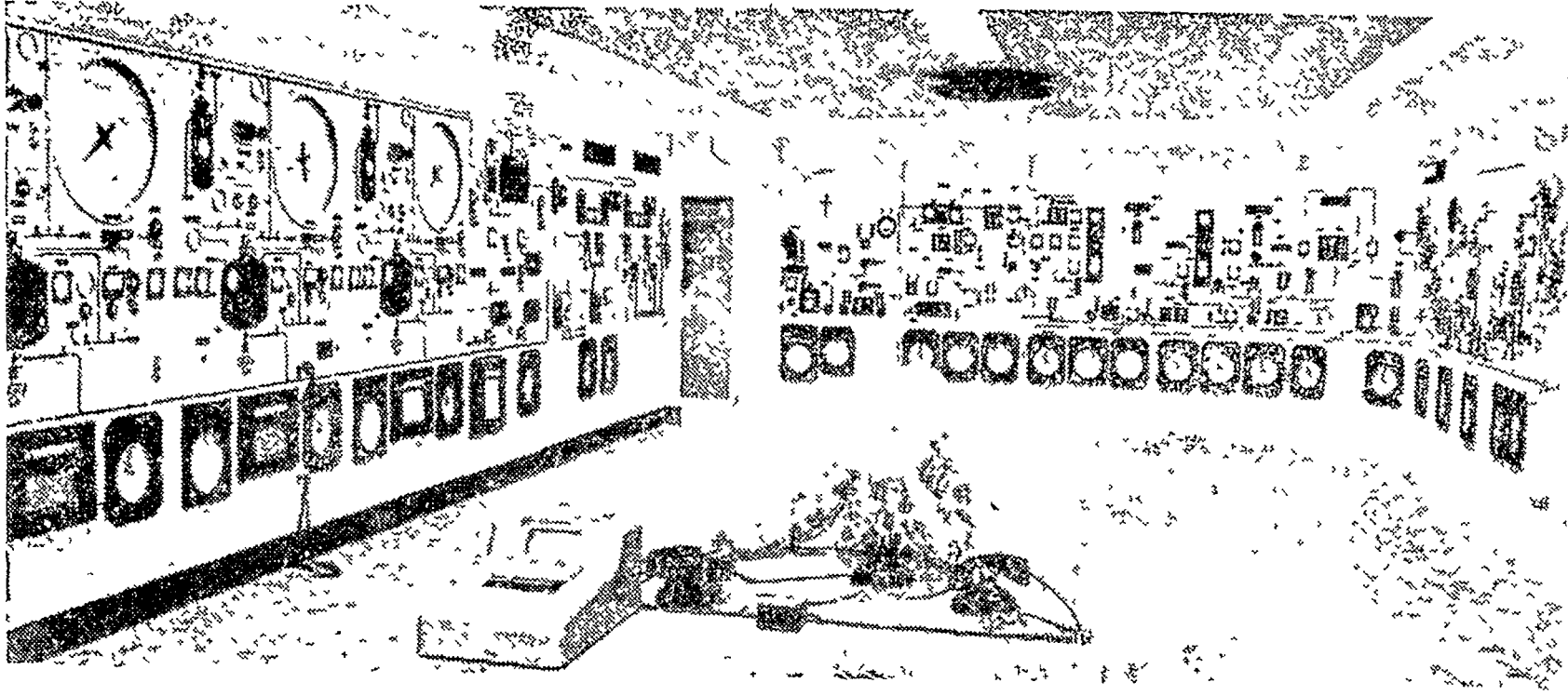
ई० आई० डुपोण्ट केमिकल कारपोरेशनके नियन्त्रण-कक्षसे एक ही व्यक्ति द्वारा कारखानेका सचालन।

खंड : ४

प्रतिदिन १,५०,००० जूतोका उत्पादन

११ : रबर

पृथ्वी पर मनुष्यने भिन्न-भिन्न समयमे जिन साधनोका उपयोग किया उनके आधार पर इतिहासकारोने मानव जीवनके युग निर्धारित किये है। उन युगोमे पाषाण-युग, लौह-युग, कास्ययुग प्रसिद्ध है। लेकिन पिछले डेढ सौ वर्षोमे रबरका उपयोग बहुत महत्त्वपूर्ण हो उठा है।

सोलहवी शताब्दीमे जब स्पेनी नाविक मध्य और दक्षिण अमरीका पहुँचे तो वहाँ उन्होने रबरके पेडोकी खोज की। प्राकृतिक रबरके सम्बन्धमे सबसे पहला उल्लेख सेविलमे प्रकाशित "Valdes La historia Natural Y general de las Indias" नामक पुस्तकमे मिलता है। इस पुस्तकमे रबरकी गेदसे खेले जानेवाले एक खेल 'बेटि'का उल्लेख किया गया है, जो आधुनिक टेनिससे मिलता-जुलता है। इस खेलका वर्णन करते हुए कहा गया है कि रबरकी गेद गुब्बारेसे भी ऊँची उड सकती है। अब इस बातको निश्चित रूपसे स्वीकार कर लिया गया है कि दक्षिण अमरीका-मे बसे हुए स्पेनवासियोने कपडे और जूते तथा पहननेकी अन्य चीजे बनानेमे रबरका अच्छा उपयोग किया था। परन्तु यूरोपवालोको ठेठ अठारहवी शताब्दी तक रबर प्राप्त नही हुआ था और न उन्हे इसके बारेमे कोई खास जानकारी ही थी। १७३६मे फ्रान्सकी विज्ञान-अकादेमीने अपने कुछ सदस्योको विषुववृत्त पर मध्याह्न समयका अकन और सूर्यवेध निश्चित करनेके लिए दक्षिण अम-रीकाके पेरू नामक देश भेजा था। इन लोगोने दक्षिण अमरीकाका व्यापक दौरा किया और रबर-के बारेमे काफी जानकारी प्राप्त की थी। रबरके वृक्षसे निकलनेवाला दूधके रगका गाढा द्रव तो यूरोप भेजा नही जा सकता था, परन्तु उससे बनी हुई कुछ चीजे भेजनेमे उन्हे जरूर सफलता मिली थी। आगे चलकर जब टर्पेण्टाइनके बारेमे यह खोज हुई कि उसमे रबरके विलायकके गुण है तो रबर-को उसमे घुलाकर कपडे पर चढा दिया जाता था और विलायकके उड जाने पर रबरका लेप कपडे पर ठीकसे चिपका रह जाता था। इस तरह रबरका कपडा बनना आरम्भ हुआ और वह देश-विदेश
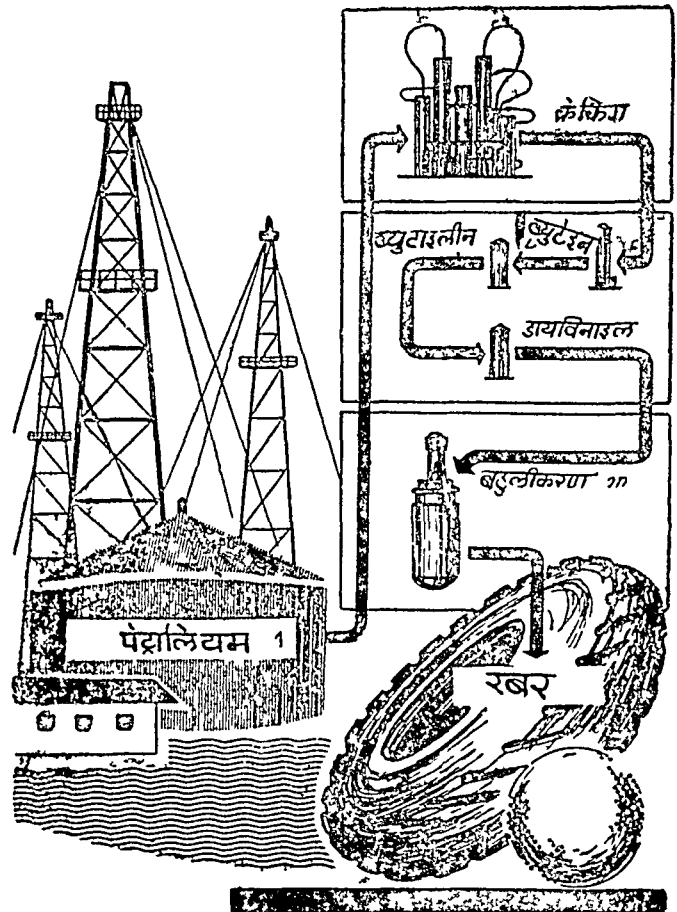
भेजा जाने लगा। १८१९मे ग्लासगो (इग्लैण्ड)मे चार्ल्स मैकिण्टॉशने जलसह (वाटरप्रूफ) कपडा बनाया और उसे एकस्व (पेटेंट) करवाकर १८२३मे मैंचेस्टरमे कारखाना खोला। उसी समय टॉमस हेनकॉक नामक व्यक्तिने मैकिण्टॉशसे अनुज्ञापत्र (लाइसेन्स) लेकर रवरके पट्टे, बटुए, मोजे आदि वनाने और वेचनेका उद्योग आरम्भ किया। इन चीजोको वनाते समय जो टुकडे और कत-रने वची रह जाती थी उनका उपयोग करनेके लिए उसने सचर्वण (गुंथाई) करनेवाला एक यत्र वनाकर नरम प्लास्टिक-जैसा पदार्थ तैयार किया और उससे नये आकार-प्रकारकी चीजे वनाई। गुंथाई-की क्रियाको वैज्ञानिक भापामे मेस्टिकेशन (mastication) या सचर्वण कहते है। सचर्वणकी इस क्रियाके ही द्वारा आधुनिक रवर उद्योगकी नींव डाली गई। इस विधिसे उत्पादित पदार्थ (रवर)को मनचाहा आकार प्रदान किया जा सकता है। इसका कारण यह है कि सचर्वणमे रवरका अणुभार अत्यधिक कम हो जाता है।

उसके वाद १८३९मे, अमरीकामे, चार्ल्स गुडइयरने यह खोज की कि यदि रवरको गन्धकके साथ गरम किया जाए तो वह काफी ऊँचे ताप पर भी स्थिति स्थापकता (लचीलेपन)के अपने गुणको वनाये रख सकता है और विलायकोंके प्रति उसकी प्रतिरोध क्षमता भी ज्यादा वढ जाती है। फिर टॉमस हेनकॉकने रवरको गन्धकके साथ तापित करनेकी विधि खोज निकाली और उसके एक मित्र विलियम व्रोकेण्डोने उस विधिका नामकरण किया—'वल्केनाइजेशन' (गुण वृहण या वल्कनीकरण)। वल्कन रोमनोके अग्निदेवका नाम है।

वल्कनीकरणकी क्रियामे गन्धककी मात्रा ५० प्रतिशत वढाने पर गुडइयर और हेनकॉक-को एक कडा पदार्थ प्राप्त हुआ जो आजकल एवोनाइट, वल्केनाइट अथवा हार्ड रवरके नामसे जाना जाता है। एवोनाइटकी खोजको रवर उद्योगके इतिहासमे एक सीमाचिह्न माना जाता है, क्योंकि जो सवसे पहला उष्ण कठोर प्लास्टिक उत्पन्न किया गया वह एवोनाइट ही था।

रवरका 'रवर' नाम इसलिए पडा कि जोसेफ प्रिस्टले नामक अग्रेजी वैज्ञानिकने अपनी एक पुस्तकमे पेन्सिलकी लिखावट मिटानेके लिए इसका उल्लेख रवर (rub=मिटाना, rubber=मिटाने-वाला) शब्दके रूपमे किया था। फ्रासीसी भापामे इसका नाम 'के ओत्युक' है, जिसका अर्थ होता है 'रोनेवाला पेड'। आजका विज्ञान रवरको 'इलेस्टोमर' कहता है।

रवरके वृक्षका मूलस्थान दक्षिण अमरीका है। इसका शास्त्रीय (लैटिन) नाम 'हेविआ व्राज़िलिएन्सिस' है। इसकी छाल पर चीरे लगानेसे दूध-जैसा गाढा द्रव निकलता है। पेड पर थोडे-थोडे फासले पर प्याले वाँधकर अथवा चीरे लगाकर इस द्रवको इकट्ठा किया जाता है। व्राजिल की अमेजान नदीकी घाटीमे सवसे पहले इन वृक्षोका पता चला था। उसके वाद तो इनके वीजो-को सुदूर-पूर्वमे ले जाकर वहाँ भी उगाया गया। अब तो जावा, सिगापुर, वर्मा, श्रीलका आदिमे इन वृक्षोके वगीचे लगाये गए है।

१९वी शताव्दीमे कुछ दूरदर्शी व्यक्तियोने (जिनमे हेनकॉक भी था) अन्य स्थानोमे रवरके वृक्षोकी खेती करनेके लिए अमेजानकी घाटीसे इनके वीजोको वाहर भेजना शुरू किया। १८७५मे लन्दनके रायल वोटेनिकल उद्यानकी ओरसे हेनरी विक्हामने इस वृक्षके ७० हजार वीजोकी तस्करी की थी। (इस कारगुजारीके लिए व्रिटिश सरकारने उसे 'सर'की उपाधिसे विभूषित किया था!) क्यू उद्यानमे इसके पौधे तैयार कर मलाया, असम, वर्मा, श्रीलका और सुदूरपूर्वके अन्य देशोमे रवरके

बगीचे लगाये गए। इसके परिणामस्वरूप आज दक्षिण-पूर्वी एशियामे विश्वका ९० प्रतिशत रबर पैदा किया जाता है। १९४२मे दूसरे विश्वयुद्धके दौरान जब जापानने सारे दक्षिण-पूर्वी एशिया पर अधिकार कर लिया तो मानो अंग्रेजोको उनकी तस्करीकी सजा मिल गई।

१९०० ईसवीसे रबरके वृक्ष लगानेका अभियान आरम्भ हुआ था और आज प्राकृतिक रबरका विश्व-उत्पादन २० लाख टनसे भी अधिक हो गया है।

१८९५मे मोटर गाडियोमे रबरके हवा भरे (न्युमेटिक) टायरोका उपयोग आरम्भ हुआ, तबसे रबरकी खपत लगातार बढती चली गई। कालान्तरमे ये दोनो उद्योग एक-दूसरेके पूरक हो गए मोटर कारके उत्पादनके साथ रबरका उत्पादन बढा और रबर उद्योगके विकासके साथ-साथ टायरोकी सख्या भी बढने लगी। विश्वमे रबरका जितना उत्पादन होता है उसका आधा मोटर-उद्योगमे काम आ जाता है।

अब रबरके रसायन-शास्त्रको भी देख लिया जाए। रबर क्या है, उसकी गठन किस प्रकारकी है, उसके गुणो और परमाणु सरचनामे पारस्परिक क्या सम्बन्ध है, आदि प्रश्न सबसे पहले गुडइयर और हेनकॉकके रबर-सम्बन्धी प्रयोगो एव परीक्षणोके समय उपस्थित हुए थे।

१८६०मे ग्रेविल विलियम्स नामक वैज्ञानिकने रबरके विज्ञान पर पहले-पहल प्रकाश डाला। उसने रबर आक्षीर (लेटेक्स——रस)का आसवन करके 'आइसोप्रीन' नामका हाइड्रोकार्बन प्राप्त किया। इस आइसोप्रीनमे कार्बनके पाँच और हाइड्रोजनके आठ परमाणु होते है। हाइड्रोजनका परमाणु एक सयोजकतावाला होनेके कारण वह एक बारमे केवल एक सयोजकतावाले परमाणुसे सयोग कर सकता है जबकि कार्बनकी सयोजकता चार होनेके कारण वह एक सयोजकतावाले एक, दो, तीन और चार परमाणुओसे सयोजन कर सकता है। C_5H_8 सूत्रवाले रासायनिक यौगिकमे कार्बनके पॉच परमाणुओके साथ हाइड्रोजनके आठ परमाणुओके सयोजनकी अनेक सम्भावनाएँ हो सकती है और उनमे एक सरचना प्राकृतिक रबरके अणुओकी भी है, जबकि दूसरे सभी रासायनिक पदार्थ भिन्न प्रकारके है। C_5H_8 सूत्र आइसोप्रीनके साथ-साथ प्राकृतिक रबरका सूत्र भी है। परन्तु रबर और आइसोप्रीन एक ही प्रकारके पदार्थ नही है, क्योकि आइसोप्रीन जहाँ रगहीन द्रव है, प्रत्यास्थ (स्थिति स्थापक) ठोस पदार्थ है। रबरका आसवन करनेसे आइसोप्रीन प्राप्त होता है, इससे रसायन-शास्त्रियोको लगा कि रबरके अणुओकी श्रृखलामे आइसोप्रीनके अणु जुडे हुए होगे। रबर और आइसोप्रीनकी रासायनिक सरचना इस प्रकार है

प्राकृतिक रबर

$$\left[\begin{array}{ccccccccccccc}
 & & H & & & & & & H & & & & \\
 & & | & & & & & & | & & & & \\
H & & H-C-H & & & H & H & & H-C-H & & & H & \\
| & & | & & & | & | & & | & & & | & \\
-C & - & C & = & C- & C- & C & - & C & = & C- & C- & \\
| & & & & | & | & | & & & & | & | & \\
H & & & & H & H & H & & & & H & H &
\end{array}\right] \times n$$

अथवा

$$\left[-CH_2-\overset{\displaystyle CH_3}{\overset{|}{C}}=CH-CH_2-CH_2-\overset{\displaystyle CH_3}{\overset{|}{C}}=CH-CH_2-\right] \times n$$

$$\begin{array}{ccccccc} & & H & & & & \\ H & H- & C & -H & & & H \\ | & & | & & & & | \\ C & = & C & - & C & = & C \\ | & & & & | & & | \\ H & & & & H & & H \end{array}$$

अथवा

$$CH_2 = \overset{\displaystyle CH_3}{\overset{|}{C}} - CH = CH_2$$
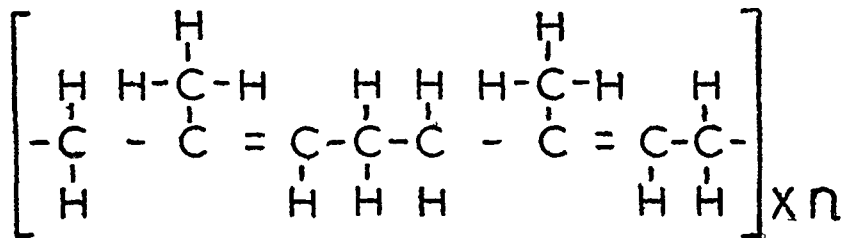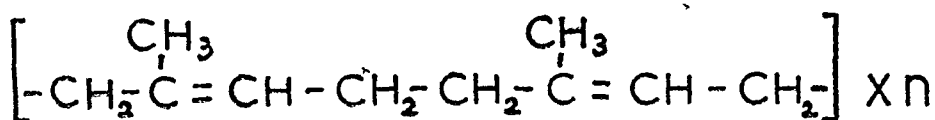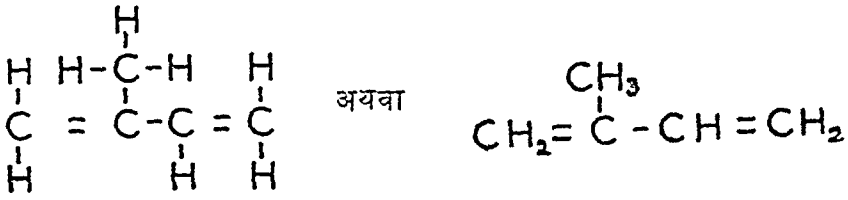
प्राकृतिक रवर ओर आइसोप्रीनमे अन्तर यह हे कि प्राकृतिक रवरमे १०००मे ४०,००० आइसोप्रीन एकाकोकी पुनरावृत्ति (repeating units) हुई रहती हे। जहाँ-जहाँ कार्वनके निवन्ध (double bond) होते हे वहाँ उस पर हवामे रहनेवाला आक्सीजन क्रिया करता है, इसीलिए 'रवर' और 'गन्धक'के वीच वल्कनीकरणकी क्रिया हो सकती हे।

इन अणुओके सम्बन्धमे महत्त्वपूर्ण तथ्य यह है कि यदि इन्हे खुला रखा जाए तो इनकी शृखला आपसमे उलझ जाती है। मालाओकी अनेक लडियाँ यदि खुली फेक दी जाएँ तो वे आपसमे कैसी उलझ जाती है? साथवाली आकृतिमे एक ऐसा ही उलझाव दिखाया गया हे।
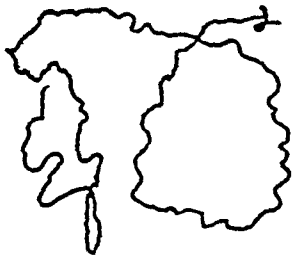
रवरका अणु

इस उलझावके दोनो सिरोको यदि खीचा जाय तो अणु लम्बा हो जायगा। रवरमे प्रत्यास्थताके गुणका यही कारण हे।

ऐसे विस्तारवाले अणुको प्रयोगशालामे वनाना मुश्किल ही है। लेकिन पिछले तीस-वत्तीस वर्षकी अवधिमे इस प्रकारके कई अणुओका सृजन मनुष्यके हाथो हुआ है, इसलिए अव हम मानव-निर्मित रवरकी ओर मुडते है।

१८७९मे गुस्ताव वुशार्डट नामक वैज्ञानिकने आइसोप्रीन और हाइड्रोक्लोरिक अम्लकी पारस्परिक क्रियाके द्वारा रवर-जैसा पदार्थ वनाया। तीन वर्ष वाद, १८८२मे, इग्लैण्डमे विलियम टिल्डने टर्पेण्टाइनमे आइसोप्रीन वनाया और फिर उससे रवर-जैसा पदार्थ उत्पादित किया। १९१०मे एस० वी० लेवेदेव नामक रूसी रसायनज्ञने व्यूटाडाइनसे रवर वनाया। रवरसे सम्बन्धित सवसे साधारण रासायनिक द्रव्य व्यूटाडाइन है। व्यूटाडाइन अपने ही अणुओको इकट्ठा कर लम्वी शृखला वनाता है। इस क्रियाको वहुलीकरण अथवा पोलीमेराइजेशन क्रिया कहते है। 'पोली' मूलत ग्रीक भाषाका शब्द है, जिसका अर्थ 'एकसे अधिक' होता है। दो भिन्न-भिन्न अणुके सयुक्त होने पर उस पदार्थको 'सह वहुलक' अथवा 'को-पोलीमर' कहते है।

प्राकृतिक रवर वडा ही अनोखा पदार्थ है। परन्तु मानव-निर्मित रवर कई वातोमे प्राकृतिक रवरसे भी उत्कृष्ट होता है। प्राकृतिक रवर आसानीसे जलता है, लेकिन ऐसा भी मानव-निर्मित रवर वनाया गया है, जो आगमे जरा भी नही जलता। प्राकृतिक रवर तेल और स्निग्ध (चिकने) पदार्थ लगनेसे फूल जाता है, मानव-निर्मित रवरको ऐसे प्रभावोसे मुक्त रखा जा सकता है। इतना ही नही, मानव-निर्मित रवर विविध रगो और रगीन कान्तियोमे भी वनाया जा सकता है। मानव-निर्मित रवर प्राकृतिक रवरसे एक हजार गुना अधिक टिकाऊ होनेके कारण अभेद्य (impermeable)

(कोयला और चूनामेसे रवर)
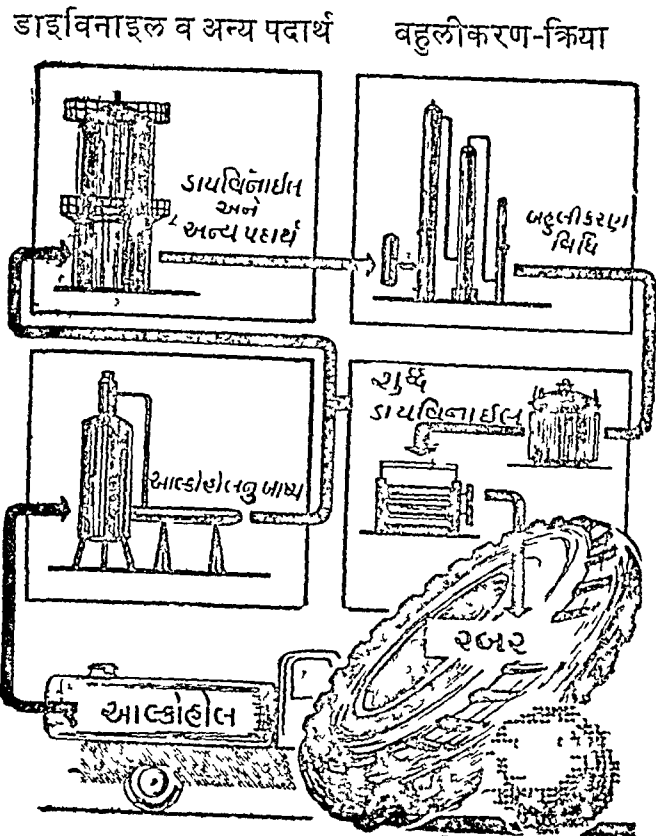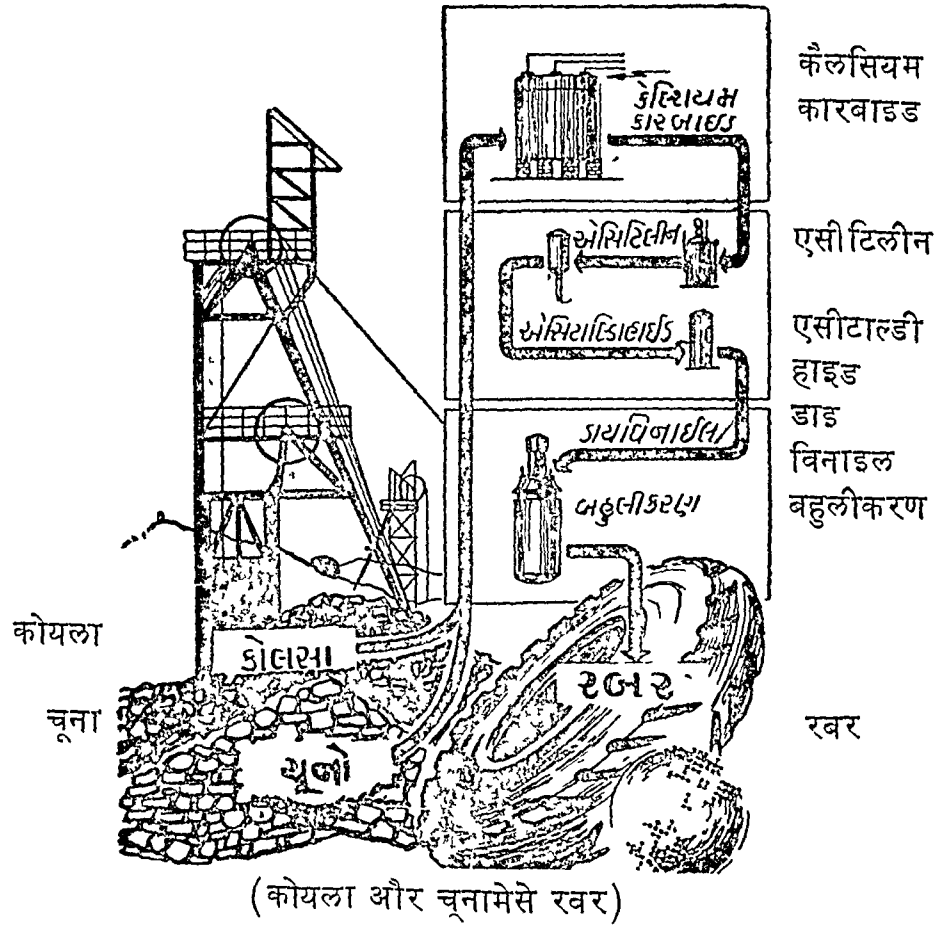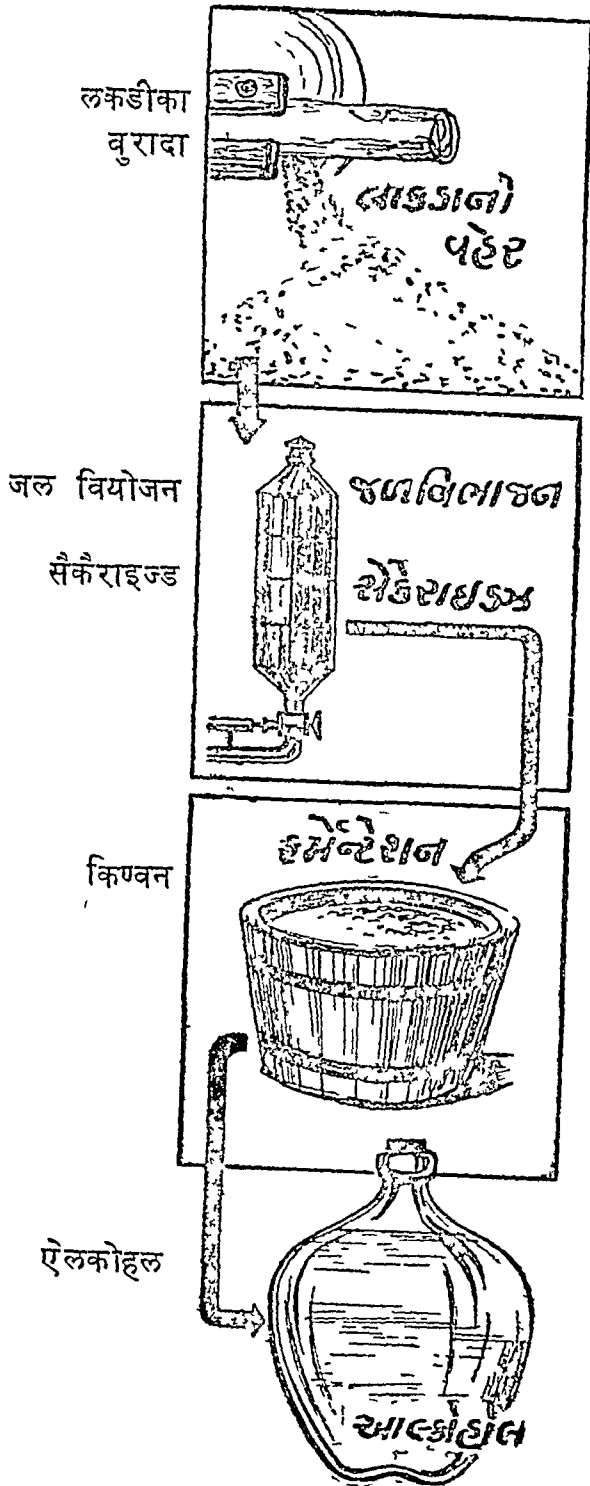
लकडीके बुरादेसे रवर

रह सकता है। मनुष्यने ऐसा रवर भी वनाया है जिस पर ओजोन गैसका कोई असर नही होता। प्राकृतिक रवरसे आजकल पोलीयुरेथेन किस्मके रवरसे वने टायर अधिक मजबूत होते है। वह समय दूर नही है जब एक लाख मील तक चलनेके वाद भी न घिसनेवाले टायर वनने लगेंगे। इसका अर्थ यह हुआ कि सामान्य कोटिकी मोटरकारकी जिन्दगी तक उसके टायर भी काम देते रहेंगे।

मानव-निर्मित रवर हाइड्रोकार्वन वर्गके रसायनोसे वनी हुई इमारत हैं। १९०९से १९१२ तककी अवधिमे जर्मनीमे आइसोप्रीन वनाया गया और उससे जर्मन रसायन-विदोंने इतनी अधिक मात्रामे रवर तैयार किया कि वहाँके वादशाह कैसरकी मोटर गाडीके टायर उस रवरके वनाये गए थे। उसके वाद प्रथम महायुद्धके दौरान जर्मनीको प्राकृतिक रवर मिलना वन्द हो गया तो जर्मनोंने उसके स्थान पर डाइ मिथाइल व्यूटाडाइन नामक रसायनकसे रवर वनानेकी विधि खोज निकाली। इस पदार्थ-को मिथाइल रवर कहा जाता है। उसकी रासायनिक सरचना यद्यपि आइसोप्रीन-जैसी है, परन्तु उसमे एक मिथाइल समूह (g1onp)—(CH_3) अधिक होता है। जर्मनोंने युद्धके दौरान २३५० टन मिथाइल रवरका उत्पादन किया और उसके टायर भी वनाए यद्यपि वे उतने मजबूत सावित न हो सके। परन्तु जर्मन वैज्ञानिकोका यह प्रयत्न हाइड्रोकार्वन रसायनकोंमे रवर वनानेकी दिशा-मे एक नया कदम था। आज तो अधिकाश मानव-निर्मित रवर हाइड्रोकार्वन रसायनकसे ही वनाया जाता है।

७ दिसम्वर १९४१के दिन जापानने दूसरे विश्वयुद्धमे प्रवेश किया। उसने हवाई द्वीप समूह-के पर्ल वन्दरगाहमे स्थित अमरीकी प्रशान्त नौसेना दलको नष्ट कर दिया। तीन महीनेके अन्दर अंग्रेजोके अजेय समझे जानेवाले वन्दरगाह सिगापुर पर भी उसका अधिकार हो गया और डच ईस्ट इडीजको जापानियोंने जीत लिया। इससे मित्र-राष्ट्रोकी शक्तिको काफी क्षति पहुँची, क्योकि सैनिक-वाहनो और युद्धपोतोके लिए आवश्यक प्राकृतिक रवरका प्राप्ति स्थान उनके हाथसे निकल गया था। रवरका जो थोडा-वहुत सग्रह उनके पास था वह कितने दिन चल पाता? रवरके विना न तो ट्रक, ट्रैक और वायुयान चलाये जा सकते थे, न विद्युत्-जनित्र वनाये जा सकते थे और न यातायात एव परिवहन-सेवाओको चालू रखा जा सकता था। सक्षेपमे यह कि सश्लिष्ट रवरका उत्पादन किये विना पराजय निश्चित थी। सश्लिष्ट रवर वनानेकी ओर अभी तक उन्होने ध्यान नही दिया था क्योकि सुदूर पूर्वके रवर वागानो पर उनका एकछत्र अधिकार था। लेकिन अव स्थिति वदल गई थी। धुरी-राष्ट्रो—जर्मनी और जापान—को इस सम्वन्धमे कोई चिन्ता नही थी। रवर उत्पादक प्रदेश अव उनके अधिकारमे था, और जर्मनी प्रथम विश्व युद्धमे सवक सीख ही चुका था। १९४२मे जर्मनीके कृत्रिम रवरका वार्षिक उत्पादन ९० हजार टन तक पहुँच गया था, जो अगले ही वर्ष १ लाख टन हो गया। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि एक लाख टन रवर ४ लाख एकड जमीनमे उगाए गए वृक्षोसे प्राप्त रवरके वरावर होता है।

अव मित्र-राष्ट्रोके लिए विजय विज्ञानके साथ समयकी होड थी। सौभाग्यसे कुछ ही समय पहले अमरीका जर्मनीसे व्यूना (Buna) रवरका एकस्व प्राप्त कर चुका था, इसलिए वहाँ जल्दी ही GR–S (गवर्नमेण्ट रवर-स्टाइरिन)का उत्पादन आरम्भ कर दिया गया। इस रवरका युद्धकालीन नाम 'व्यूना एस' था। इस कामके लिए अमरीकामे फौरन ५०से भी अधिक रवर वनानेके कारखाने स्थापित किये गए। उनमेसे आधे कारखानोमे रवरके लिए आवश्यक कच्चा माल, व्यूटाडाइन

और स्टाइरिन नामक रसायनक बनाये जाते थे। चार कारखानोमे नियोप्रीन, ब्यूटेल और थायोकोल किस्मके रबर बनाना आरम्भ किया गया और नौ कारखानोमे ऐलकोहल और अन्य जरूरी रसायनक बनानेकी व्यवस्था की गई थी। खासे बडे पैमाने पर किये गए इन प्रयत्नोका फल भी शीघ्र ही मिला। १९४३मे कृत्रिम रबरका उत्पादन अमरीकामे २ लाख टन हुआ, जो जर्मनीके उसी वर्षके उत्पादनका दुगुना था। १९४५मे तो अमरीकी उत्पादन ७ लाख टन तक पहुँच गया। इस प्रकार विज्ञानको अपने प्रयत्नमे आशातीत सफलता मिली और मित्र-राष्ट्र युद्धमे विजयी हुए।

कृत्रिम रबरकी मुख्य जातियाँ

प्रकार	एकलक (Monomer)	बहुलक (Polymer) संरचना
GR–S (ब्यूना-एस)	ब्यूटाडाइन २५% साइटिन	$-[(CH_2-CH=CH-CH_2)_x-CH-CH(C_6H_5)-CH_2]_n$
GR–I (ब्यूटेल रबर)	आइसो ब्यूटेलीन ५%आइसोप्रीन	$[-CH_2-C(CH_3)_2-)_x CH_2-CH=CH-CH_2-]_n$
GR–M (नियोप्रीन)	क्लोरोप्रीन	$[-(CH_2-C(CL)=CH-CH_2-]_n$
नाइट्राइल रबर (ब्यूना-N)	ब्यूटाडाइन १८-४२% एक्रिलोनाइट्राइल	$[-(CH_2-CH=CH-CH_2)_x-CH(CN)-CH_2-]_n$
पोली सल्फाइड रबर(थायोकोल)	अनेक प्रकार के	$[-CH_2-CH_2-S(=S)-S(=S)-]_n$
सिलिकोन प्रकार		$[-O-Si(CH_3)_2-O-Si(CH_3)_2-O-]_n$

अब कुछ खास किस्मके रबरोका उल्लेख कर लिया जाए। इसमे सिलिकोन नामक किस्म असाधारण है। ऊपरका अन्तिम सूत्र यह बतलाता है कि इसकी सरचनामे कार्वनके स्थान पर सिलिकोन और आक्सीजन रहता है और हाइड्रोजन समूह सिलिकोनसे जुडा होता है।

सिलिकोन रबर मृदु होता है और साँचेमे रखकर दबानेसे साँचेकी आकृति ग्रहण कर लेता है। अधिक दाबकी भी जरूरत नही होती, केवल अँगुलीसे दबाने-भरसे काम चल जाता है। सिलिकोन रबरकी अणु सरचनामे द्विबन्ध न होनेसे गन्धकके साथ इसका वल्कनीकरण नही हो सकता। सिलिकोन रबर पर अन्य रसायनोका असर नही होता। इस प्रकारकी इसकी एक किस्म 'सिलेस्टिक' नामसे प्रख्यात है।

पोलीएथेलीन, क्लोरिन और गन्धकके मिश्रणसे जो रबर बनाया जाता है वह 'हायपेलोन' कहलाता है और अत्यधिक कठोर होनेके कारण इजीनियरिग कामोमे प्रयुक्त होता है।

दूसरी एक किस्म कार्वन और फ्लुओरिनका सह-बहुलक है, जो Kel–F के नामसे विख्यात है। इसकी दृढता प्रति वर्ग इंच ३५०० पोण्ड होती है और उष्णता एवं सान्द्र सल्फ्युरिक अम्ल तथा फ्यूमिंग नाइट्रिक अम्लका इस पर कोई असर नहीं होता।

पोलीयुरेथेन रवर 'फोम' रवर अथवा फेनिल रवरके नाममे प्रसिद्ध है। इसमें कार्वन डाइआक्साइड गैस भरी होनेके कारण यह फूला हुआ रहता है।

ऊपर वताये गए रवर संरचनाकी दृष्टिसे प्राकृतिक रवरके समान माने जा सकते है, परन्तु प्राकृतिक रवर और उनकी अणु संरचनामे भिन्नता होती है। वास्तविक संश्लिष्ट रवर उसे कहा जाता है जो अणु संरचनामे भी प्राकृतिक रवरका सांगोपांग अनुसरण करे। वी० एफ० गुडरिच, गल्फ आयल कारपोरेशन और फायरस्टोन टायर एण्ड रवर कम्पनियोंने इस प्रकारका वास्तविक संश्लिष्ट रवर वनानेकी घोषणा की है। इस प्रकारके रवर क्रमश एमरिपोल S–N और कोरल रवरके नामसे प्रसिद्ध है। प्राकृतिक रवरको पोली आइसोप्रीन कहा जा सकता है। उसकी अणु संरचनाको (cis–poly–Isoprene–सिस-पोली-आइसोप्रीन) कहा जाता है। यह 'सिस' क्या है? हाइड्रो-कार्वन पदार्थमे कार्वनसे संयुक्त कोई तत्व अथवा समूह यदि एक वन्धवाला हो तो वह उस वन्धके चारो ओर घूम सकता है। द्विवन्धवाले कार्वन युग्मके आसपास 'समूह' इस प्रकार घूम नही सकता। द्विवन्धवाले कुछ पदार्थोंमे 'सिस' और 'ट्रान्स' (trans) किस्मे होती है। 'सिस'का अर्थ है सम-पक्षीय और 'ट्रान्स'का विषम पक्षीय। प्राकृतिक रवर समपक्षीय आकारका होता है और गट्टापार्चा विषम पक्षीय आकारवाला।

$$-CH_2(1)-C(2)(CH_3)=C(3)(H)-CH_2(4)-CH_2(1)-C(2)(CH_3)=C(3)(H)-CH_2(4)-$$

विषय पक्षीय (trans) संरचना

$$-CH_2(1)-C(2)(CH_3)=C(3)(H)-CH_2(4)-CH_2(1)-C(2)(CH_3)=C(3)(H)-CH_2(4)-$$
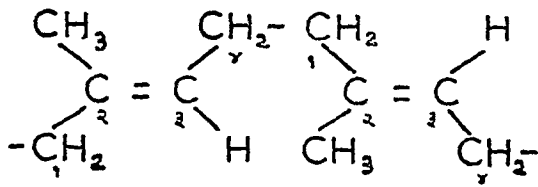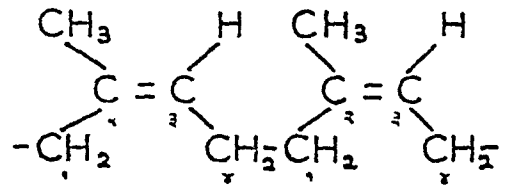
समपक्षीय (सिस) संरचना

यदि ऊपरकी आकृतियोमे दिखाए हुए १ और ४ स्थानो पर आइसोप्रीनके अणुओको संयुक्त किया जा सके तो उस पदार्थको प्राकृतिक रवर-जैसा ही वनाया जा सकता है। जर्मन वैज्ञानिक के० जिग्लरने उत्प्रेरकका उपयोग करके इसे प्रमाणित कर दिया है।

यातायातके साधनो और परिवहन सेवाओमे रवरका महत्त्वपूर्ण स्थान है। वायुयानो, मोटर गाडियो, वसो, वाइसिकलो आदिमे रवरका प्रचुरतासे उपयोग किया जाता है। आधुनिक कारके ५०० हिस्से रवरके वने होते है। रेलगाडियोकी भी वैठके स्पज रवरकी वनाई जाती है और खिड-कियाँ-दरवाजो पर रवरके अस्तर और गुटके लगे होते है। रेलगाडियोंके उच्च-वर्गके डिब्बोके फर्श पर रवरकी चटाइयाँ विछी रहती है। रवरके केवल, पट्टे, होज आदि कई वस्तुएँ वनती है। लेकिन अधिक मात्रामे रवरका उपयोग टायर वनानेमे किया जाता है।

अन्तरिक्ष यात्रामे व्यवहृत राकेटोमे रवरका उपयोग दिनोदिन वढता जाता है। राकेटोके ईंधन कक्षोमे रिंग (छल्ले), सील (वध), गास्केट आदि पेकिंगो (भरतियो)के लिए ब्यूटिल, सिलि-कोन अथवा नियोप्रीन किस्मोंके रवरोका उपयोग किया जाता है। इसका कारण यह है कि इस किस्म-

के रबर दाव, उष्णता ओर विलयनका प्रतिरोध कर सकते है। राकेटको भी धक्का-सह रबरके पाये पर चढाकर रखते हे। ठोस ईंधन मिश्रण होता हे ओर उसे मिश्रित रखनेके लिए थायोकोल किस्म-के रबरका उपयोग किया जाता हे।

अमरीकामे 'जेमिनी' ओर 'अपोलो' अन्तरिक्ष यानोकी खिडकियोके विसवाहन (insulation) के लिए पोलीयुरेथेन किस्मके रबरका उपयोग किया गया था।

इस प्रकार मनुष्यने प्राकृतिक रबरके एकाधिकारको समाप्त कर वैज्ञानिक सफलताकी विजय-पताकाको फहराया हे।

डॉल्टनकी डायरीका एक पृष्ठ

प्लास्टिककी माया

सवेरेके समय यूरिया फॉर्मालिडहाइड प्लास्टिकसे सुशोभित एलार्म घडीकी घटीकी टुनटुनाहटसे जागकर, पोलीएमाइड (नायलोन) प्लास्टिकके ब्रशसे दाँत साफकर, विनाइल प्लास्टिकके कप-प्लेटमे प्लास्टिकके चम्मचकी सहायतासे चाय-नाश्ता कर, एसीटेट प्लास्टिककी फ्रेममे मढे कॉचके सामने प्लास्टिकके हत्थोवाले उपकरण लेकर, प्लास्टिकके शेविग (हजामतके) ब्रश और प्लास्टिकके रेजरसे दाढी बनाकर, पोलीएथेलीन प्लास्टिककी वालटी और लोटेका स्नानके लिए उपयोग कर, नायलोन प्लास्टिकके कघेसे बाल सॅवारकर, पोलीइस्ट प्लास्टिक टेरेलिनके कमीज, कोट, पतलून, टाई और नायलोनके मोजे धारण कर, सश्लिष्ट चमडेके बूट पहन, जेबमे प्लास्टिकका फाउण्टेनपेन, सिगार केस, चश्मा आदि रखकर, प्लास्टिककी हैण्ड बेग हाथमे लेकर, दफ्तर पहुँचकर, टाइपिस्टसे प्लास्टिकके टाइपराइटर पर पत्रादि टाइप करवा कर, बातचीतके लिए प्लास्टिकके टेलीफोनका उपयोग कर, शामको प्लास्टिकके साज-सामानसे सुशोभित मोटरगाडी या बसमे प्लास्टिकके कपडेसे मढी हुई बैठक-पर विराजित हो घर लोटकर, द्वारपर नायलोन प्लास्टिककी साडीमे सजी-सवरी और प्रतीक्षा करती हुई श्रीमतीजीके सामने मुस्कराकर, अपने कमरेमे जाकर प्लास्टिकका स्विच दबा प्लास्टिक केबिनेट वाले रेडियोसे सगीत-श्रवणके द्वारा दिन-भरकी थकान उतार कर, प्लास्टिककी फिटिगोसे सुशोभित बाथरूममे जाकर, प्लास्टिकके फव्वारेके नीचे स्नान कर, प्लास्टिक (सनमाइका) मढी डाइनिग टेबल पर प्लास्टिककी प्लेट और कटोरेमे परिवारके साथ शामका भोजन कर, फिर बच्चोके साथ प्लास्टिकके मुहरोसे शतरज या प्लास्टिकके पत्तोसे ताश खेलकर, अन्तमे पोलीयुरेथेन प्लास्टिकके फेनिल रबरकी शय्या पर निद्रावीन होने तककी दिनचर्यामे आजका नागरिक प्लास्टिककी मायामे किस तरह फँसा हुआ है।

वायुयान और
मोटर गाडीमे
प्लास्टिकके
साज-सामान
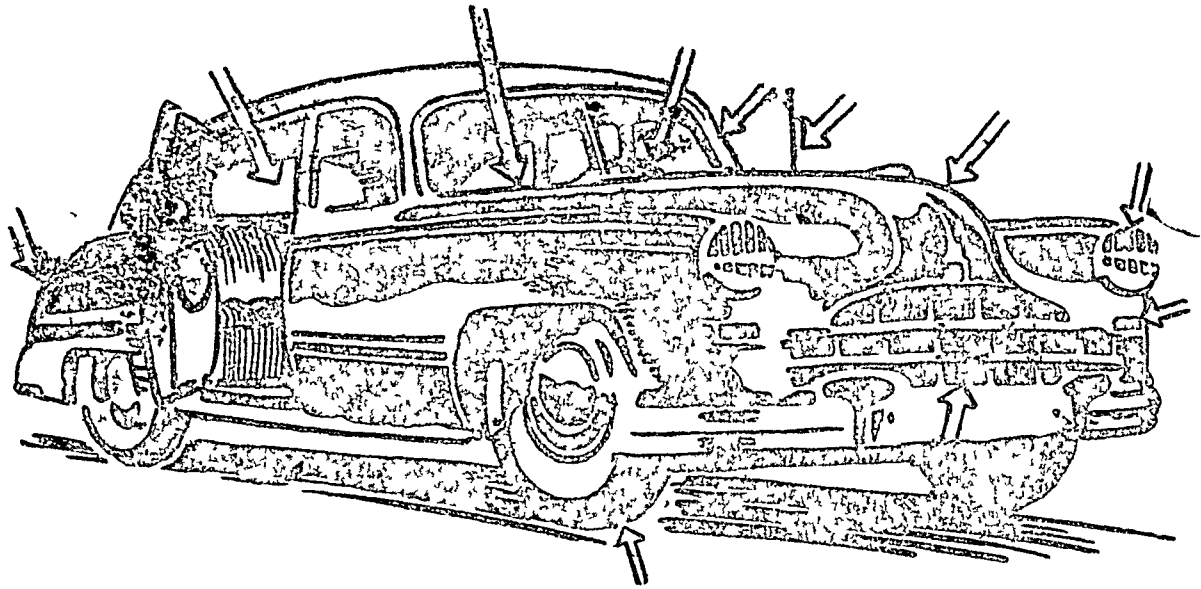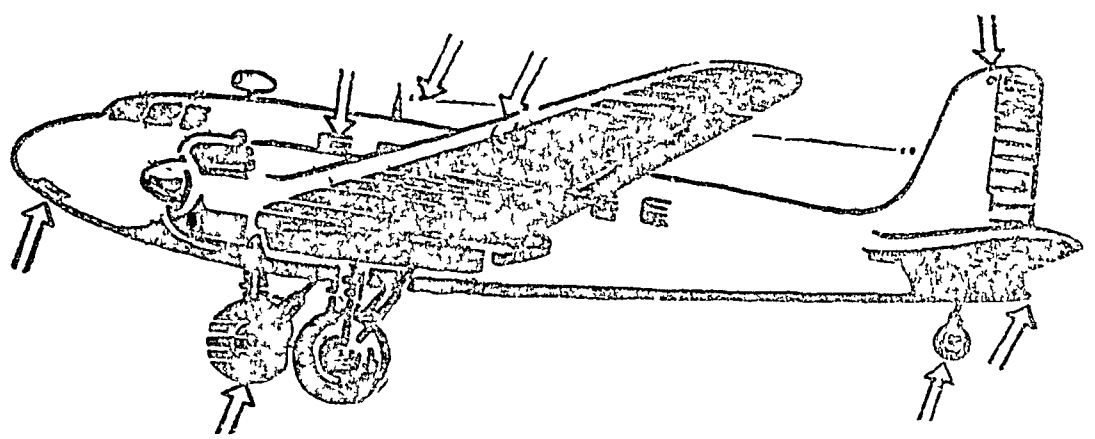
मोटर गाडी

‘जिधर भी देखता हूँ’
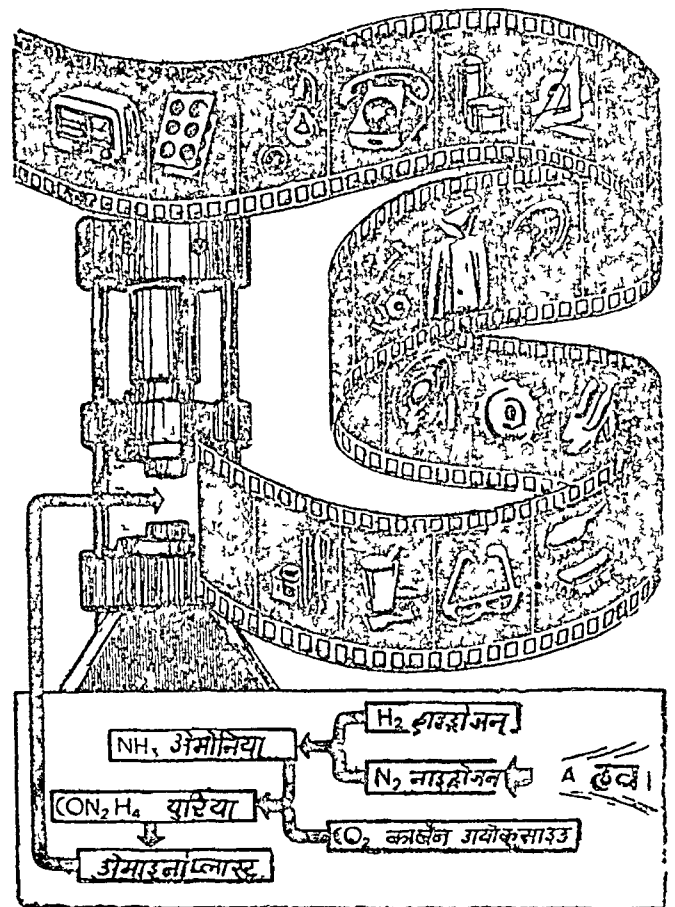
मानव-जीवनके सभी क्षेत्रोमे प्लास्टिककी
दिग्विजय !

१२ : प्लास्टिक

अर्वाचीन काल प्लास्टिकका युग है। प्लास्टिक सेल्यूलायड अथवा कचकडा पहले-पहल १८६८ ई०मे वनाया गया था, इसलिए १९६८का वर्ष प्लास्टिकका जन्म-शताब्दी वर्ष माना जाता है। १९५०के बाद, हर पाँचवे साल, प्लास्टिकका उत्पादन दुगुना होता रहा है, १९६७मे कुल उत्पादन १५ अरब पौण्डके लगभग कूता गया था। ऐसा अनुमान किया जाता है कि १९८० तक प्लास्टिकके उत्पादनमे सात सौ प्रतिशत तक वृद्धि हो जाएगी। आज तो फाउण्टेनपेन, घडियो तथा कमरमे बाँधनेके पट्टे, मिठाई अथवा अन्य खाद्य पदार्थोके डिब्बे, चश्मेके फ्रेम—यहाँ तक कि चश्मेके काँच भी—, रग-बिरगे खिलोने, चाय-कॉफी पीनेके प्याले और रकाबियाँ, ग्रामोफोनके रेकर्ड, सश्लिष्ट रेशोके कपडे, फिल्म, जूते, वरसातमे काम आनेवाले जलसह (वाटर प्रूफ) वस्त्र आदि शुद्ध प्लास्टिकके वनाये जाते है और हमारे जीवनके अनिवार्य अग वन गए है। औद्योगिक क्षेत्रमे तो प्लास्टिकने मैदान ही मार लिया है। अम्लो अथवा क्षारोके द्वारा सक्षारित होनेका कोई डर नही, वजनमे हल्का-फुल्का, रगीन भी वनाया जा सकता है इसलिए रँगने-रँगानेकी झझट नही, साथ ही दृढता और कठोरतामे धातुओके समकक्ष—इतनी सुविधाएँ और इतने गुण होनेके कारण उद्योगोमे भी प्लास्टिकका उपयोग दिनोदिन वढता ही जा रहा है।
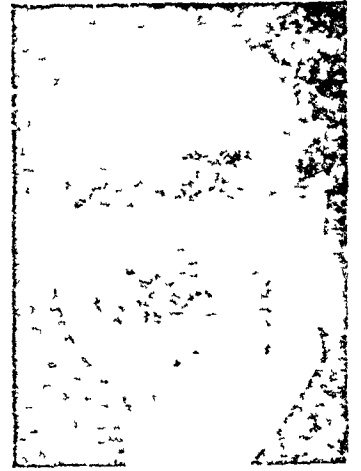
लियो हेन्ड्रिक वेकलैण्ड
(१८६४–१९४४)

ऐतिहासिक दृष्टिसे प्लास्टिकोके जन्मका कारण हाथी दाँतकी दुर्लभताके परिणामस्वरूप बिलियर्ड गेदोके उत्पादनका रुक जाना है। न्यूजर्सीके जान ह्याटने १८६८ ई०मे रुई और नाइट्रिक अम्लसे वने सेल्यूलोज नाइट्रेट और कपूरके सयोगसे पहले-पहल सैल्यूलायड वनाया और थोडे ही समयमे तरह-तरहकी चीजोको वनानेमे कचकडेका उपयोग किया जाने लगा। उसके बाद १८९७मे डब्ल्यू० क्रिस्टी नामक एक जर्मनने कागज पर दूधसे प्राप्त केसीनका विलयन लगाकर सुखानेके वाद अन्य रासायनिक क्रियाओके द्वारा उसे जलसह वनानेका प्रयोग किया। दूधको फाडकर वनाया जानेवाला दूधका यह केसीन नामक उत्पाद उस समय तक केवल खाद्य पदार्थ वनानेके ही काम आता था। क्रिस्टीने उसका औद्योगिक उपयोग भी खोज निकाला। क्रिस्टीका एक और साथी एडोल्फ स्पिटलर भी इसी दिशामे प्रयोग कर रहा था। उसकी सहायतासे केसीनमे 'फॉर्माल्डिहाइड' प्रकारके प्लास्टिकका पता चला। इस बीच १९०७मे सयुक्त राज्य अमरीकामे लियो हेन्ड्रिक वैकलैण्डने 'फिनोल' और फॉर्माल्डिहाइडके

सयोगसे लाख-जैसा प्लास्टिक पदार्थ बनानेकी विधि खोज निकाली और उस पदार्थका नाम 'बेकेलाइट' रखा गया। धीरे-धीरे बेकेलाइटका उपयोग खूब व्यापक होता गया। वजनमे हल्का होते हुए भी बहुत मजबूत होनेके कारण उसे गृहोद्योगकी चीजोसे लेकर औद्योगिक क्षेत्र तकमे अभूतपूर्व स्थान मिलता गया। आज तो दुनियाके हर देशमे बेकेलाइटका उत्पादन किया जाता है।

यहाँ प्लास्टिकके दो विभागोका उल्लेख करना प्रसगानुकूल ही होगा। पहले विभागको ताप सुनम्य या उष्णमृदु (thermoplastic) कहते है और दूसरेको ताप स्थापित अथवा उष्णकठोर (thermosetting)। ताप सुनम्य लाख-जैसा पदार्थ होता है। गरम करनेसे वह पिघलने लगता है और ठण्डा करने पर कठोर हो जाता है। ताप स्थापित प्लास्टिक गरम करनेसे पहले मिट्टीके लोदे-जैसा मृदु होता है, लेकिन एक बार उसका द्रव बनाकर साँचेमे ढाल दिया जाए तो फिर गरम करने पर भी उसकी वह आकृति बनी रहती है और उसे दुबारा मृदु नही किया जा सकता। बेकेलाइट ताप स्थापित किस्मका प्लास्टिक है, जबकि सैल्यूलायड (कचकडा) ताप सुनम्य किस्मका।

दो-दो विश्व-युद्धोने रासायनिक उद्योगोके विकासको खूब वेग प्रदान किया है। युद्ध-कालमे प्राकृतिक पदार्थोकी कमी हो जानेसे कृत्रिम पदार्थोको खोजनेकी तीव्र आवश्यकता अनुभव न की जाती तो प्लास्टिक और रबर-उद्योगका इतनी तेजीसे विकास कदापि न होता। इस समय लगभग पचासेक प्रकारके भिन्न-भिन्न प्लास्टिक अस्तित्वमे आ चुके है। पहले वर्गीकरणमे मुख्य १७ प्रकारके प्लास्टिकों-का समावेश किया जा सकता है। अन्य प्रकारोको मुख्य प्रकारोके गौण विभागोमे समाविष्ट करना होगा। प्लास्टिक उद्योगका वास्तविक आरम्भ १९१८के बादसे मानना चाहिए। १९३०से १९४०के बीचकी अवधिमे आधुनिक प्लास्टिकोका युग आरम्भ होता है। १९४०से १९५५के बीचके समयमे यह उद्योग उत्तरोत्तर विकसित होता गया और आज लगभग एक दर्जन प्रकारके प्लास्टिकोका टनोसे उत्पादन होने लगा है।

वानस्पतिक सैल्यूलोज एसीटेट प्लास्टिक १९१७मे प्रथम विश्व-युद्धके समय वायुयानके पखो पर अज्वलनशील पदार्थ लगाये जानेकी आवश्यकताकी पूर्तिके लिए खोजा गया था। यह पदार्थ कचकडे-के समान ज्वलनशील नही है। इस पदार्थका उपयोग वस्त्र-रेशे बनानेके लिए भी किया जाता है। १९३०से १९४०के दस वर्षोके बीच आजके सुप्रसिद्ध पोलीस्टाइरिन, पोलीवाइनिल क्लोराइड (पी० वी० सी०), पोली ओलेफीन, पोली मिथाइल एक्रीलेट आदि तापसुनम्य प्लास्टिकोकी खोज की गई थी। एथिलीन नामक गैससे इन पदार्थोको प्राप्त किया गया, इसलिए ये एथेनॉयड प्लास्टिक भी कहलाते है। एथिलीन वस्तुत एक पेट्रो-केमिकल है इसलिए पेट्रो-केमिकल्स उद्योगके विकासके साथ-साथ प्लास्टिक-उद्योग भी विकसित हुआ।

१९३० ई०मे जर्मनीमे फार्बेन कम्पनी तथा अमरीकामे डाऊ केमिकल कम्पनीने सबसे पहले पोलीस्टाइरिन प्लास्टिक बनाया। इन्ही दिनो पोलीवाइनिल क्लोराइडकी खोज भी हुई। १९३३मे इंग्लैण्डकी आई० सी० आई० (इम्पीरियल केमिकल इन्डस्ट्रीज)की प्रयोगशालामे पोलीएथिलीन प्लास्टिककी खोज की गई परन्तु इसका विकास दूसरे महायुद्धके बाद ही हो सका और अब तो इसका उत्पादन टनोमे होने लगा है। आई० सी० आई०की प्रयोगशालामे ही हिल और क्राफर्ड नामके रसायन-विदोने कठोर पारदर्शक प्लास्टिक पोलीमिथाइल मिथाक्रिलेटकी खोज की जिसका उपयोग पिछले महायुद्धमे बडे पैमाने पर किया गया। इन दिनो यह 'पर्स्पेक्स' नामक पारदर्शक काचके रूपमे बेचा

जाता है। इस पदार्थका उपयोग दन्दानसाजीमे नकली दाँतोके चोखटे बनानेमे भी किया जाता है। इसपर आबहवाका असर बहुत कम होता है।

अमरीकामे १९३९मे ड्यूपॉण्ट कम्पनीके डॉ० वालेस ह्यूम केरोदर्सने नायलोनकी खोज की, जिसका सर्वप्रथम उपयोग प्लास्टिकके साँचे बनानेमे किया गया था।

१९४१मे ड्यूपॉण्ट कम्पनीकी प्रयोगशालामे ही आर० जे० प्लैकेटने 'टेफलॉन' नामसे विख्यात पोलीटेट्राफ्लुओरोएथिलीन नामक प्लास्टिककी खोज की।

दूसरे महायुद्धके बाद दस वर्ष पूरे होते-होते प्लास्टिक-उद्योग दुनियामे अपने पाँव जमा चुका था। आरम्भमे महँगे दामोवाले प्लास्टिकोका काफी तादादमे उत्पादन होनेसे वे धीरे-धीरे सस्ते होते जा रहे थे। समयके साथ अनुसन्धानोके परिणामस्वरूप प्लास्टिकोके गुणोमे भी आवश्यक सुधार और वृद्धि होती गई। अधिक कठोर ओर दृढ प्लास्टिकोकी खोजके बाद खास प्रकारके प्लास्टिकोकी खोजमे सफलता मिली। ए० बी० एस० (एक्रिलोनाइट्राइल-ब्यूटाडाइन-स्टाइरिन) प्रकारका सबसे आधुनिक प्लास्टिक अपनी सरचनामे रबरके अत्यन्त सूक्ष्म कणोवाला होता है। वह मजबूतीमे धातुओंके समान है। पिछले विश्वयुद्धमे उसका उपयोग रेडार और वायुयानके पुर्जे बनानेमे किया गया था।

प्लास्टिक-उद्योगमे कच्चे मालके लिए रसायनोका प्रचुर मात्रामे उपयोग किया जाता है। ३०-३५ वर्ष पहले वानस्पतिक (सेल्यूलोज), प्राणिज (केसीन) और जन्तुओ द्वारा उत्पादित पदार्थ (लाख) प्लास्टिक बनानेका मूल पदार्थ हुआ करता था। उसके बाद अलकतरा (तारकोल) से उत्पादित 'फिनोल' नामक रसायनका उपयोग किया जाने लगा। आज तो पेट्रोलियमके रसायनक (पेट्रो-केमिकल्स) प्लास्टिक-उद्योगमे बुनियादी पदार्थोके रूपमे महत्त्वपूर्ण हो उठे है। प्लास्टिक-उद्योगको पेट्रो-केमिकल उद्योगने अभूतपूर्व वेग प्रदान किया है। पेट्रो-केमिकल उद्योगने प्लास्टिक उद्योगके लिए काफी बडी मात्रामे और सस्ते रसायनोका उत्पादन किया है। यदि अकेले कोयलेसे बनाये जाने-वाले रसायनो पर यह उद्योग निर्भर करता तो सम्भवत इतनी तेजीसे इसका विकास कभी न हो पाता।

पेट्रोलियम रसायनकोका उद्योग पहले महायुद्धके बाद स्थापित हुआ था। क्रूड आयलके बडे अणुओका भजन (क्रेकिग) करके उससे अनेक विलयन तैयार किये गए थे। दूसरा महायुद्ध छिडने पर इस उद्योगने प्रगति करके एथिलीन, डाइक्लोराइड, एथिलीन ग्लायकोल, एथिलीन आक्साइड, वाइनिल क्लोराइड और स्टाइरिन आदि रसायनक बनाये। कृत्रिम रबर प्राप्त करनेकी आवश्यकताके कारण ब्यूटाडाइन और स्टाइरिनसे मानव-निर्मित रबर बनाया गया। पोली-एथिलीन प्लास्टिक पूरा-का-पूरा अब पेट्रोलियमके एक उत्पाद एथिलीनसे ही बहुलीकरणकी क्रियाके द्वारा बनाया जाता है। इस प्रकार पेट्रोलियमसे प्राप्त होनेवाले मध्यस्थ रसायनक प्लास्टिक बनानेके लिए आवश्यक सस्ते-कच्चे मालकी गर्ज पूरी करते है।

प्लास्टिक बनानेके लिए सबसे पहले प्लास्टिक पदार्थका चूर्ण बनाया जाता है। इस चूर्णमे रग देकर और पूरक (filler) डालकर उसे अच्छी तरह मिला लिया जाता है। पूरक उसकी मजबूती-को बढाता है, लेकिन पूरककी भी सीमाएँ है। बीस प्रतिशत पूरकके उपयोगसे मजबूतीमे लगभग १७ प्रतिशतकी वृद्धि होती है, ४० प्रतिशत करनेसे मजबूतीमे अपेक्षाकृत कम वृद्धि होती है, और ५० प्रतिशतसे तो उलटे मजबूती घट जाती है। इसलिए पूरकके अनुपातको खासतोर पर ध्यानमे रखना आवश्यक होता है। मूल पदार्थोका चूर्ण बनानेके लिए गरम किये हुए बेलनोका उपयोग किया जाता

है। वेलनोंके द्वारा मिलावटका काम भी सही अनुपातमे हो जाता है। चूर्ण बनाते समय तापका ध्यान रखना भी बहुत जरूरी है, नही तो चूर्ण एकदम भगुर हो जाएगा। चूर्ण बन जानेके बाद उसे छानकर डिब्बोंमे बन्द कर दिया जाता है। फिर वहाँसे उसे 'साँचो'मे ढालनेके लिए ले जाया जाता है। ये साँचे एक साथ पचीसेक अदद निकालनेकी क्षमतावाले होते है। चूर्णको एक ढोलमे भर देते है जहाँसे वह अपने-आप साँचेमे पहुँच जाता है। अब उसपर दाब बढाया जाता और साथ ही साँचेको गरम भी किया जाता है। इसके बाद दाब कम करके साँचेको ठण्डा किया जाता है और तब उसमेसे तैयार पदार्थ-को निकाल लिया जाता है।

अन्त क्षेपण (injection) और पच या बहिर्वेधन (extrusion) सचककरण—(moulding)मे फूँक ढलाई (blowing), सादा ढलाई (casting) आदि विधियाँ काममे लाई जाती है। 'अन्त क्षेपण सचककरण'मे पदार्थको तरल करके (रस बनाकर) ठण्डे साँचेमे भरते है, जहाँ वह जम जाता है और उसके बाद साँचेमेसे निकाल लिया जाता है। द्रव भरते समय साँचे पर दाब जारी रखा जाता है और ढले हुए पदार्थको निकालते समय साँचे परसे दाब समाप्त कर दिया जाता है। 'बहिर्वेधन सचककरण'मे वेलन पर चादरे (sheets) बना लेते है और उन्हे इच्छित आकारमे गढ लिया जाता है। उसके बादकी सारी क्रिया अन्त क्षेपण सचककरणमे मिलती-जुलती है।

'कास्टिंग' या सादी ढलाई सबसे सस्ती विधि है। इसके मुख्य साधन या उपकरण है—सीसे, काँच अथवा रबरका साँचा और गरमी देनेके लिए एक भट्ठी। द्रवको साँचेमे भरकर उसे एक निश्चित समय तक भट्ठीमे रखकर गरम किया जाता है। यहाँ उसे लगभग ८०° से० ताप पर चारसे लेकर दस दिन तक रखते है और बादमे ढले हुए पदार्थको साँचेसे पृथक् कर लिया जाता है। सीसेके साँचे बहुत सुविधाजनक रहते है, क्योकि उसमेसे सीसेको तोडकर ढले हुए पदार्थको आसानीसे निकाला जा सकता है और फिर सीसेको गलाकर जल्दीसे नया साँचा तैयार किया जा सकता है, लेकिन इस विधिसे तैयार की हुई चीजे दाब देकर बनाई गई चीजोसे कमजोर होती है।

पोली और पिलपिली (मृदु) चीजे बनानेके लिए फूँक-ढलाईकी विधि काममे लाई जाती है। इसमे साँचेके अन्दर प्लास्टिकके दो पत्तरोंके बीच दाबके साथ-साथ हवा और भापको पारित किया जाता है और प्लास्टिक इच्छित आकार ग्रहण कर लेता है।

कागज अथवा कपडे पर प्लास्टिकका लेप चढानेकी विधिको परतबन्दी (lamination) कहते है। इस विधिसे लेपित कागज अथवा कपडेको दाबके नीचे रखकर प्लास्टिकके तख्ते (फलक) तैयार किये जाते है, जो बहुत ही मजबूत—यहाँ तक कि धातुओके स्थानापन्न—और फिर वजनमे भी काफी हलके होते है। इनका वजन एल्युमीनियमसे आधा होता है। इसके अतिरिक्त अम्ल अथवा क्षारसे इनका सक्षारण नही होता और न धातुओकी तरह जग ही लगता है। विविध रगो और नयनाभिराम अलकृतियोवाले इस तरहके तख्ते (हार्डबोर्ड) बनाये और बेचे जा रहे है। सामान्यत एक तख्तेकी लम्बाई-चौडाई १०० × ५० इच और मोटाई ० ००४ इचसे ४ इच तक होती है। इसी प्रकार प्लास्टिककी सलाखे और पाइप भी बनाये जा सकते है।

प्लास्टिकोसे बननेवाली विभिन्न वस्तुओकी यदि सूची बनाई जाए तो वह काफी लम्बी हो जाएगी। प्लास्टिकके नित नये उपयोगोकी खोज होती ही रहती है। आरम्भमे प्लास्टिक पदार्थ धातु अथवा लकडी-जैसी वस्तुओके बदले काममे लाये जाते थे। परन्तु अब तो प्लास्टिक

साधिकार और ससम्मान अपना विशिष्ट स्थान प्राप्त करते जा रहे हैं। अब तो हमारे चारो ओर प्लास्टिक इस तरह व्याप्त हो गया है कि 'जिधर देखता हू तू ही तू नजर आता है'।

प्लास्टिककी दिग्विजयका सर्वेक्षण उससे बनी लोहवत् वस्तुओ—हार्डवेअर—मे आरम्भ किया जाए। दरवाजेके हत्थे और ताले, परदा टॉगनेकी सलाखे, स्नानगृहका साज-सामान (fittings and fixtures), विद्युत् जुडनारे (electrical fittings), नाम और नम्बरके पटिये, तरह-तरहके उपस्कर (फर्नीचर) आदिका इस सूचीमे समावेश किया जा सकता है। लन्दनकी अति विशाल वेस्ट एण्ड होटलकी सजावटमे, कहा जाता है कि प्लास्टिककी बनी ६० हजार चीजोका उपयोग किया गया था। सयुक्त राज्य अमरीकामे राकेट निर्माण केन्द्रके सन्दूकनुमा भवन 'कैनेडी स्पेस सेण्टर'की ४१८ फुट ऊँची धुधली पारदर्शक दीवारे पोलीवाइनिल फ्लुओराइडके अन्तरवाले पोलीएस्टर प्लास्टिकसे बनाई गई है, क्योकि यह पदार्थ हवाके भारी बवण्डरो, जबर्दस्त झोको और आघातोको झेल सकता है। ७५० फुट व्यासवाले हाउस्टन एस्ट्रोडोमके गुम्बदके मध्य भागमे एक्रिलिक प्लास्टिककी चादर लगी हुई है। भावी प्लास्टिकके बारेमे तो वैज्ञानिकोका यहाँ तक कहना है कि नगरोके ऊपर प्लास्टिकका चन्दोवा तानकर उन्हे वातानुकूलित कर दिया जाएगा और नागरिकोको सर्दी, धूप ओर वर्षासे मुक्ति हो जाएगी। वहाँ केवल फूल और बगीचे होगे ओर लोग-बाग स्वर्गीय सुखोपभोगमे अपने दिन बिताएँगे। अमरीकामे एक जगह विद्यार्थियो-के दगोसे बचनेके लिए पारदर्शक एक्रिलिक प्लास्टिकके काँचकी खिडकियाँ बनाई गई है, जिससे उनपर फेके जानेवाले पत्थर उलटकर दगाई विद्यार्थियोके ही सिरो पर गिरे।

आजकल फेनिल (फोम) प्लास्टिक सभीके मनको लुभा रहा है। इसके बने बिस्तरो, गद्दो, तकियो आदिका चलन खूब बढ गया है। प्रशीतको (रेफ्रीजेरेटरो)मे भी उष्णतावरोधनके लिए इस तरहका मृदु पैकिंग बहुत महत्व रखता है। फेनिल प्लास्टिकोमे सुन्दर खिलौने भी बनाये जाते है। इमारतोकी विशाल गुम्बदे भी इससे बनाई जा सकती है। इस किस्मके प्लास्टिक खूब हलके होते है। क्योकि उनमे कार्बन-डाइआक्साइड गैस भरी रहती है, जिसके कारण वे मूल आकारसे तीस गुना फूलते और उनका आयतन भी बढ जाता है।

अब अन्तरिक्ष यात्रा सम्भव हो गई है, इसलिए चन्द्रमा अथवा अन्य किसी गह पर निवास-स्थान बनानेके लिए सबसे पहले प्लास्टिकोकी ही ओर नजर दौडाई जाएगी। वहाँ पानी ले जानेके बदले गुब्बारेमे प्लास्टिकके पर्देकी सहायतासे हाईड्रोजन ओर आक्सीजनको अलग-अलग रखकर ले जाया जाएगा और गन्तव्य ग्रह पर पहुँचकर दोनो गैसोके रासायनिक सयोजनसे पानी बना लिया जाएगा।

प्लास्टिकसे कृत्रिम त्वचा बनाकर प्लास्टिक सर्जरीके द्वारा शरीरके अवयवोको जोडा अथवा बदला भी जा सकेगा। सेलिस्टिक नामक 'सिलिकोन' प्लास्टिकका हृदय एक मृत बछडेके हृदयकी जगह लगाकर उसे ४८ घण्टे तक जीवित रखा गया था। इस तरहके सिलिकोन प्लास्टिकसे यथावश्यकता स्नायु ओर मृदु ऊतक बनाए जा सकेगे। कानकी शल्यक्रियामे टेफलॉनकी सलाईके द्वारा पदाधानास्थि (stirrup bone)को आन्तर कर्ण (internal ear)से जोड दिया जाता है। सिलिकोन प्लास्टिकसे बना ट्राजिस्टर जर्मेनियमके प्लास्टिकसे कही अधिक काम देता है ओर उससे बनी सोर ऊर्जासे चलनेवाली सिलिकोन सेल कृत्रिम उपग्रहोमे रखी जाती है। कृत्रिम फल-फूलोसे

लदे-भरे विशाल उद्यानोका निर्माण भी किया गया है, जो प्राकृतिक उद्यानोसे वाजी मार ले जाते है। ऐसा ही एक उद्यान अमरीकामे विलियम फुस नामक व्यक्तिने अपने मकानकी छतपर वनाया हे, जिसकी कीमत १० हजार पौड आँकी गई हे।

सिलिकॉन प्लास्टिककी एक सिल्लीके नीचे दो हजार डिग्री सेटिग्रेड ताप देनेवाली ज्वाला प्रज्ज्वलित कर उसके ऊपर विल्लीके एक वच्चेको विठाया गया। आप मानेगे? विल्लीके वच्चेको जरा भी आँच न लगी। यह प्रयोग, अन्तरिक्ष यात्रियोकी सुरक्षाके लिए किया गया था। जव अन्तरिक्ष यान लौटानीमे पृथ्वीके वायुमण्डलमे प्रवेश करता है तो उमे तीन मिनट तक ८ हजार सेटिग्रेड तापका प्रतिरोध करना पडता है।

प्लास्टिकोंकी रासायनिक संरचना और उनके उपयोग

'कार्वनिक रसायनकी भूमिका' शीर्षक अध्यायमे हम कुछ कार्वनिक पदार्थोमे परिचित हो आए है। अव हम प्लास्टिकसे सम्वन्धित पदार्थोका परिचय प्राप्त करेगे। इन पदार्थोके नाम इस प्रकार है ऐमोनिया गैस, एसीटिलीन गैस, एसेटिक गैस, एथिलीन गैस, पोलीएथिलीन और फॉर्मालिडहाइड फिनोल।

वेनजिनके एक हाइड्रोजन परमाणुके स्थानपर OH अणु आनेसे 'फिनोल' नामक पदार्थ वनता है, जो 'फॉर्मालिडहाइड'से सयुक्त होकर एक प्रकारका प्लास्टिक, फिनोल-फॉर्मालिडहाइड वनाता है। ऐसे वहुतसे अणु आपसमे घुल-मिलकर (सघनित होकर) वडा अणु वनाते है, जो 'प्लास्टिक' कहलाता है। इस क्रियाको सघनन' (condensation) कहते हे। ऐसी ही दूसरी क्रिया 'वहुलीकरण' (poly merisation) है। सघननमे अलग-अलग (भिन्न प्रकारके) अणुओका सयोग होता है और पानीका पृथक्करण हो जाता है। वहुलीकरणमे एक ही जैसे (समान प्रकारके) अणु एकत्रित होते है। एथिलीनके अणु इसी तरह एकत्रित होकर पोलीएथिलीन प्रकारका प्लास्टिक वनाते है।

पोलीएथिलीनका अणु एथिलीन गैसके २००० अणुओके जुडनेसे वना हे।

प्लास्टिक, रवर, रेशे और समस्त वानस्पतिक (सेल्यूलोड) तथा प्राणिज (केसीन) पदार्थ पोलीमर (वहुलक) नामसे प्रसिद्ध विशाल अणुओके परिवारके सदस्य है। 'पोली' शब्दका अर्थ ही यह ध्वनित करता है कि अनेक अणुओने सघनित होकर विशाल रूप धारण किया हे। यह एक अद्भुत घटना है। हम चारो ओर पोलीमरो (वहुलको)मे घिरे हुए है। उनके विना हमारा जीवन असम्भव हो जायगा। हमारी खूराक, हमारे कपडे-लत्ते, हमारा मकान, हमारे रोजमर्रा इस्तेमालकी चीजे सभी कुछ पोलीमर-मय है।

यहाँ पोलीमेराइजेशन अर्थात् वहुलीकरण क्रियाकी सफलताके सिद्धान्तोकी जानकारी कर लेना उचित होगा

१ कार्यान्तरित पदार्थका अणु भार सामान्यत १०,०००से ऊपर होना चाहिए।

२ उसका अणु सुगठित और सानुपातिक आकृति वाला होना चाहिए।

३. उसके अणुओकी दिक्स्थिति (orientation) सुव्यवस्थित होनी चाहिए ताकि उसमे मजवूत किस्म उत्पन्न हो सके।

४ पदार्थके प्रत्येक अणुमे उत्तम आकर्षण होना चाहिए और उनका क्वथनांक भी उच्च होना चाहिए।

५ उसमे ताप, पानी और रासायनिक क्रियासे प्रतिरोधकी अच्छी शक्ति होनेके साथ-साथ रासायनिक रगोको पकडे रहने (धारण किये रहने)का गुण भी होना चाहिए।

प्लास्टिक दो प्रकारके होते है ताप सुनम्य और ताप स्थापित।

(अ) ताप-सुनम्य प्लास्टिक (थर्मो प्लास्टिक)

१ पोलीएथिलीन इसके अणुकी एकलक सरचना (monomer structure) इस प्रकार है :

$$\begin{matrix} H & & & & H \\ & \diagdown & & \diagup & \\ & C & = & C & \\ & \diagup & & \diagdown & \\ H & & & & H \end{matrix}$$
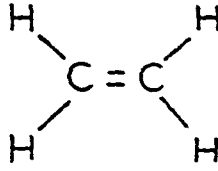
उपयोग प्रशीतककी बर्फ रखनेकी तश्तरी (ट्रे), कूडादान, टोकनियाँ, दबनेवाली बोतले, पुडिया बनानेकी झिल्ली, कागजके आवरण (कवर), सन्तरण कुण्डके अन्दरका अस्तर, दूध भरनेके पात्रोके अन्दरका अस्तर, टेनिस कोर्टको वर्षासे बचानेका आच्छादन आदि।

२ पोलीप्रोपेलीन . अणु एकलक सरचना

$$\begin{matrix} H & & & & H \\ & \diagdown & & \diagup & \\ & C & = & C & \\ & \diagup & & \diagdown & \\ H_3C & & & & H \end{matrix}$$
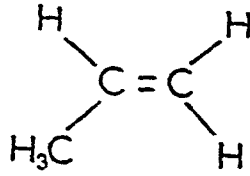
उपयोग पाइप जुडनारे कपडा उद्योगमे काम आनेवाले यत्र, 'एरोसोल' पात्र, विद्युत् अथवा उष्णता अवरोधक (विसवाहक), पुडिया बनानेके कागज आदि।

३ पोलीवाइनिल क्लोराइड तथा वाइनिल एसीटेट और विनिलिडीन क्लोराइडके सह-बहुलक (को-पोलीमर) अणु एकलककी रासायनिक सरचना निम्नानुसार है

$$\begin{matrix} H & & & & H \\ & \diagdown & & \diagup & \\ & C & = & C & \\ & \diagup & & \diagdown & \\ H & & & & CL \end{matrix}$$
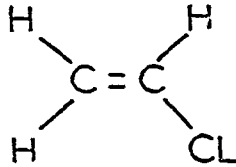
उपयोग बरसाती, सोफा और पर्दोका कपडा, टाइल्स, होज-पाइप, विद्युत् तथा उष्णता अवरोधक तार, ग्रामोफोन रेकर्ड जूतेके तले, बटुए, सामान ले जानेके सन्दूक, लैम्प शेड, खिलौने, छातेका कपडा आदि। अब तो समूचा जूता भी इससे बनने लगा है।

४ पोलीविनिलिडीन क्लोराइड अणुकी एकलक सरचना निम्नानुसार है:

$$\begin{array}{ccc} H & & CL \\ & C=C & \\ H & & CL \end{array}$$

उपयोग रसायनोके लिए काममे ली जानेवाली नलियॉ, ब्रश, सोफेका कपडा, खिडकियोंके पर्दे और रसायनोको छाननेका कपडा (निस्यन्दन कपडा—filter cloth)।

५ पोलीस्टाइरिन एकलककी अणु सरचना इस प्रकार है.

$$\begin{array}{ccc} H & & CL \\ & C=C & \\ H & & C_6H_5 \end{array}$$

उपयोग रेडियोकी मजूषिकाएँ (केविनेट), प्रशीतकोके पुर्जे, दीवाल पर जडनेके टाइल्स, उपकरणिकाओ (instrument)के दिल्हे या फलक (panel) आदि।

६ स्टाइरिन-एक्रिलोनाइट्राइल सह-बहुलक अणु सरचना (एकलक)·

$$\begin{array}{ccc} H & & H \\ & C=C & \\ H & & C_6H_5 \end{array} ,\ CH_2= CHCN$$

उपयोग वायुयानके केविनके अन्दरके हिस्से, अन्य उपयोग पोलीस्टाइरिनके सामान।

७ पोली मिथाइल-मेथाक्रिलेट (प्लेक्सि ग्लास) अणु सरचना (एकलक)·

$$\begin{array}{ccc} H & & CH_3 \\ & C=C & \\ H & & C(=O)CH_3 \end{array}$$

उपयोग . मोटर गाडीके पीछेकी विजली वत्तियाँ, कारखानोकी खिडकियाँ, पाइप ब्रशके हत्थे। पारदर्शक होनेके कारण इस प्लास्टिकका उपयोग कॉचकी जगह किया जा सकता है।

८ पोलीवाइनिल ब्यूटिराल अणु सरचना (एकलक)

$$H_2C=CH-O-C(=O)-CH_3 \quad , CH_3CH_2CH_2\overset{H}{C}=C$$

उपयोग यह प्लास्टिक रवर जैसा है और काचके साथ मजवूतीसे चिपक जाता है। सुरक्षा काँच (safety glass)के भीतरकी परतके लिए इसका उपयोग किया जाता है।

९ पोलीक्लोरो ट्राइफ्लुओ एथिलीन ('Kel-F') अणु सरचना (एकलक)

$$(Cl)(F)C=C(F)(F)$$

उपयोग रसायनोके प्रति प्रचुर प्रतिरोध क्षमता, विद्युत् विसवाहकके रूपमे प्रयुक्त।

१० पोलीटेट्राफ्लुओरो एथिलीन एकलककी अणु सरचना
४५०°से ५००° फे० ताप पर मृदु होता है। इसे 'टेफलॉन' भी कहते है।

$$F_2C=CF_2$$

उपयोग 'टेफलॉन' अत्यन्त 'स्थिर' पदार्थ है। यह कहना कि इसे कुछ नही होता, अत्युक्ति न होगी। कोई भी चीज इस पर चिपकती नही और इस पर लगी सब चीजे जलकमलवत् फिसल जाती है। सबसे पहले इसका उपयोग परमाणु-वम बनानेके पेकिगके लिए किया गया था। द्रव ईंधन रखनेके पात्रोमे इसका अस्तर लगानेसे वह ईंधन ठण्डसे जमता नही है। इसीलिए काफी ऊँचाई पर उडान भरनेवाले वायुयानोका ईंधन टेफलॉनकी अस्तरयुक्त टकियोमे भरा जाता है। जिन पात्रोमे इसका अस्तर लगा होता है वे अम्लो अथवा अन्य रसायनोसे सक्षारित नही होते। रसोईघरमे काम आनेवाली तलनेकी तई (छिछली कडाही)मे टेफलॉन लगानेसे वह तेलसे सनती नही है और सदा साफ रहती है। शल्यक्रियामे शरीरकी अस्थियो जैसे हिस्सोके साथ इसे जोडा जा सकता है।

११ नायलोन-६६ · अणु सरचना (एकलक):

$$HO\overset{O}{\overset{\parallel}{C}}(CH_2)_4\overset{O}{\overset{\parallel}{C}}OH$$

$$NH_2(CH_2)_6NH_2$$

उपयोग ब्रश, योक्त्र, मछली पकडनेके जाल, बरसातियाँ, टेनिसके रेकेटकी डोरियाँ, कृत्रिम बेत (बुनाईके लिए) आदि।

१२ नायलोन-६ (केप्रोलेक्टाम) . अणु सरचना (एकलक).

$$CH_2,\ CH_2,\ CH_2,\ C{=}O,\ CH_2,\ NH$$
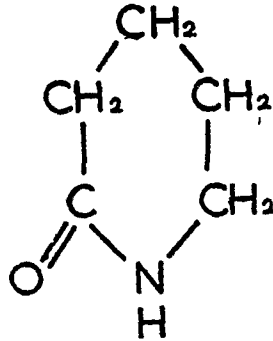
उपयोग नायलोन-६६के समान।

१३ पोलीकार्बोनेट प्लास्टिककी अणु सरचना (एकलक) है

$$C_6H_5{-}O{-}\overset{O}{\overset{\parallel}{C}}{-}O{-}C_6H_5$$

$$HO{-}C_6H_4{-}\underset{CH_3}{\overset{CH_3}{C}}{-}C_6H_4{-}OH$$
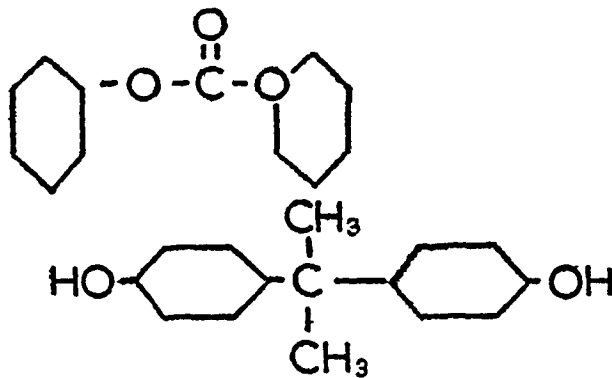
उपयोग 'लेक्सान' और 'मरलोन' नामसे प्रसिद्ध यह प्लास्टिक बहुत मजबूत होता है। इसमे धातुके जितनी दृढता होती है। आघात सहनेकी क्षमता होती है और उष्णताका अच्छा प्रतिरोधक है। प्लास्टिकके कीलक (रिबेट), कीले, कावले (बोल्ट) आदि इसी प्लास्टिकसे बनाये जाते है।

१४. पोलीक्लोरोइथर (पेण्टेन) अणु सरचना (एकलक).

$$ClCH_2{-}\overset{H}{C}{-}CH_2 \quad H_2C{-}O$$
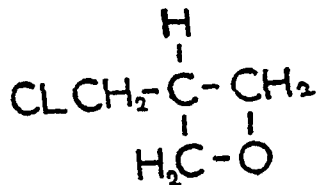
उपयोग . पम्पके हिस्सी और जहाँ रसायनोका प्रतिरोध करनेकी आवश्यकता होती है वहाँ लगाये जानेवाले हिस्से बनाये जाते है। पेण्टाएरिथ्रिटोलसे इसे प्राप्त किया जाता है।

१५ पोलीफार्मोल्डिहाइड (डेल्रीन) एकलककी अणु सरचना

$$H_2C=O \quad , HOROH$$
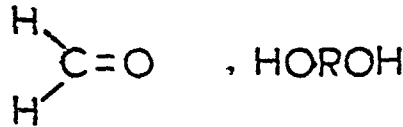
उपयोग इसे 'एसीटाल प्लास्टिक' भी कहते है। इसमे धातुओ जैसे गुण होते है। यह धातु और प्लास्टिकको जोडने वाले सेतुकी तरह है। अत्यन्त मजबूत, रसायनोका प्रतिरोध करनेकी क्षमतासे सम्पन्न और इच्छित आकार ग्रहण करने योग्य यह प्लास्टिक है। इसकी दृढता पर पानीका कोई असर नही होता। यत्रोके पुर्जे धारक (Learings) और धारक अन्तर (bustings) इससे बनाये जाते है।

१६ पोलीयुरेथन एकलककी अणु सरचना

$$CH_3-C_6H_3(-N=C=O)(N=C=O) \qquad HO\overset{O}{\overset{\|}{C}}R\overset{O}{\overset{\|}{C}}OH$$
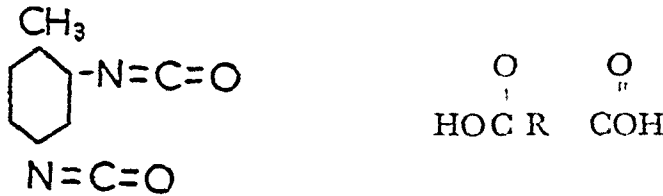
उपयोग नायलोनके अनुसार। फेनिल अवस्थामे भी तैयार किया जाता है। इसके कालीन, कम्बल, रग, तकिए तथा मोटरके टायर बनाये जाते है।

१७ वानस्पतिक सेल्यूलोज़ प्लास्टिक सेल्यूलोज एसीटेटकी अणु सरचना

$$\left[\cdot O \cdot (CH_2OR,\ H,\ OR,\ H,\ H\ OR) - O - (H\ OR,\ H,\ OR,\ H,\ H,\ CH_2OR) \cdots \right]_n$$

$$n = 50-100$$

$$R = -\underset{\overset{\|}{O}}{C}-CH_3$$
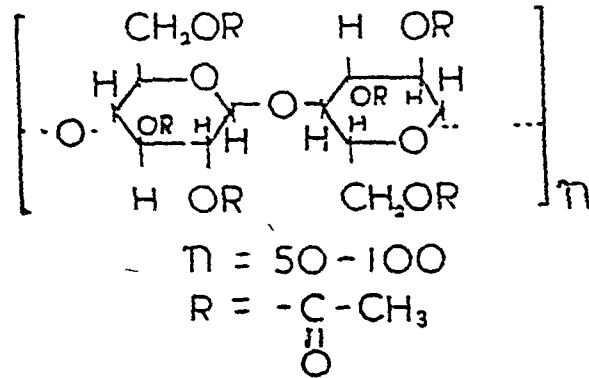
१८ सेल्यूलोज़ नाइट्रेट · अणु सरचना

$$n = 250$$

$$R = NO_2$$

१९ सेल्यूलोज़ एसीटेट ब्यूटिरेट अणु सरचना

$$R = \overset{O}{\overset{\|}{C}}-CH_3$$

$$R' = -\overset{O}{\overset{\|}{C}}CH_2CH_2CH_3$$

२० एथिल सेल्यूलोज अणु सरचना .

$$n = 250$$

$$R = CH_2CH_3$$

उपयोग कघे, चश्मेके फ्रेम, मेजपोश, जूतोके तले, फाउण्टेनपेन, वटन, फर्नीचरकी पेटियाँ, बेलन, रेडियोकी जालियाँ, भित्तिफलक (wall-board), औजारोके हत्थे, पियानोकी चाभियाँ आदि। सेल्यूलोज नाइट्रेड ज्वलनशील होनेके करण आजकल उसका बहुत कम उपयोग किया जाता है।

(आ) ताप स्थापित प्लास्टिक (थर्मोसेटिंग)

२१ फिनोल-फार्मोल्डिहाइड (बेकेलाइट) : अणु सरचना (एकलक) :

$$C_6H_5OH \; ; \; H_2C{=}O$$

उपयोग आटोमोबाइलके 'प्रज्वलन' (ignition)के पुर्जे, फर्नीचर, फिल्मोको धोने (develop)की किश्ती, टेलीफोनका हत्था, दीप-धारक तथा कोटर (lamp holder & socket), कला-कृति, कृत्रिम पर्ती लकडी (ply wood) आदि।

२२. यूरिया फॉर्मोल्डिहाइड एकलककी अणु सरचना

$$H_2NC(=O)NH_2, \; CH_2O$$

उपयोग रसोईघरमे काम आनेवाली चीज, रेडियो मजूपिका, पटल-भाण्ड (table-ware), ब्रशके हत्थे, आकाच लेपन (enamel coating) आदि।

२३ मेलेमिन-फॉर्मोल्डिहाइड · अणु सरचना (एकलक) :

$$C_3N_3(NH_2)_3 \; , \; CH_2O$$

उपयोग धुलाई मशीनका प्रक्षोभक (agitator), रगीन आकर्षक पटल-भाण्ड, भोजन करनेकी तश्तरियाँ, भोजन की मेज पर इस्तेमाल की जानेवाली वस्तुएँ आदि।

२४ एपोक्सी अणु सरचना (एकलक)

$$HO{-}C_6H_4{-}C(CH_3)_2{-}C_6H_4{-}OH \; , \; \overset{O}{CH_2{-}CH}CH_2CL$$

उपयोग पाइप लाइने और मुद्रित परिपथ (printed circuit), औद्योगिक सामग्री, धातुसे संलग्न करनेवाला आसजक (adhesive) द्रव एव ठोस दोनो अवस्थाओमे प्राप्त हो सकता है।

विना किसी दावके चीजोको एक-दूसरेमे मजबूतीके साथ चिपकानेके लिए इस प्लास्टिकका उपयोग किया जाता है। रसायनकोके प्रति अतीव प्रतिरोधात्मक शक्ति वाला होनेके कारण रासायनिक कारखानोंके अन्दर साज-सामानमे परतें लगानेके काम आता है।

२५ पोली एस्टर अथवा आल्किड . अणु सरचना (एकल्क)

$$HC=CH \text{ (maleic anhydride ring: } C(=O)-O-C(=O)) \quad H_2C=CH-C_6H_{11} \quad , HOROH$$
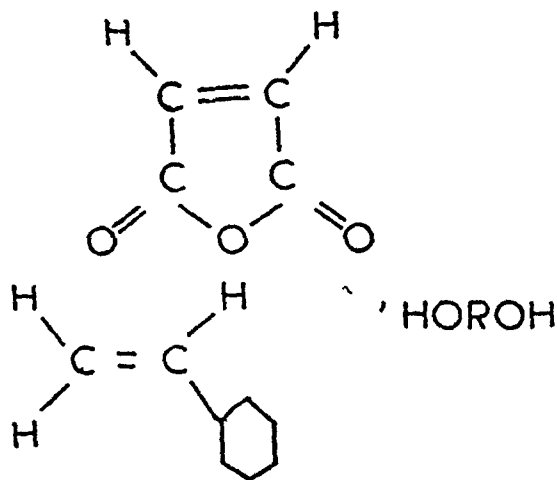
उपयोग रगके सवाहक और ढलाई चूर्णके रूपमे तथा आमतौर पर योजक (binder), प्लास्टिककारक (plasticizer) ओर अस्तर लगानेके लिए इसका अविक उपयोग किया जाता है।

२७ सिलिकोन्स अणु सरचना

$$(CH_3)_2\,SiCL_2$$

$$(C_6H_{11})_2\,.\,SiCL_2$$
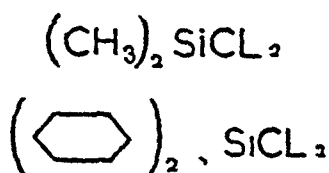
उपयोग विद्युत् स्विच, वस्त्रकी परिसज्जा (finish), प्रेरण तापक उपकरण (induction heating appliances), काँचके कपडेके ऊपरका अस्तर आदि।

सारणी : १

खास किस्मके प्लास्टिक

(१) एक्रिलिक पोलीमेथाक्रिलेट, पोलीएलीक्रेट और एक्रिनोलाइट्राइल वहुलक (पोलीमर) वर्गके रासायनिक पदार्थ।

(२) आल्किड रेजिन (व्यापारिक नाम प्लास्कोन)।

(३) सेल्यूलोजिक (वानस्पतिक) सेल्यूलोज एसीटेट, सेल्यूलोज प्रोपिओनेट, सेल्यूलोज एसीटेट व्यूटिरेट, एथिल सेल्यूलोज।

(४) एपोक्सी रेजिन

(५) मेलेपिन रेज़िन

(६) नायलोन

(७) फिनोलिक

(८) पोली एस्टर

(९) पोली फ्लुओरो कार्बन

(१०) पोली फॉर्मील्डिहाइड रेज़िन

(११) पोली ओलेफीन पोली एथिलीन, पोली प्रोपेलीन आदि

(१२) पोली स्टाइरिन

(१३) पोली युरेथेन

(१४) सिलिकोन

(१५) यूरिया

(१६) वाइनिल पोली वाइनिल एसीटेट (पी० वी० ए०), पोली वाइनिल क्लोराइड, पोलीवाइनिल ऐलकोहल, पोलीवाइनिल एसीटाल—पोलीवाइनिल क्लोराइड एसीटेट।

(१७) नवीनतम प्लास्टिक पोली कार्बोनेट और पोली क्लोरोईथर।

सारणी : २

खाद्य पदार्थ रखनेके लिए प्लास्टिकोंकी उपयुक्तता-अनुपयुक्तता

उपयुक्तता	अनुपयुक्तता
पुनर्जनित सेल्यूलोज	फिनोल–फॉर्मील्डिहाइड (वेकेलाइट)
पोली एथिलीन	पोली युरेथेन (फेनिल रवर)
पोली प्रोपेलीन	पोलीईथर
पोली स्टाइरिन	केसीन
पोली मिथाइल मिथाक्रिलेट	
पी० टी० एफ० ई० (टेफलॉन)	
नायलोन	
आल्किड (पोलीएस्टर)	
मेलेमिन फॉर्मील्डिहाइड	
पोली विनिल क्लोराइड (पी० वी० सी०)	

सारणी : ३

निम्नगामी क्रममें प्लास्टिकोंकी कीमत

[प्रति पौण्ड २ पाउण्डसे ३ शिलिंग तककी सीमामें]

टेफलॉन पोली कार्बोनेट, नायलोन, एसीटाल, एपोक्साइड, सेल्यूलोज, प्रोपिओनेट सेल्यूलोज एसीटेट ब्यूटिरेट, एक्रिलिक, सेल्यूलोज़ एसीटेट, पोली प्रोपेलीन, पोलीएस्टर, मेलेमिन फॉर्मील्डिहाइड, पोली एथिलीन (भारी), पोलीएथिलीन (हल्का) पोलीविनिल क्लोराइड पोलीविनिल ऐल्कोहल, पोली स्टाइरिन यूरिया-फॉर्मील्डिहाइड, फिनोल फॉर्मील्डिहाइड।

આલ્કલી સેલ્યુલોઝનો પરિપાક
આલ્કલી સેલ્યુલોઝનું છીણ પાડવું
સેલ્યુલોઝ ઉપર આલ્કલીની પ્રક્રિયા
સૂકવણી
સેલ્યુલોઝની પતરીઓ
લાકડાં

ઝાન્થેટિંગ
દ્રાવણ
વિસ્કોઝની મેળવણી
ગાળણ અને હવા કાઢી નાખવી
કાંતણ માટે તૈયાર વિસ્કોઝ
કાતણી
૧ એસિડ
૨ કાતણી
૩ તાંતણો
૪ વલોણું
રેયોન

बीसवो सदीके वल्कल

१३ : संश्लिष्ट वस्त्र-रेशे

वस्त्रोने हमारे रहन-सहन और सामाजिक व्यवस्थामे महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की है। हमारे जीवनमे हवा, पानी और भोजनके बाद वस्त्रोका महत्त्वपूर्ण स्थान है। लेकिन वस्त्रोका उपयोग केवल शरीरको ढकनेके ही लिए नही किया जाता। व्यक्तिके अहम्‌का पोपण करनेमे भी वस्त्रोका प्रमुख भाग रहा है। वस्त्रोद्योगके विकासका यह भी एक कारण है। व्यक्तिकी 'प्रतिष्ठा' भी बहुत कुछ उसके वस्त्रो पर निर्भर करती है। फिर 'फैशन' बदलनेके साथ-साथ नये ढगके वस्त्र बनानेके लिए अधिक कपडे खरीदे जाते है। सुन्दर दिखनेकी इच्छा मानव स्वभावकी मूल एषणा है। 'एक नूर आदमी, हजार नूर कपडे' कहावत मानव जीवनके व्यावहारिक पहलूका मूल मत्र ही बन गई है।

पहले, सुन्दर वस्त्र सम्पन्न वर्गोकी इजारेदारी थी। अब यह एकाधिकार टूटता जा रहा है और सामान्यजनको भी सुन्दर और अच्छे कपडे सुलभ हो गए है। इस प्रकार, सश्लिष्ट वस्त्र-रेशोने जनतामे समता स्थापित करनेकी दिशामे उल्लेखनीय योगदान किया है।

रेयान रेशम सूत

मानव निर्मित कृत्रिम अथवा सश्लिष्ट रेशेका विचार सबसे पहले इस विज्ञानके पिता समझे जानेवाले अग्रेज वैज्ञानिक राबर्ट हूकके मनमे १६६४ ई०मे उदित हुआ था, ऐसा माना जाता है। यद्यपि उनसे सहस्रो वर्ष पूर्व प्राचीन मिस्रवासियोने मकडीको जाला बुनते देख उसकी देखादेखी कपडे बुनना आरम्भ कर दिया था। रेशमका कीडा शहतूतकी पत्तियाँ खाकर अपने पेटसे लसदार चाशनी-जैसे चिपचिपे द्रव पदार्थका तार बाहर निकालता है, जो बाहर आते ही

तरल अवस्थासे ठोस अवस्था ग्रहण कर लेता है। यह देखकर कृत्रिम रेशेके सृजनकी सम्भावनाकी भविष्यवाणी रावर्ट हूकने लगभग ३०० वर्ष पूर्व की थी। फिर भी १९वी सदीके उत्तरार्द्ध तक पहला मानव निर्मित कृत्रिम रेशा बनाया न जा सका।

मनुष्य द्वारा बनाये हुए कृत्रिम रेशमके लिए अब 'रेयन' नाम रूढ हो चुका है। अंग्रेजी शब्द 'रे' का अर्थ होता है 'किरण', इसलिए किरण-जैसे चमकीले तन्तुका नाम 'रेयन' रखा गया।

रेयन बनानेमे लगनेवाला मूल पदार्थ 'सेल्यूलोज' है, जो वृक्षोकी गीली लकडीमे प्राप्त किया जाता है। इसके लिए देवदारु, पाइन (चीड), सनोवर (झाऊ-Spruce) आदि वृक्षोकी मृदु लकडी अधिक उपयुक्त है, क्योकि उनके रेशे अधिक लम्बे होते है और उनका सरलतासे रासायनिक उपचार किया जा सकता है। सेल्यूलोजकी जिस किस्मका रेयनके लिए उपयोग किया जाता है उसे आलफा-सेल्यूलोज कहते है। सेल्यूलोजकी अन्य किस्मे हेमी-सेल्यूलोज कहलाती है, कास्टिक सोडेमे विलेय होनेके कारण रेयन बनानेसे पहले इन्हे उपचारित करके सेल्यूलोजसे अलग करना आवश्यक होता है। रेयन बनानेके लिए सेल्यूलोजमे आलफा किस्मका अनुपात ९८ प्रतिशतसे अधिक होना ही चाहिए। रूई और बिनौलो परके छोटे रेशो (linters)मे सेल्यूलोज बहुत अधिक मात्रामे रहता है।

रेयनके पश्चात् ऊनके समान गुणोवाले कृत्रिम रेशोका सृजन किया गया। इनके लिए आवश्यक कच्चा माल दूध, सोयाबीन, मूँगफली ओर मक्का आदिसे प्राप्त किया गया था। कालान्तरमे कृत्रिम रेशोको बनानेमे मूल रसायनकोका आदि पदार्थोके रूपमे उपयोग किया जाने लगा, उदाहरणके लिए नायलोन और टेरीलीनको लिया जा सकता है। इन रासायनिक द्रव्योको पेट्रोलियमके आसवनसे प्राप्त किया जाता है, इसलिए इन पदार्थोसे निर्मित रेशे पूरी तरह कृत्रिम होते है। इसके विपरीत ऊनके समान गुणोवाले कृत्रिम रेशे प्राकृतिक पदार्थोसे प्राप्त किए जानेवाले कच्चे मालसे बनाये जाते है, इसलिए उन्हे अर्द्धकृत्रिम रेशा कहा जाता है।

रेयन बनानेकी चार विधियाँ है इन विधियोसे बने चार प्रकारके रेयनमे एक तो नाइट्रो-सेल्यूलोज अथवा शार्दोने रेयन, दूसरा, विस्कोस रेयन, तीसरा क्यू प्रेमोनियम अथवा ताम्र रेयन ओर चौथा सेल्यूलोज एसीटेट रेयन कहलाता है।

पहले प्रकारके अर्थात नाइट्रो-सेल्यूलोज अथवा शार्दोने रेयनका आज कोई विशेष महत्त्व नही रह गया है। लेकिन सबसे पहले रेयनका सफल निर्माण इसी विधिसे किया गया था, इसलिए इसका ऐतिहासिक महत्त्व तो है ही। काउण्ट हिलेर द शार्दोनेके जीवन-भरके कठोर परिश्रमका यह परिणाम था। शार्दोनेकी कार्य विधिमे सेल्यूलोजको नाइट्रिक अम्लकी क्रिया द्वारा रूपान्तरित करके उसे ईथर और ऐलकोहलके मिश्रणमे घुलाया जाता जिससे शीरे-जैसा गाढा द्रव बनता था, उस द्रवको एक खास प्रकारकी चलनी (Spinneret तन्तुवाय)के महीन छेदोकी राह जोरके साथ बाहरकी ओर धकेला जाता था। वह छिद्रोके बाहर लम्बे तार अथवा तन्तुके रूपमे निकल आता था। बाहर आते ही तन्तुओमे विद्यमान ईथर और ऐलकोहल हवामे उड जाते और केवल तन्तु रह जाते थे। आरम्भमे इस रेयनको बडी सफलता मिली, लेकिन बादमे ज्यादा अच्छी विधियाँ रेयन बनानेकी खोज ली गई। फिर इस विधिसे बनाया जानेवाला रेयन जल्दीसे जल उठता था, इसलिए कालान्तरमे इसका उत्पादन बन्द कर दिया गया।

दूसरे प्रकारके अर्थात् विस्कोस रेयनके उत्पादनमे मूल पदार्थ सेल्यूलोज है, जो हलकी और मृदु लकडी (देवदारु, चीड, सनोवर, बाँस आदि)से प्राप्त किया जाता है। १८९१ ई०मे चार्ल्स क्रोच, एडवर्ड बेवन और क्लेटन बिडल नामके तीन अंग्रेज रसायनविदोने सेल्यूलोजकी जिस रासायनिक प्रक्रियाकी खोज की थी, उस पर इस प्रकारका रेयन बनानेकी विधि आधारित है। कास्टिक सोडेके सान्द्र (१८ प्रतिशत) विलयनमे सेल्यूलोजको रखनेसे सोडा सेल्यूलोज नामक पदार्थ बनता है। इस सोडा सेल्यूलोज पर कार्बन बाइ सल्फाइड नामक रसायनकी क्रिया द्वारा सोडियम सेल्यूलोज जेन्थेट नामक पदार्थ तैयार होता है।

$$(\text{Cellulose})\ \text{ONa} + \text{CS}_2 \rightarrow \text{SC} < \begin{matrix} \text{O} & \text{Cellulose} \\ \text{S} & \text{Na} \end{matrix}$$

Cellulose xanthate
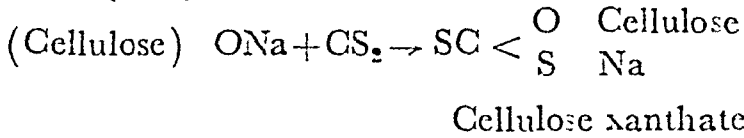
यह पदार्थ कास्टिक सोडेके विलयनमे विलेय है और उसमे इसका विलेय होकर शहद-जैसा लसदार पदार्थ बनता है। रंग-रूपमे भी यह शहद-जैसा ही होता है। इस पदार्थको विस्कोस कहते है, क्योकि अंग्रेजीमे श्यानता (चिकनाहट)के लिए 'विस्कोसिटी' शब्द है। इस विस्कोस को तन्तुवाय (स्पिनरेट)के महीन छेदोकी राह दबावके साथ बाहर खीचा जाता है। इस प्रक्रियामे विस्कोस-रूपी सेल्यूलोजका तन्तुओमे कायान्तरण हो जाता है। रासायनिक दृष्टिसे वह अपने पूर्व स्वरूप जैसा ही होता है। यह रेयन शुद्ध नही होता, इसलिए विभिन्न उपचारोके द्वारा इसका परिष्करण किया जाता है। इसकी अशुद्धियोको दूर करनेके लिए सल्फ्यूरिक अम्ल और सोडियम सल्फाइडका उपयोग किया जाता है, पीलापन दूर करनेके लिए हाइपोक्लोराइडका प्रयोग करते है। इन अशुद्धियोको दूर करनेके बाद साबुनके पानीमे और तत्पश्चात् स्वच्छ जलमे धोकर 'शुष्कक'मे सुखा लिया जाता है। सूख जानेके बाद कागजके शंकु पर आकर्षक ढंगसे लपेटकर पेटियोमे बन्द कर दिया जाता है और रेशमी कपडा बनानेवाली मिलोमे भेज दिया जाता है। इसके बने कपडेमे चमक-द्युति (lustre) होती है। बिना चमकवाला तार बनानेके लिए विस्कोस रेयनकी लुगदीमे टिटेनियम डाइआक्साइड मिलाते है।
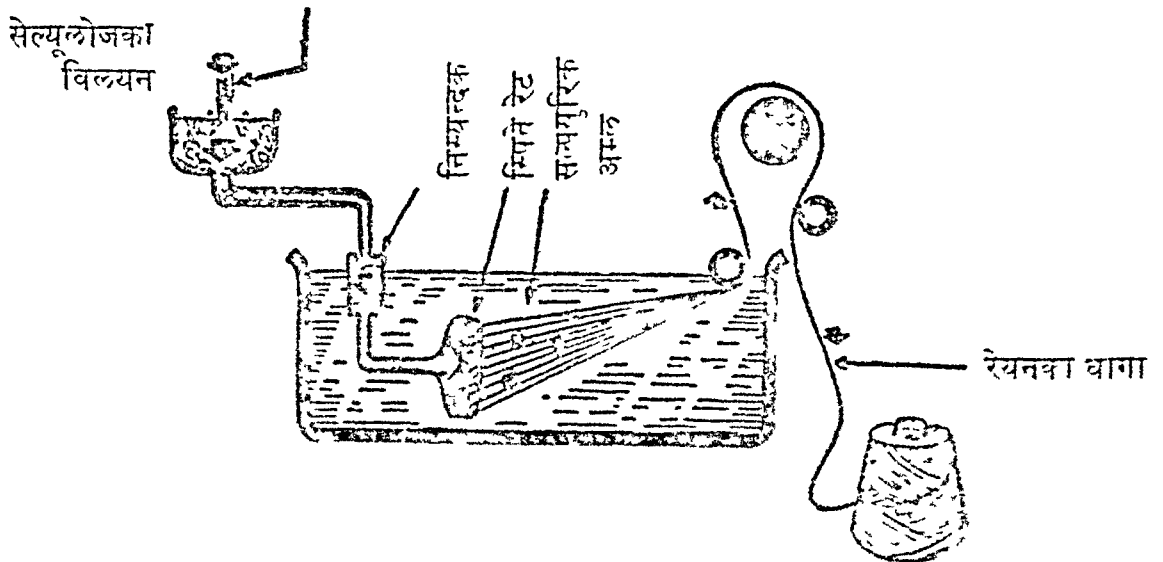
रेयनका सबसे बडा दोष यह है कि वह बहुत अधिक मात्रामे, अर्थात् ३०से ८० प्रतिशत तक आर्द्रताका अवशोषण कर सकता है और इससे उसकी दृढ़तामे ३०से ८० प्रतिशत तक कमी हो जाती है।

इसलिए रेयनकी धुलाईमे वहुत सावधानी वरतनी होती है, नही तो वह फट जाता है या मिलाईमेंसे उधड़ जाता है। इसलिए जब इस कपडेका चलन शुरू हुआ ही था तो इसके वारेमे यह कहावत रट हो गई थी कि जो 'इसको धोता है वह रोता है।'

तीसरे प्रकारका अर्थात् क्युप्रेमोनियम अथवा ताम्र रेयन खोज तो लिया गया था १८९० ई०मे ही, परन्तु वडे पैमाने पर इसका उत्पादन सात साल वाद पाउलीने किया। इसीलिए कई दिनो तक यह 'पाउली सिल्क'के नामसे जाना जाता रहा। आरम्भमे इसे वनानेमे वडी मुश्किलोका सामना करना पडा था। इस रेयनको वनानेका मूल पदार्थ सेल्यूलोज ही है और अन्तमे भी (अन्तिम पदार्थके रूपमे) वही रहता है। नीलाथूथाका ऐमोनियाके पानीमे विलेय करनेसे क्युप्रेमोनियम नामका विलयन वनता है, जो गहरे भूरे रंगका होता है। इसमे ३ प्रतिशत ताम्र (नीलाथूथाके रूपमे) और २५ प्रतिशत ऐमोनिया रहना जरूरी है।

इस विलयनमे सेल्यूलोज मिलाकर उस मिश्रणको अच्छी तरह गूँधा जाता है, जिससे वह गाढा द्रव वन जाता है। फिर उसमे इस तरह पानी वढाया जाता है कि सेल्यूलोजका अनुपात दस प्रतिशत वना रहे। इसके वाद उसमेकी हवा निकाल दी जाती है और छान लिया जाता है। कताई विस्कोसकी ही तरह की जाती है। अन्तर केवल इतना है कि सेल्यूलोजके पृथक्करणके लिए यहाँ अम्लके स्थान पर पानीका उपयोग किया जाता है। इस विधिमे तन्तुकी खिचाई अधिक की जाती है, जिससे वह प्राकृतिक रेशमके तन्तु-जैसा महीन हो जाता है। यह तन्तु भूरे रंगका होता है, इसलिए शुद्ध करना पडता है। इसके परिष्करणमे तनु सल्फ्युरिक अम्लका उपयोग किया जाता है।

इस प्रकारका रेयन 'वेम्वर्ग रेयन'के नामसे जाना जाता है। विस्कोस रेयनकी भाँति यह रेयन पुनरुत्पादित सेल्यूलोज होनेके कारण इसके रासायनिक गुण विस्कोस रेयनके ही समान होते है। भीगनेसे इसकी मजवूती घटती और यह कमजोर हो जाता है। महँगा होनेके कारण यह रेयन उद्योगमेसे निकलता जा रहा है।

चौथे प्रकारके अर्थात् एसीटेट रेयनका आरम्भिक पदार्थ तो तीनो प्रकारके रेयनकी ही भाँति सेल्यूलोज ही है, परन्तु यह रेयन अन्तिम पदार्थके रूपमे पुनरुत्पादित सेल्यूलोज नही, अपितु सेल्यूलोज एसीटेट नामक प्लास्टिक वर्गका रासायनिक द्रव्य है। इसलिए इसके गुण भी विशिष्ट प्रकारके है। विस्कोस रेयनकी खोजके पहले यह वात ज्ञात हो चुकी थी कि कपासके सेल्यूलोज पर एसेटिक अम्लकी रासायनिक क्रियासे सेल्यूलोज एसीटेट नामक पदार्थ वनता है। इस पदार्थ की वार-वार परीक्षा करने पर यह तथ्य सामने आया कि भगुर हो जानेके कारण इससे अखण्ड तार नही खीचा जा सकता। परन्तु १९१४-१८के प्रथम विश्वयुद्धमे वायुयानोके पखोको ऐसे अस्तर लगानेकी आवश्यकता पडी, जिन पर हवा अथवा पानीका असर न हो सके। इसके लिए जैव (organic कार्वनिक) रासायनिक विलायकोमे सेल्यूलोज एसीटेटका विलयन वहुत उपयोगी पाया गया, इसलिए वडे पैमाने पर इसका उत्पादन करनेके लिए ब्रिटिश सरकारने डॉ० हेनरी और केमिल ड्रेफ्स नामक स्विस रसायनविदोकी नियुक्ति की। इन लोगोने इग्लैण्डमे सेल्यूलोज एसीटेट वनानेका कारखाना लगाया और युद्धकालमे इस कारखानेमे प्रचुर मात्रामे सेल्यूलोज एसीटेट वनने लगा। युद्ध समाप्त हो जाने पर यह समस्या उठ खडी हुई कि इस पदार्थका दूसरा

कौन-सा उपयोग किया जा सकता है। समस्याका हल सेल्यूलोज एसीटेटसे वस्त्र रेशा बनाकर किया गया और इस तरह वस्त्रोद्योगको एक नये प्रकारका रेयन प्राप्त हुआ।

इस रेयनको बनानेके लिए कपासके सेल्यूलोजको एसेटिक अम्ल, एसेटिक एनहाइड्राइड और उत्प्रेरक (catalyst) सल्फ्युरिक अम्लके मिश्रणमें मथा (बिलोया) जाता है। इस क्रियासे सेल्यूलोजमें सेल्यूलोज ट्राइ-एसीटेट नामक रासायनिक द्रव्य बनता है। फिर इस पदार्थमें पानी मिलाकर मिश्रणको निश्चित अवधि तक परिपक्व किया जाता है, जिससे होनेवाले रासायनिक परिवर्तनोंके फलस्वरूप सेल्यूलोज ट्राइ-एसीटेटसे द्वितीयक (secondary) सेल्यूलोज एसीटेट बनता है, जो एसीटोन नामक द्रव रसायनकमें विलेय है। इस पदार्थका शोधन करनेके बाद एसीटोनमें इसका २५ प्रतिशत विलयन किया जाता है, जिससे इतनी श्यानता (लसलसापन) आ जाती है कि तार (तन्तु) खींचे जा सके। एसीटोन जल्दीसे उड़नेवाला द्रव है और गर्म हवामें फौरन भाप बन जाता है। इसलिए इस विधिमें कताईका काम बहुत आसानीसे हो जाता है। सेल्यूलोज एसीटेटके विलयनको तन्तुवाय (स्पिनेरेट)के महीन छेदोंकी राह बाहर खींचनेसे बाहरके गर्म वातावरणके कारण एसीटोन फौरन उड़ जाता है और अकेले सेल्यूलोज एसीटोनका तन्तु (तार) बनता रहता है, जिसे अत्यन्त शुद्ध अवस्थामें होनेके कारण, अलगसे परिष्करणके किसी उपचारकी आवश्यकता नहीं रह जाती। इस्तेमाल किये हुए अम्ल और एसीटोनको पुन प्राप्त करनेका प्रबन्ध तो किया ही रहता है।

एसीटेट रेयन गुणोंके विचारसे अन्य रेयनकी अपेक्षा भिन्न होता है, इसलिए इसे रेयनके बदले केवल एसीटेट भी कहते हैं। यह ताप सुनम्य अथवा उष्ण-मृदु अर्थात् गर्म किये जाने पर मृदु (नर्म) होनेवाला और अनेक रसायनकोंमें विलेय है। लेकिन सौभाग्यसे यह पेट्रोल और उसी प्रकारके अन्य तेलोंमें विलेय नहीं है। इस गुणवत्ताके कारण इस पर कमीजके कालर, कफ आदि भागोंको कड़े रखनेका खास उपचार किया जाता है। फिर यह स्पर्शमें भी शीतल नहीं है। इसकी दूसरी विशेषता यह है कि उचित पदार्थ मिलानेसे इसमें यथावश्यक चमक (द्युति) पैदा की जा सकती है। फिर वस्त्र बनानेका रेशा होनेके अतिरिक्त यह एक महत्त्वपूर्ण प्लास्टिक भी है, जिससे फिल्म आदि अनेक प्रकारकी वस्तुएं बनाई जा सकती है।

सेल्यूलोजसे बननेवाले वस्त्र-रेशोंकी कहानी यहां समाप्त हुई। अब हम कृत्रिम ऊन (प्राकृतिक प्रोटीनके रेशे)की बनावटकी ओर मुड़ते हैं।

दूध, सोयाबीन, मूंगफली, मक्का आदि पदार्थोंके प्रोटीन (प्रोभूजीन, गुजरातीमें नत्रिल)से ऊनके गुणोंवाले रेशोंका निर्माण सम्भव हो गया है। दूधके केसीनसे १९३५ ई०में फेरेण्टी नामक इतालवी वैज्ञानिक दस वर्षके परिश्रमके उपरान्त वस्त्र रेशा बनानेमें सफल हुआ था। उसके आविष्कारका उपयोग करके एक इतालवी कम्पनी १९३७में 'लेनिटाल' नामक वस्त्र रेशेका उत्पादन बड़े पैमाने पर कर रही है। अमरीकामें इसी प्रकारका रेशा 'आरालाक' नामसे प्रसिद्ध है। मक्काके प्रोटीनसे 'विकारा' नामक वस्त्र रेशा बनाया जाता है। मूंगफलीके प्रोटीनसे इंग्लैण्डमें 'आरडिल' नामक रेशा बनाया गया था। प्रोटीनसे बनाये जानेवाले रेशोंको एक वर्गके रूपमें 'एजलॉन' कहा जाता है।

इन रेशोंको कृत्रिम (अथवा संश्लिष्ट) ऊन कहा जा सकता है क्योंकि ऊनकी रासायनिक संरचनासे इनकी रासायनिक संरचना बहुत-कुछ मिलती-जुलती है।

इन रेशोको बनानेके लिए सबसे पहले मूल पदार्थसे उसके प्रोटीनको विलग किया जाता है और तब कास्टिक सोडाके उपचारके द्वारा प्रोटीनको गाढे लसदार द्रव पदार्थमे परिवर्तित करते है। अन्तमे उसे तन्तुवायकी राह दबावके साथ बाहर निकालकर रेशोके रूपमे प्राप्त किया जाता है। इन तन्तुओको फॉर्मल्डि-हाइडके विलयनमे धोनेसे ये कडे हो जाते है। इन रेशोके टुकडे करके ऊनके रेशोके साथ मिलाकर काता जाता है। सूती और ऊनी कपडोकी मिलोमे जो मशीनें होती है उन्हीसे इस मिश्र धागेके कपडे बुने जाते है।

डा० वालेस ह्यम केरोदर्स
(१८९६-१९३७)

ऊपर जिन रेशोका वर्णन किया गया है उनका मूल पदार्थ प्राकृतिक वस्तुओसे प्राप्त किया जाता है, इसलिए उन्हे पूर्णत मानव निर्मित नही कहा जा सकता, जबकि नायलोन, टेरीलीन, एक्रिलान आदि वस्त्र रेशे मूलत रसायनकोसे बनाये जाते है, इसलिए उन्हे पूर्णत मानव निर्मित (fully synthetic) कहा जाता है। १९२७मे अमरीकाकी ड्यूपाण्ट कम्पनीमे डा० वालेस ह्यम केरोदर्सने अणुओके सयोजन-सम्बन्धी जो मालिक अनुसन्धान किये, उनके फलस्वरूप नायलोन और अन्य रेशोका
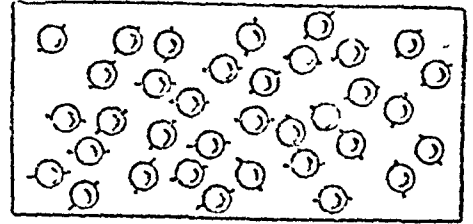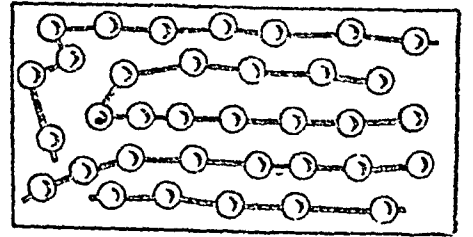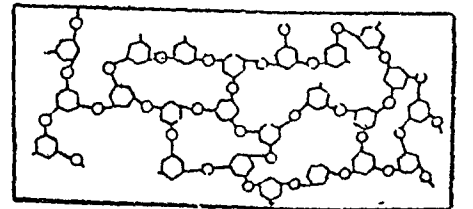
निर्माण सम्भव हो सका। रेशोके निर्माणमे अणुओकी दो अलग-अलग क्रियाओका अलग-अलग नामकरण किया गया है। एक क्रियाको सघनन (condensation) और दूसरीको बहुलीकरण (polymerisation) कहते है। बहुलीकरणमे एक ही जैसे अणुओका एकत्रीकरण (सघनन)

होता है और पदार्थ भारी हो जाता है। इस प्रकार एकत्रित होनेवाले अणुओंके एक समूह (गुच्छे)को एकलक (मोनोमर) कहते हैं। अनेक एकलकोंके संयुक्त होनेसे बहुलक (पोलीमर) बनता है। कार्बनिक (आर्गेनिक) अम्ल (उदाहरणके लिए एसेटिक अम्ल) और ऐल्कोहलके रासायनिक संयोगके परिणामस्वरूप 'पोलीएस्टर' वर्गके द्रव्य उत्पन्न होते हैं। ऐमाइन नामके अणुओंका वर्ग कार्बनिक अम्लसे संयोजित होकर पोलीऐमाइड नामक पदार्थ बनाता है। इस प्रकारके द्रव्योंमें शीत और उष्णताके नियन्त्रणके द्वारा प्रत्यास्थ (स्थिति स्थापक) पदार्थ बनाये जा सकते हैं और अनुकूल स्थितिमें उनसे तार (तन्तु) भी खींचे जा सकते हैं।

नायलोन बनानेमें काम आनेवाले आदि पदार्थ—एडिपिक अम्ल और हेक्सामिथिलीन डाइऐमाइन—मूलतः फिनोलसे प्राप्त किये गए थे। फिनोल बेनजिनसे और बेनजिन तारकोल अथवा पेट्रोलियमसे प्राप्त किया जाता है। फिनोलसे साइक्लोहेक्सेनोल नामक पदार्थ बनाया जाता है। उससे नाइट्रिक अम्लकी क्रियाके द्वारा एडिपिक अम्ल बनाते हैं। दूसरा पदार्थ हेक्सामिथिलीन डाइऐमाइन एडिपिक अम्ल और ऐमोनियाकी पारस्परिक क्रियासे बनता है। अन्तमें हेक्सा-मिथिलीन डाइऐमाइन एडिपिक अम्लको मिथाइल ऐल्कोहलमें अलग-अलग एकत्रित किया जाता है और इन विलयनोंको आपसमें मिलानेसे हेक्सामिथिलीन डाइऐमाइन एडिपेट नामक पदार्थका पृथक्करण होता है, उस पदार्थको 'नायलोन सॉल्ट' कहते हैं। फिर इस नायलोन सॉल्टका बहुलीकरण किया जाता है, अर्थात् नायलोन सॉल्टके एकलकोंका अणुसंघनन करके बहुलक बनाया जाता है, जो नायलोन-६६ कहलाता है, क्योंकि ऐमाइन तथा अम्ल प्रत्येकमें ६ कार्बन अणु होते हैं। उसके बादके प्रक्रममें बहुलकको काटकर छिप्टियां (साबुनके चिप्स-जैसी) बनाते और उन्हें गलाकर जो रस बनता है, उससे नायलोनके तार खींचे जाते हैं। ठण्डे हो जानेसे

[illegible]

कम्पनीने वाणिज्यीय आधारपर नायलोनका उत्पादन आरम्भ किया। परन्तु दूसरा महायुद्ध छिड जानेसे उसका अधिकाश उपयोग सैनिक कार्योमे वायुयानके टायर और हवाई छतरियाँ (पैराशूट) बनानेमे ही हुआ। युद्धकी समाप्ति पर ही उसका उपयोग पुन वस्त्र रेशे बनानेमे किया जाने लगा। आज तो नायलोन एक उच्चकोटिके वस्त्र रेशेके रूपमे लोकप्रिय हो चुका है।

डा० केरोदर्सके अनुसन्धानका उपयोग करके इग्लैण्डमे ब्रिटिश वैज्ञानिक डा० विनफील्ट और डिक्सनने पेट्रोलियममूलक एथिलीन ग्लायकोल और टेरेथैलिक अम्ल नामक रसायनकोके सयोगसे टेरीलीन नामक वस्त्र रेशा बनाया (१९५३)। उसके बाद अमरीकामे भी ड्यूपोण्ट कम्पनीने इसी प्रकारका रेशा बनाया ओर उसका नाम 'डेक्रोन' रखा। भारतमे 'टेरीन' नामसे उसका उत्पादन १९६५से आरम्भ हुआ। जर्मनी, जापान और ससारके अन्य देशोमे विभिन्न नामोसे यह बनाया जाता है।

टेरीलीन और नायलोनका पदानुसरण कर वाइनिल, पोलीएथिलीन, पोलीवाइनिल क्लोराइड, पोलीवाइनिल ऐलकोहल, विन्योन, एक्रिलान, पोली प्रोपेलीन आदि कई प्रकारके वस्त्र-रेशे प्रयोगशालामे जन्म लेकर विभिन्न कारखानोके स्तरोके अनुसार उत्पादित होकर बाजारमे आ चुके है और अच्छी लोकप्रियता प्राप्त कर चुके है। इन वस्त्र-रेशोको बनानेके मूल पदार्थ पेट्रोलियमके रसायनक (petro-chemicals) है, इसलिए जैसे-जैसे पेट्रोलियम उद्योगका विकास होगा, इनका उत्पादन आसान होता जाएगा और कीमते भी घटेगी।

पूर्णत मानव-निर्मित रेशोके गुण प्राकृतिक रेशोके गुणोसे बहुत ही भिन्न होते है। आर्द्रता अवशोषणकी कम क्षमता, रासायनिक क्रियाओमे टिके रहनेकी शक्ति, फफूँद और कीटाणुओका सामना करनेकी सामर्थ्य और अधिक टिकाऊपन आदि उनकी विशेषताएँ है। प्राकृतिक रेशोकी खामियाँ इन रेशोके मिश्रणसे दूर हो जाती है ओर दोनोको मिलाकर जो धागा बनाया जाता है वह अधिक मजबूत होता है। ऊनके रेशेके साथ टेरीलीनका मिश्रण करके जो गर्म कपडा बनाया जाता है वह बहुत ही टिकाऊ होता है। नायलोन और टेरीलीन अथवा उनके मिश्रणवाला कपडा आर्द्रता अवशोषी नही होता इसलिए जल्दी सूख जाता है। फिर वह जल्दी कुचलता भी नही, इसलिए एक बार जैसी चुनट या सिलवट (crease) डाल दी जाती है वह बनी रहती है। इसलिए इनसे बने कपडो पर बार-बार इस्त्री करने (लोहा करने)की झझटसे छुट्टी मिल जाती है।

इस प्रकार मानव-निर्मित वस्त्र-रेशोने सामाजिक क्रान्ति ही कर दी है और यह निस्सकोच कहा जा सकता है कि उनका भविष्य बहुत ही उज्ज्वल है।

तत्त्व	'आरालाक' (प्रतिशत)	ऊन (प्रतिशत)
कार्बन	५३ ०	४९ २
हाइड्रोजन	७ ५	७ ६
आक्सीजन	२३ ९	२३ ७
नाइट्रोजन	१५ ०	१५ ९
गन्धक	० ७	३ ६
फास्फरस	० ८	—

खंड : ५

स्व० त्रिभुवनदास कल्याणदास गज्जर

[जन्म · ३-८-१८६३, अवसान १६-७-१९२०]

जिनकी प्रेरणासे स्थापित और विकसित हुए

- एलेम्बिक केमिकल वर्क्स।
- अनेक रगशालाएँ।
- तकनीकी प्रयोगशालाएँ।
- कला भवन।
- वनिता विश्राम।
- अपनी भाषामे विज्ञानकी शिक्षा।

"रसायनकी मूल उत्पत्ति तो आदि कालमे ही हो गई थी। और जिस प्रकार सभी शास्त्रोकी जन्म-भूमि भारत है उसी प्रकार इसकी भी है। . . . रसायनका उद्देश्य पारसमणिकी खोज कर समस्त ससारको काचनमय करना था और अमृत अथवा एलिक्जिर खोज कर मनुष्यको दीर्घायु बनाना था .

"आजके रसायनका उद्देश्य भी उससे मिलता-जुलता ही है . हलकी (निकृष्ट) वस्तुओको उच्चकोटिके रूप-गुण प्रदान करना उद्देश्य है, और दूसरा निरोगताकी वृद्धि करना है।"

[स्व० त्रि० क० गज्जरके भाषणसे]

१४ : रंग और वर्णक

हम अपने चारो ओर तरह-तरहकी रग-बिरगी चीजे देखते है। घास-पातका हरा रग, तितलियोके पखोके इन्द्रधनुषी रग, और पशु-पक्षियो एव कीट-पतगोके शरीर पर छाये हुए रग तथा पत्थरो और खनिजोके नानाविध रग प्रकृतिके विपुल वर्ण वैभवका हमे दर्शन कराते है। रगोके प्रति मनुष्यका आकर्षण आदिकालसे चला आता है, इसीलिए प्रागैतिहासिक युगसे जो भी रग दिखाई दिये मनुष्यने उनका उपयोग किया। हर्र, मजीठ, कत्था, हल्दी, अनार (दाडिम)की छाल, पत्रग (पतगका पेड जिसकी लकडीसे गुलाल बनाया जाता है)की लकडी, कुसुब (कुसुम्भी), नील और अन्य कई पेडोकी छाल आदि वस्तुओका उपयोग कर हमारे देशके रगरेज बढिया रगाई करते थे। लियोटार्डने १८८१ ई०मे प्रकाशित अपनी एक पुस्तकमे देशी रग बनानेकी विधिकी बहुत प्रशसा की है। आचार्य श्री प्रफुल्लचन्द्र रायने देशी रगोकी कलाको पुनर्जीवित करनेका प्रयास १९२०के स्वदेशी आन्दोलनके समय रगाई कलासे सम्बन्धित एक पुस्तक प्रकाशित करके किया था। परन्तु आजके रग वानस्पतिक नही सश्लिष्ट रग है। इन रगोका प्रादुर्भाव १९वी सदीमे अग्रेज रसायनविद डब्ल्यू० एच० पर्किनके हाथो हुआ था। तारकोलसे प्राप्त किये जानेवाले बेनजिन पर आधारित एनिलीन रग निर्माणमे इसका प्रेरणा स्रोत बना। इस दिशामे कार्य उसने बेनजिनसे आरम्भ किया। उस पर नाइट्रिक अम्लकी क्रिया करनेसे नाइट्रो-बेनजिन बन सकता था, परन्तु उन दिनो इग्लैण्डमे आवश्यक घनत्ववाला नाइट्रिक अम्ल मिलता नही था, इसलिए पर्किनने बेनजिन, सोडियम नाइट्रेट और सल्फ्युरिक अम्लकी पारस्परिक क्रिया द्वारा नाइट्रो-बेनजिन प्राप्त किया। आरम्भमे इन क्रियाओके दौरान कई बार विस्फोट भी हुए, परन्तु पर्किनने हिम्मत न हारी और सतत प्रयत्नोसे इस क्रियाको निरापद ढगसे करनेकी विधि खोज निकाली।

सर विलियम हेनरी पर्किन
(१८३८-१९०७)

इस विधिसे बने नाइट्रो-बेनजिनमे लौहचूर्ण और एसिटिक अम्ल मिलानेसे उसे ऐनिलीन प्राप्त हुआ।

पर्किनने सश्लिष्ट कुनैन बनानेके लिए ऐनिलीनसे मिलता-जुलता दूसरा पदार्थ ऐलाइल टोल्युडिन लेकर उसका आक्सीकरण करनेका प्रयास किया। कुनैन तो नही बना, परन्तु एक लाल सुँघनी-जैसा पदार्थ उसे प्राप्त हुआ। आक्सीकरणकी इस क्रियासे प्राप्त अनुभवका उपयोग

उसने ऐनिलीन बनानेमे किया। ऐनिलीनके अम्ल सल्फेट और पोटेसियम डाइक्रोमेटके बीच क्रिया करनेसे उसे काले रगकी बुकनी प्राप्त हुई, जिसमे पाँच प्रतिशत बैंगनी रग था और जो ऐनिलीन पर्पल अर्थात् 'मॉव' (चमकदार बेंगनी)के रूपमे प्रसिद्ध हुआ। उसके बाद तो कृत्रिम रगोके निर्माणमे रसायनविदो ओर उद्योग-विद्या-विशारदोको सफलता पर सफलता मिलती गई और आज वह विज्ञानकी एक महान उपलब्धि हे।

सामान्य भाषामे कपडोकी रँगाईमे काम आनेवाले पदार्थो और तैलीय रग-रोगनमे इस्तेमाल किये जानेवाले पदार्थोको भी हम 'रग' नाममे सम्बोधित करते है। परन्तु वैज्ञानिक भाषामे पहले प्रकारको 'रग या रजक' ओर दूसरे प्रकारको वर्णक (pigments) कहते है।

रग अधिकतर कोई रगीन कार्वनिक योगिक अथवा पदार्थोका मिश्रण होता है। उससे कपडे, कागज, प्लास्टिक अथवा चमडे-जैसी चीजोको पक्के रगसे रगा जा सकता है। जो रग प्रकाश, हवा, पानी या साबुनकी धुलाई ओर प्रतिदिनके सामान्य उपयोगमे प्रभावित हुए बिना टिके रहते है उन्हे पक्का (fast) रग कहते हे, और जो रग इनसे प्रभावित होकर उड जाते या फीके पड जाते है उन्हे कच्चा (fugitive) रग कहते है।

बाजारमे बिकनेवाले बहुतसे रग बेनजिन और टोल्युइन-जैसे सुरभित (एरोमेटिक) हाइड्रोकार्बनो अथवा उनसे मिलते-जुलते पदार्थोसे सश्लेपित किये जाते है। रगोका मुख्य उपयोग वैसे तो कपडा रगनेमे किया जाता हे, लेकिन वे दूसरे कामोमे भी आते ह। जैसे कि अ‍ॅयलपेट (रोगन) और उनसे सम्बन्धित पदार्थोमे, तेल और मोटरगाडियोमे प्रयुक्त होनेवाले पेट्रोलमे प्रति हिमायक अथवा जमावरोधी (ठण्डसे जम न सके (anti freeze) मिश्रणोमे, अन्य रासायनिक यौगिकोमे, खाद्य पदार्थो ओर मुरब्बो, जेली, जाम आदि परिरक्षित फलोमे, स्याही ओर कागजोमे, रबर, रेजिन (बैरोजा आदि) ओर प्लास्टिकोमे, कार्बन पेपर और टाइपराइटरोके फीतो (रिबनो)मे, साबुन, नख पालिश और सोन्दर्य प्रसाधनोमे, फर्नीचरकी पालिश, मोमबत्ती और अन्य मोमी पदार्थोमे तथा कुछेक वर्णकोमे भी इन रगोका बहुलतासे उपयोग होता हे।

रगोका वर्गीकरण दो तरहसे किया जा सकता हे। एक रीति रगके अणुकी रासायनिक सरचना पर आधारित है, दूसरी रीति रग लगाते समय व्यक्त होनेवाले उसके आचरण पर आधारित है। अभी हम रासायनिक सरचना पर आधारित रीतिकी ही चर्चा करेगे। दूसरी रीतिसे किये जानेवाले वर्गीकरण पर आगे विस्तारमे चर्चा की जाएगी।

यदि हम किसी सामान्य रगके पेचीदा रासायनिक सूत्रको देखते है तो हममेसे कई बडी उलझनमे पड जाते है। लेकिन अगर हम अपने मकानकी रचना और रगके सूत्रकी बनावटका तुलनात्मक दृष्टिसे विचार करे तो रगकी सरचनाको समझनेमे जरा भी कठिनाई न होगी। विभिन्न प्रकारके मकानोका निर्माण करनेमे जिस प्रकार वास्तुशिल्पी केवल लकडी, ईट, पत्थर, इस्पात, बालू, सीमेण्ट आदि चीजोका उपयोग कर उन्हे भिन्न-भिन्न आकृतियाँ प्रदान करते है, उसी प्रकार रसायनविद केवल पाँच सौ रगोत्पादक माध्यमिको (intermediates)का उपयोग कर असख्य प्रकारके रग बना सकते है। फिर जिस प्रकार मकान बनानेमे दीवाल खडी करना, पानी छीटना (तरी करना), इस्पातका उपयोग कर खम्भे बनाना और सिल्लियाँ (slab) भरना आदि विधियोका सहारा लेना पडता है, उसी प्रकार माध्यमिकोसे भिन्न-भिन्न प्रकारके रगोका निर्माण

करनेमे भी लगभग एक दर्जन विभिन्न प्रक्रियाएँ अपनानी होती है। उन विधियोमेसे कुछको यहाँ आलेखित किया जाएगा।

किसी भी पदार्थ पर नाइट्रिक अम्लकी क्रिया द्वारा नाइट्रो समूहको ($-NO_2$) अणुमे प्रविष्ट किया जा सकता है। इस क्रियाको नाइट्रो-प्रवेशन अथवा नाइट्रेटीकरण (nitration) कहते है। पदार्थमे ऐमिनो समूह ($-NH_2$)के प्रवेशनको ऐमिनीकरण (amination) कहते है। पदार्थमे क्लोरिन (–cl) सम्मिलित करना क्लोरिनीकरण (chlorination) कहलाता है। सल्फ्युरिक अम्लके साथ पदार्थकी क्रिया कर सल्फोनिक समूह ($-SO_3H$)की अणुमे वृद्धि करना सल्फोनिक प्रवेशन कहा जाता है। नीचेके रेखाचित्रसे इन विधियोको समग्र रूपसे और सरलतासे समझनेके लिए नीचेका रेखाकन देखिए

SO_3H ← वेनजिन → NO_2 → NH_2 → H_3C–N–CH_3

सल्फोनिक प्रवेशन   नाइट्रेटीकरण   ऐमिनीकरण   एलकेलीकरण

वेनजिन सल्फोनिक अम्ल   वेनजिन

cl → OH → OCH_3

जलपृथक्करण   एलकेलीकरण   ऐनिसोल

→ फिनोल

एलकेली सगलन (fusion)
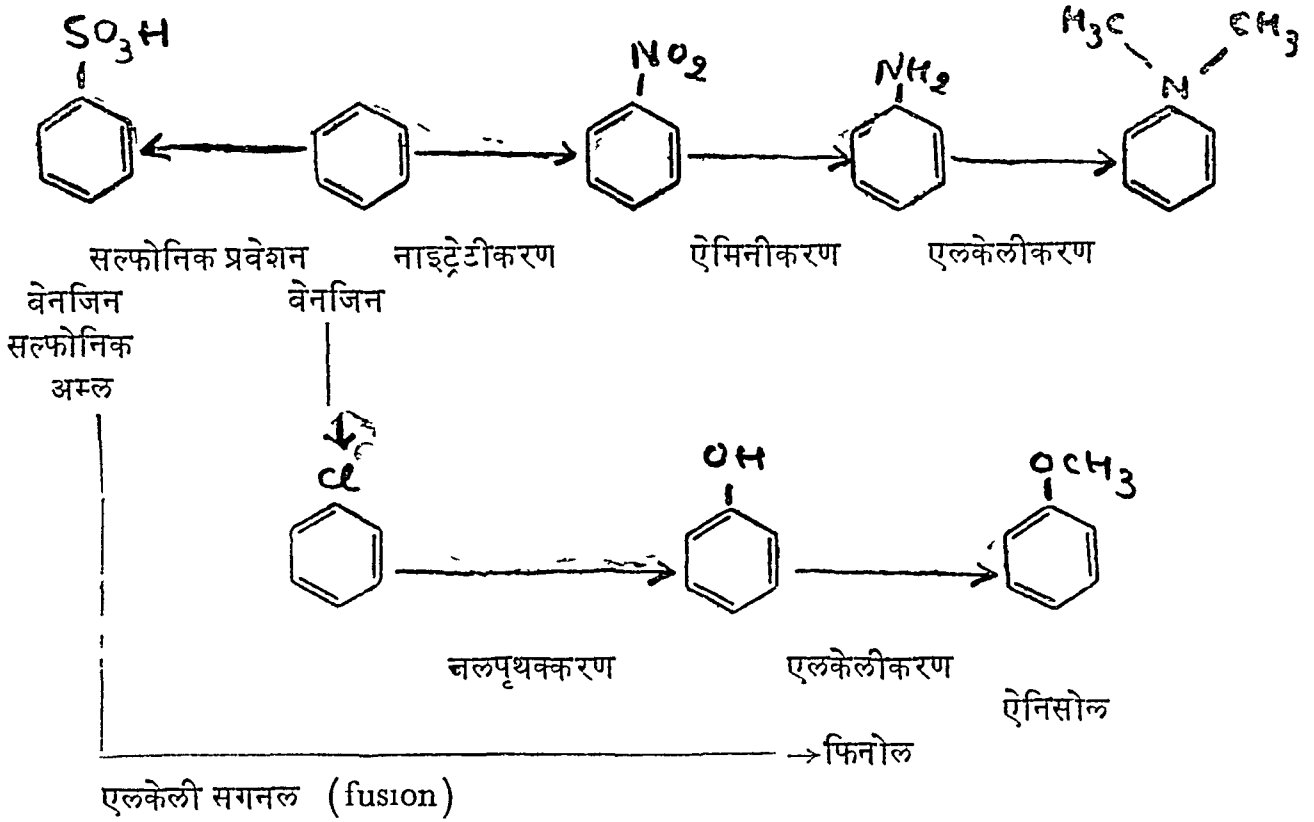
पदार्थ रगकी तरह कब आचरण करता है, यह एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न है। रगके अणुमे एक खास मात्रामे परमाणुओके वीचके बन्धनमे असन्तृप्तता होनी चाहिए। जब कार्बनको कार्बनसे जोडनेवाली रेखा एकके बदले दो या तीन दिखलाई जाएँ तो यह कहा जाएगा कि उन कार्बन परमाणुओके वीचका बन्धन असन्तृप्त है। उदाहरणके लिए वेनजिन असन्तृप्त है, परन्तु साइक्लो-

साइक्लोहेक्सेन   वेनजिन
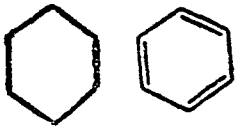
हेक्सेन सन्तृप्त है। वेनजिन और उसके वर्गके जातकोमे रहनेवाले वलयको ऐरोमेटिक कहते है। इस ऐरोमेटिक वलयके हिस्सेमे असतृप्तताका होना आवश्यक है। फिर इस असतृप्तताके साथ ही साथ कम-से-कम पेचीदा क्विनोइड सरचना भी होनी चाहिए। ये है रगके अणुसे सम्बन्धित बुनियादी शर्ते। उदाहरणके लिए वेनजिन वलय पर नाइट्रोसो समूहो (–NO) और हाइड्रोक्सिल (–OH) समूहोका प्रवेशन करनेसे हमे

एक सादा नाइट्रोसो रंग प्राप्त होता है। रिसोर्सिनॉलके साथ सोडियम नाइट्राइट और सान्द्र सल्फ्युरिक अम्लकी क्रियासे नाइट्रोसो रिसोर्सिनॉल प्राप्त होता है। इस अणुकी सरचना ऐसी है कि हाइड्रोक्सिल समूहके हाइड्रोजन परमाणु अपना स्थान बदलकर नाइट्रोसोके आक्सीजनमे सयोजित हो जाते है और द्विवन्धोमे भी परिवर्तन होता है। स्थानान्तरकी इस क्रियाको 'टॉटोमेरिज्म' कहते है और उसे प्रदर्शित करनेके लिए दोनो ओर तीरके चिह्न (⇌) लगाये जाते है। इन चिह्नोसे यह पता चलता है कि दोनो प्रकारके अणुओका पारस्परिक सन्तुलन है। दूसरे शब्दोमे यो कहेगे कि डाइनाइट्रोसो रिसोर्सिनॉल क्विनोइड सहित और क्विनोइड रहित दोनो ही अवस्थाओमे विद्यमान रहता है। क्विनोइड परमाणु लौह (Fe) से सयोजित होनेपर वर्णक बन जाता है। इस वर्णककी सरचनामे द्विवन्ध होनेसे सभी स्थितियोमे असतृप्तता बनी रहती है। लौहके परमाणुसे सयोग होने पर जो पदार्थ बना वह नये प्रकारका अणु है। उसमे धातु और कार्बनिक समूहोके साथ सयोजन हुआ है। रग बधकसे स्थायी बननेवाले (mordant) रग धातुके परमाणुओसे सयोजित होकर पक्के रग बन जाते है।
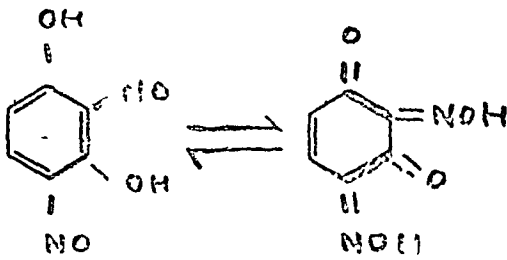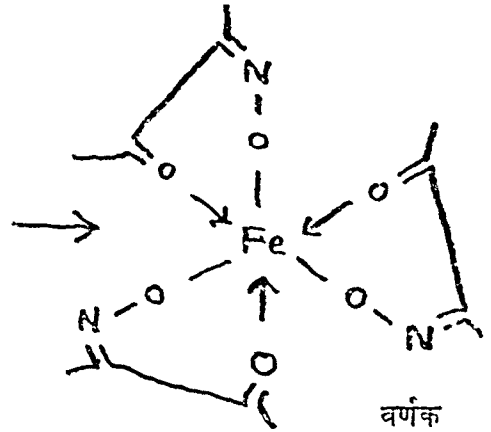
ऑटो निकोलसविट
(१८५३–१९३२)

रासायनिक सरचना और रगके बीच सम्बन्ध प्रदर्शित करनेवाले कुछ सामान्य अनुमान निरूपित किये गए है। १८६७ ई० मे ओ० एन० विटने जो तथ्य निरूपित किये वे आज भी हमारे काम आते है। हम एक सूत्र लिख सकते है रग (रजक) = वर्णजन (chromogen) + वर्ण वर्धक (auxochrome)।

वर्णमूलक या वर्णसूचक (chromophose) नामसे अभिज्ञात समूहवाले ऐरोमेटिक वलयदेहको वर्णजन कहते है। वर्णमूलक या वर्णसूचकका अर्थ ही है रग देनेवाला। ये वर्णमूलक इतने अधिक महत्त्वपूर्ण है कि रगोका वर्गीकरण इन्हीके आधार पर किया जाता है। इस प्रकारके वर्णमूलकोका अवकरण (अपचयन = reduction) सम्भव है और अवकरण होने पर रग अदृश्य हो जाता है। जब द्विबध और एकबन्ध

बारी-बारी आते हो तो अणु अधिक रगीन होता है। डाइमिथाइल फल्विन नारगी रंगका पदार्थ है। यह रगीन होते हुए भी रगकी तरह इस्तेमाल नही किया जा सकता। इससे हमे यह निष्कर्ष निकाल सकते है कि वर्णजन रगीन होता है परन्तु बुने हुए रेशोसे चिपकनेकी रासायनिक प्रवृत्ति उसमे नही होती। इसीलिए सहायक समूहोकी अर्थात् वर्णवर्धकोकी आवश्यकता पडती है। ये वर्णवर्धक अधिकतर लवण प्राप्त होनेवाले समूह ($-NH_2$, $-OH$) और उनके अभिजात होते है, अथवा पदार्थकी गलन क्षमताको बढानेवाले कार्बोक्सिल ($-COOH$) या सल्फोनिक अम्ल ($-SO_3H$) समूह होते है। इस प्रकार वर्णजनो और वर्णवर्धकोकी अद्भुत लीला रगविज्ञानमे विस्तारित है।

अब हम रगोके कुछ वर्णो (प्रकारो)से परिचित होनेका प्रयत्न करेगे। सबसे पहले अम्लीय रगो (acid colours)को लिया जाए। ये रग अम्लकी तरह आचरण करते है, इसलिए ऊन और रेशमको रॅगनेमे इनका उपयोग किया जाता है। अम्लीय रगोमे ऐज़ो, ट्राइ-फिनाइलमेथेन और एन्थ्राक्विनोन रगोका समावेश होता है। उनकी सरचनामे नाइट्रो ($-NO_2$) कार्बोक्सिल ($-COOH$) अथवा सल्फोनिक अम्ल ($-SO_3H$) समूह उपस्थित रहते है। ऊन और रेशमके अणुओमे उपस्थित प्रोटीनके मूल (basic) समूहोसे अम्ल समूह सयोजित हो जाते है। ऑरेन्ज-टू और ऐलिजरिन-ब्लू इस तरहके रगोके अच्छे उदाहरण है।
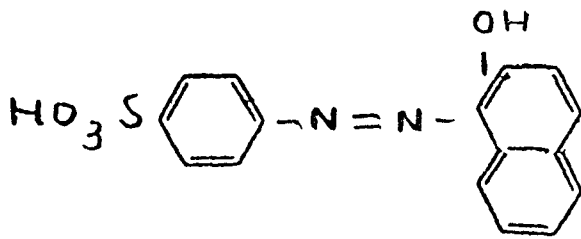
ऑरेन्ज-टू
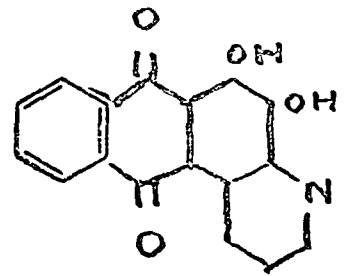
ऐलिजरीन-ब्लू

जिन रगोमे एमिनो ($-NH_2$) अथवा प्रस्थापित अमिनो ($-NHR$ अथवा NR_2) समूह रहते है उन ट्राइएटिलमेथेन अथवा जैन्थीनवर्गके पदार्थोको बेसिक रग कहते है। उनका
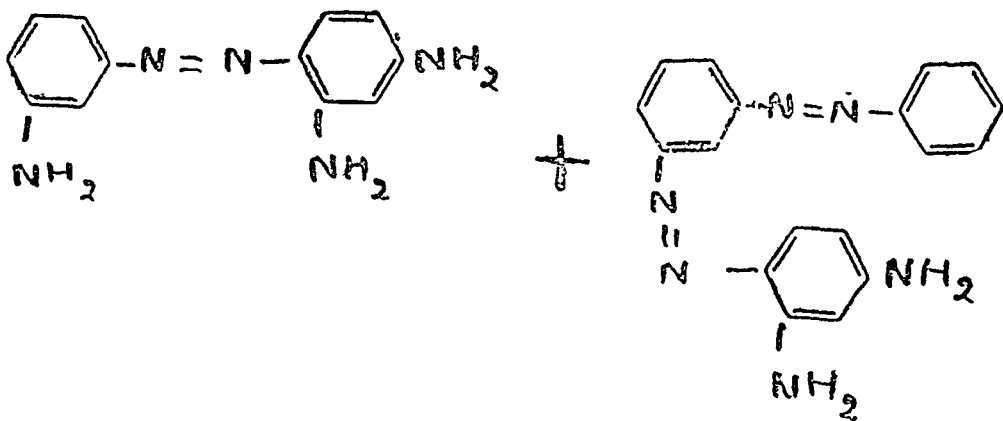
बिस्मार्क ब्राउज-जी (दोनोका मिश्रण)

खास उपयोग कागजको रँगनेमे किया जाता है। बिस्मार्क ब्राउनका उपयोग चमडेको रँगनेमे

किया जाता है। क्रिस्टल वायोलेट टाइपराइटरके फीते, कार्बन पेपर और डुप्लीकेटिंग स्याही बनानेके काम आता है। स्पिरिटमे गलनशील बेसिक रगोका लेखन और मुद्रणकी स्याही बनानेमे उपयोग होता है। कुछ विशिष्ट बेसिक रग, जैसेकि एस्ट्राजोन, नये सश्लिष्ट रेशोकी रगाई और सेल्यूलोज एसीटेटकी छपाईमे काम आते है।
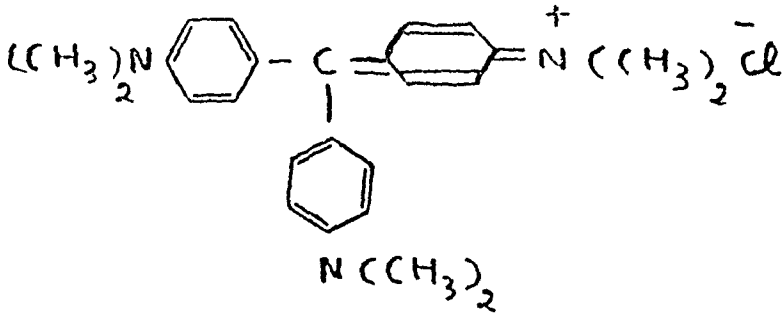
क्रिस्टल वायोलेट (ट्राइफिनाइल मेथेन वर्गका)
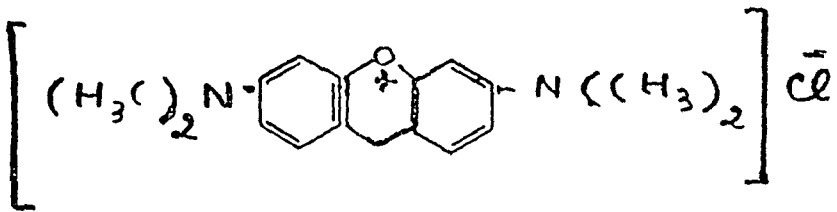
पाइरोनिन जी (जैन्थिन वर्गका)

कुछ रग सीधे या प्रत्यक्ष (direct) रग कहलाते है, क्योकि उन्हे सीधे-सीधे उपयोगमे लाया जा सकता है। ऐसे रग सूती या अन्य वानस्पतिक रेशोकी रँगाईके काम आते है। ये रग ऐजोवर्गीय है। सोडियम क्लोराइड और सोडियम सल्फेट जैसे लवणोकी उपस्थितिमे ये रग कपासके रेशोके प्रति लगाव प्रदर्शित करते है। इसलिए उन्हे अक्सर लवण रग भी कहा जाता है। उदाहरणके लिए चटकलाल रग कागोरेड सूती कपडेको सीधे-सीधे रँगता है। इसका सूत्र नीचे दिया जाता है
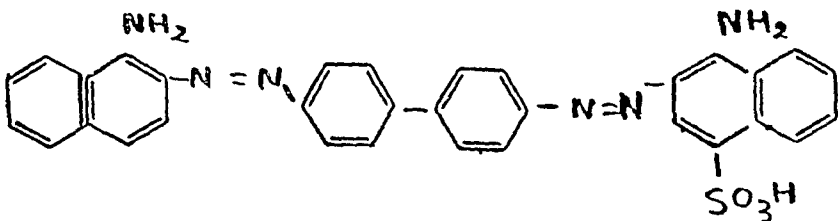
कागो रेड

कुछ रग कपडे पर विकसित होते है। कपडे अथवा सूतको एक या दो माध्यमिक पदार्थोसे तर कर लिया जाता है। फिर दूसरे पदार्थसे रासायनिक क्रिया करके रगको विकसित कर लेते है। इस प्रकारके रग पानीमे विलेय नही होते। कपडे अथवा सूत पर ही जिन रगोको तैयार किया जाता है उन्हे, तैयार करनेकी विधिके कारण, क्रम विकसित या अन्त विकसित रग कहा

$$O_2N-C_6H_4-N=NCl + C_{10}H_7OH \text{ (बीटा नेफ्थाल)} \longrightarrow C_6H_5-N=N-C_{10}H_6OH$$
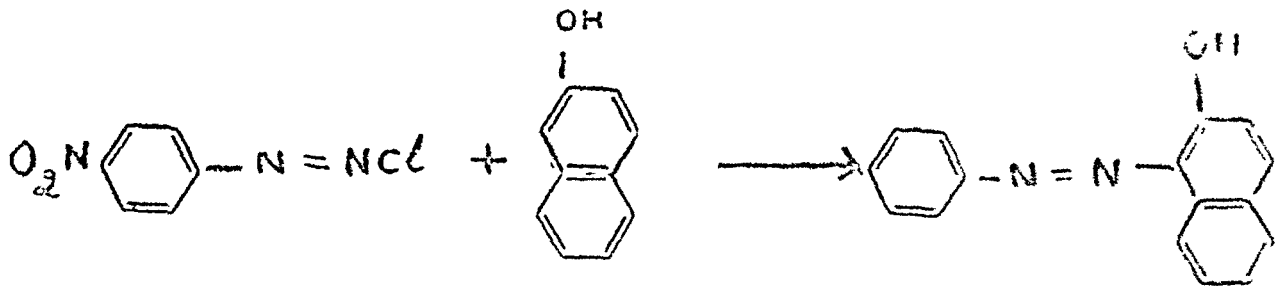
पैरा नाइट्रो ऐनिलीनसे बना पदार्थ बीटा नेफ्थाल पैरा रेड

'वेट-रंग' नामक पदार्थोंका आसानीसे अवकरण किया जा सकता है। अवकरण हो जाने पर ये पदार्थ रंगहीन ल्युको अथवा 'वेट' अवस्था अपना लेते हैं और तब पानीमें विलेय होते हैं। रेशोंको 'वेट'में तर करनेके बाद उनपर आक्सीकरणकी क्रिया करनेसे रंग फिर उभर आता है। इस विधिसे तैयार किये हुए रंग धुलाई, प्रकाश और रासायनिक द्रव्योंसे भी टिके रहते हैं। इसका मतलब यह हुआ कि वेट-रंग पक्के (fast) होते हैं। उदाहरणके लिए नील, यह [illegible] नहीं, वेट-रंग है। जब वेट रंगो पर सोडियम हाइड्रो सल्फाइटके ऐल्केलीन विलयनकी क्रिया होती है तो उनका अवकरण होकर 'वेट' प्राप्त होता है। इस 'वेट'का हवा, परऑक्साइड अथवा डाइक्रोमेटसे
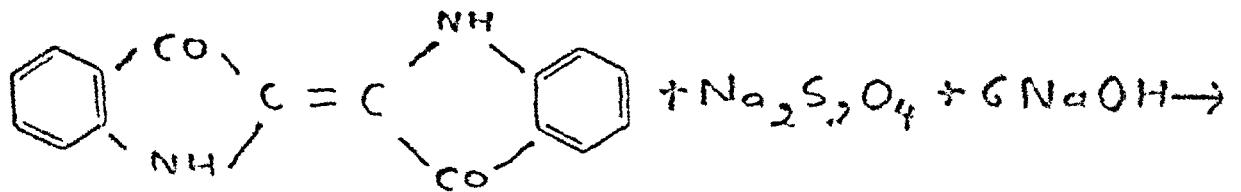
$$C_6H_4\begin{matrix}CO\\NH\end{matrix}C=C\begin{matrix}NH\\CO\end{matrix}C_6H_4 + Na_2S_2O_4 + 6NaOH \longrightarrow$$

इंडिगो (नील) सोडियम हाइड्रोसल्फाइट कास्टिक सोडा

$$C_6H_4\begin{matrix}C(ONa)=\\NH\end{matrix}C-C\begin{matrix}NH\\=C(ONa)\end{matrix}C_6H_4 + Na_2SO_4 + Na_2SO_3$$

इंडिगो (श्वेत) [illegible] [illegible]

[illegible]
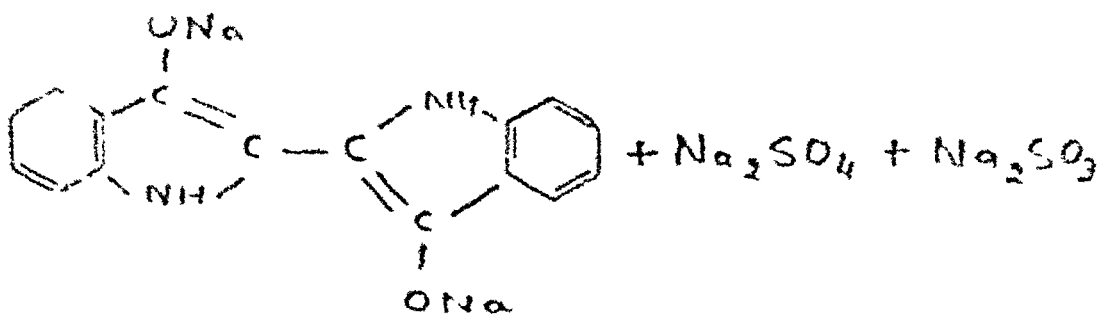
आक्सीकरण होने पर रग उभरता हे। रुई, और रेयन अथवा कभी-कभी रेशमकी रँगाईके लिए नीलका उपयोग किया जाता है।

रग-बन्धको द्वारा स्थायी होनेवाले स्थापक रग विभिन्न धातुओमे मयोजित होकर विभिन्न प्रकारके धातु-सकीर्ण (metal complex) उत्पन्न कर मकते है। इन रगोकी कुछ निश्चित विशेषताएँ होती है। इन रगोकी सरचनामे एक लवणयुक्त समूह होना चाहिए, दूसरा ऐसा समूह होना चाहिए जो अपने अबद्ध इलेक्ट्रानोको दे सके। इस तरह रग दो प्रकारके समूहो द्वारा धातुके परमाणुको ग्रहणकर धातु-सकीर्ण बनाता हे। उदाहरणके लिए मजीठमे उपस्थित ऐलिजरीन-मे हाइड्रोक्सिल (–OH) समूह लवणयुक्त हे और कार्बोनिल समूह (–C–O)मे उपस्थित बिन्दियोसे दर्शित अबद्ध इलेक्ट्रान दे सकनेवाला समूह हे। इसी प्रकार ओरथो-ओरथो डाइहाइड्रोक्सी ऐजोरग भी धातु-सकीर्ण बनाता हे। क्रोमियम, एल्युमीनियम और लोहेके लवणोका रगबन्धककी तरह उपयोग किया जाता हे।
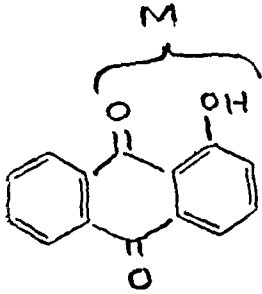
ऐलिजरीन M=धातु
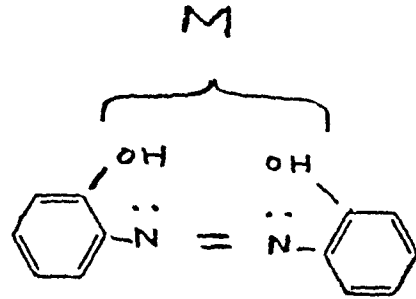
ओरथो-ओरथो डाइहाइड्रोक्सी एजो रग

वेट-रगकी तरह गन्धकयुक्त (sulphur) रगोका, अवकरण होनेपर, पानीमे विलेय ल्युको (निर्वर्ण-वर्णहीन) बेसमे परिवर्तन होता है। इन निर्वर्ण पदार्थोका कपडेके रेशोके प्रति लगाव होता है, जिससे ये उसपर चिपक जाते है। जब 'निर्वर्ण'का रेशोपर आक्सीकरण होता है तो मूल रग उभर आता है। गन्धक युक्त रगोमे वर्णजनकके स्थान पर –S– होता है। सोडियम सल्फाइड द्वारा गन्धकयुक्त रगका अवकरण होता है। गन्धकयुक्त रग अधिकतर सूती कपडो पर चढाये जाते है। नारगी, लाल, कत्थई, भूरा, हरा और काला आदि कई प्रकारके रग इस वर्गमे पाये जाते है। कीमतमे भी ये सस्ते होते है। परन्तु गन्धकयुक्त रगोकी सरचना बहुत पेचीदा होती है।

ऊपर हमने विभिन्न रगोका सामान्य परिचय प्राप्त किया, यद्यपि उसे पूर्ण नही कहा जा सकता। छोटेसे रासायनिक समूहके आधारपर वर्गीकरण और उसके उदाहरण दे पाना लगभग असम्भव ही है। यहाँ केवल दो वर्गोका नामोल्लेख किया जाएगा, क्योकि दोनो ही वर्गके रगोका चिकित्साकी दृष्टिसे भी महत्त्व है।

एक है ट्राइफिनाइल वर्गके रग और दूसरे है एक्रिडिनवर्गके रग। ट्राइफिनाइल रगोमेसे क्रिस्टल वायोलेट, मिथाइल वायोलेट, मेलेचाइट ग्रीन, ओरेमाइन आदि जीवाणुरोधी (anti-

biotic) क्रियाशीलतासे सम्पन्न होनेके कारण प्रतिदोषरोधी (anti-septic) की तरह इस्तेमाल किये जाते है। एक्रिडिन रगोमे से दवाके रूपमे काम आनेवाला एक्रिफ्लेविन प्रोफ्लेविन और उसके मेथोक्लोराइडका मिश्रण होता है। यह जीवाणुरोधी क्रियाशीलतासे सम्पन्न होता है और इसलिए घावके उपचारमे इसका उपयोग किया जाता है। इनके अतिरिक्त कुछ ऐजो रग भी प्रतिदोपरोधी गुणोवाले होते है और उनकी यह गुणवत्ता एक्रिडिन रगोसे उच्चकोटिकी होती है, क्योकि वे घावपर आनेवाली त्वचाकी वृद्धिमे सहायक होते है। औपधीय रगोमे मेथिलिन-ब्लूका ऐतिहासिक महत्त्व है। डॉ० एहरलिकने रसायन-चिकित्सा सम्बन्धी जो आरम्भिक प्रयोग किये वे रगोपर थे और मेथिलिन ब्लू उनमेसे एक था।

रासायनिक वर्गीकरणके अनुसार भिन्न-भिन्न रगोको वनानेकी विधि भिन्न-भिन्न होती है। फिर भी इतना तो निश्चित है कि अलकतरेसे प्राप्त वेनजिन, टोल्युइन, नेप्थेलिन और एन्थ्रेसिन जैसे सादे पदार्थोंसे आरम्भ कर भिन्न-भिन्न एकम विधियोको काममे लाकर सारे रग तैयार किये जाते है।

वर्णक

वर्णक कार्वनिक भी होते है और अकार्वनिक भी। अकार्वनिक श्वेत वर्णकोमे व्हाइटलेड [$2\,PbCO_3$, $Pb\,(OH)_2$,], जिक आक्साइड (ZnO), लिथोपोन [$ZnS+BaSO_4$], और टिटेनियम आक्साइड [TiO_2] मुख्य है। प्रशियन ब्लू [$Fe\,(FeCN)_6$], लेडक्रोमेट [$PbCrO_4$], रेड लेड [Pb_3O_4], फेरिक आक्साइड [Fe_2O_3], क्रोमियम आक्साइड [Cr_2O_3] आदि रगीन वर्णक है। इन वर्णकोको रगरोगन (oil paints)के लिए उपयुक्त तैलीय मिश्रणोमे मिलाकर काममे लाया जाता है।

ये वर्णक प्राकृतिक ढगसे अथवा सश्लेषण द्वारा प्राप्त रासायनिक पदार्थ है। अधिकतर वर्णक महीन चूर्ण होते है। ये पानी अथवा तेलमे विलेय नही है। लेकिन उपयोगमे लानेके लिए इन्हे भिगोया जा सकता है। वर्णक और रगमे कोई खास अन्तर नही होता परन्तु यह कहा जा सकता है कि वर्णक, विना किसी अपवादके, अविलेय होते है, जवकि रग कपडो और अन्य रेगेवालो तथा प्लास्टिक पदार्थोको रगे जा सकनेवाले विलेय पदार्थ होते है। परन्तु वर्णक इस कार्यके सर्वथा अनुपयुक्त होते है। रगरोगनमे, छपाईकी स्याहियोमे, फर्शकी रगाईमे, प्लास्टिक और रवर बनानेमे चमडा, मोम, चाक, क्रेयान आदिमे वर्णकोका उपयोग किया जाता है।

सवसे पहले हम कुछ प्राकृतिक वर्णकोको लेगे। सुविधाके लिए प्राकृतिक वर्णकोको चार वर्गोमे विभाजित कर लेना ठीक रहेगा (१) क्विनोन वर्णक, (२) एन्थोसायनिन और फ्लेवोन वर्णक, (३) पोलिन वर्णक और (४) पोरफाइरिन वर्णक।

क्विनोन वर्णक वनस्पति और प्राणियोमे देखनेको मिलते है। उदाहरणके लिए मेहदीके पत्तोमे उपस्थित ललछोहा पीला वर्णक लोसॉन, कुछ प्रकारकी लकडियोसे प्राप्त होनेवाला पीला स्फटिकीय पदार्थ लेपोकोल, 'अल्काना टिक्टोरिया' की जडसे प्राप्त होनेवाला वर्णक अल्कानिन समुद्री अर्चिनके अण्डोमे रहनेवाला वर्णक इकिनोक्रोम-ए आदि इस वर्गमे आते है। इन सभी वर्णकोकी सरचना मुख्यत क्विनोन प्रणालीकी होती है।
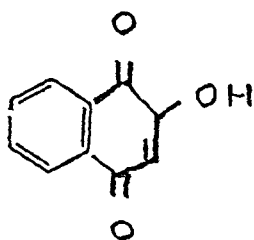
लोसॉन (पीला)
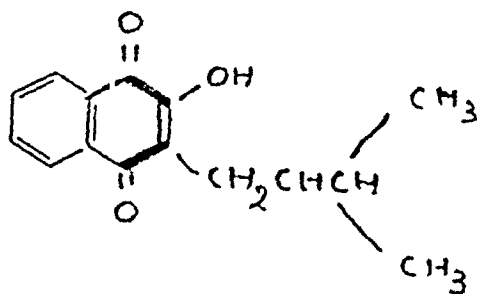
लेपोकोल (पीला)
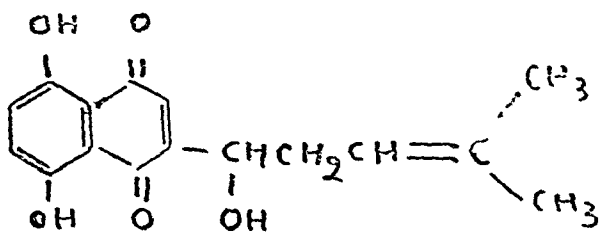
अल्कानिन (कत्थई लाल)
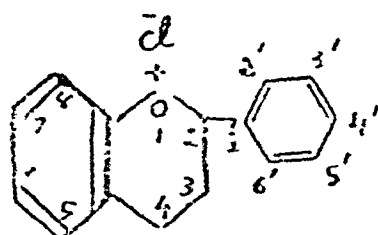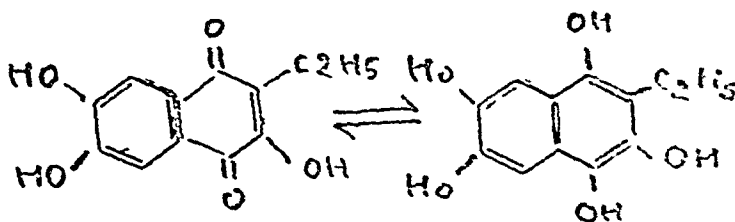
फ्लाविलियम क्लोराइड

इकिनोक्रोम-ए (लाल)

कई फूलो और फलोके वर्णक एन्थोसायनिन वर्गके होते है। इन वर्णकोकी विशिष्टता यह है कि इनके अणुमे रगीन भागके साथ शर्कराके अणु सयोजित होते हैं। शर्करा रहित रगीन भागको एन्थोसायनिडिन कहते हैं। इस फ्लाविलियम क्लोराइडके चारो ओर ३, ४, ५, ६, ७, ८ और २', ३', ४', ५', ६' स्थानो पर उपयुक्त समूह ओर शर्करा अणु लगानेसे भिन्न-भिन्न फूलोके वर्णको-

ग्लूकोज
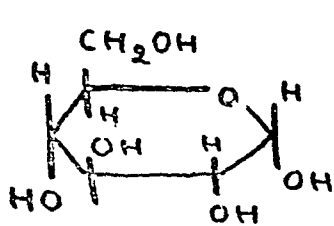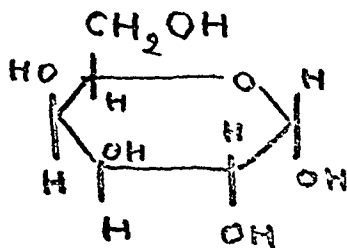
गेलेक्टोज
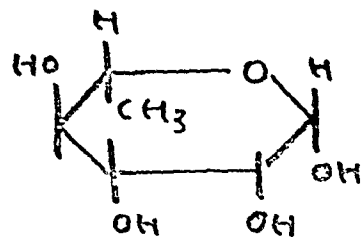
रेम्नोज

का आविर्भाव होता है। इन वर्णकोमे खासतौर पर वलयोके ऊपर हाइड्रोक्सिल (–OH) अथवा / और मेथोक्सी ($-OCH_3$) समूह होते है। इसके अतिरिक्त ग्लूकोज, गेलेक्टोज और रेम्नोज नामक

शर्करा द्रव्यके भी एक या दो अणु चिपके रहते है। उदाहरणके लिए गुलाबके लालफूलमे सायनिन नामक वर्णक होता है। यह वर्णक अम्लयुक्त स्थितिमे लाल होता है, एलकेलीन स्थितिमे भूरा होता है, लेकिन लगभग उदासीन (neutral) स्थितिमे बैगनी (violet) होता है। इसी प्रकार भिन्न-भिन्न रग उनमे उपस्थित वर्णक तथा अम्लता (acidity) पी एच (p_h) के अक पर निर्भर करते है। इस प्रकार, फूलोके रगोकी विविधता फ्लाविलियमके चारो ओर लिपटे हुए समूहोके कारण है।

एन्थोसायनिनसे बहुत अधिक मात्रामे मिलते-जुलते फ्लेवोन वर्णक है। फूल तथा पत्तोपर-की रेणुके रूपमे फ्लेवोनका अस्तित्व पाया जाता है। इसकी सामान्य सरचनासे पता चलता है कि चौथे स्थान पर $>C=O$ समूह होता है। जब ३, ३', ४', ५ और ७ स्थानो पर OH समूह रहता है तो क्वरसेटिन नामक फ्लेवोन प्राप्त होता है।

वनस्पतिकी पत्तियोमे क्लोरोफिलके साथ कैरोटिन नामका वर्णक रहता है। केरोटिन-जैसे वर्णकोको 'कैरोटिनोइड' कहते है। कैरोटिनोइड वनस्पतिमे ही नही, प्राणी जीवनमे भी व्याप्त है। रासायनिक दृष्टिसे इसे 'पोलीन' कहते है, क्योकि इसके अणुमे कई द्विवन्ध होते है। इसका मूल हाइड्रोकार्वनका अणुसूत्र $C_{40}H_{56}$ है। इसके अणुमे वलय हो या न भी हो, परन्तु द्विबन्धवाली शृखला अवश्य होनी चाहिए। उदाहरणार्थ गाजरमे विद्यमान मुख्य बीटा-कैरोटिनकी सरचना इस प्रकार है

फ्लेवोन
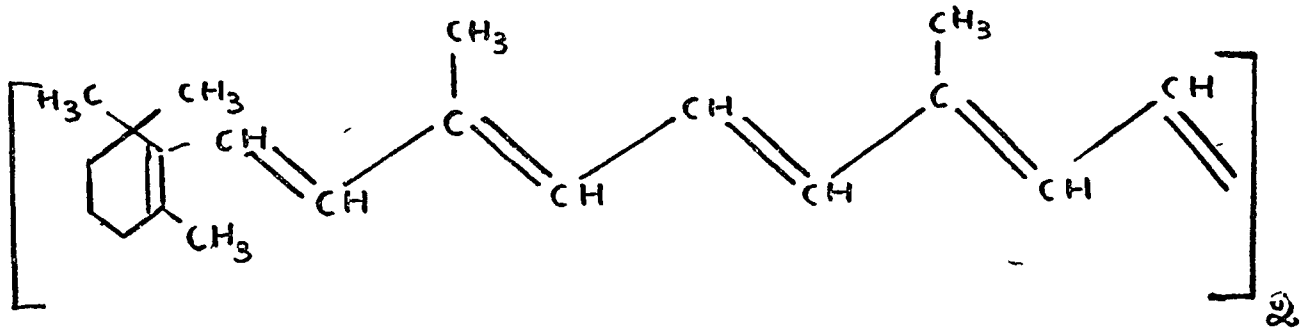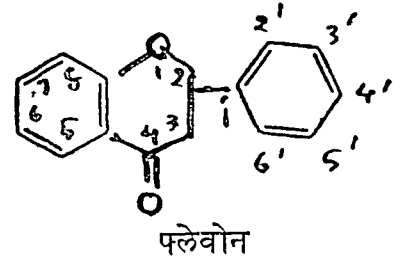
वीटा-कैरोटिन

बीटा-कैरोटिनका सूत्र विटामिन ए से दुगुना है, इसलिए कैरोटिनवाली चीजे खानेसे शरीरको विटामिन-ए मिल सकता है।
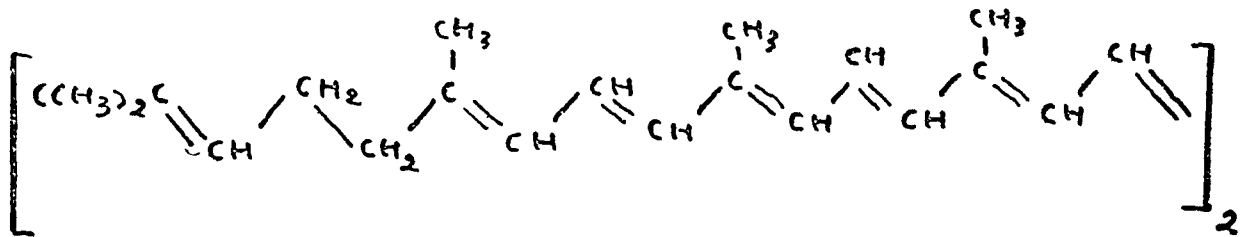
लायकोपिन

टमाटरका लालवर्णक लायकोपिन भी पोलीन वर्णका है। उसके अणुसूत्रमे एक भी वलय नही, केवल द्विवन्धोवाली लम्वी शृखला है।

पोलीन वर्णकोमे आक्सीजन समूहवाले जैन्थाफिल कहलाते हैं। उदाहरणार्थ मक्काके दानोमे पाया जानेवाला पीला जिजान्थिन इसी वर्गका है। उसकी अणु-सरचना बीटा-कैरोटिन-जैसी होती है। सिर्फ यह अन्तर है कि वलयमे अतिरिक्त हाइड्रोक्सिल (–OH) समूह रहता है।
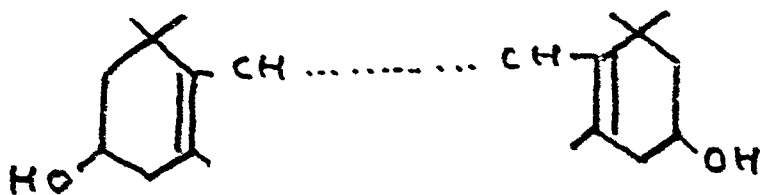
जिजान्थिन

कोसेटिन केसरमे जेन्शी ओवायोज़ नामक शर्करा द्रव्यसे सयोजित अवस्थामे रहता है। कोसेटिनकी सरचनासे यह स्पष्ट हो जाता है कि केसरका रगभी पोलीन वर्णकका ही आभारी है।
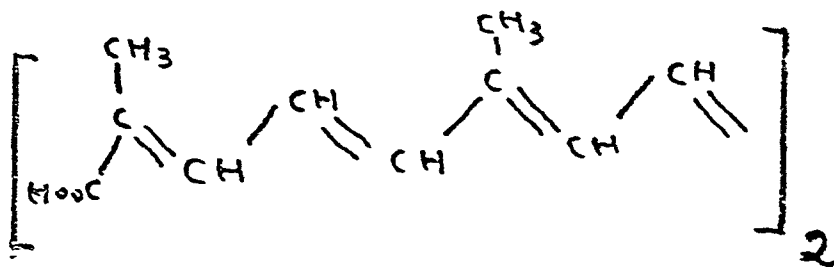
कोसेटिन
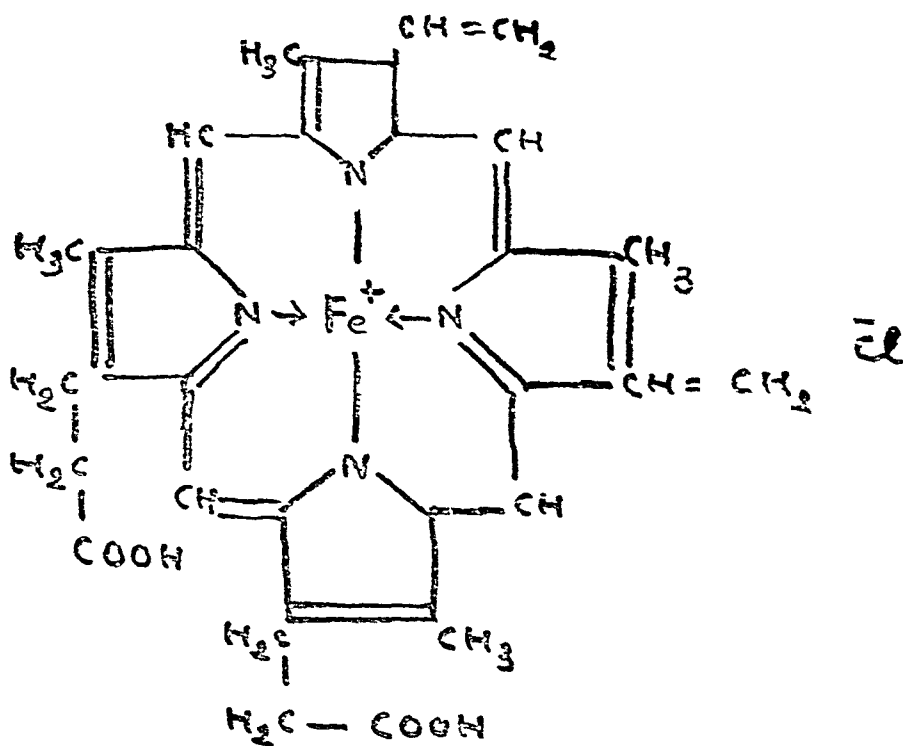
हेमिन
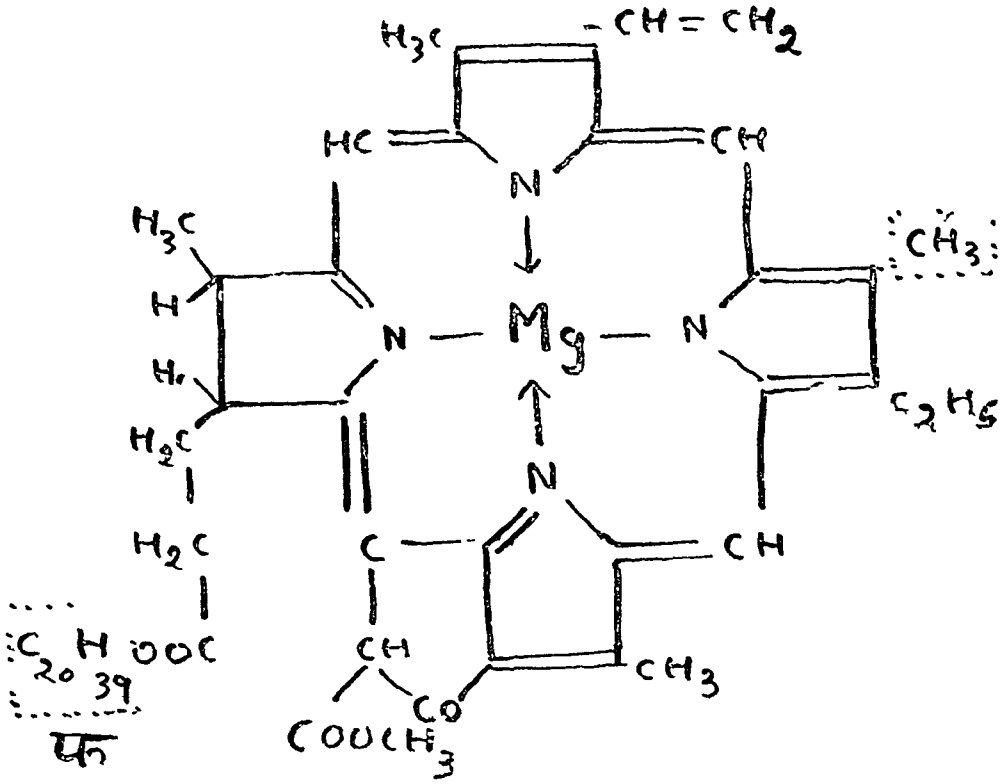
क्लोरोफिल-ए

प्रकृतिमे 'पोरफाइरिन' वर्गके दो महत्त्वपूर्ण वर्णक है एक क्लोरोफिल और दूसरा हेमिन। हरी वनस्पतिकी पत्तियोमे क्लोरोफिल फैला रहता है। प्राणिमात्रके रुधिरमे हेमोग्लोबिनके रूपमे हेमिन रहता है। हेमोग्लोबिन एक प्रोटीम है, जिसमे ९४ प्रतिशत ग्लोबिन नामक प्रोटीन और ६ प्रतिशत हेमिन होता है। उसके स्फटिकका रग पारदर्शक प्रकाशमे कत्थई और परावर्तक प्रकाशमे इस्पाती भूरा होता है। इसमे उपस्थित लौहके परमाणु अवकारित (reduced) अवस्थामे होते है। इसीलिए वह आक्सीजन ग्रहण करता है। हेमिनके ही कारण रुधिरके रक्तकणमे आक्सीजन-का विनिमय होता रहता है। हेमिनकी सरचनाको देखनेसे सूक्ष्मातिसूक्ष्म कणमे भी प्रकृतिके कलाविन्यासका पता चलता है।

यह कलापूर्ण आकृति पोरफाइरिन वलय-प्रणालीपर रची गई है। आश्चर्यकी बात यह है कि वनस्पतिके व्यापक हरे क्लोरोफिलमे भी यह वलय-प्रणाली रहती है। वनस्पतिमे प्रकाश सश्लेपणके कार्यमे क्लोरोफिल महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। क्लोरोफिल दो प्रकारके होते है, दोनोकी अलग-अलग पहचानके लिए उन्हे क्लोरोफिल-ए और क्लोरोफिल-बी नाम दिये गए है। इन दोनोमे बहुत अन्तर नही होता। आकृतिमे लम्ब वर्तुलमे प्रदर्शित मिथाइल ($-CH_3$) समूहके बदले ($-CHO$) समूह होनेपर उसे क्लोरोफिल-बी कहते है। हेमिन और क्लोरोफिलमे यदि कोई उल्लेखनीय अन्तर है तो धातुके परमाणुका ही है। हेमिनमे लौहका परमाणु होता है और क्लोरोफिलमे मैग्नेशियमका। इसके सिवा क्लोरोफिलमे एक वलय (व) अधिक और लम्बी पार्श्व- शृखला $C_{20}H_{39}$ (फ)—फाइटिल समूह—होती है।
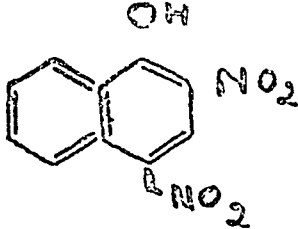
कलात्मक सरचनाकी दृष्टिसे सश्लिष्ट थेलोसायनिन हेमिन और क्लोरोफिल्के प्रति-स्पर्धी कहे जा सकते है। इस वर्गके वर्णकोका इतिहास बडा ही रोचक और रोमाचक भी है। १९२८ ई०मे स्काटिश डाइज लिमिटेडके कारखानेमे एक आकस्मिक खोज हुई और इस वर्गके वर्णकका पता चला। लोहेके पात्रमे नेप्थेलिनसे मिलते-जुलते थेलिक अम्ल ओर ऐमोनियाके मध्य रासायनिक क्रिया चल रही थी तव इस क्रियामे प्राप्त होनेवाले थेलिमाइडमे भूरा रग वनता दिखाई दिया। इसका कारण कोई अज्ञात वर्णक था उस अज्ञातवर्णककी सरचना निश्चित करनेमे छह वर्षका समय लग गया। फिर तो ताम्र, मैग्नेशियम, सीसा आदि धातुओमे विभिन्न प्रकारके रगवाले वर्णक वनाना सम्भव हो गया। सवसे पहले वाजारमे इस प्रकारका जो वर्णक लाया गया वह ताम्र (कॉपर) थेलोसायनिन था। उसकी सरचना भी कलात्मक है। इसे मोनेस्ट्राल फास्ट व्लू० वी० एस०के नामसे पुकारा जाता हे।
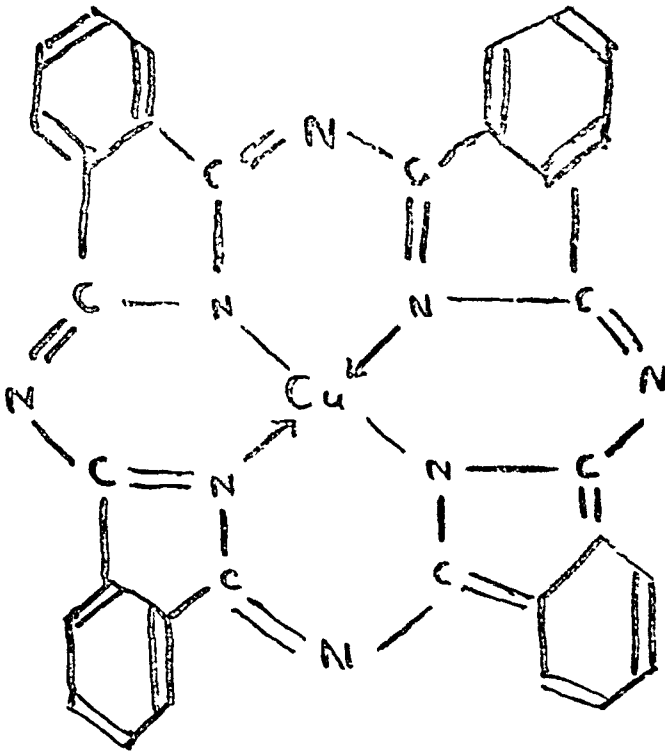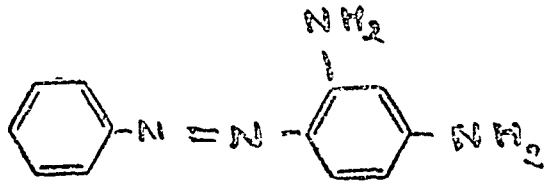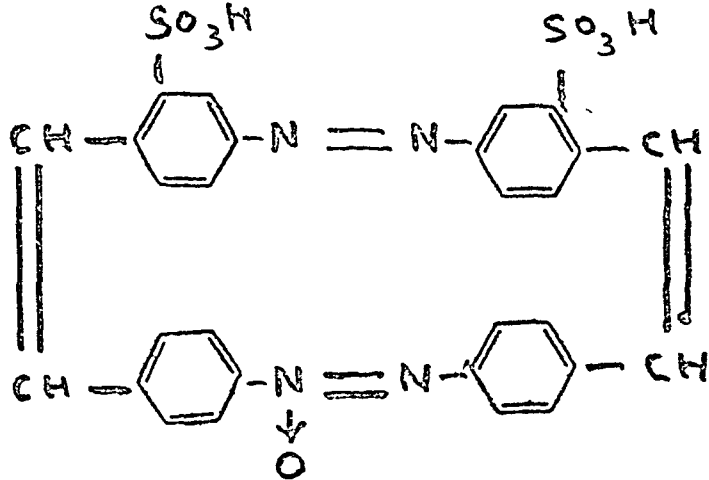
मोनेस्ट्राल फास्ट व्लू वी० एस०

धातुरहित वर्णक भूरापन लिये हुए हरे होते है। ताम्रसहित वर्णक गहरे भूरे होते है। ताम्रसहित वर्णकमे जव हाइड्रोजनके वदले पन्द्रहसे सोलह क्लोरिन प्रस्थापित किये जाते हैं तो हरा वर्णक प्राप्त होता है। सामान्यत ये वर्णक अविलेय होते है, परन्तु उनमे दो हाइड्रोजनके वदले सल्फोनिक समूह ($-SO_3H$)का प्रवेशन करनेसे जो हरा वर्णक मिलता है वह विलेय होता है। थेलोसायनिनके विभिन्न उपयोग किये जाते है। शोभायमान एनेमल, परिसज्जाएँ (finishes), लिनोलियम, फ्लास्टिक, मुद्रणकी स्याहियॉ, भित्तिपत्र (wall-paper), रवरकी चीजो आदिमे इन वर्णकोका उपयोग किया जाता है।

समूह	समूहके सूत्र	उदाहरण
नाइट्रोसो समूह	—NO (अथवा=NOH)	डाइनाइट्रोसो रिसोर्सिनोल
नाइट्रो समूह	$—NO_2$ (अथवा=NO OH)	मार्शियस यलो
ऐजो समूह	—N=N—	एनिलिन यलो
एथिलिन समूह	$>C=C<$	सन यलो

समूह	समूह के सूत्र	उदहारण
कार्वोनिल समूह	>C=O	ऐलिज़रीन
कार्वन-नाइट्रोजन समूह	>C=NH और —CH=N	ओरेमाइन
		परलोन फास्ट यलो आर० एस० (M=वातुका परमाणु)
सल्फर-समूह	>C=S और –>C—S—S—C<–	हाइड्रोन ब्लू आर०
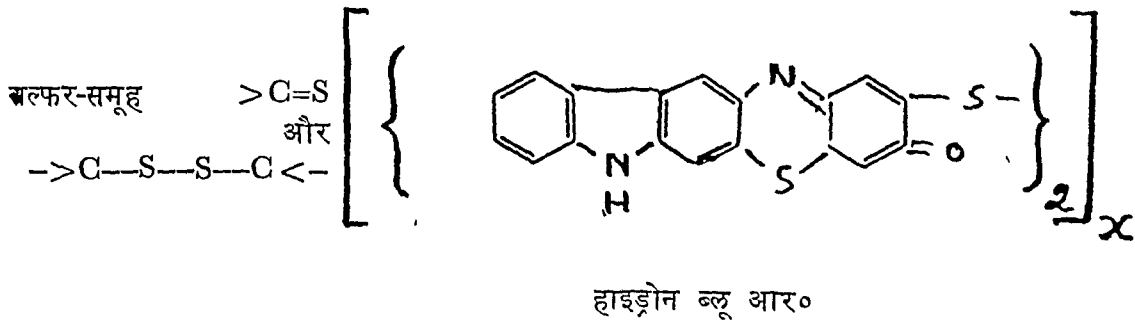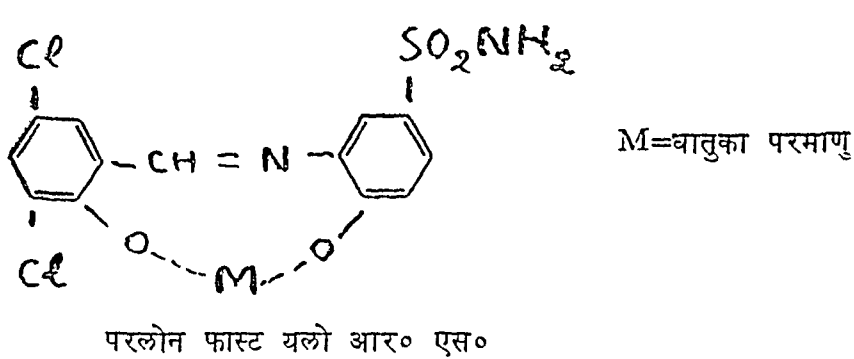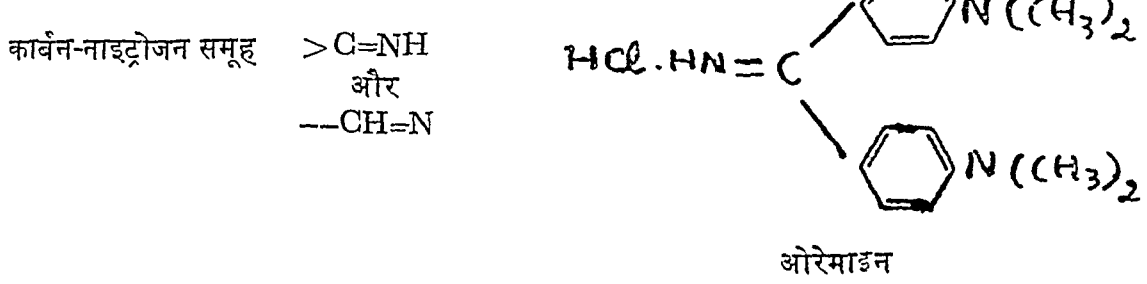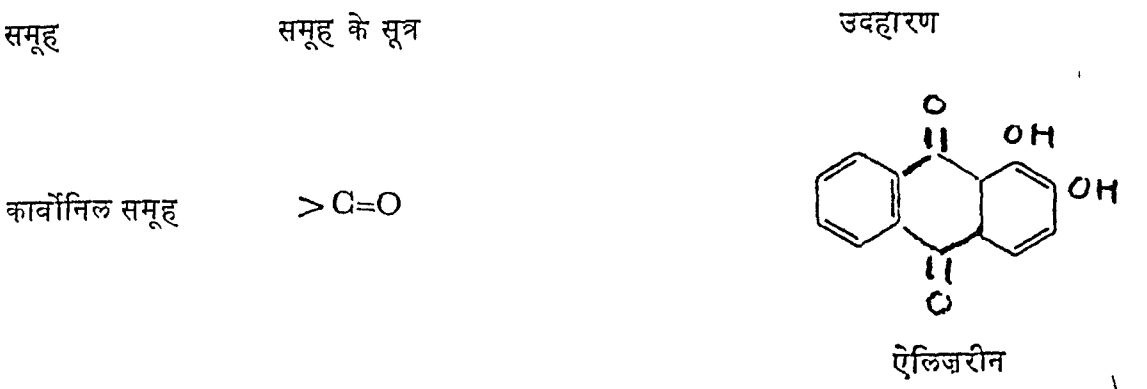
१८ : संश्लिष्ट औषधियाँ

आधुनिक भेषज (औषध pharmaceutical) रसायनकी महान कल्याणकारी उपलब्धियॉ कोई चमत्कार नही, विगत सात दशाब्दियोमे चिकित्सको ऑर भेपजविदो (pharmacologist) के सहयोगसे रसायनविदो द्वारा किये गए अनुसन्धानो-अन्वेपणोका परिणाम है। भेपज-रसायनसे सम्बद्ध इतिहासके कुछ सुप्रसिद्ध व्यक्तियो और उनके महत्त्वपूर्ण योगदानके सम्बन्धमे 'स्वास्थ्य-दर्शन'मे लिखा जा चुका है। यहॉ भेपज-रसायनके जाज्वल्यमान विकासका समग्र चित्र प्रस्तुत करनेका सीमित प्रयत्न किया जा रहा है।

रसायनविदोंने दवाइयोके क्षेत्रमे कार्य आरम्भ किया उसके पहले चिकित्सा-विज्ञान विकसित तो हो ही चुका था। यह विकास मुख्यत अनुभव पर आधारित था। वानस्पतिक, प्राणिज और कतिपय खनिज पदार्थोको दवाइयोके रूपमे मान्य किया जा चुका था। यह ज्ञान परम्परागत था। विभिन्न वैद्य या डाक्टर बार-बार आजमाकर किसी वनस्पति या खनिज पदार्थके औपधीय गुण खोज निकालते थे। लेकिन यह सारा विकास 'प्रयास करो और भूले वहॉसे फिर गिनो' की भूलने-सुधारनेकी पद्धतिके आधार पर हुआ था। बरसो-बरसके अनुभवके बाद यह स्थिर हो पाया था कि अमुक प्रकारके रोगमे अमुक उपाय या औषधि कारगर है। लेकिन औषधिके रूपमे प्रयुक्त होने-वाली वानस्पतिक, प्राणिज अथवा खनिज वस्तुएँ रासायनिक दृष्टिसे नितान्त शुद्ध पदार्थ नही होती थी। शीतज्वरमे सिनकोनावृक्षकी छालका उपयोग किया जाता था, परन्तु उस छालमे कई पदार्थ थे। लोग उसके चूर्ण अथवा काढेका उपयोगकर मलेरिया बुखारको दूर किया करते थे। रसायनविदोने जब ओषधीय क्षेत्रमे कार्यारम्भ किया तो यही परिस्थिति थी। तब उनके लिए यह खोज करना आवश्यक हो गया कि सिनकोना वृक्षकी छालमे पाये जानेवाले अनेक पदार्थोमेसे कौन-सा पदार्थ मलेरिया बुखार मिटानेका औपधीय गुण रखता है और कौनसे पदार्थ फालतू है। मतलब यह कि भिन्न-भिन्न रोगोको मिटानेवाली विभिन्न वस्तुओमे औषधीय सत्त्व अथवा सक्रिय अवयव (active principle) क्या है, इसका पता लगाना आवश्यक समझा गया और इस बारेमे ज्ञान प्राप्त करनेकी उत्सुकता पैदा हुई। उनकी इस उत्सुकता और तज्जन्य लगनके परिणामस्वरूप भेषज-विज्ञानने दूसरे चरणमे प्रवेश किया। उस दौरमे उन्होने ज्ञात औषधियोमे विद्यमान शुद्ध औपधीय सत्त्वको अन्य फालतू पदार्थोसे पृथक् करनेकी विधियॉ खोजी। उदाहरणके लिए, अफीमके ऐलकालायडोसे सेटर्नरने १८१६ ई०मे मार्फिनका पृथक्करण किया, १८८७ ई०मे नगाईने एफेड्रा वल्गारिससे एफेड्रिनको पृथक् किया और सिनकोनाकी छालसे १८२० ई०मे पेलेशिये और क्वेण्टोने कुनैनको अलग किया। भेषज सग्रह (फार्माकोपिया) मे प्रयुक्त (सकलित) पदार्थोके उत्तरोत्तर शुद्ध औषधीय सत्त्वोका पृथक्करण करनेके काममे रसायनविद, जुट गए और

डाक्टर अन्वेषक उन सत्त्वोकी सीधी आजमाइश करके उस-उस औषधिकी निश्चित (सही-सही) मात्रा निर्धारित करनेमे लग गए।

सबसे पहले तो औषधीय सत्त्वके रूपमे पृथक् किये गए पदार्थके विशुद्ध नमूने लेकर उनमे कार्बन, हाइड्रोजन, आक्सीजन, नाइट्रोजन आदि मूलतत्त्वोके अनुमानका निश्चय करनेके लिए उसका प्राथमिक विश्लेषण करना पडता है। इसमे मूलतत्त्वोके परमाणुभारके आधार पर पारस्परिक मूलतत्त्वोका अनुपात निश्चित किया जाता है और उस अनुपातकी सहायतासे मूलानुपाती सूत्र (empirical formula) तय किया जा सकता है। इसके बाद अणुभार-सम्बन्धी प्रयोगोके द्वारा अणुभार निकालकर उसका अणुसूत्र निश्चित किया जाता है। इस प्रारम्भिक विश्लेषणके साथ-साथ यह भी मालूम करना पडता है कि उस सत्त्वमे क्रियाशील परमाणु समूह कौन-से और कितने-कितने है। फिर यह भी पता लगाना पडता है कि उसमे आक्सीजन-युक्त समूहोमेसे हाइड्रोक्सिल ($-OH$) मेथोक्सी ($-OCH_3$), कार्बोक्सिल($-COOH$) एस्टर ($-COOR$) आदि समूह है या नही और यदि है तो उनकी अलग-अलग संख्या क्या है। सभी प्रकारके ऐलकालायडोमे नाइट्रोजनकी उपस्थिति रहती ही है, इसलिए वह नाइट्रोजन वलय (ring) मे है या मुक्त समूहके रूपमे, इस बातका पता भी लगाना पडता है। फिर ऐलकालायडो-मे वलय प्रणालीका स्वरूप भी मालूम करना पडता है। इसमे पता चल जाएगा कि इस विश्लेषण-का तीसरा चरण औषधीय सत्त्वकी सरचनाका पता लगाना कितना श्रमसाध्य होता है। दवाइयो-की तरह इस्तेमाल किये जाने वाले अनेक ऐलकालायडो, विटामिनो और हारमोनोकी सरचना-सम्बन्धी सही-सही जानकारी प्राप्त करनेमे कई रसायनविदोको बरसो अपना पसीना बहाना पडा है।

चौथे चरणमे रसायनविदोने ज्ञात सरचनावाले सक्रिय अवयवोके सश्लेषणका कार्य अपने हाथमे लिया। यह काम विश्लेषणमे कही कठिन था। यद्यपि सादे कार्बनिक पदार्थोके सश्लेषणकी
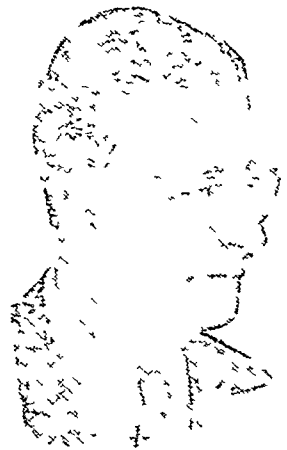
रावर्ट वर्न्स वुडवर्ड
(जन्म १९१७)

डब्ल्यू० फान ई० डोरिंगके सहयोगसे १९४४मे कुनैनका सश्लेषण, १९५१मे सहकार्यकर्ताओकी मददसे सम्पूर्ण सन्तृप्त स्टेरोइडका सश्लेषण, १९५९मे सहकर्मियोके सहयोगसे स्ट्रिक नाइन (कुचलेके ऐलकालायड)का सश्लेषण, रिसर्पिन (सर्प-गन्धाके औषधीय सत्त्व) का सश्लेषण और एफ० फिजर एण्ड कम्पनीके रसायनज्ञोके सहयोगसे टेट्रासाइक्लिनका और १९६०मे क्लोरोफिलका सश्लेषण किया। इसके अतिरिक्त सहकर्मियोके सहयोगसे लेनोस्टेरोल और कोल्चिमाइनका सश्लेषण भी किया। १९६५मे इन महती सफलताओके लिए नोबेल पुरस्कार प्रदान किया गया।

विधि तो रसायनविद ईजाद कर चुके थे, परन्तु कुनैन-जैसे पदार्थका सश्लेषण कर पाना बहुत मुश्किल था। डब्ल्यू० एच० पर्किनने एलाइल टोल्युडिनसे कुनैन बनानेका प्रयत्न किया था, जिसमे वह असफल

हुआ, परन्तु जिसके परिणामस्वरूप कृत्रिम रंजकोंका उद्योग स्थापित हो सका (देखिए अध्याय १४ रंग और वर्णक)। कुनैनका पूर्ण संश्लेषण तो सन् १९४४ ई०में वुडवर्ड और डोरिंगके हाथों हुआ।

प्रकृतिसे प्राप्त होनेवाले सक्रिय अवयवोंका दवाइयोंमें उपयोग होता था परन्तु १९वीं शताब्दीके अन्तिम दो दशकोंमें प्रकृतिमें सर्वथा अप्राप्य कुछ पदार्थोंका संश्लेषण किया जा सका। १८८३ ई०में नोरने ज्वरापहारी एंटिपाइरिन १८८८ ई०में बाउमन और कास्टने निद्राकर सल्फोनल और १८९९ ई०में ड्रेसरने पीडापहारी एस्पिरिन बनाये। इनके सिवा उपर्युक्त दो दशाब्दियोंमें और भी बहुतसे पदार्थ रासायनिक प्रयोगशालाओंमें संश्लेषणके द्वारा बनाये गए।

किसी कोशिकाके आन्तरिक भागोंको देखने, जानने और समझनेके लिए उन भागोंको रंगना पड़ता है। मिथिलिन ब्लू, रोजेनिलिन, इओसिन आदि रंजकोंका इस काममें उपयोग किया जाता है। कुछ रंजक कोशिकाके केन्द्रीय भागको तो कुछ उसके बाह्यभागको रंगते हैं। इस प्रकार भिन्न-भिन्न रंजकोंकी कोशिकाके किसी एक भागके प्रति अभिमुखता होती है और दूसरे भागके प्रति विमुखता। इस परसे डॉ० एर्लिकके मनमें यह प्रश्न उठा कि रंगीन पदार्थोंका यह गुण क्या रंगहीन पदार्थोंमें भी नहीं हो सकता? रंगहीन होनेके कारण उन पदार्थोंको सूक्ष्मदर्शीमें भले ही न देखा जा सके, परन्तु कोशिकाके विविध अंगोंमें उनका वरणात्मक (selective) प्रशोषण तो होगा ही। इसी तरह शरीर अथवा रक्तके अन्दर रहते हुए जीवाणुकी कोशिकामें रंगहीन पदार्थका अवशोषण होता है और वह अवशोषित रंगहीन पदार्थ उस जीवाणुकी वृद्धिको रोक सकता है या उसे नष्ट भी कर सकता है। इस विचारके फलस्वरूप डॉ० एर्लिकने अनगिनत रंगहीन रसद्रव्य बनाए। संखिया और पारा उपदंश रोगमें दवाकी तरह इस्तेमाल किये जाते थे। डॉ० एर्लिकने संखियाकी धातु आरसनिक लेकर उससे रंगहीन आर्सेनिक पदार्थोंकी नई-नई श्रेणिया बनाई और उनका औषधीय परीक्षण किया और जबतक प्रभावशाली औषधि प्राप्त नहीं हो गई वे इन पदार्थोंकी संरचनामें लगातार परिवर्तन करते रहे। अन्तमें ६०६वें प्रयोगमें उन्हें सालवरसन-जैसी औषधि प्राप्त हुई जो उपदंशके रोगकी रामबाण दवा है।

डॉ० पाल एर्लिक
(१८५४–१९४५)

न्वयी (chemotherapeutic)। पाचनतन्त्र, श्वसनतन्त्र, रुधिराभिसरणतन्त्र, तन्त्रिकातन्त्र, उत्सर्जनतन्त्र आदि शरीरके तन्त्रोंमे अजीवाणुजन्य अथवा अनियन्त्रित कोशिका विभाजनके कारण होनेवाले कैन्सर-जैसे रोगोंके अतिरिक्त अन्य बीमारियोंके उपचारके लिए इस्तेमाल की जानेवाली औषधियोंको पहले वर्गमे रखा जाता है। विभिन्न प्रकारके औषधीय गुणोंके अनुसार, इस वर्गकी औषधियोंका, उपवर्गोंमे विभाजन किया गया है। इन उपवर्गोंकी संख्या पचास-पचपनके लगभग हो चुकी है। इनमेंसे प्रमुख उपवर्गोंकी जानकारी प्राप्त कर ली जाए।

तन्त्रान्वयी औषधियाँ

१८६४ ई० मे वेहरेण्डने अनिद्रा रोगके लिए ब्रोमाइड (पोटेसियम ब्रोमाइड) का उपयोग किया। उसके बाद और भी कई पदार्थोंका उपयोग किया गया। परन्तु इस दिशामें योजनाबद्ध कार्य सल्फोन नामक पदार्थोंके उपयोगसे आरम्भ हुआ माना जाता है। बोमन और कास्ट नामक दो वैज्ञानिकोंने १८८८ ई०मे कई सल्फोन द्रव्य बनाये और उन्हे कुत्तेको खिलाकर उनके निद्रापक गुणोंका परीक्षण किया। उन्होंने सल्फोनके सामान्य सूत्रमे R_1, R_2, R_3, R_4, के स्थान पर मिथाइल $-CH_3$ और इथाइल $-C_2H_5$ रखकर भिन्न-भिन्न पदार्थ बनाए और उनका परीक्षण किया। R_1, R_2, R_3, और R_4, इन चारों स्थानों पर $-C_2H_5$ अणुसमूह प्रस्थापित करनेमें जो पदार्थ बना उसका नाम टेट्रानल रखा गया। R_1 के बदले CH_3 और शेष सब स्थानों पर C_2H_5 प्रस्थापित करनेसे जो पदार्थ बना उसे ट्रायोनल नाम दिया गया। R_1 और R_2 के स्थान पर $-CH_3$ समूहोंको प्रस्थापित कर जो पदार्थ बनाया गया उसका नाम सल्फोनल रखा गया।
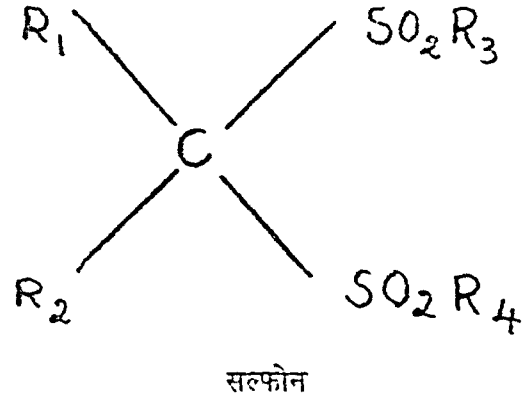
सल्फोन

इस प्रकार हमे टेट्रानल, ट्रायोनल और सल्फोनल पदार्थ उपलब्ध हुए। प्रत्येकके निद्रापक गुणकी कड़ी जाँच-पड़तालके बाद पाया गया कि टेट्रानल सर्वश्रेष्ठ, ट्रायोनलका स्थान दूसरा और सल्फोनलका अन्तिम है। इससे यह बात प्रमाणित हुई कि औषधिकी संरचनासे औषधीय गुण-दोषका सीधा सम्बन्ध है।

एमिल फिशर
(१८५२–१९१९)

नीद लानेवाली दवाइयोंमे 'बार्बिट्युरेट' भी काफी महत्त्व-पूर्ण है। सबसे पहले १९३० ई०मे फिशर और फोन मेरिंगने बार्बिटाल (वाणिज्य नाम वेरोनाल) नामक औषधिका प्रयोग किया। बार्बिट्युरिक अम्लका सामान्यसूत्र वलयवाला है। इस संरचनामे R_1 और R_2के स्थानपर भिन्न-भिन्न जातिके समूहोंको रखकर भिन्न-भिन्न प्रकारके बार्बिट्युरिक अम्ल बनाये गए हैं। दूसरे

नम्बरके स्थान वाले CO के बदले Cs समूह रखनेसे थायो-बार्बिट्युरिक अम्ल बनता है। R_1 और R_2 के स्थान पर मिथाइल $(-CH_3)$, इथाइल $(-C_2H_5)$, प्रोपाइल $(-C_3H_7)$-जैसे अणु समूहोको रखनेसे विविध प्रकारकी कुछ अन्य औषधियाँ प्राप्त हुई है। इनमेसे कुछेकका असर तो इतनी तेजीसे होता है कि मनुष्यको बिस्तर पर लेटनेके बाद ही उन्हे लेनेकी सलाह दी जाती है, अन्यथा खानेके साथ ही नीद आ जानेसे गिरनेका भय रहता है। इन पदार्थोमे निद्रापक गुणोको सुरक्षित रखनेके लिए वार्बिट्युरेटकी सरचनासे सम्बन्धित कुछ नियम भी निर्धारित और प्रतिपादित किये गए है। जैसेकि C_5 पर आनेवाले समूहोमे कार्बनकी सख्या कुल मिलाकर आठसे अधिक नही
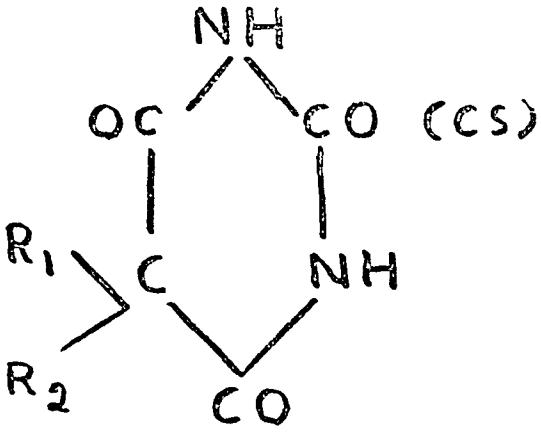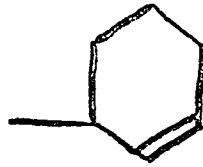
वार्बिट्युरिक अम्ल साइक्लो हेक्सिनिल समूह फिनाइल समूह
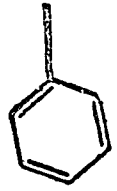
होनी चाहिए, R_1 और R_2 मेसे एक ही स्थान पर वलय समूह होना चाहिए। इससे यह पता चला कि औषधिमे इस प्रकारकी सरचना और उसके निद्रापक गुणमे पारस्परिक सम्बन्ध है।

शल्यक्रियाके दौरान रोगीको पीडा न हो इसलिए अफीम, भाग और मद्यार्कवाले पेय देनेकी रीति पुरातनकालसे ज्ञात थी। लेकिन पीडा न हो ऐसे आधुनिक निश्चेतको (anaesthetics) का उदय तो १९वी सदीमे ही हुआ। १८४२ से १८४७ ई० तकके पॉच वर्षोकी अवधिमे नाइट्रस आक्साइड, डाइइथाइल ईथर और क्लोरोफार्म-जैसे निश्चेतक अस्तित्वमे आये। कोल्टन नामका एक व्याख्यान देनेवाला नाइट्रस आक्साइड (laughing gas)का इग्लैण्डमे जनसमुदायके समक्ष प्रदर्शन कर रहा था। कूले नामके एक क्लर्कने उस गैसको सूँघा और वह उत्तेजित हो गया। अगली पक्तिमे बैठे हुए एक शक्तिशाली आदमीसे लडनेके लिए वह खम ठोककर कूद पडा। वह आदमी भागा। कूले उसे पकडनेके लिए लपका तो कुर्सीको फॉदते हुए गिर पडा और उसके पॉवमे चोट लग जानेके कारण खून बहने लगा। लेकिन उसे चोट लगनेकी जरा भी पीडा न हुई। यह देखकर वहाँ उपस्थित हारेस वेल्स नामक एक दॉतके डाक्टरने यह सिद्ध किया कि नाइट्रस आक्साइडका उपयोग दन्त चिकित्सामे किया जा सकता है।

प्रो० चार्ल्स टी० जेक्सन (रसायन शिक्षक) और वर्नेल (फार्मासिस्ट–औषधि वनानेवाला) रातमे ताश खेल रहे थे। जलनेवाले दीपमे भूलसे डाइइथाइल ईथर भर दिया गया था। उसके प्रभावके कारण दोनो खेलते-खेलते वेहोश होकर गिर पडे। जब होशमे आये तो ईथरके निश्चेतक गुणका उन्हे पता चला। इस घटनाके आधार पर प्रो० जेक्सनके विद्यार्थी विलियम टी० जी० मोर्टने ईथरका प्रयोग स्वय अपने ऊपर और घरके कुत्ते, विल्ली, मुर्गी और चूहे पर कर देखा। १८४६ ई०मे

दाँत निकालते समय रोगीको पीडा न हो, इस दृष्टिसे किया गया ईथरका प्रयोग सफल हुआ।

एडिनबराके सर्जन जेम्स सेम्सनने क्लोरोफार्मका सफल प्रयोग १८४७ ई०मे किया। निश्चेतक दो प्रकारके होते है। निश्चेतक केन्द्रीय तन्त्रिकातन्त्र (ज्ञानतन्तुओ) पर इस सीमातक असर करता है कि मनुष्य बेहोश हो जाता है और उसके स्नायु ढीले पड जाते है। ऐसी स्थितिमे शल्यक्रिया करनेपर रोगीको पीडाका अनुभव नही होता। ऐसी क्रियाशीलतावाले रसायनकोको 'सामान्य (general-व्यापक) निश्चेतक कहते है। ऊपर बताये गए तीन निश्चेतकोके अतिरिक्त डाइविनाइल ईथर, साइक्लोप्रोपेन आदि वाष्पशील रसायनक उसी सामान्यवर्गके निश्चेतक है, जिन्हे रोगियोको सुँघाया जाता है। सामान्य निश्चेतक सुँघानेमे पहले रोगीको मार्फिन (मारफिया), एट्रोपिन, स्कोपोलेमाइन, बार्बिट्युरेट आदिकी सुई लगाकर तैयार किया जाता है। अब तो कतिपय शल्यक्रियाओके लिए रीढमे दवाइयोका इजेक्शन लगाकर रोगीको बेहोश कर दिया जाता है।

दूसरे प्रकारके निश्चेतक 'स्थानीय (local) निश्चेतक' कहलाते है। जिन स्थानो पर इनका उपयोग किया जाता है वह स्थान अथवा अग-विशेष एक निश्चित समयके लिए अनवेदनशील हो जाता है। दूसरे शब्दोमे कहेगे कि उस स्थानपर ज्ञानतन्तुओकी सवेदनशीलता अथवा सवेदन-व्यापार कुछ समयके लिए स्थगित हो जाता है। स्थानीय निश्चेतकोके विकासका इतिहास बडा ही गौरवशाली है। इरिथ्रोजाइलोन कोकाकी पत्तियोमे १८६० ई० मे कोकेन ऐल्कालायडकी खोज की गई। १८८४ ई०मे कोलरने कोकेनका दन्त-चिकित्सामे उपयोग किया। कोकेनकी निश्चेतक क्रियाशीलताका आकस्मिक ढगसे पता चला था। डॉ० सिग्मड फ्रायड और कार्ल कोलर मार्फिनके स्थानपर अन्य किसी ओषधिकी खोज कर रहे थे। एक बार परीक्षण करते समय कोलरकी आँखमे कोकेन गिर पडा और यह माना जाता है कि तब उसे कोकेनके निश्चेतक गुणका पता चला। उसके बाद रसायनविदोने कोकेनकी सरचनामे परिवर्तन कर नई-नई दवाइयाँ बनाई। १९०० ई०मे आइनहोर्नने बेजोकेन और १९०१-४ मे प्रोकेन का सश्लेषण किया। आजतक जितने भी सरचनात्मक परिवर्तन हुए है वे सब कोकेनके निश्चेतमूलक (anaestheophore) के आसपास किये गए है। विभिन्न स्थानीय निश्चेतकोकी सरचनाको ध्यानसे देखनेपर यह स्पष्ट हो जाएगा।

अ ब क
निश्चेतमूलक कोकेन
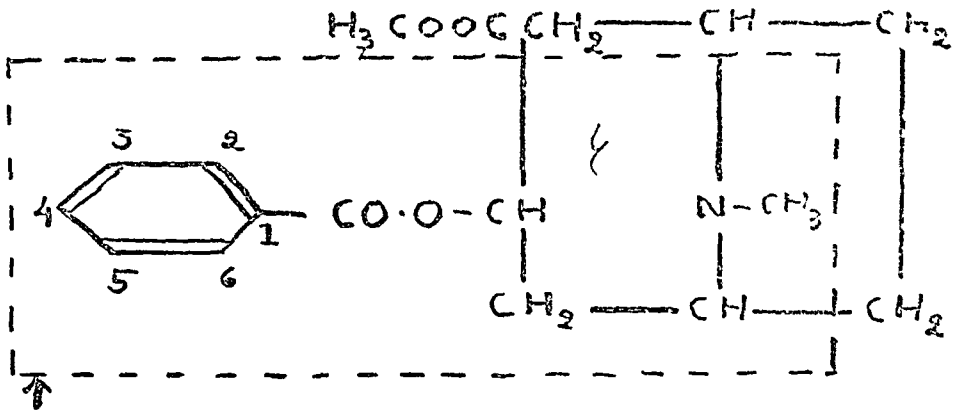
इस निश्चेत मूलकमे जो वलय है उसके चौथे स्थान पर एमिनो ($-NH_2$) समूह रखकर दूसरी तरह लिखा जाए तो हमे एक सामान्य सूत्र मिलता है। उसके आधार पर $n=2$ और $R_1=R_2=$ इथाइल समूह रखनेसे प्रोकेन प्राप्त होता है। अ, ब और क विभागोमे कई तरहके परिवर्तन सम्भव है। स्थान २ पर $-OH$ समूह रखा जाए तो आक्सीकेन मिलता है। ब शृखला मे $-CH_2-$ की सख्या बढाकर या घटाकर, उसे लम्बा या छोटा कर अथवा शाखावाला बनाकर भी परिवर्तन किये जा सकते है। R_1 और R_2 के स्थान पर मिथाइल $-CH_3$, इथाइल $-C_2H_5$, प्रोपाइल C_3H_7 आदि समूह रख सरचनाको बदलकर कई नये-नये निश्चेतक बनाये गए है। इस प्रकार प्रोकेन वर्ग की कई दवाइयाँ अस्तित्वमे आ चुकी है।

१९४७ ई०मे ऊपरकी सरचनामे थोडा परिवर्तनकर जाइलोकेन नामक एक बहुत ही प्रभावी निश्चेतक बनाया गया। अपने सामान्य समीकरणकी दृष्टिसे इसके चौथे स्थानपर ब्यूटोकिस समूह, दूसरे और छठवे स्थानपर मिथाइल समूह और $-CO_2$ समूहके बदले $-NHCO-$ समूह रखे गए है। इस प्रकार अभी भी अ, ब, क के स्वरूपमे परिवर्तनके प्रयोग किये जा रहे है।

$$H_2N-C_6H_4-COO-(CH_2)_n-N\begin{matrix}R_1\\R_2\end{matrix}$$

अ ब क
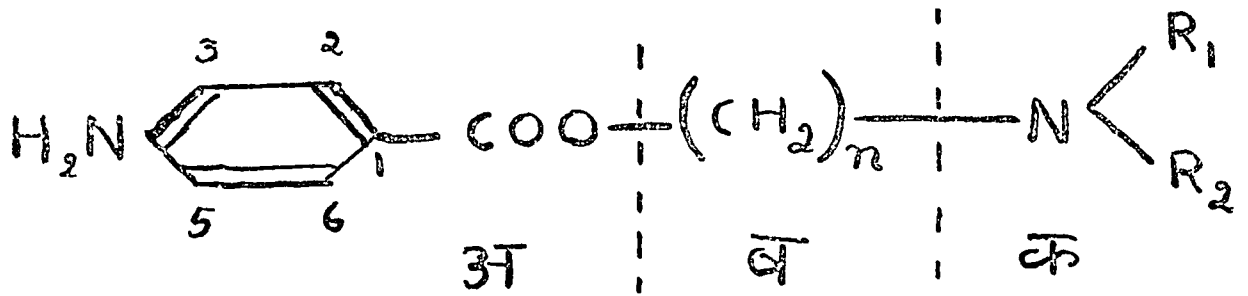
पीडापहारी अथवा शामक (analgesic) औषधियोको भी दो विभागोमे बाँटा जा सकता है। एस्पिरिन, फिनासेटिन, एण्टिपाइरिन आदि अनेक सश्लिष्ट पदार्थोका एक विभाग। मार्फिन और उसकी सरचनाके आधार पर सश्लिष्ट पीडापहारियोका दूसरा विभाग। यहाँ हम केवल दूसरे विभागकी ही चर्चा करेगे। अफीमसे प्राप्त होनेवाले लगभग वीस ऐलकालायडोमे मार्फिन, कोडिन और विथेन मुख्य है। इन तीनोकी सरचनामे काफी समानता है। मार्फिनमे तीसरे
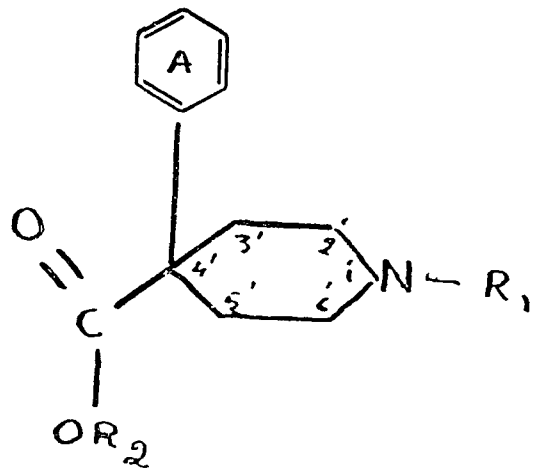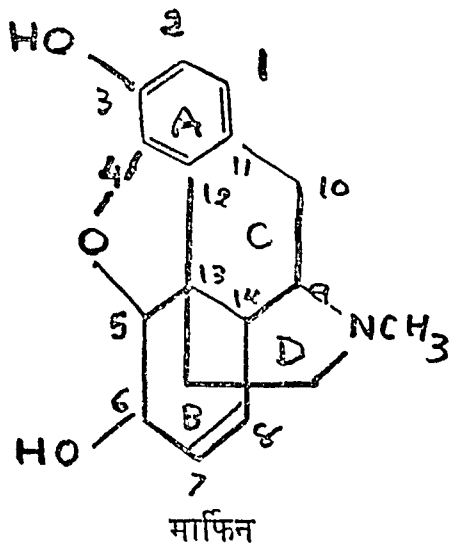
मार्फिन

R_1=मिथाइल, R_2=इथाइल } पेथिडिन

और छठे स्थानपर मुक्त हाइड्रोक्सिल (–OH) समूह होता है। परन्तु कोडिनमें तीसरे स्थान पर मिथोक्सी समूह ($-OCH_3$)होता है। मार्फिनसे नशा चढता है, पीडाका शमन होता है और रोगी स्फूर्तिका अनुभव करता है, कोडिन खास तौरपर खासीको रोकता है।

शुरू-शुरूमे मार्फिनके वलय विन्यासको अक्षुण्ण बनाये रख जितने समूह-परिवर्तन सम्भव हो सकते थे, वे सब किये गए और इस प्रकार जितने पदार्थ प्राप्त हुए उनमे पीडापहारी गुण अधिक मात्रामे पाये गए। उदाहरणके लिए मेटापॉन मार्फिनसे सवा दो गुनी अधिक सक्रिय औषधि सिद्ध हुई।

उसके बादके प्रयोग तो और भी आश्चर्यजनक है। मार्फिन वलय-विन्यासके कुछ भागोको अक्षुण्ण रख और कुछका खण्डनकर नये सश्लिष्ट पदार्थ अन्य रीतिसे प्राप्त किये गए है। उदाहरणके लिए, पेथिडिनमे मार्फिनके केवल A और D वलय अक्षुण्ण है। पेथिडिनके विन्यासपर कई प्रयोगात्मक परिवर्तन हुए है। उसमे A वलयके खाली स्थानोमे उपयुक्त समूह रखकर अनेक पदार्थ प्राप्त किये गए है। परन्तु सक्रियताकी दृष्टिसे सभी पदार्थ पेथिडिनसे निम्नकोटिके अथवा समकक्ष ही सिद्ध हुए है। इस श्रेणीमे जब ($-COOR_2$) के बदले (COR_2) रखा गया तो पेथिडिनसे २० गुना सक्रिय पीडापहारी किटोविमिडोन प्राप्त हुआ। अफीमकी तरह इसका व्यसन लग जानेसे इसे दवाईके रूपमे लेनेकी सलाह नही दी जाती। इसके अतिरिक्त ($COOR_2$) के बदले ($-O\,COR_2$) रखकर पीडापहारी प्राप्त करनेका प्रयत्न हुआ है और परिणामस्वरूप पेथिडिनसे पॉच गुना अधिक सक्रिय निसेण्टिल प्राप्त किया गया है। इसमे एक अतिरिक्त मियाइल-समूह ३' स्थान पर और ४ स्थान पर ब्यूटोकिस समूह होता है।

हमने यह देखा कि मार्फिनकी सरचनाके केवल एक भागके आधार पर कितने पीडापहारी प्राप्त किये गए। लगभग तेरह-चौदह अन्य भागोको लेकर पीडापहारियोके सश्लेषणकी दिशामे

वनस्पति जगत्के ऐलकालायडकी खोजके लिए १९४७ मे जिन्हे रसायनका नोवेल पुरस्कार प्रदान किया गया।
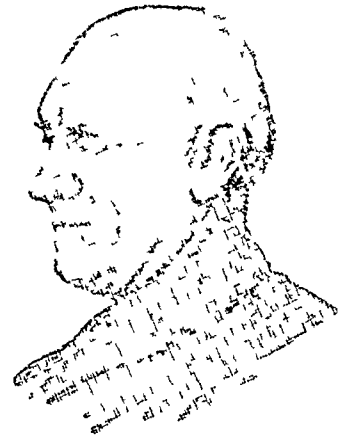
सर राबर्ट राबिन्सन
(जन्म १८८६)

व्यापक रूपसे कार्य हुआ है। इससे यह पता चलता है कि रसायनविदोकी सश्लेपण-सम्बन्धी गति-विधियाँ योजनाबद्ध और सोद्देश्य होती है, परन्तु साथ ही वे समय और श्रमसाध्य भी है। फिर

काफी समयतक कठोर परिश्रम करनेके बाद भी सब-के-सब नवनिर्मित पदार्थ उपयोगी सिद्ध नही होते। कई वार तो एक भी पदार्थ उपयोगी नही होता। केवल रासायनिक पदार्थोकी नाम वृद्धि-की खाना-पूरी होकर रह जाती है। हाँ, पाँच-पचीस वर्ष बाद उसका कोई नया उपयोगी गुण मालूम हुआ तो उस खोजका महत्त्व बढ जाता है।

पिछले १५ वर्षोमे कई प्रशामक (tranquılısei) प्रकाशमे आये है। विशेष रूपसे इनका उपयोग मनोरोगियोपर किया जाता है। प्रशामकके प्रभावसे रोगीका चित्त शान्त होता है, उसकी घबराहट और उत्तेजना मिटती है। इन दवाइयोसे रोगीको शान्ति मिलती है, परन्तु नशा नही आता। सर्पगन्धासे प्र।प्त किया जानेवाला एक ऐलकालायड रेसर्पिन है, जो प्राकृतिक प्रशामक है। सर्पगन्धाका यह गुण हमारे वैद्योको पुरातन कालसे ज्ञात था और इसीलिए सर्पगन्धाका नाम ही 'पागलकी दवा' प्रसिद्ध हो गया। १९३२ ई०मे सेन और बोसने यह घोपणाकी कि सर्प-गन्धाकी जड रक्तचापको कम करती और उत्तेजनाको मिटाती है। १९४१ ई०मे कर्नल चोपडा
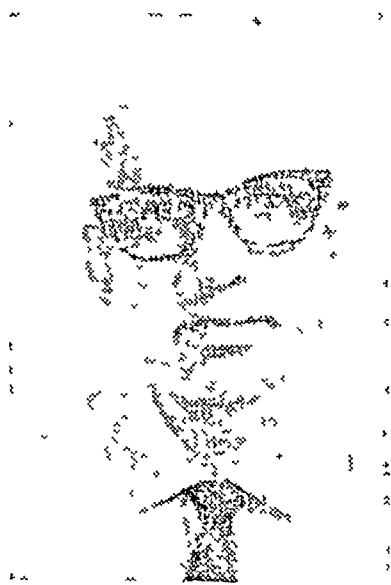
डा० आर० ए० हकीम
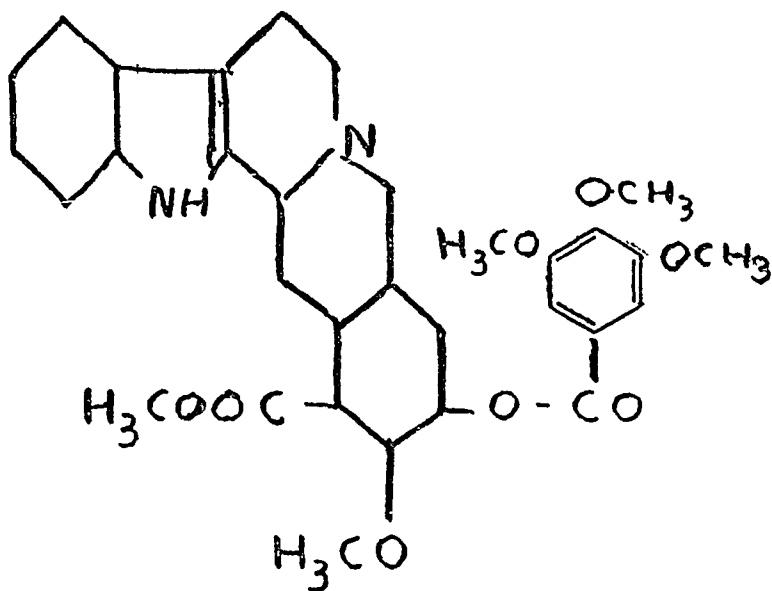
रेसर्पिन
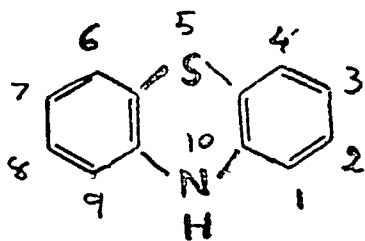
फिनोथायाजिन
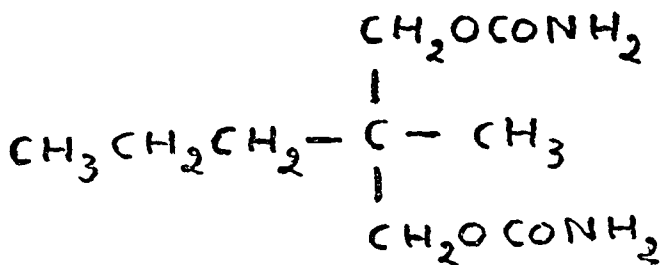
इक्वानिल

और उनके सहकर्मियोने सर्पगन्धाके औपधीय गुणोका पता लगाया। १९४३ ई०मे सीवा कम्पनीने सर्पगन्धापर अनुसन्धान किया। १९५२ मे सीबा कम्पनीके अन्वेषकोने रावोल्फीया सर्पेण्टिना (सर्प-

$$\text{C}_5\text{H}_4\text{N}-\text{CON}\begin{matrix}\text{C}_2\text{H}_5\\ \text{C}_2\text{H}_5\end{matrix}$$
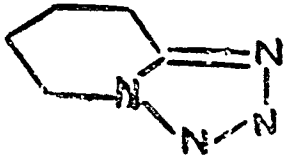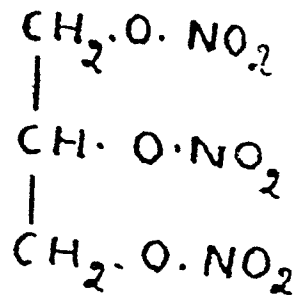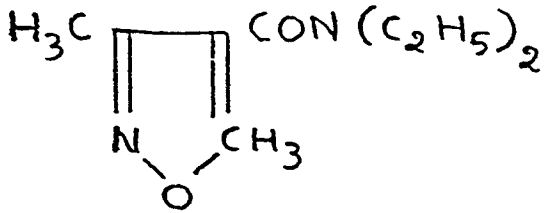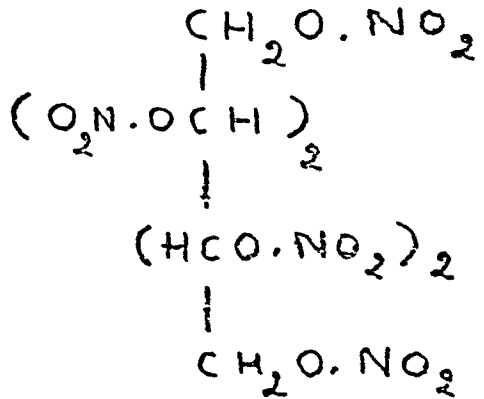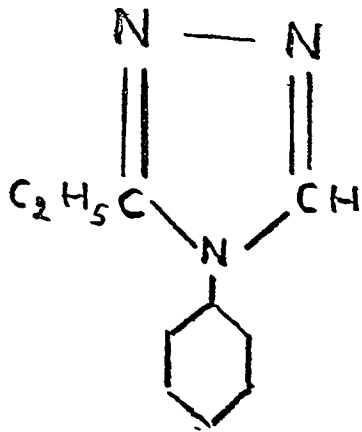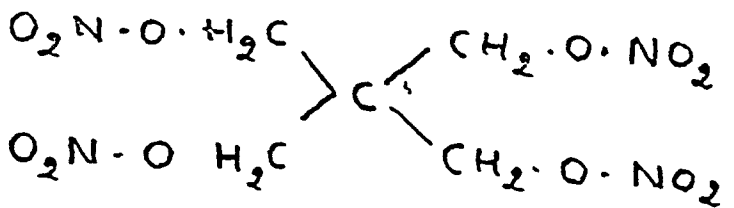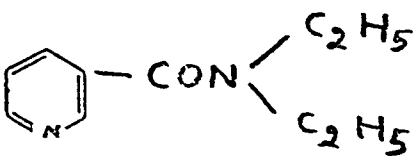
कोरेमाइन

गन्धा)की जडसे औषधीय सत्त्व अथवा सक्रिय अवयव रेसर्पिनको पृथक् किया। और वादके चार वर्षोमे स्विटलर, बर्जर, राबिन्सन, कारेर, वुडवर्ड आदिके अथक प्रयत्नो और सहयोगके परिणामस्वरूप रेसर्पिनकी सरचना और सश्लेपणमे सफलता प्राप्त हुई। १९५३ मे अहमदावादके डॉ० आर० ए० हकीमने रेसर्पिनका मनोभ्रशके रोगियोपर सफलतापूर्वक उपयोग किया, जिसके बहुत अच्छे परिणाम निकले। इस सम्वन्धमे उन्होने अपने जो अनुसन्धान प्रकाशित किये उसपर उन्हे स्वर्णपदक प्रदान किया गया। रेसर्पिनमे रक्तचापको कम करनेकी क्षमता भी है। रसायनविद फौरन इस प्राकृतिक प्रशामक जितने अथवा इससे अधिक सक्रियतावाले पदार्थका सश्लेषण करनेमे लग गए। १९५६ ई० मे मिलर और विनवर्गने रेसर्पिनकी सरचनामे खडित रेखाओसे दिखाये गए भागकी ओर ध्यान दिया, और उन्होने पाया कि इस भागसे सयोजित होनेवाले सादे तृतीयक एमाइनोमे कुछ अशोमे रेसर्पिन जैसे प्रशामक गुण है।

प्रशामकके रूपमे इस्तेमालकी जानेवाली दवाइयाँ एक भिन्न ही श्रेणीसे निकली है। वालेस लेवोरेटरी, न्यू ब्रुन्सविक, न्यूजर्सीने सवसे पहले मेप्रोवेमेट (equanil) का सश्लेपण किया और वह शीघ्र ही दैनन्दिन जीवनमे लोकप्रिय हो गई। सबसे अधिक प्रभावी प्रशामक क्लोरप्रोमेजिन है। इसमे सर्वथा नये प्रकारका वलय होता है, जिसे फिनोथायलिन वलय कहते है। इसमे वेनजिनके दो वलयोको नाइट्रोजन और गन्धकके परमाणु सेतु बनाकर जोडते है। इस वलयके स्थान २ पर

$$—CH_2–CH_2\ CH_2N < \begin{matrix} C_2H_5 \\ C_2H_5 \end{matrix}$$
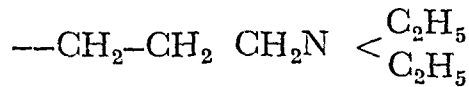
क्लोरिन और दसवे स्थानपर नाइट्रोजनसे चिपके हुए हाइड्रोजनके बदले समूह लगा हो तो क्लोर-प्रोमेजिन प्राप्त होता है। फिनोथायजिन वलय इस अर्थमे महत्त्वपूर्ण है कि उसके आसपास अन्य वर्गकी औषधियाँ, जैसेकि हिस्टामिनरोधी, कृमिनाशक प्राप्त की जा सकी है। वलयके ऊपरके नाइट्रोजनपर भिन्न-भिन्न शृखला लगानेसे उसकी सक्रियतामे परिवर्तन किया जा सकता है।

प्रशामकोकी चर्चा करते हुए 'निर्मूलभ्रम' अथवा 'विभ्रम' (hallucination) पैदा करनेवाली औपधियोका जिक्र भी कर लिया जाए। कई वार मनुप्यको विभ्रम हो जाता है, अर्थात् गलत आभास होने लगता है। मनोभ्रश अथवा विभक्त मनस्कता (schizophrenia) जैसे मनो-मानसिक-रोगमे विभ्रम होनेकी काफी गुजाइश है। इस रोगमे विचारो, मनोभावो और कार्यमे कोई तालमेल नही रह जाता। भाँग या उससे मिलता-जुलता पेय पीनेपर चित्तकी जैसी विभ्रमित अवस्था हो जाती है वैसा ही अनुभव अथवा चित्तभ्रम (भ्रान्ति) कुछ औपधियाँ खाने पर भी होता है। इस प्रकारकी औपधियोको विभ्रामक (hallucinogenic) कहते है। इनमेसे कुछकी सरचना निश्चित की जा सकी है।

मस्केलिनमे रेसर्पिनका अगत खडित रेखावाला भाग और अन्य पदार्थोमे इण्डोल-वलय विद्यमान रहता है। इण्डोल-वलयवाले रसायनक (रस-द्रव्य) मनोवृत्तियोकी क्रिया-प्रतिक्रियामे महत्त्वपूर्ण कार्य करते है। अर्गट ऐलकालायडमे जो लाइसर्जिक अम्ल होता है उसका डाइइथाइल-एमाइड विभ्रामककी तरह इस्तेमाल किया जाता है।

हृदयको शक्ति देनेवाली उत्तेजक (सजीवक या शक्तिवर्द्धक—analeptic) व्यापक उपयोगकी दृष्टिसे वार्विट्यूरेट और मार्फिन जैसी नशीली दवाइयोका असर भी कम करते है।

कपूर और स्ट्रिक्निनकी गणना प्राचीनकालसे उत्तेजकोंमें होती आई है। १९२४ ई०में स्मिटने कार्डियोज़ोल नामक पहली औषधिका सश्लेषण किया। यह दवा एक प्रबल उत्तेजक सिद्ध हुई। उसके बाद ट्रायोजोल ऐजोमान प्रकाशमें आया। इसके कुछ समय बाद साइक्लिटोनका पता लगाया गया। इस तरह एक प्रभावशाली अणुसमूहकी जानकारी मिली, जिसके परिणामस्वरूप सबमें सक्षम कोरेमाइन बनाया जा सका। आज भी हृदयगति बन्द होनेकी आशंकापर श्वसन और रुधिराभिसरणको बराबर करनेके लिए इस औषधिका प्रयोग किया जाता है।

हृदय और रुधिराभिसरणके सन्दर्भमें कुछ और औषधियोंकी चर्चा कर ली जाए। रुधिराभिसरणतन्त्रमें हृदय और रक्तवाहिनीकी भिन्न-भिन्न प्रकारकी बीमारियाँ होती हैं और उनके लिए अलग-अलग दवाइयाँ उपलब्ध है। यहाँ तो हम केवल उन्हीं औषधियोंका उल्लेख करेंगे जो हृदयके स्नायुओंपर सीधा असर करती है। डिजेटेलिस, सिल्ला और स्टोफेन्थस वर्गके ऐल्कालायड, टोड-विष, खेलिन और विसनागिन, स्टेरायड ऐल्कालायड आदि प्राकृतिक स्रोतसे प्राप्त होनेवाली औषधियाँ हैं। सश्लिष्ट औषधियोंमें ग्लिसरिल ट्राइनाइट्रेट, पेण्टा इरिथ्रिटोल टेट्रानाइट्रेट और मेनिटाल हेक्सानाइट्रेट महत्त्वपूर्ण है। ये नाइट्रेट महाधमनीके विस्तारककी तरह काम करते हैं और एजाइना पेक्टोरिस हृदयशूलकी पीडाको कम करते है। आश्चर्यकी बात तो यह है कि जो ट्राइनाइट्रोग्लिसरिन यहाँ पीडाहारक है वही अन्यत्र विस्फोटक भी है (देखिए अध्याय ६ विस्फोटक पदार्थ पृष्ठ ९९)।

$$\underset{\text{अ}}{(HO)_2C_6H_3}\;-\;\underset{\text{ब}}{\underset{|}{\overset{}{CH}}(OH)-CH_2}\;-\;\underset{\text{क}}{NHCH_3}$$

एड्रिनलिन

$$C_6H_5-\underset{\substack{|\\ OH}}{CH}-\underset{\substack{|\\ CH_3}}{CH}-NHCH_3$$

एफिड्रिन

$$C_6H_5-CH_2-\underset{\substack{|\\ CH_3}}{CH}-NH_2$$

एम्फेटेमाइन

$$C_6H_5-CH_2-\underset{\substack{|\\ CH_2CH_2Cl}}{\overset{+}{N}H}-CH_2-C_6H_5\quad \bar{Cl}$$

डाइबेनामिन

$$(CH_3)_3\overset{+}{N} \;\vdots\; (CH_2)_2 \;\vdots\; O\cdot COCH_3$$

अ ब क
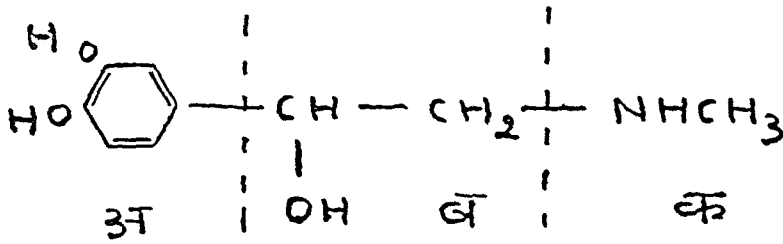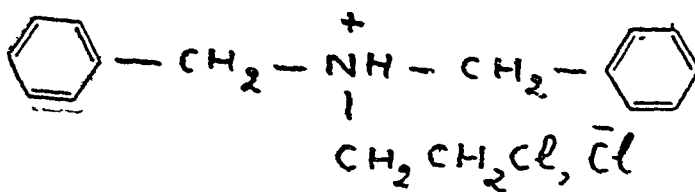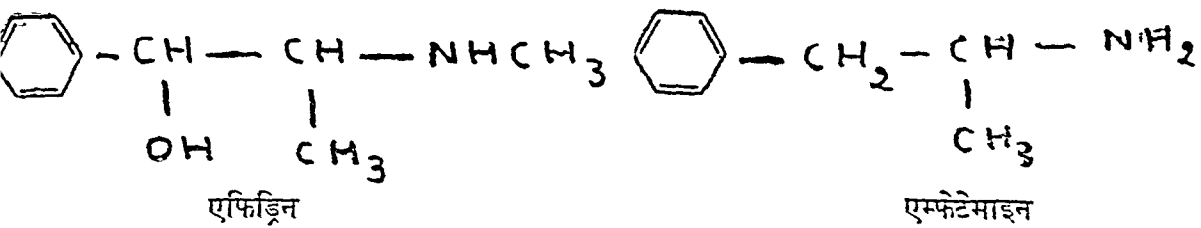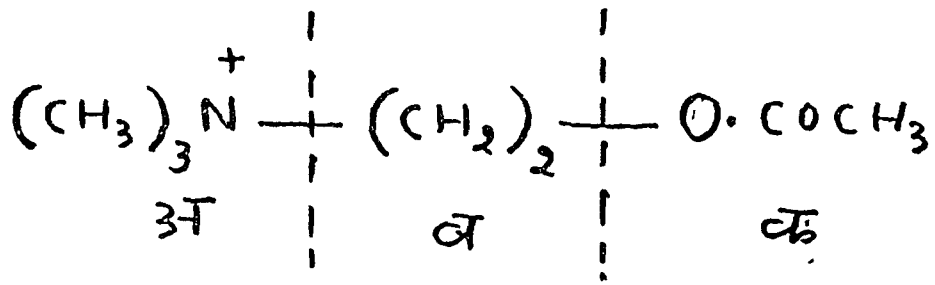
एसिटिल कोलिन

स्वायत्त तन्त्रिकातन्त्र (autonomic nervous system) पर असर करनेवाली औषधियाँ एक भिन्न उपवर्गमे विभाजित की गई है—एड्रिनलिनधर्मी, एड्रिनलिन क्रियाविरोधी, कोलिनधर्मी, कोलिन क्रियाविरोधी, हिस्टामिनरोधी आदि। स्वायत्त तन्त्रिका तन्त्रके सचालनमे एड्रिनलिन और एसिटिल कोलिन हारमोन प्रमुख भूमिका निभाते पाये गए है। रसायनविदोने अव ऐसी औषधियोका सश्लेषण कर लिया है जो हारमोन-जैसी सक्रिय और हारमोन-क्रियाशीलताकी अवरोधक भी है।

$$(CH_3)_3\overset{+}{N}CH_2-\underset{\displaystyle CH_3}{\underset{|}{CH}}-O.COCH_3$$

मेथाकोलिन क्लोराइड

$$C_6H_5-\overset{\displaystyle OH}{\overset{|}{\underset{\displaystyle CO\cdot OCH_2CH_2\overset{+}{N}(CH_3)_3\;\bar{Cl}}{\underset{|}{C}}}}-C_6H_5$$
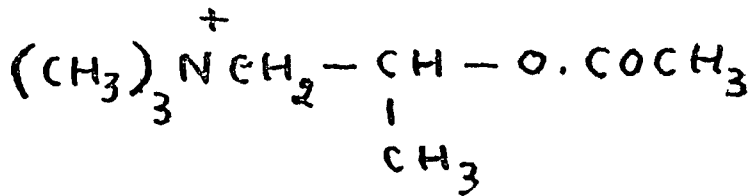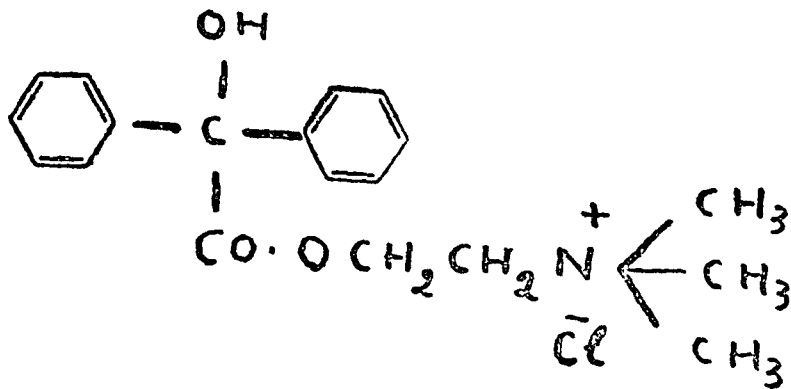
लॉकेसिन

हिस्टामिन एक विषम-चक्रीय एमाइन है और शरीरमे प्रोटीनके साथ सयुक्त स्थितिमे रहता है। जब वह शरीरके अन्दर मुक्त अवस्थामे आ जाता है तो एक प्रकारका विकार पैदा होता है, जिसे 'एलर्जी' कहते है। एलर्जी वैसे तो कई कारणोसे होती है, लेकिन हिस्टामिनके कारण हुई हो तो उसे मिटानेके लिए खास प्रकारकी दवाइयाँ दी जाती है। इनमे रसायनविदो द्वारा सश्लिष्ट वेनाड्रिल और फेनर्गन-जैसी दवाइयाँ प्रमुख है। इस प्रकारकी औषधियोको एण्टी-एर्लजिक अथवा प्रति-एर्लजिक कहते है।

$C_6H_5-CH-C_6H_5$

$O.CH_2CH_2N(CH_3)_2$

बेनाड्रिल

$(CH_2)_3N(CH_3)_3$
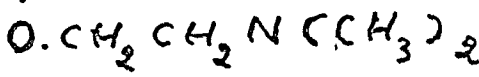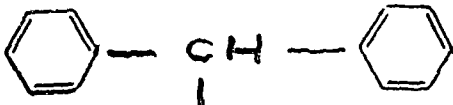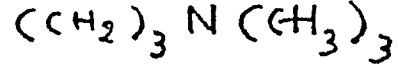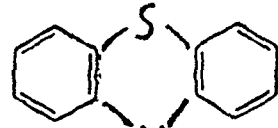
फेनर्गन

अभी तक हम कुछ तन्त्रान्वयी ओषधियोका विवेचन करते रहे, अब चिकित्सामे रसायनी औषधियोकी चर्चा की जाएगी।

रसायनी चिकित्सान्वयी (Chemotherapeutic) औषधियाँ

डॉ० एर्हलिक ट्राइप्नोसोम नामक विषाणुओपर ऐंजो वर्गके ट्रिपन रेड रगका प्रयोग कर रहे थे। उन्ही दिनो अफ्रीकामे होनेवाले निद्रालुरोग (sleeping sickness) पर एटोक्सिल नामकी सखिया-युक्त दवाईका प्रयोग किया गया। उससे डॉ० एर्हलिकके मनमे यह विचार जाग्रत हुआ कि यदि इस औषधिकी सरचनामे परिवर्तन कर दिया जाए तो सम्भवत सक्षम औषधि उपलब्ध हो जाए। इस विचारने उन्हे अनेक रासायनिक पदार्थोंके सश्लेपणकी प्रेरणा प्रदान की। उन्होने जिन पदार्थोको सश्लिष्ट किया उनमेसे कुछ उपदश तथा ट्राइप्नोसोम जीवाणुओसे होनेवाले रोगोको रोकनेवाले सावित हुए, यद्यपि उपदशके अकसीर इलाजके लिए उन्हे सश्लेपणके प्रयोगो-

$NaO-As(=O)-OH$

एटोक्सिल

$As=As$
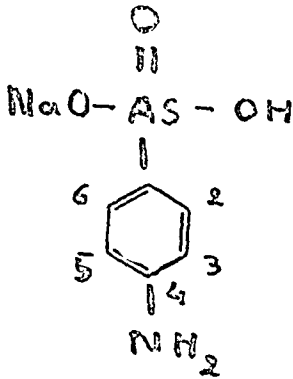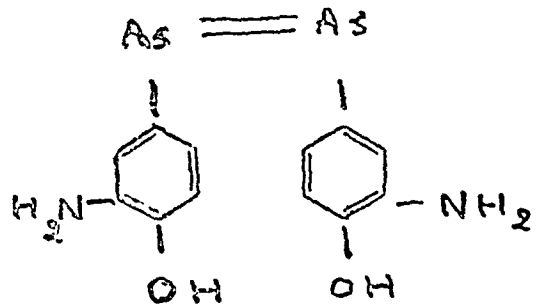
साल्वर्सन

को जारी रखना पडा, जब तक कि '६०६' के नामसे प्रसिद्ध 'साल्वर्सन' प्राप्त न हो गया। साल्वर्सनकी सरचनामे नाम-मात्रके परिवर्तनसे उससे भी श्रेष्ठ नियोसाल्वर्सन नामक औषधि उपलब्ध हुई। इस प्रकार सखियावाले पदार्थोंके सश्लेपणका विपुल विकास हुआ।

ट्रिपन रेडने चूहेके पेटमे विद्यमान ट्राइप्नोसोमका अवश्य प्रतिरोध किया, परन्तु वह सभी प्रकारके ट्राइप्नोसोमपर प्रभावी सिद्ध न हुआ। काफी अन्वेपण-अनुसन्धानके बाद १९४२ ई०मे फोर्नो सुरेमाइन-श्रेणीका पता लगा पाया। इस श्रेणीमे यूरिया समूह था। इस समूहके बदले नये

अणुसमूह NH_2 जोडनेसे डाइएमिडिन वर्गकी औषधियाँ बनाई जा सकी। इसके अतिक्ति क्विनो-लिनवाली औषधियाँ भी खोजी गई। इस वर्गमे एक उल्लेखनीय घटना देखनेको मिली। सक्रियता प्रदर्शित करनेके लिए अणुमे सममिति (symmetry) होनी चाहिए और साथ ही अन्तिम समूह भारी होना चाहिए। फिर यह भी पता चला कि सममित औषधियाँ खास प्रकारकी बीमारियोको और असममित औषधियाँ दूसरे प्रकारकी (ट्राइप्नोसोमसे पैदा होनेवाली) बीमारियोको अच्छा करनेमे प्रभावी होती है। इससे यह तथ्य ज्ञात हुआ कि अणुकी दिग्रचना और औषधीय गुणमे काफी-कुछ सम्बन्ध रहता है।

असममित पदार्थोमे अणुओकी दिग्रचना विशिष्ट प्रकारकी होती है। उनके विलयनमेसे प्रकाश पारित किया जाए तो प्रकाश-किरणे बाई अथवा दाई ओर मुड जाती है। इसलिए इस तरहके पदार्थोको प्रकाश सक्रिय (optically active) कहते है। इनके अणुकी दिग्रचना वामवर्ती और दक्षिणवर्ती, दोनो ही प्रकारकी होती है। यो ऊपरसे देखनेपर तो इनकी दिग्रचना एक-जैसी ही प्रतीत होती है, परन्तु व्यक्ति और कॉचमे दिखाई देते उसके प्रतिविम्वमे पाये जाने
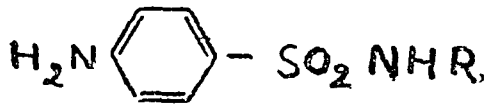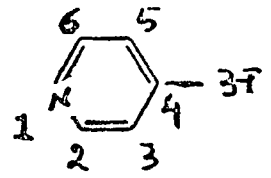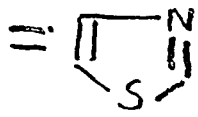
$H_2N-C_6H_4-SO_2NHR$

R = सल्फापिरिडिन

= सल्फाथायेजोल

= सल्फाडायाजिन

= $-C(=NH)-NH_2$ सल्फाग्वायनेडिन

पिरिडिन-वलय (1 N, 2, 3, 4 — अ, 5, 6)

$CONHNH_2$

आयसोनायेजाइड

सल्फाथायाडायाजोल ($-C=N-N=C(-S-)-NH-SO_2-C_6H_4-R$)

सल्फोन ($RHN-C_6H_4-SO_2-C_6H_4-NHR$)

$$CH_3CONH-C_6H_4-CH=N-NH-\underset{\underset{S}{\|}}{C}-NH_2$$

टिवियोन पेराएमिनो सेलिसिलिक अम्ल

$$C_5H_7-(CH_2)_2COOH$$
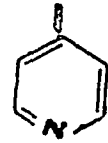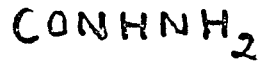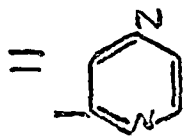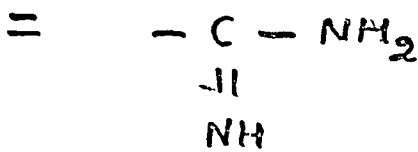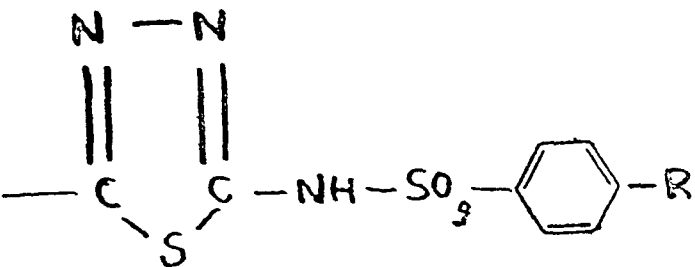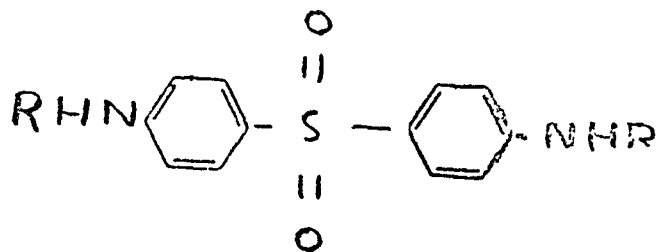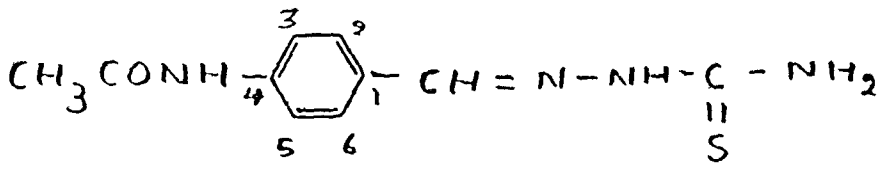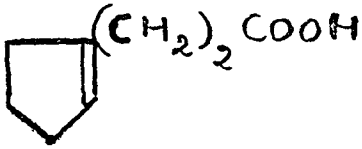
n=10 हिड्नोकार्पिक अम्ल
n=12 शालमुगरिक अम्ल

$$H_2N-C_6H_4-N=N-C_6H_4-SO_2NH_2$$
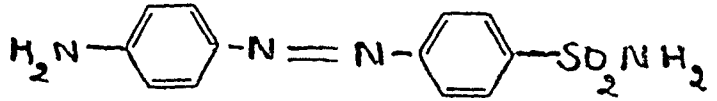
प्रोन्टोसिल

वाले अन्तरकी तरह वाई वाजू दाहिनी ओर दिखाई देती है। वामवर्ती पदार्थ शरीरके अन्दरके कुछ जीवाणुओका नाश कर सकते है, परन्तु दक्षिणवर्ती उनपर कोई भी प्रभाव नही डालते। वामवर्ती एड्रिनलिन और दक्षिणवर्ती एड्रिनलिन दोनो रासायनिक दृष्टिमे एक ही पदार्थ है, परन्तु सरचना बाई और दाहिनी होनेके कारण उन्हे भिन्न समझा जाता है। वामवर्ती एड्रिनलिन मानव-शरीरमे ओषधीय दृष्टिसे उल्लेखनीय कार्य करता हे, जो दक्षिणवर्ती एड्रिनलिन नही कर पाता।

रसायनी चिकित्साके विकासक्रमका दूसरा उल्लेखनीय सीमाचिह्न गेहार्ड डोमाग्कने १९३४ ई०मे स्थापित किया। प्रोन्टोसिल नामक एक ऐजो रग स्ट्रेप्टोकोकाईसे उत्पन्न होनेवाले रोगो पर प्रभावी सिद्ध हुआ। परीक्षणोके वाद पता चला कि प्रोन्टोसिल शरीरमे जानेके वाद विखण्डित होता और पेराएमिनो वेनजिन सल्फोनेमाइड वन जाता हे। इस जानकारीके वाद उसपर अनेक समूह-परिवर्तनकर हजारो सल्फोनेमाइड पदार्थोका सश्लेपण किया गया। उनमेसे कुछ निश्चित सरचनावाले पदार्थ ही औपधिके रूपमे प्रभावी सावित हो सके। इन औपधियोकी विशेषता यह है कि वे भिन्न-भिन्न जातिके कोकाई जन्य रोगोके इलाजमे कारगर पाई गई। सल्फा-ग्वायनेडिन वेसिलसजन्य पेचिशमे फायदेमन्द सावित हुई। सल्फा-ओपधियोकी खोजसे पहले न्युमोनिया, मेनिनजाइटिस, और सूजाक (gonorrhoea) जैसे रोगोका सामना करना वडा ही विकट काम था। परन्तु विभिन्न प्रकारकी सल्फा-दवाइयोके आविष्कारके वाद इन रोगोकी सफल चिकित्सा सम्भव हुई और ये रोग न तो भयकर और न असाध्य ही रह गए।

इसी सन्दर्भमे लगे हाथो यह भी देख लिया जाए कि ओपध-मारण या ओषध-विरोध (drug-antagonism) क्या है? पैरा-एमिनो वेनजोइक अम्लकी थोडी-सी मात्रा भी यदि सल्फा-औपधियोमे मिला दी जाए तो उससे औपधिकी प्रति-जीवाणु सक्षमतामे वाधा पहुँचती है। इससे पैरा-एमिनो वेनजाइक अम्लको सल्फा-औपधियोका मारक या विरोधी (antagonist) कहा जाता है। औपध-विरोधकी प्रक्रियाको समझ पाना बहुत मुश्किल है, क्योकि वह भिन्न-

भिन्न कारणोसे होती है। उसमे मुख्यत औषधि और उसके विरोधी (मारक) की सरचनामे आशिक साम्य होता है।

क्षय और कुष्ठ रोगके जीवाणुओमे साम्य है। दोनो ही शरीरके किसी भी भागमे घर कर लेते है। परन्तु वे सामान्य रक्त-सचारके प्रमुख मार्गसे दूर ही रहते है। इसलिए उनका विनाश करनेवाली औषधिको उस भाग तक पहुँचना चाहिए। लेकिन यह कठिन होनेसे एक जमानेमे इन रोगोको अच्छा कर पाना मुश्किल ही था। स्ट्रेप्टोमाइसिन और अन्य दवाइयोकी खोजके बाद क्षयरोग असाध्य नही रह गया, अब उसे आसानीसे अच्छा किया जा सकता है। क्षयरोगरोधी दवाइयोमे दो वर्गकी औषधियोका व्यवस्थित विकास हुआ है, जिनके नाम है थायोसेमिकार्बेजोन और हाइड्रेजाइड। वेनिग और उसके सहकर्मी क्षयरोगके जीवाणु पर सल्फा-औषधियोके प्रभावका अध्ययन कर रहे थे। उन्हे सल्फाथायाडायाजोल कुछ अशोमे जीवाणु-स्तम्भक प्रतीत हुआ। उसकी सरचनाके खडित रेखावाले भागसे थायोसेमिकार्बेजोन वर्गकी प्रेरणा मिली। इस वर्गमे टिबियोन सबसे क्रियाशील साबित हुआ।

इस सरचनामे बेनजिन वलयके स्थान-४ पर विशेष रूपसे और अन्य स्थानोपर समूह-परिवर्तनके द्वारा अधिक क्रियाशील पदार्थ प्राप्त करनेकी दिशामे प्रयत्न किये गए। बेनजिन वलयके बदले पिरिडिन वलय लेकर स्थान-२, स्थान-३ और स्थान-४ पर पार्श्वश्रृखला (अ) लगाकर कई तरहके पदार्थ प्राप्त किये गए।

१९५२ ई०मे फॉक्सने आइसो निकोटिन आल्डिहाइड थायोसेमिकार्बेजोन अप्रत्यक्ष रीतिसे बनाया। इसमे पिरिडिन वलयके साथ-ही-साथ उसके स्थान-४ पर पार्श्व श्रृखला अ होती है। इसको बनानेके दौरान आइसोनिकोटिनिक अम्ल हाइड्रेजाइड द्वितीयक पदार्थके रूपमे प्राप्त होता था। फॉक्सने
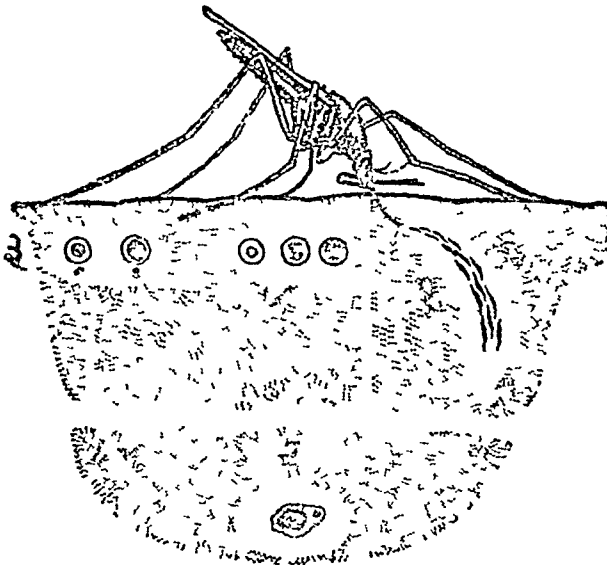
१ मच्छरकी लारमेसे प्लैजमोडियमका मानव-शरीरमे प्रवेश।

२ रक्तकणमे प्लैजमोडियमका प्रवेश।

३. मानवरक्तमे गेमेटोसाइट।

४. मलेरियाके जीवाणुका नये रक्तकणमे प्रवेश।
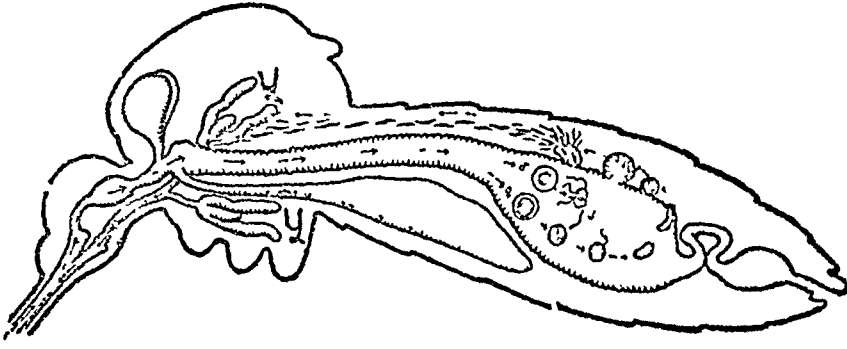
५ मच्छरके पेटमे मलेरियाके जीवाणुओंका पालन-पोषण – लाला-ग्रन्थिमे जीवाणु जमा होते है।
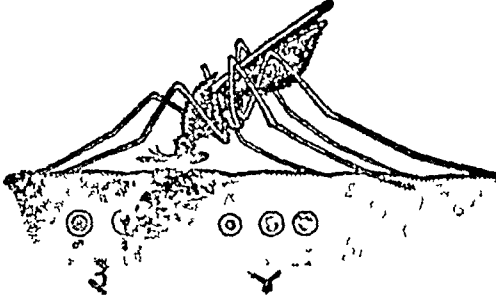
मानवरुधिरमेमे मलेरियाके जीवाणु मच्छरके शरीरमे।

आइसोनायेजाइड (INH)की क्षयके रोगाणुओके प्रति क्रियाशीलताकी पडतालकी तो पाया कि उसमे यह गुण बहुत अधिक मात्रामे है। इस खोजने क्षयकी चिकित्साके क्षेत्रमे नई आशाका सचार किया। आज तो स्ट्रेप्टोमाइसिन और पैराएमिनो सेलिसिलिक (PAS) के साथ INH भी क्षयकी एक औषधिके रूपमे खूब प्रचलित है। INH की सरचनामे, खासतौर पर $-NHNH_2$ समूहमे बहुतसे सुधार करके बनाये जानेवाले नये-नये पदार्थोका काफी कठोरतासे परीक्षण किया गया, परन्तु उनमेसे कोई भी पदार्थ INH से श्रेष्ठ साबित नही हुआ।

कुष्ठरोगरोधी औषधियोमे पहले हिड्नोकार्पस और टारक्टोजीनस वर्गकी वनस्पतियोके बीजोका तेल बाह्योपचारके लिए काममे लाया जाता था। इसमे दो मुख्य अम्ल होते ह गाल-मोगराके तेलमे पाया जानेवाला गॉलमुगरिक अम्ल ओर हिड्नोकार्पिक अम्ल—इन दोनोकी सरचनामे बडा साम्य है। आधुनिक कुष्ठ-चिकित्सामे सल्फोन, स्ट्रेप्टोमाइसिन, प्युरोमाइसिन आदिका उपयोग किया जाता है। सल्फोन औषधियाँ सश्लिष्ट औषधियाँ है। क्षयोपचारके एक चरणमे सल्फोनोका भी प्रयोग किया गया था और वहीसे कुष्ठरोगमे इसका उपयोग करनेकी प्रेरणा मिली और सफलता भी प्राप्त हुई। सल्फोनकी सामान्य सरचनामे जब R के स्थान पर हाइड्रोजनका परमाणु होता है तो डाइऐमिनो डाइफिनाइल सल्फोन प्राप्त होता है। R के बदले अन्य समूह रखकर तरह-तरहके क्रियाशील सल्फोन प्राप्त किये जा सकते है।

मलेरिया-निवारक औषधियोका विकास तो निस्सन्देह रसायनविदोकी अद्भुत क्षमताका परिचायक है। मलेरियाके जीवाणु अपने जीवन-क्रमके दौरान विभिन्न स्वरूप धारण करते है। उनके जीवनका अधिकाश विकास मानवके शरीरमे, परन्तु कुछ थोडा-सा एनोफिलिस जातिके मच्छरके उदरमे भी होता है। पृष्ठ २१९-२२० पर दिये गए चित्रोसे मच्छरके जीवनके विकास-क्रमकी अच्छी जानकारी प्राप्त की जा सकती है।

मलेरियाके फैलावको रोकनेके लिए मच्छरको नष्ट करना जरूरी है। डी० डी० टी० इसका अकसीर उपाय है। परन्तु मनुष्यको एक वार मलेरिया हो जाने पर उसे मिटानेके लिए रोगकी पहली, दूसरी और तीसरी, एव चौथी—तीनो ही अवस्थाओके अनुरूप त्रिपक्षीय प्रयत्न करने होते है। रसायनविदोने ऐसी दवाइयाँ खोज निकाली है कि मलेरियाके जीवाणु किसी भी अवस्थामे क्यो न हो, उन्हे नष्ट किया जा सकता है। पहले मलेरियाके उपचारमे कुनैन प्रचलित था। उसकी सरचनामे क्विनोलिन वलय होता है। प्रथम विश्वयुद्धके समय और उसके वाद जर्मनीमे कुनैन मिलना मुश्किल हो गया। तव रसायनविदोने क्विनोलिन वलयमे आठवे स्थान पर $-NH(CH_2)_2N(C_2H_5)$ समूह रखकर और उस शृखलामे परिवर्तन करके पेण्टा-क्विन-जैसी अनेक दवाइयाँ वनाई। उसके वाद कुछ वर्षोके उपरान्त मेपाक्रिन बनाया गया। द्वितीय विश्वयुद्धके समय जर्मन सैनिक जिन दवाइयोका उपयोग करते थे वे मित्र-राष्ट्रके सैनिकोके हाथ लगी और तव पता चला कि उन दवाइयोमे पार्श्वसमूह क्विनोलिनके चौथे स्थानपर है। इस जानकारीसे इस दिशामे सश्लेषणके कार्यको वेग मिला और क्लोरोक्विन और केमोक्विन जैसी औषधियाँ अस्तित्वमे आई।

१९४२ ई०मे इग्लैण्डमे कर्ड, डेवी और रोजने विकासका एक नया क्षेत्र खोज निकाला। उन्होने जैसा क्विनोलिन और मेपाक्रिनमे होता है उस तरहके एक्रिडिनके वदले पिरिमिडिन वलयको चुना और नये-नये औषधीय पदार्थोका सश्लेषण आरम्भ कर दिया।

NH – CH – $(CH_2)_3$ N $(C_2H_5)_2$; CH_3 ; N ; Cl

क्लोरोक्विन

Cl – C(H)(CCl₃) – Cl

डी० डी० टी०

5, 4, 3, 2, 1, 6, 7, 8 ; H_3CO ; N ; NH

H_3C — CH —$(CH_2)_3$ N $(C_2H_5)_2$ → R

केमोक्विन

R ; अ ; ब ; N ; N ; X ; Y

वेनजिन-पिरिमिडिन वलयकी सन्धि

वाइग्वानिडिन

पेलुड्रिन
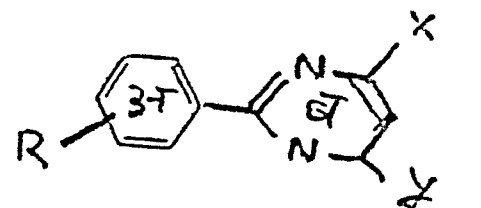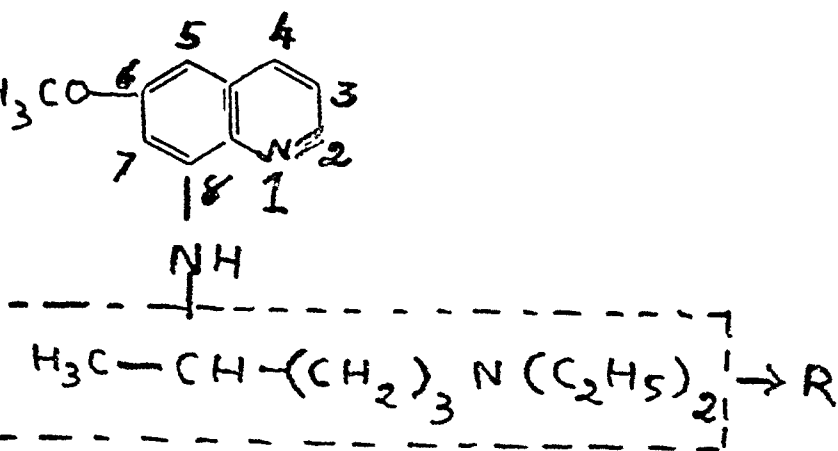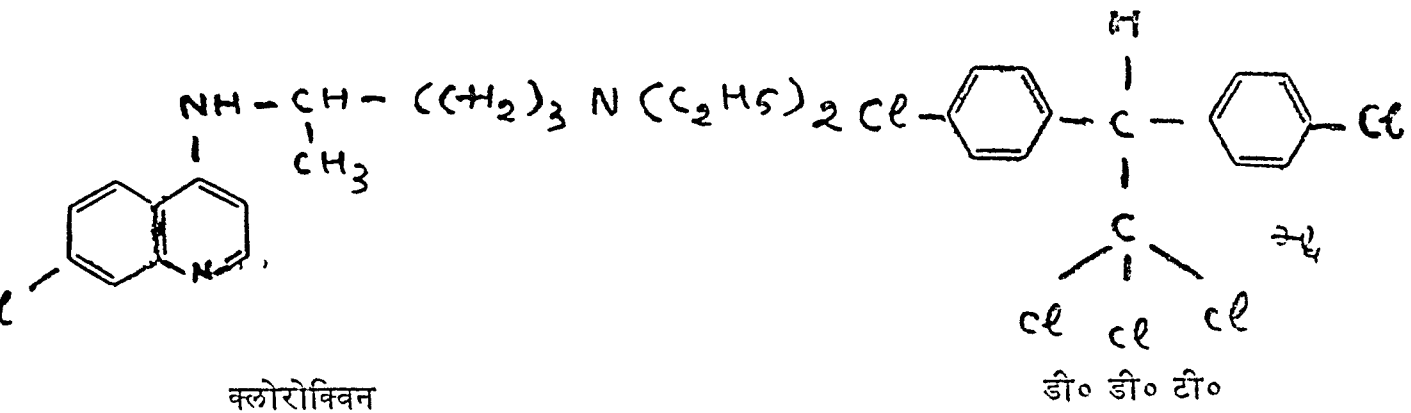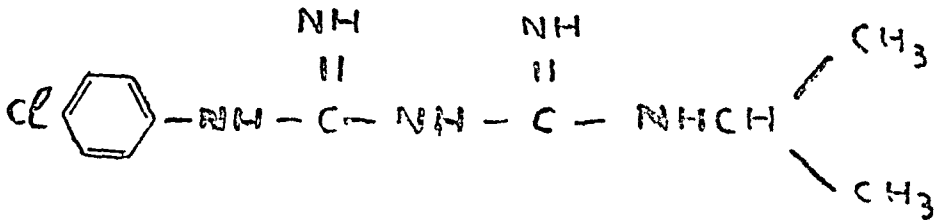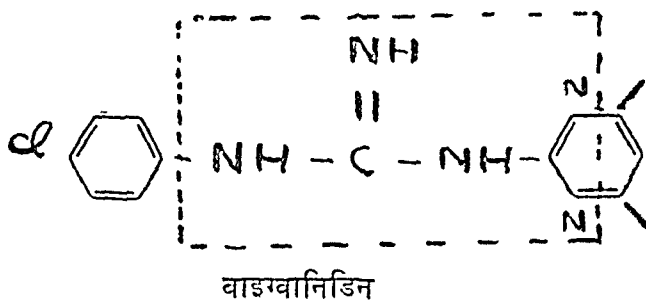
पहले प्रयासके रूपमे उन्होने ऐसे पदार्थ वनाये जो वेनजिन वलय (अ) और पिरिमिडिन वलय (व) को सीधे-सीधे जोडनेवाले हो। उनमे R, \ और v समूह थे। परन्तु उन पदार्थोंमे औपधीय गुण नही पाया गया। तव अ ओर व के वीच –NH– समूह वाले पदार्थ वनाये गए। और भी समूह-परिवर्तन करके देखा गया, परन्तु इच्छित परिणाम नही निकला। तव–NH–के वदले वलय समूह–NH-C-NH–रखा गया। इस तरह निरन्तर प्रयोग करते हुए उनकी समग्र सरचनामे खडित
||
NH

रेखाओसे अकित नया समूह दृष्टिगोचर हुआ। इस समूहको वाइ-ग्वायनिडिन कहते हे। फलस्वरूप इस समूहके साथका पेलुड्रिन प्राप्त हुआ। इस तरह पिरिमिडिनपर किये जानेवाले प्रयोगोंके दौरान अकस्मात यह औपधि हाथ लग गई। लेकिन इन अन्वेपकोके भाग्यमे पिरिमिडिन वलय वाली मलेरिया-निवारक औपधि खोजनेका यश वदा नही था, क्योकि १९५१ ई०मे फाल्को आदिने पिरिमिडिन वलयवाली 'डिरा-प्रिम' नामक शक्तिशाली औपधि खोज निकाली।

मलेरिया-निवारकोके साथ-साथ कृमिहरो या कृमिघ्नो (anthelmintics) के अन्तर्गत प्रति-फाइलेरियकोकी चर्चा भी कर ली जाए। मच्छर ओर मक्खी इस रोगके सूक्ष्म कीटाणुओके वाहक है। प्रति-फाइलेरियक औपधियोमे आरसेनिक और एण्टिमनीयुक्त औपधियो-का उपयोग होता था, परन्तु हेट्राजनके सश्लेपणके वाद इस क्षेत्रमे नये युगका उदय हुआ। इस हेट्राजनकी सरचनामे परिवर्तनके अनेक प्रयत्न किये गए और उनके फलस्वरूप यह जानकारी प्राप्त हुई कि अणु-रचनाकी विशेष प्रकारकी दिग्रचनाका उसकी क्रियाशीलतासे महत्त्वपूर्ण सम्वन्ध रहता है।

किसी भी प्रकारकी कोशिकाकी असावारण वृद्धि जिस रोगमे होती है उसे हम कैन्सर या कर्कट कहते है। कैन्सर कई तरहके होते है। उसके इलाजके लिए कुछ सश्लिष्ट औपधियाँ तैयार की गई है। उन सवमे 'नाइट्रोजन मस्टार्ड' विशेप रूपसे उल्लेखनीय है। इसकी सरचनामे परिवर्तन करनेसे कुछेक

उपयोगी औषधियाँ प्राप्त हुई है। इसके अतिरिक्त कैन्सरके उपचारके लिए एण्टिमेटाबोलाइट, हारमोन, एण्टिबायोटिक, कोल्चिसीन आदि समसूत्रणरोधी (antimiotic) ओषधिया भी खोज निकाली गई है। फिर आल्फा, बीटा, गामा विकिरणो द्वारा भी इस रोगके खिलाफ संघर्ष किया जा रहा है।

'स्वास्थ्य दर्शन'मे बताया गया है कि कुछ हाइड्रोकार्बन ऐसे है जिनके कारण ही कैन्सर होता है। इस सम्बन्धमे रसायनज्ञोने कुछ सामान्य सैद्धान्तिक नियम निरूपित किये है। उन नियमोंके अनुसार हाइड्रोकार्बनकी सरचनामे कुछ प्रदेश निर्धारित किये गए है और जिस प्रदेशमे १ २९२ मिली इलेक्ट्रान व ल्ट्ससे अधिक विद्युत् भार होता है वह हाइड्रोकार्बन त्वचा और त्वचाके नीचे वाली कोशिकाओमे निश्चित रूपसे कैन्सरजनक क्रियाशीलता दिखलाता है। इस तरहके सैद्धान्तिक निरूपण नई औषधियोके अनुसन्धानका मार्ग प्रशस्त करेगे और एक दिन मानव अपने ज्ञानके सहारे कैन्सर जैसे असाध्य रोग पर भी काबू पा लेगा।

भैषज रसायनके विकासका तीसरा चरण प्रतिजैविकी अथवा प्रतिजीवाणु पदार्थोकी खोजमे आरम्भ हुआ। प्रतिजैविकी (antibiotics)के क्षेत्रमे रसायनज्ञोकी खास रुचि उनकी जटिल

स्ट्रेप्टोमाइसिन
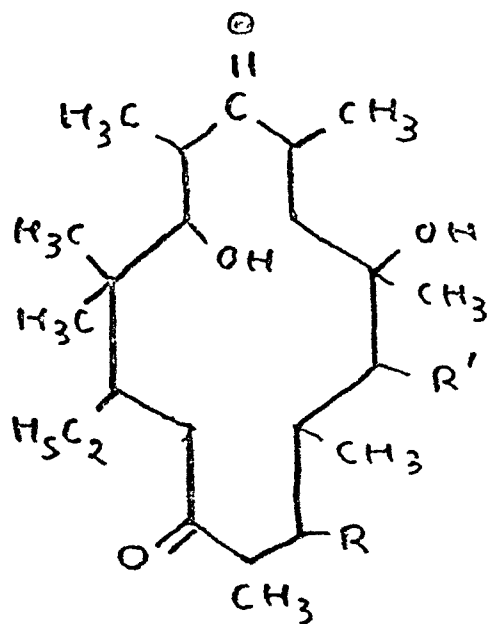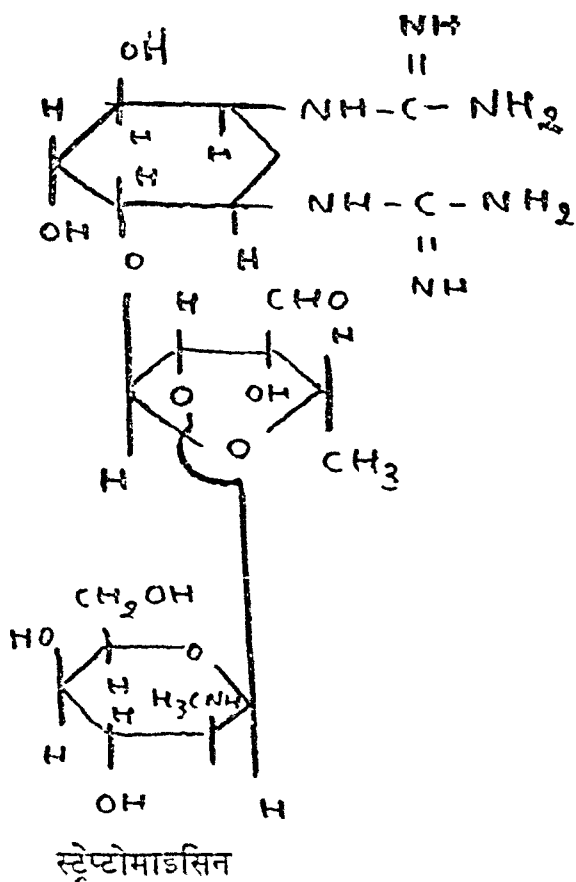
इरिथ्रोमाइसिन
R=शर्करा का अणु
R'=शर्कराका अणु

सरचनाओकी स्थापना करने और सश्लेषणके द्वारा उन्हे प्राप्त करनेमे रही है। आज भी बडे पैमानेपर प्राप्त होनेवाले प्रतिजीवाणु पदार्थ (एण्टिबायोटिक) जैव रासायनिक विधिसे ही बनाये जाते है। यद्यपि प्रयोगशालामे कुछ सश्लेषण सफल हुए है और इस बातकी सम्भावना हो चली है कि एण्टिबायोटिकोका बडे पैमानेपर भी सश्लेषण किया जाने लगेगा। हम प्रतिजीवाणु पदार्थोको तीन वर्गोमे विभाजित कर सकते है. (१) पेनिसिलीन वर्ग, (२) माइसिन वर्ग और (३) पोलिपेप्टाइड वर्ग।

$$R-N(CH_2CH_2Cl)_2 \longrightarrow R-\overset{+}{N}(CH_2CH_2)(CH_2CH_2Cl)\ \bar{Cl}$$

नाइट्रोजन मस्टार्ड

$(CH_3)_2C$ — $CHCOOH$
S N
CH CO
CH
NHCOR

पेनिसिलीन

H_2N —▨— $COOH$

एमिनो अम्लका समीकरण

H_2N —▨— CO–NH —▨— CO–NH —▨— $COOH$
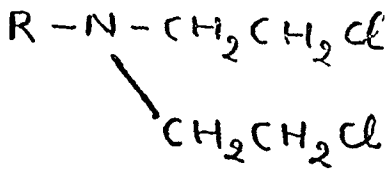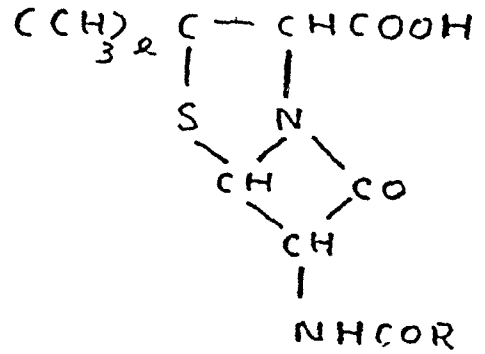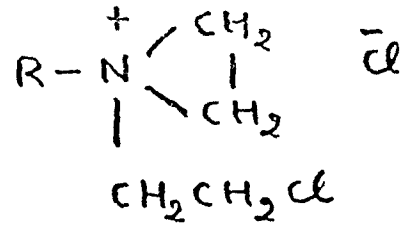
पोलिपेप्टाइडका नमूना

पेनिसिलीनकी साधारण सरचना पृ० २२३-२२४ पर दिखाई गई हे। उसमे R के वदले जुदे-जुदे समूह होते है। R के वदले वेनजिन $-CH_2C_6H_5$ होता हे तो उसे पेनिसिलीन-जी कहते ह।

माइसिन वर्गके वहुतसे प्रतिजीवाणु पदार्थ ह—स्ट्रेप्टोमाइसिन, टेट्रासाइक्लिनो, इरिथ्रोमाइसिन आदि। इन सवकी सरचना पेनिसिलीनसे अधिक जटिल है, फिर भी रसायनविदोने आधुनिक उपकरणोकी सहायतासे इस तरहकी जटिल सरचनाकी जानकारी भी प्राप्त कर ली हे। प्रतिजीवाणु पदार्थ वनानेवाले जीवाणु वहुत सूक्ष्म होते हे, परन्तु उनकी वनाई हुई कृतियाँ वास्तवमे भव्य और आश्चर्यजनक है।

यह तो हम जानते है कि प्रोटीनके अणु एमिनो अम्लसे वनते है। एमिनो अम्लमे ऐमिनो ($-NH_2$) समूह ओर कार्वोक्सिल ($-COOH$) समूह होते है। प्रोटीनके अणुओमे इन दोनो समूहोके वीचका सयोजन वडी शृखला अथवा वडा वलय वनाता है। इस सयोजनमे कुछ समूहोका पुनरावर्तन होता है और उसमे एमिनो अम्लोकी सख्या दोसे लेकर चाहे जितनी हो सकती है। इस जानकारीके आधारपर वेसिट्रोसिन नामक दवाई वनाई गई। इस प्रतिजीवाणु पदार्थकी कहानी वडी ही रोचक और विस्मयजनक भी है। मार्गरेट ट्रेसीके पाँवकी हड्डी टूट गई थी, घावमे धूल भर जानेसे वह पूतिदूषित (septic) हो गया। आरम्भमे पूतिदूषिताका तीव्र प्रभाव दिखाई दिया, परन्तु वादमे ये लक्षण सहसा अदृश्य हो गए। जॉन्सन, एड्ला र और मलेने इसके कारणोका पता लगानेका प्रयत्न शुरू किया। १९४७ ई० मे उन्होने ट्रेसीके घावमेसे 'वेसिलस सवटिलिस' (नामक जीवाणु)की एक

किस्म प्राप्तकी और उसकी सहायतासे नया प्रतिजीवाणु पदार्थ बनाया। ट्रेसीकी स्मृतिमे इस प्रति-जीवाणु पदार्थका नाम वेसिट्रेसिन रखा गया।

पोलिपेप्टाइड वर्गमे इसी तरीकेसे एक अद्‌भुत औषधि प्राप्त हुई। इन्सुलिन भी पोलिपेप्टाइड वर्गका एक विराट प्रोटीन अणु है। इसके अतिरिक्त प्रोटीन वर्गमे प्रकिण्व (एन्जाइम) और विषाणु (virus=वाइरस)की भूमिकाएँ भी बहुत महत्वपूर्ण है। हमारे शरीरमे सैकडो प्रकिण्वोकी उपस्थितिके कारण जीवनके महत्त्वपूर्ण रासायनिक परिवर्तन होते रहते है। उनके बिना जीवन असम्भव ही होता। पेप्सिन ऐसा ही प्रकिण्व है। सूक्ष्म मात्रामे केवल शारीरिक ताप पर वह अपना काम करता रहता है। बछडेके आमाशय (जठर)से प्राप्त होनेवाला रेनिन नामक प्रकिण्व वजनमे केवल ३० ग्राम होता है, परन्तु ३४ लाख ५७ हजार लिटर दूधको जमा सकता है।

विषाणु रोग उत्पन्न करनेवाले कारक (एजेण्ट) है। वे न तो जीवाणु (बैक्टीरिया) है और न सूक्ष्म जीव ही। विषाणु इतने सूक्ष्म होते है कि सर्वाधिक वृद्धिकरण करनेवाले सूक्ष्मदर्शीसे भी नही देखे जा सकते, उन्हे इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शीसे देखा जा सकता है। १९३५ ई०मे वेण्डेल एम० स्टैनलीने तम्बाकूके पौधेके एक रोग चितेरी (mosaic)मेसे सबसे पहले विषाणुको अलग किया था। तम्बाकूकी कोशिकाके बाहर तम्बाकूकी चितेरीका विषाणु निर्जीव अणुकी तरह आचरण करता है, परन्तु सजीव कोशिकामे वह प्रजननमे सक्षम होता और वंशवृद्धि कर सकता है। इस दृष्टिसे विचार करने पर उसे सजीव कहा जा सकता है।

इन्फ्लुएञ्जा, साधारण सर्दी-जुकाम, विषाणुजन्य न्युमोनिया, चेचक, पोलियो, कनपेडे और खसरा आदि बीमारियाँ विषाणुसे होती है। इस प्रकारकी बीमारियोके विषाणुका प्रतिरोध करनेके लिए दवाइयाँ खोज ली गई है।

अन्तमे अब हम 'फगस' (फफूद, कवक)से पैदा होनेवाली बीमारियोका संक्षिप्त विवेचन करेगे। मनुष्य को होनेवाले जीवाणुजन्य रोगोमे फगस वर्गकी सूक्ष्म वनस्पतिसे होनेवाले रोगोका निवारण करना थोडा मुश्किल काम है। रोगोत्पादक फफूँद अधिकतर जमीनमे, बासी भोजन या सडे हुए फलो पर और खासतौर पर धरण (humus)मे अथवा बोयी हुई चीजोपर रहता है। जब यह फफूँद मानव शरीरमे परजीवी (parasite)की तरह रहने लगता है तो अपनी वृद्धि और प्रजननकी पद्धतिको बदल देता है। फफूँदसे दो प्रकारकी बीमारियाँ होती है एक तो त्वचाके रोग, जैसे कि दाद, खाज और हाथ-पाँवकी छाजन आदि। फफूँदजन्य दूसरी प्रकारके रोग शरीरके विभिन्न तन्त्रोको प्रभावित करते है, उदाहरणके लिए एक्टिनोमायसिस बोविस, जो पशुओंके द्वारा मनुष्यमे प्रवेश करते है, उनसे जबडो और जिह्वाके अर्बुद (ट्युमर) पैदा होते है। एस्पर्जिलस वर्गका फफूँद दुर्बल फेफडोको रोगाक्रान्त करता है। घास, अनाज और आटेके बीच सतत काम करने वाले को यह रोग होनेकी अधिक सम्भावना रहती है। इनके अतिरिक्त शरीरके विभिन्न तन्त्रोको आक्रान्त करनेवाले फफूँद-जन्य रोग और भी बहुतसे है। पहले इस प्रकारके रोगोकी औषधियोका अभाव था, परन्तु अब कई फफूँदरोधी और फफूँदनिवारक एव फफूँदविनाशक औषधियाँ खोज ली गई है। फफूँद रोगोके उपचारमे शुद्ध रासायनिक पदार्थोसे लेकर प्रतिजीवाणु पदार्थो तकका उपयोग किया जाता है। इस प्रकार जो रोग पहले हठीले और कठिन समझे जाते थे अब उनका उपचार साध्य ही नही सुसाध्य हो गया है।

वास्तवमे जीवाणु जन्य रोगो और उनके प्रतिकारकी गतिविधियोंने रसायनी चिकित्साको गौरवान्वित किया है।

हारमोन, विटामिन और फुटकर इलाज

प्राणी शरीरमे नलिकारहित अर्थात् अन्त स्रावी ग्रन्थियाँ होती है, यह हम जानते है। इन ग्रन्थियोमे हारमोन पैदा होते है। हारमोनोकी सरचना पृष्ठ २२८ पर दिखाई गई साइक्लोपेण्टिल वलय प्रणालीपर आधारित है। अलग-अलग स्थानोको जिन अकोमे दिखाया गया है उनपर भिन्न समूहो तथा किन्ही दो स्थानोके मध्य द्विवन्ध होनेसे भिन्न हारमोन प्राप्त होते है। यहाँ इस्ट्रोजनपर विस्तृत विचार किया जाएगा। स्त्रीका मासिक धर्म प्रोगेस्टेरोन और इस्ट्राडायोल नामक दो मुख्य हारमोनो पर निर्भर है। उनकी सरचनाओंको ध्यानमे रखकर कतिपय स्टेरोइड पदार्थोकी इस्ट्रोजेनिक सक्रियताकी छान-वीन की गई। उसके वाद इस्ट्रोजन हारमोनो-जैसी सक्रियतावाले सादे सश्लिष्ट पदार्थोकी खोज की गई। उदाहरणके लिए स्टिल्वेस्ट्रोल, इसकी दिग्मिति (दिग्रचना) स्टेरोइडसे मिलती-जुलती है।

कॉर्टिजोन भी स्टेरॉइडके वर्गका हारमोन है, और उसकी सरचना प्राकृतिक इस्ट्रोजोनसे मिलती-जुलती है। स्पष्ट अन्तर केवल वलयमे स्थित कार्वोनिल (—CO) समूह है। कॉर्टिजोन और उनके उत्पादोका रुमेटॉइड आरथ्राइटिसमे उपयोग किया जाता है। इसमे शोथ-निवारणका अद्भुत गुण है।

अ-स्टेरॉइड हारमोनोमे एड्रिनलीन, थाइरॉक्सिन और इन्सुलिन मुख्य है। थाइरॉयड ग्रन्थिसे स्रवित-थाइरॉयिसनकी यह विशेषता है कि उसकी सरचनामे आयोडिनके परमाणु होते है। थाइरॉयड पदार्थके अभावसे होनेवाली व्याधियोमे प्राकृतिक अथवा सश्लिष्ट थाइरॉक्सिन दिया जा सकता है। परन्तु थाइरॉयड पदार्थोकी मात्रा वढनेसे जो रोग होते है उनमे मेथिमेजोल-जैसी प्रति-थाइरॉयड औषधियोका उपयोग किया जाता है।

पैंक्रियास (अग्न्याशय)मे पैदा होनेवाला इन्सुलिन नामक हारमोन वहुत ही महत्त्वपूर्ण है। इन्सुलिनमे —CONH— वन्धसे निर्मित एक पोलिपेप्टाइड अणु होता है। उसमे स्थित एमिनो अम्लोकी क्रमवद्धता १९५४ ई०मे सेगरने निर्धारित की, जिसके लिए उसे १९५८ ई०मे नोवेल पुरस्कार प्रदान किया गया था। सरचना जटिल होते हुए भी उसका सश्लेषण सम्भव हो सका है।

इन्सुलिनके इजेक्शन मधुमेह (डायाविटीज) का उपयुक्त प्रतिकारात्मक उपाय है। लेकिन अव तो कुछ सल्फा-औषधियोकी गोलियाँ भी ली जा सकती है। इस प्रकार प्राकृतिक इन्सुलिनसे प्रतियोगिता करनेके लिए सश्लिष्ट पदार्थ तैयार कर लिये गए है।

हारमोनकी मात्रा वहुत कम होती है, फिर भी उनकी सक्रियता उल्लेखनीय है, अर्थात् अपेक्षाकृत वहुत अधिक होती है। हारमोनकी तरह विटामिन (खाद्योज) भी कम मात्रामे होते हुए जैव-रासायनिक प्रक्रियाओका नियन्त्रण करते है। हारमोन सामान्य प्राणियोकी अन्त स्रावी ग्रन्थियोमे उत्पन्न होते है, परन्तु विटामिन तो दैनिक भोजनमेसे ही प्राप्त करने होते है। विटामिन ए, वी, सी, डी, ई आदि नामोसे पुकारे जाते है। भोजनमे इन विटामिनोके अभावसे कई तरहके रोग हो जाते है। विटामिन वी के कई

मेथिमेजोल्

साइक्लोपेण्टिल फिनेन्थ्रिन
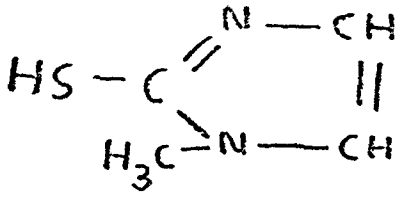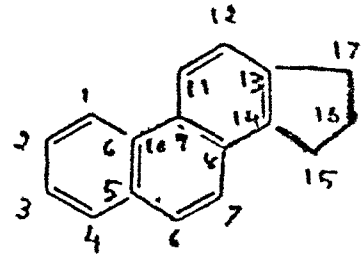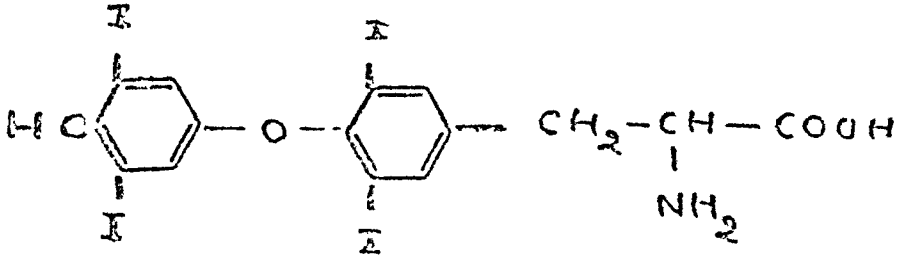
थाइरोक्सिन
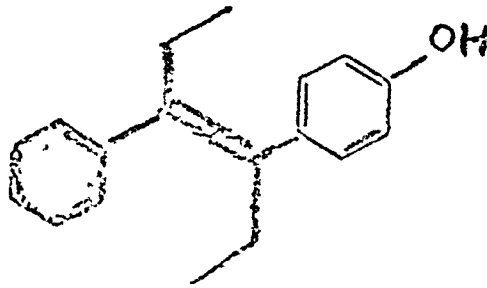
स्टिलवेस्ट्रॉल्
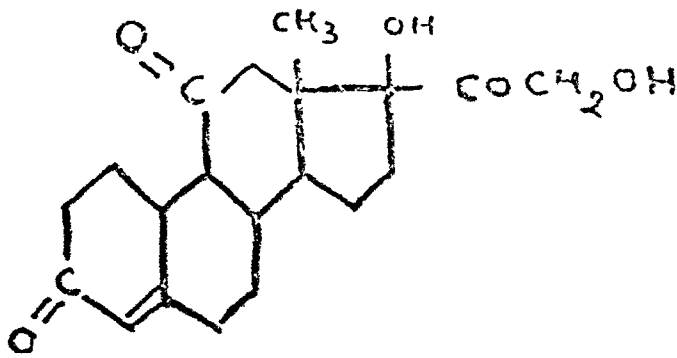
कार्टिजोन
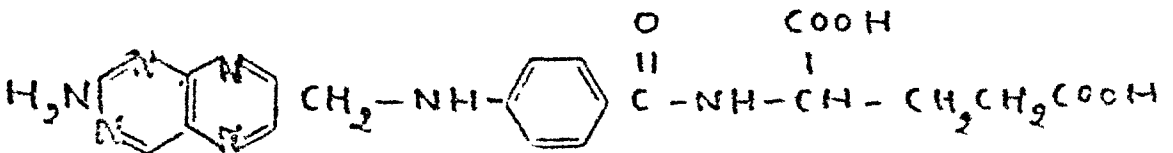
फॉलिक अम्ल

उपवर्ग हैं, जिनमेंसे कुछ थायामिन, रिबोफ्लाविन, निकोटिनिक अम्ल, बायोटिन, फॉलिक अम्ल, पैरा एमिनोबेन्जोइक अम्ल तथा कोबाल्टेमाइन (विटामिन बी$_{12}$) आदि नामोंसे जाने जाते हैं।

अब हम यह देखेगे कि फॉलिक अम्ल और विटामिन बी॰ क्या है। फॉलिक अम्लके अभावसे एक प्रकारका रक्तक्षीणता रोग हो जाता है। १९३१ मे विल्सने इस आशयका उल्लेख किया है कि बम्बईमे एक हिन्दू स्त्रीको प्रसूतिके दौरान रक्तक्षीणता हो गई थी और उसे यीस्ट-युक्त एक दवाई देनेसे वह अच्छी हो गई। तब इस बातका पता लगानेके प्रयत्न आरम्भ हुए कि यीस्टमे रक्तक्षीणताको मिटानेवाला कौन-सा ओषधीय सत्त्व है। अनुभवसे पता चला कि यीस्ट (खमीर) और यकृत् (लीवर) के सत्त्वसे रक्तक्षीणता (एनिमिया) दूर होती है। लेकिन उसमे रहनेवाले औषधीय सत्त्व टेरोइड ग्लूटेनिक अम्ल (folic acid) का अविकृत रूपमे पता १९४८ मे ही लगाया जा सका और रसायनविदोने उसके सश्लेषणकी विधि भी खोज निकाली। विटामिन बी$_{12}$ रक्तक्षीणताके उपचारमे अत्यन्त उपयोगी और महत्त्वपूर्ण सिद्ध हुआ है। उसकी सरचनामे कोबाल्ट धातुका अणु अनेक समूहोके बीच बंधा होता है। ये विटामिन केवल वानस्पतिक ही नही है, प्राणियोकी उपापचय (metabolic) क्रियाके दौरान भी बनते है। मोटी आँतमे सूक्ष्म जीवाणु इन्हे बनाते है। विटामिन बी$_{12}$ और फालिक अम्ल बहुत ही अल्प मात्रामे न्युक्लिक अम्लकी बनावटमे एनजाइमकी तरह आचरण करते हे।

१९२९ मे डेमको इस बातका पता चला कि चूजोके चारेमे एक पोषक तत्त्व कम हो जानेसे रक्त-स्रवण होकर वे मर जाते है। कम होनेवाले उस पदार्थका नाम विटामिन 'के' रखा गया। जिस व्यक्तिके खूनमे विटामिन 'के' का अभाव होता हे उसके मामूली-सी चोट लगने पर भी खून बहने लगता हे और खून जमकर घावको बन्द नही कर सकता। खूनके जमनेकी प्रक्रिया बडी ही आश्चर्यजनक है। उसकी सरचनाका विन्यास नेप्थाक्विनोन वलय पर होनेका पता चला है। इसलिए उस वलय पर विन्यस्त अन्य सश्लिष्ट ओषधियोका उपयोग भी किया गया है। उनमेसे एक मेनाडायोन हे। उसकी सरचना सरल है। विटामिन 'के$_1$' की सरचनामेसे $C_{20}H_{39}$ निकाल लेने पर उसका समीकरण मिल जाता हे।
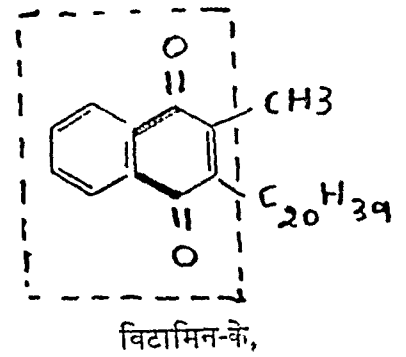
विटामिन-के$_1$

जिस प्रकार विटामिन 'के'मे खूनको जमानेका गुण हे उसी प्रकार कुछ दूसरे पदार्थोमे खूनको जमनेसे रोकनेका गुण होता है। खासतौर पर शल्य क्रियाके दौरान इस बातकी सावधानी बरतनी होती है कि खून कही रक्तवाहिनीमे जम न जाए। हेपेरिन और बिसहाइड्रोक्सि-कौमारिन ऐसे ही पदार्थ है। हेपेरिन तो प्राणियोकी एक खास पेशीमे पैदा होता हे। फेफडोमे यह अधिक मात्रामे पाया जाता है। 'स्वीट क्लोवर' नामक घासमे भी बिसहाइड्रोक्सि कौमारिन होता हे। १९२१-२२मे यह खोज हुई कि स्वीट क्लोवर घास खानेवाले पशु चोट लगने, खस्सी किये जाने या सीग निकलते समय जमा हुआ कडा खून निकलने के कारण मर जाते हे। इसके बाद 'स्वीट क्लोवर'मे रहनेवाले क्रियाशील सत्त्वकी खोज-बीन शुरू हुई। १९४१ ई०मे कैम्पबेल और लिकने बिसहाईड्रोक्सी-कौमारिन स्फटिक रूपमे प्राप्त किया और उसकी सरचना स्थिर की। उसके बाद इस पदार्थके बदले उपयोगमे लाये जा सके, ऐसे पदार्थोका सश्लेषण किया।

रक्तका शरीरके सभी भागोमे सचरण होता रहे, इसलिए उसकी एक खास मात्राका बना

रहना आवश्यक है। जब शरीरमेसे काफी तादादमें खून बहकर निकल जाता है तो उसकी आवश्यक मात्राको बनाये रखनेके लिए किसी उपयुक्त व्यक्तिका खून रोगीको देना सबसे उत्तम उपाय है, लेकिन
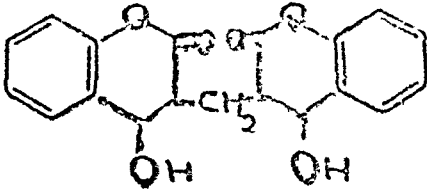
बिसहाइड्रोक्सी-कोमारिन
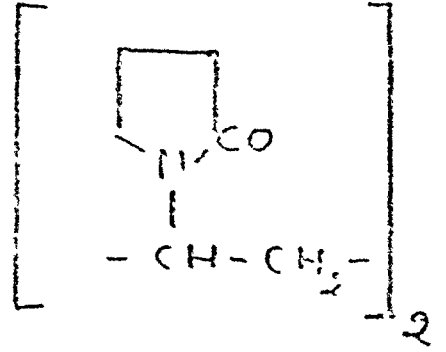
पोलीविनाइल पायरोलिडोन

यदि यह न हो सके तो उस परिस्थितिमें ग्लुकोज-सहित अथवा ग्लुकोज-रहित सेलाइन देना पड़ता है। साथ ही उसमें कुछ दूसरे पदार्थ मिलाना भी जरूरी हो जाता है। डेक्स्ट्रान, जिलेटिन और पोली विनाइल पायरोलिडोन इसी काममें आते हैं। डेक्स्ट्रान और जिलेटिन प्राकृतिक स्रोतसे प्राप्त किये जाते हैं। साधारण चीनी पर एक प्रकारके जीवाणुके विकाससे डेक्स्ट्रान मिलता है। चमड़ा, हड्डी, सन्धान पेशियों आदि पर रासायनिक क्रिया करके जिलेटिन प्राप्त किया जाता है।

दूसरे महायुद्धके समय जर्मनीमें पोलीविनाइल पायरोलिडोन नामक पदार्थ संश्लेषणके द्वारा प्राप्त किया गया था। वायुमडलके सामान्य दाबसे सौगुने दाब और ९० अंश सेंटिग्रेड ताप पर एसिटिलिन और फार्मालिडहाइडकी पारस्परिक क्रियाके परिणामस्वरूप गामा-ब्यूटिरोलैक्टम यानी पायरोलिडोन बनता है। परिष्करणी-गैस (refinery gas) नेप्था और उच्चतर हाइड्रोकार्बनोंके भंजनके दौरान अन्य गैसके रूपमें प्राप्त होनेवाले इस उत्पादके साथ एसिटिलिन, मेथेन आदि भी प्राप्त होते हैं। मेथेनसे मेथेनाल और उससे फार्मालिडहाइड बनता है। इस प्रकार पायरोलिडोन बनानेके लिए आवश्यक पदार्थ पेट्रो-केमिकल रसायनकोंके रूपमें प्राप्त होते हैं। एक बार पायरोलिडोन बन चुकनेके बाद उस-पर एसिटिलिनकी क्रियासे विनाइल पायरोलिडोन बनता है। उसके बहुतसे अणु संयोजित होकर पोलीविनाइल पायरोलिडोनके विराट अणुका निर्माण करते हैं जिसका अणुभार २५,००० होता है और जो प्रोटीनकी तरह पानीमें विलेय है। यह खोज रसायनविदोंकी एक महान उपलब्धि है। डेक्स्ट्रान जिलेटिन और पोलीविनाइल पायरोलिडोन आदि पदार्थ रुधिर-रस (सीरम)की तादाद बढ़ानेके काम आते हैं।

कई बार रेडियधर्मी किरणोंका शरीरकी विभिन्न कोशिकाओं पर विपरीत असर होता है। रेडियधर्मी पदार्थोंके साथ काम करनेवालोंको इन किरणोंसे रक्षा करनेके लिए कुछ पदार्थोंका संश्लेषण करनेकी दिशामें प्रयोग किये जा रहे हैं। पता चला है कि मनुष्यके बालोंसे प्राप्त होनेवाला सिस्टिन-एमाइन विकिरण-रक्षकके रूपमें काम आ सकता है।

अधिक हो जाती है कि रूढ औषधियोंका उनपर कोई भी प्रभाव नहीं हो पाता। इसलिए मनुष्य और जीवाणुओंमें सतत प्रतिस्पर्धाका बना रहना अवश्यम्भावी है। और इसीलिए नये-नये संश्लेषणोंकी महान सम्भावनाएँ भी बनी रहेंगी। जीवाणुजन्य रोगोंके लिए नई औषधियोंकी आवश्यकताके साथ शरीर तन्त्रपर अधिक असर करनेवाले पदार्थोंकी खोज निरन्तर चलती ही रहती है, जो रसायनविदोंके लिए साधना है।

आधुनिक औषधियों के उपसर्ग

तन्त्रान्वयी (सिस्टेमेटिक) ·

- पीडापहारी (पीडाहारक) (एनाल्जेसिक)
- शामक (सिडेटिव)
- निद्रापक (निद्रादायी) (हिप्नोटिक)
- निश्चेतक (एनेस्थेटिक)
- प्रशामक (ट्रैंक्विलाइजर)
- अपस्माररोधी (एंटिएपिलेप्टिक)
- सजीवक (उत्तेजक) (एनालेप्टिक)
- एड्रिनलिन धर्मी (एड्रिनर्जिक)
- कोलिनधर्मी (कोलिनर्जिक)
- एड्रिनलिन क्रियारोधी (एंटिएड्रिनर्जिक)
- कोलिन क्रियारोधी (एंटिकोलिनर्जिक)
- हिस्टामिनरोधी (एंटिहिस्टामिनिक)
- रुधिराभिसरण तन्त्रलक्षी (कार्डियो-वेस्क्युलर)
- कासरोधी (कफरोधी) (एंटिट्युसिव)
- कफोत्सारक (एक्सपेक्टोरेण्ट)
- क्षुधोद्दीपक (एपेटाइट स्टिमुलेण्ट)
- क्षुधापहारी (एंटिएपेटाइट, एनोरेक्सिस)
- रेचक (केथोरेटिक)
- वमनकारी (एमिटिक)
- वमनरोधी (एंटिएमिटिक)
- मूत्रवर्धक (डाइयुरेटिक)
- गर्भाशय संकोचक (आक्सिटॉसिक)

रसायनी चिकित्सान्वयी

- उपदंशरोधी (एंटिसिफिलिटिक)
- ट्राइपनोसोमायासिसरोधी
- यक्ष्मारोधी (एंटिट्युबर्क्युलर)
- कुष्ठरोधी (एंटिलेप्रोइटिक)
- कालाज्वरजन्य रोगरोधी (सल्फा-ड्रग्स)
- प्रतिमलेरियक (एंटिमलेरियल)
- कृमिघ्न (एन्थेलमिटिक)
- कैन्सररोधी (एंटिकैन्सर)
- अमीबारोधी (एंटिएमीबिक)
- जीवाणुरोधी (एंटिबायोटिक)
- फफूंदरोधी (एंटिफंगस)
- विषाणुरोधी (एंटिवायरस)
- विटामिन
- हारमोन
- थाइरॉयड हारमोन-प्रतिथाइरॉयड औषधि
- स्टेरॉइड हारमोन
- पोलीपेप्टाइड और प्रोटीन हारमोन

विविध

- प्रतिदोषरोधी (एंटिसेप्टिक)
- निदान सहायक (डाइग्नोस्टिक एजेण्ट)
- किरणीयन व्याधिनिवारक
- प्लाज्मा आयतन प्रवर्धक (प्लाज्मा एक्स-टेंडर)

भिन्न-भिन्न मूलतत्त्वोंका द्रव्यमान वर्ण-क्रम
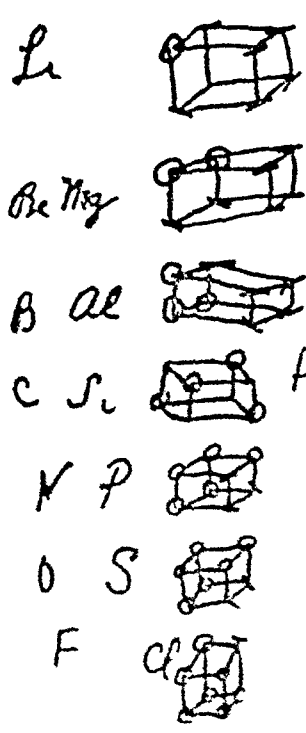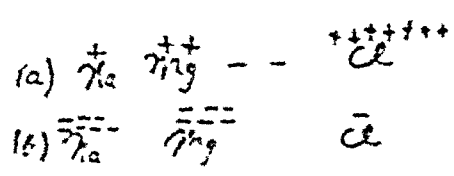
खंड : ६
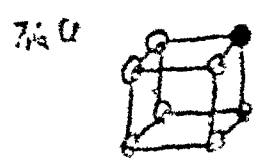
१६ : अधात्विक मूलतत्त्व

धातुओकी चर्चा हम चौथे अध्यायमे कर आए है। यहाँ कुछ अधात्विक मूलतत्त्वोकी चर्चा की जाएगी। आरम्भ हम हेलोजनवर्गीय मूल तत्त्वोसे करते है।

हेलोजन

फ्लोरिन, क्लोरिन, ब्रोमिन और आयोडिन—ये चार मूल तत्त्व हेलोजनके नामसे जाने जाते है। इनमे सबसे हलका मूल तत्त्व फ्लोरिन है। यह हलके पीले रगकी गैस है। इसकी सज्ञा F परमाणु भार १९ ०० और परमाणु सख्या ९ है। रासायनिक दृष्टिसे अत्यन्त क्रियाशील होनेके कारण फ्लोरिन कभी मुक्त अवस्थामे नही मिलता। प्रकृतिमे उसके यौगिक ही प्राप्त होते है। अनगिनत खनिजो और जलीय तथा आग्नेय शैलोके खनिजोमे मिलता है। इसका मुख्य खनिज फ्लोरस्पार अर्थात् कैलसियमका फ्लोराइड है।

हाइड्रोजनसे सयोग कर यह हाइड्रोजन फ्लोराइड अर्थात् हाइड्रोफ्लोरिक अम्ल बनाता है। यह अम्ल काँचका भी सक्षारण कर देता है। ताँबे-जैसी धातुके पात्रमे रखनेसे उसकी सतह पर फ्लोराइडकी परत बनाता है। यह परत अम्लसे ताँबेकी रक्षा करती है, इसलिए इस अम्लको ताँबे या उससे मिलती-जुलती धातुके पात्रमे रखा जा सकता है।

पारे-जैसे उत्प्रेरकोकी सहायतासे कार्बन और फ्लोरिन सयोजित होकर (CF_4, C_2F_6) की तरहके फ्लोरोकार्बन बनाते है। पानी अथवा तेल उनका स्पर्श नही कर पाते। उनमेसे कई बहुत अच्छे स्नेहक होते है। फ्लोरोकार्बनके आक्सीजन, नाइट्रोजन और गन्धकसहित उत्पाद, अन्य पदार्थोकी अपेक्षा अधिक तापसह होनेके कारण राल, प्लास्टिक, तेल, मोम, रंगे आदि बनानेके अधिक उपयुक्त होते है।

युद्ध-कालमे युरेनियम–२३५ को मुक्त करनेके लिए युरेनियम हेक्साफ्लोराइडका उपयोग किया गया था। पानीको सोडियम फ्लोरोसिलिकेटकी अल्प मात्रासे क्लोरिनयुक्त करके वह पानी कई शहरोको दिया जाता है। दाँतकी सडन (दन्तक्षय) इससे रुक जाती है। फ्लोरोसिलिकेटका उपयोग जन्तुनाशककी तरह और लकडीको दीमक तथा कीटाणुओसे बचानेके लिए किया जाता है। टेट्रोफ्लोरोइथिलिनके अणु आपसमे सयोजित होकर बहुलक (पोलीमर) बनाते है। क्रायोलाइट Na_3AlF_6 का उपयोग एल्युमीनियम धातुके उत्पादनमे किया जाता है।

क्लोरिन—क्लोरिनकी सज्ञा Cl, ब्रोमिनकी Br और आयोडिनकी I है। इनका परमाणु-भार और परमाणु-सख्या क्रमश ३५ ४५७-१७, ७९ ९१६-३५ और १२६ ९२-५३ है।

क्लोरिन प्रदाहक (उत्तेजक) गन्ध, और पीताभ-हरित रगवाली आक्सीकरण गुणयुक्त गैस है। विरजन चूर्ण (ब्लीचिंग पाउडर), कार्बनिक रग, दवाइयाँ बनाने और शहरोंमे दिये जानेवाले पानीको कीटाणुओसे शुद्ध करनेमे इसका उपयोग किया जाता है। प्रथम महायुद्धमे शत्रु सैनिकोको परेशान करनेके लिए जर्मनीने क्लोरिनका उपयोग विषैली गैसके रूपमे किया था। अनेक मूलतत्त्वोमे सयोजित होकर यह उनके क्लोराइड बनाता हे। भोजनमे काम आनेवाला नमक सोडियमका क्लोराइड है। अधिकाश क्लोराइड (चाँदी, पारा और सीसेके अतिरिक्त) पानीमे विलेय है, और क्लोराइडका विद्युत् विश्लेषण कर क्लोरिन गैस पैदा की जाती हे। लवणके पानीका विद्युत् विश्लेषण करनेमे कास्टिक सोडा, हाइड्रोजन और क्लोरिन प्राप्त होते हे। कास्टिक सोडेका साबुन बनानेमे और क्लोरिनका विरजन चूर्ण बनानेमे उपयोग किया जाता हे। क्लोरिनका एक सुपरिचित यौगिक क्लोरोफार्म है, जिसका उपयोग शल्य क्रियामे निश्चेतकके रूपमे किया जाता हे।

ब्रोमिन—ब्रोमिन साधारण ताप पर कालिमा लिये हुए रक्तिम द्रव हे। इसकी भाप जहरीली होती है। विभिन्न धातुओमे ब्रोमाइडके रूपमे यह प्रकृतिमे मिलता हे। स्ट्रेसफर्ट और मिचिगनमे इस तरहके ब्रोमाइड प्रचुर मात्रामे मिलते हे। समुद्री पानीमे नमक बना लेनेके बाद शेष बने 'बिटर्न' नामक मातृ द्राव (mother liquor) से इसका उत्पादन सस्ता पडता है। ब्रोमिनका उपयोग रासायनिक रीतिसे कार्बनिक पदार्थोके उत्पादनमे विशेष रूपसे किया जाता हे। धातुओमे सयोजित होकर यह ब्रोमाइड बनाता है। चाँदीका ब्रोमाइड फोटोग्राफी मे काम आता हे। पोटेसियम ब्रोमाइड और अन्य ब्रोमाइड दवाइयोके रूपमे इस्तेमाल किये जाते हे।

आयोडिन—आयोडिन बैंगनी रगके स्फटिकोके रूपमे मिलता हे। समुद्री वनस्पतिमे यह निकाला जाता है। प्राणी शरीरकी थाइरॉयड ग्रन्थिके स्राव थाइरोक्सिन मे भी यह रहता हे। टिंचर आयोडिन, आयडोफार्म, आयोडेक्स आदि पदार्थ दवाईके रूपमे प्रयुक्त होते हे। आयोडिनका उपयोग जन्तुनाशककी तरह भी किया जाता है। वानस्पतिक अथवा प्राणिज तेलोमे इसके सयोजित होनेके आधार पर उस तेलका आयोडिन-मान (iodine value) निश्चित किया जाता हे। तेलके हाइ-ड्रोजनीकरणकी मात्रा तय करनेके लिए उसका आयोडिन-मान निकालना आवश्यक होता है। आयोडिन-मानसे तेलोमे रहनेवाले वसाम्लोके असन्तृप्त होनेकी मात्राका भी पता चल जाता हे।

आक्सीजन, हाइड्रोजन, नाइट्रोजन

आक्सीजनका सकेत O, नाइट्रोजनका N ओर हाइड्रोजनका H हे। इनके परमाणु भार और परमाणु सख्या क्रमश १६-८, १४००८-७ ओर १ ८-१ हे। ये तीनो गैसे रग ओर गन्धहीन होती है।

आक्सीजन अनेक धातुओ और अधातुओसे सयोग करके आक्साइड बनाता हे। कई आक्साइड तो प्राचीनकालमे भी ज्ञात थे। पीनेका पानी हाइड्रोजनका आक्साइड है। चूना कैलसियमका आक्साइड है। सखिया आरसेनिकका आक्साइड है। अजनमे काम आनेवाला सुरमा एटिमनीका आक्साइड और शिगरफ या इगूर नामक पदार्थ पारे (mercury) का आक्साइड हे। पारेके आक्साइडका उल्लेख अरब कीमियागर जबीरने 'मर्क्युरस कैल्सिनेटस पर से' नामसे किया है।

आक्सीजनकी खोजका इतिहास बडा रोचक है। माओ खाओ नामक एक चीनी लेखकने अट्ठारहवी शताब्दीमे लिखी एक पुस्तकमे बताया है कि हवामे दो गैसे है—एक पूर्ण और दूसरी अपूर्ण। पूर्ण गैसको उसने 'यान' (नाइट्रोजन) और अपूर्ण गैसको 'यन' (आक्सीजन) नाम दिये। उसने और भी बताया कि कार्बन, गन्धक आदि गैसोका दहन करनेसे अपूर्ण हवा चली जाती है और शेष बची हवा पूर्ण होती है। दहनशील पदार्थका दहन होता है तो वह पदार्थ 'यन'से सयोजित होता है। यह 'यन' हवामे तो होती ही है, साथ ही शोरा-जैसे कुछ पदार्थोमे भी होती है। ऐसे पदार्थोको गर्म करनेसे 'यन' निकल आती है।

हवा मूल तत्त्व नही है, यह लियोनार्दो द विन्सीने बताया था। ओल बोर्च नामक एक प्रयोगकर्त्ताने शोरेको गर्म कर इस गैसको मुक्त किया, परन्तु इसे एकत्रित करनेका ज्ञान उसे नही था। स्टिफन हेल्सने इसे बोर्चके ही ढगसे मुक्त कर पानी पर इकट्ठा किया, परन्तु वह इसके गुणकी छान-बीन करना भूल गया। जोसेफ प्रिस्टले और शीलेने इस गैसको मुक्त कर इसके गुणोकी छान-बीनकी। लवाशियेने इसका नाम आक्सीजन रखा, और आज भी यह आक्सीजन नाममे ही पुकारी जाती है।

इस गैसको औद्योगिक पैमाने पर बनानेके लिए द्रव हवाका उपयोग किया जाता है। हवाको काफी दाब पर ठण्डा कर उसे तरल किया जाता है, उसमेके आक्सीजनका क्वथनाक १८३° से० और नाइट्रोजनका क्वथनाक १९६ से० होता है। इसलिए उस तरल हवामेसे नाइट्रोजन भापके रूपमे पहले मुक्त होता है और आक्सीजन उसके बाद। अत्यन्त शुद्ध अवस्थामे आक्सीजन प्राप्त करना हो तो कास्टिक सोडाके विलयनका विद्युत् विश्लेषण करना चाहिए। इसमे आक्सीजनके अतिरिक्त हाइड्रोजन भी शुद्ध रूपमे प्राप्त होगी।

धातुओके सन्धान (वेल्डिग)मे काम आनेवाली आक्सी-ऐसिटिलिन ज्वाला (flame) मे आक्सीजन और ऐसिटिलिन गैसोका उपयोग किया जाता है। आक्सीजनका दूसरा उपयोग ऊँचे प्रकारका इस्पात बनानेमे किया जाता है। बीमारको साँस लेनेमे तकलीफ हो तो उसे आक्सीजन दी जाती है। आक्सीजनके बिना न तो जीवन सम्भव है और न दहन ही।

ओजोन—आक्सीजनका सघनित रूप ओजोन गैस है। आक्सीजनके अणुमे उसके दो परमाणु परन्तु ओजोनमे आक्सीजनके तीन परमाणु होते हैं। ओजोन प्रबल आक्सीकारक पदार्थ है। हवामे विद्युत् चिनगारियाँ पारित करनेसे यह गैस पैदा होती है। बरसाती तूफानमे जब बिजलियाँ चमकती हो या कभी-कभी समुद्र किनारे हवामे साँस लेने पर जो आह्लादकारी अनुभव होता है उसका कारण उस हवामे रहनेवाली ओजोन गैस है। पानीको कीटाणु-रहित करनेमे भी ओजोन गैसका उपयोग किया जाता है। द्विबन्धवाले कुछ हाइड्रोकार्बनोमे ओजोनके अणु प्रतिस्थापित करनेसे ओजोनाइड्ज नामक पदार्थ बनता है।

हाइड्रोजन—पानी अथवा कास्टिक सोडेका विद्युत् विच्छेदन करके हाइड्रोजनको प्राप्त किया जा सकता है। खनिज तेलकी परिष्करणी और पेट्रो-केमिकल्सके कारखानेमे उपोत्पादके रूपमे हाइड्रोजन और एमोनिया प्राप्त होते है। हाइड्रोजन सबसे हल्की गैस है। पहले वह गुब्बारो और वायुयानोमे भरी जाती थी, परन्तु अत्यधिक ज्वलनशील होनेके कारण जल उठती थी और अनेक दुर्घटनाएँ हो जाया करती थी। इस खतरेसे बचनेके लिए अब इसके स्थान पर हीलियम गैसका उपयोग किया जाता है।

हाइड्रोजनका सबसे महत्त्वपूर्ण उपयोग द्रव तेलोंमें हाइड्रोजनीकरण (जमानेमें) किया जाता है। इस क्रिया द्वारा द्रव तेलको घीकी तरह जमाया जा सकता है। मक्खनकी जगह काममें लिया जानेवाला मार्गेरिन और घीके बदले इस्तेमाल किया जानेवाला वनस्पति (मूंगफलीका जमाया हुआ तेल) हाइड्रोजनीकरण विधिका ही प्रताप है। कुछ प्रकारके पेट्रो-केमिकल उद्योगोंमें भी हाइड्रोजनीकरणकी विधि काममें लाई जाती है। गर्म कोयले पर हवा और भाप पारित करनेसे हाइड्रोजन और कार्बन मोनोक्साइडका मिश्रण बनता है, जिसका नाम 'सोग्ड' गैस है और जो उद्योगोंमें ईंधनकी जगह इस्तेमाल की जाती है। नाइट्रोजनसे हाइड्रोजनका संयोजन कर एमोनिया बनानेकी हेबरकी पद्धतिमें भी हाइड्रोजनका उपयोग होता है।

नाइट्रोजन—नाइट्रोजन महत्त्वपूर्ण गैस है। पृथ्वीके वायुमण्डलमें इसकी बहुतायत है। वायुमण्डलकी हवामें इसका अनुपात लगभग ८० प्रतिशत है। रासायनिक दृष्टिसे यह एक क्रियाशील गैस है। तरल हवामें इसका उत्पादन किया जाता है, यह तो हम ऊपर पढ़ ही आए हैं।

वनस्पतिको उर्वरकके रूपमें नाइट्रोजनके यौगिक देना जरूरी है। ऐसे यौगिक पशु-प्राणियोंके मल-मूत्रमें रहनेके कारण उनका प्राकृतिक उर्वरकोंके रूपमें उपयोग किया जाता है। मल-मूत्रसे आनेवाली एमोनिया गैसकी गन्धसे सभी परिचित हैं। प्रकृतिमें नाइट्रेटके रूपमें प्राप्त होनेवाले खनिजोंका भी उर्वरककी तरह उपयोग किया जा सकता है। लेकिन बड़े पैमाने पर विश्वकी उर्वरक-सम्बन्धी आवश्यकताको और युद्धके समय विस्फोटकोंकी माँगको पूरा करनेके लिए हवाके नाइट्रोजनसे उनके यौगिक बनाना जरूरी हो जाता है। इस तरह नाइट्रोजनके यौगिक बनानेकी विधि भी पहले विश्व-युद्धके ही समय आविष्कृत हुई थी।
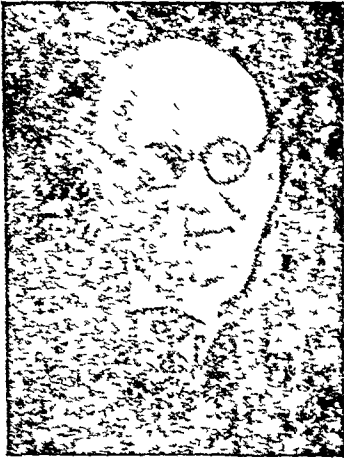
फिट्ज हेबर
(१८६८–१९३४)

उच्च दाब पर हाइड्रोजन और नाइट्रोजनका संयोजन कर एमोनिया गैस बनानेकी विधि हेबर विधिके नामसे प्रख्यात है। इस विधिमें लोहेके आक्साइड अथवा पोटेसियमके आक्साइडका उत्प्रेरकके रूपमें उपयोग किया जाता है। नाइट्रोजनको संयोजित करनेकी एक और विधि साइनेमाइड विधि कहलाती है। उसमें कैलसियम कारबाइडको १०००° से० ताप पर रखकर उसपर नाइट्रोजन गैस पारितकी जाती है। इस क्रियामें प्राप्त कैलसियम साइनेमाइडपर पानीके प्रभावसे, जो एमोनियायुक्त होता है उसके आक्सीकरणसे नाइट्रिक अम्ल बनाया जा सकता है।

लोहा गलानेकी धमन भट्ठीके लिए आवश्यक कोक भट्ठी गैसका उपयोग एमोनिया बनानेमें किया जाता है। राऊरकेला इस्पात संयत्रमें यह पद्धति चालू की गई है।

एमोनिया गैस (NH_3) नाइट्रोजन और हाइड्रोजनका यौगिक है। पानीका बर्फ बनाने और प्रशीतकोंमें प्रशीतकारी पदार्थके रूपमें इसका उपयोग होता है।

ड्युलॉग नामक वैज्ञानिकने १८११ ई० मे नाइट्रोजन ट्राइक्लोराइड बनाया था; लेकिन उससे जबर्दस्त विस्फोट हुआ, जिसमे ड्युलोगकी एक आँख और तीन अँगुलियाँ जाती रही। नाइट्रोजनके कई यौगिक विस्फोटक होते है। वनस्पतिको नाइट्रोजन देनेके लिए एमोनिया मिले पानीसे उसे सीचते है।
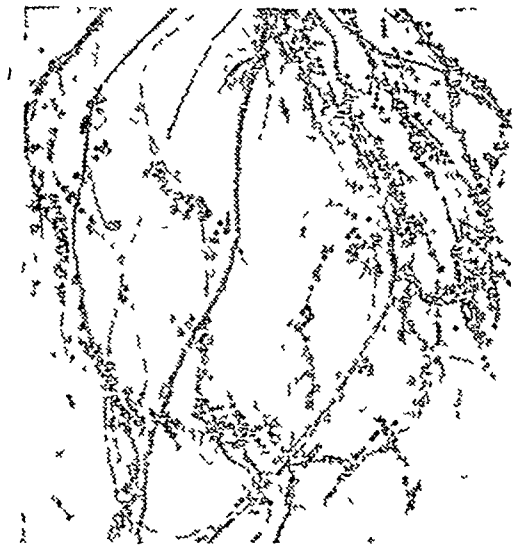
[सोयाबीनके पौधेकी जड पर नाइट्रोजनको स्थायी बनानेवाले जीवाणुओकी गाँठे। इस तरह स्थायी हुआ नाइट्रोजन भूमिको उपजाऊ बनाता है।]

नाइट्रोजनको सयोजित करनेका करतब कुछ जीवाणु भी करते है। वनस्पतिकी और खास तौर पर कुछ दलहनो (द्विदलो)की जडोसे चिपककर ये जीवाणु हवामे रहनेवाले नाइट्रोजनको स्थायी करनेका काम किया करते है और इस तरह भूमिको उपजाऊ बनाते है।

प्रकृतिमे नाइट्रोजनके रूपान्तरणका चक्र निरन्तर चलता ही रहता है। हवामेसे जीवाणुओके द्वारा और प्राणियोके मल-मूत्रमेसे खादके द्वारा वनस्पतियाँ नाइट्रोजन प्राप्त करती है। प्राणी वानस्पतिक खाद्योका उपयोगकर अपने मल-मूत्रमे नाइट्रोजनके यौगिक बाहर निकालते है, जो पुन वनस्पतियोके काम आते है। इस तरह यह चक्र सतत चलता रहता है।

विरल गैसे

आर्गन, क्रिप्टान, जेनान, रेडोन और हीलियम (तथा निआन) गैसोको 'विरल' (rare) 'अक्रिय' (inert) अथवा 'उत्तम' (noble) गैसे भी कहा जाता है। मेण्डेलीफकी आवर्त सारणीमे इन गैसोको शून्य समूहमे रखा गया है। इसका कारण यह है कि ये गैसे एकाकी और नि सग है, किसीसे भी सयोजित होकर यौगिक नही बनाती। उनके यौगिक बनानेमे ठेठ १९६२ मे जाकर सफलता मिली और वह भी बहुत ही सीमित।

केवेण्डिशने यह जानकारी दी कि हवामेसे आक्सीजन और नाइट्रोजन निकाल लेनेके बाद एक-आध बुलबुला रह जाता है, लेकिन उसने इस सम्बन्धमे अधिक छान-बीन नही की। १८९४ मे रैले और राम्जेने यह खोज की कि नाइट्रोजनमे उसीके सहारे लगभग १ प्रतिशत कोई अन्य गैस भी रहती है। आर्गन ही वह गैस है। उसके बाद राम्जे और ट्रावर्सने मिलकर वायुमण्डलमे ऐसी और भी कुछ निष्क्रिय गैसोका पता लगाया। उनके नाम है, क्रिप्टॉन, जेनान, निऑन और हीलियम।

आर्गनका रासायनिक सकेत A है। उसका परमाणुभार ३९ ९४४ और परमाणु सख्या १८ है। बिजलीके लट्टूमे भरे जानेके अतिरिक्त उसका अभी तक और कोई उपयोग ज्ञात नही हुआ है।

क्रिप्टोनका संकेत Kr है। उसका परमाणु भार ८३.७ और परमाणु संख्या ३६ है। वायुमण्डलके प्रति एक करोड भागमे उसका एक-आध भाग रहता है। इसका उपयोग प्रकाश-स्तम्भमे काम आनेवाले बिजलीके गोले भरनेमे किया जाता है।

सर विलियम राम्जे
(१८५२–१९१६)

जेनॉनका संकेत Xe है। वायुमण्डलमे इसका अनुपात क्रिप्टॉनसे भी कम है। इसका परमाणु भार १३१.३ और परमाणु संख्या ५४ है।

१९६२ मे कोलम्बिया विश्वविद्यालयमे बार्टलेटने जेनान और प्लैटिनम हेक्साफ्लोराइडकी पारस्परिक क्रियाके द्वारा एक पीला पदार्थ उत्पन्न किया। उसके बाद जेनॉन और फ्लोरिन गैसोका गर्म मिश्रण करके अन्य रसायनज्ञोने जेनॉन टेट्राफ्लोराइड बनाया। अब तो प्लैटिनमके अतिरिक्त टॅण्टेलम, ऐण्टिमनी, आरसेनिक, बोरोन आदि धातुओको जेनॉनसे सयोजितकर बनाये जा सकते है। इस सफलताके बाद वैज्ञानिकोने क्रिप्टॉनको भी नियन्त्रित करनेका प्रयत्न किया है। जेनॉनके यौगिकोका आक्सीकारक पदार्थोकी तरह उपयोग किया जा सकता है। इनके उपयोगका एक बडा लाभ यह है कि इनसे उत्पन्न होनेवाले सभी
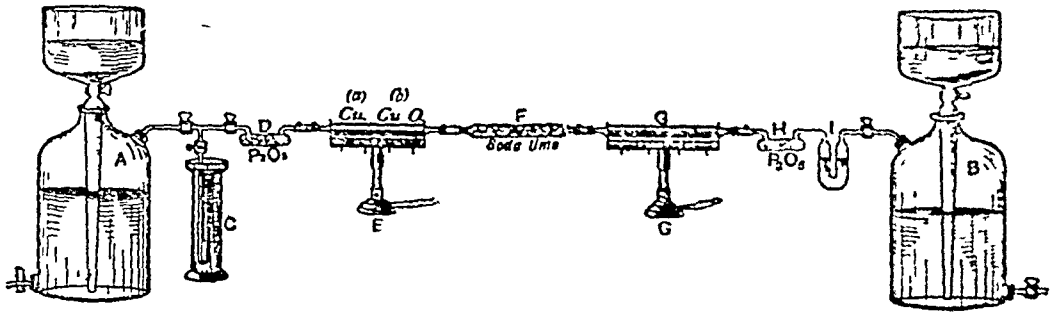
[हवामेसे आक्सीजन और हाइड्रोजन निकालनेका राम्जेका उपकरण। शेष बचे गैसके बुलबुलेके आधारपर आर्गनकी घोषणा।]

पदार्थ गैसीय होनेके कारण क्रियाके दौरान मैल या कूडा जमा नही होता। इसलिए राकेटोमे प्रणोदक पदार्थ (propellant)के रूपमे उपयोग किये जानेके लिए इनके यौगिक बनाये जाते है।

सूर्यके वायुमण्डलमे उसके वर्णक्रमके आधारपर लोकियरने १८६८ ई०मे हीलियमकी खोजकी थी। १८९४मे राम्जेने पृथ्वीके वायुमण्डलमे हीलियमका पता लगाया। क्रिप्टॉन और निऑनको १८९८ मे मुक्त किया जा सका। पीअर क्यूरी और मदाम क्यूरीने रेडियमके विकिरण-के दौरान उत्पन्न होनेवाली गैस रेडोनकी खोज की।

निऑन गैससे तो प्राय सभी नागरिक परिचित होते है। ऊंचे मकानोंपर विज्ञापनोंकी रंगबिरंगी विद्युत् ट्यूबें (डंडा बिजलियाँ) रातमें जगमगा उठती है। इन सबमें निऑन गैस भरी होती है। इसीलिए इन ट्यूबोंको 'निऑन साइन लाइट' कहते है। निओनका संकेत Ne परमाणुभार २० १८३ और परमाणु सख्या १० है।

रेडोनका सकेत Rn परमाणुभार २२२ और परमाणु सख्या ८६ है। यह रेडियधर्मी पदार्थ है और कैन्सरकी चिकित्सामे काम आता है।

हीलियमका सकेत He_2 या He, परमाणुभार ४ ००२ और परमाणु सख्या २ है। द्रव हीलियमके दो स्वरूप है— He_1 और He_2। He_2 ऊष्मा सवाहक है और इसकी ऊष्मा सवाहन-क्षमता तॉबेसे एक हजार गुना अधिक है। ठोस हीलियमको खूब दबाया जा सकता है। यदि उसे किसी खुले प्यालेमें भरा जाए तो प्यालेके किनारे-किनारे ऊपर चढकर और बाहरकी ओर भी प्यालेकी दीवालके सहारे नीचे उतरकर, दीवाल फादकर जेलमे भागने वाले कैदीकी तरह, अलोप हो जाता है। हीलियमका उपयोग वायुयानोंमें भरनेके लिए किया जाता है। रेडियधर्मी पदार्थोंके विकिरण तथा कुछ प्रकारके गर्म पानीके झरनोंमे हीलियम गैस निकलती है।

इन सभी विरल गैसोंसे नाम-मात्रके यौगिक बनाये जा सके है। इनकी सयोजकता ८ है, इसलिए कुछ लोगोंका कहना है कि इनके समूहको शून्य कहनेके बदले आठ कहना चाहिए।

गन्धक, फॉस्फोरस, सिलिकोन

गन्धक—गन्धकमे अपने नामके अनुरूप गन्धका विशिष्ट गुण होता है। शुद्ध गन्धक और उसके यौगिक गन्धमे पहचान लिये जाते है। यूनानी कवि होमरने, जो ईसासे ९०० वर्ष पूर्व हुआ, गन्धकका उल्लेख किया है। सभी कीमियागरोंने किसी-न-किसी रूपमें गन्धकका उपयोग किया है। गन्धक एक मूल तत्त्व है, यह तो सबसे पहले फ्रान्सीसी रसायनवेत्ता लवाशियेने प्रतिपादित किया था।

बुंगलिया गन्धक, आँवलासार गन्धक, और फूल गन्धकका द्रव-जैसा सफेद चूर्ण—ये सब गन्धकके ही रूप है।[1] गन्धकके निक्षेप भारतवर्षमें नहींके बराबर है इसलिए हमें गन्धक विदेशोंसे ही मँगाना पडता है।[2] रबरके वल्कनीकरणमे गन्धककी जरूरत पडती है। दवाइयोंमें भी

---

१ भारतीय प्राचीन आयुर्वेदमें चार प्रकारके गन्धकका उल्लेख मिलता है—पीत, रक्त, श्वेत और कृष्ण, इनमें काला गन्धक दुर्लभ कहा गया है।

२. प्राकृतिक गन्धकका कोई भी निक्षेप भारतमें नहीं है। लेकिन गन्धकके यौगिकों, माक्षिकों (पाइराइट) और कॉपर माक्षिकों (चाल्को पाइराइट) के निक्षेप अवश्य है। लोह, तांबा तथा गन्धकके यौगिक कॉपर माक्षिकोंके उत्तम निक्षेप सिंहभूम (बिहार) में मोसाबानीके समीप स्थित है। माक्षिकोंके निक्षेपोंका बिहार, बम्बई और पंजाबके अनेक भागोंमें पता चला है। एक निक्षेप [illegible] (शिमला) के समीप हिमालय घाटीमें और दूसरा अमझोर (शाहाबाद बिहार) में मिला है। माक्षिकोंके इन निक्षेपोंमें ४०% गन्धक होनेकी बात कही जाती है। [illegible] १९५० में [illegible] ४२,००० [illegible] १,०६,२८१ टन गन्धक आयात किया गया था।

गन्धकका उपयोग होता है। फसलको हानि पहुँचानेवाले कीट-पतगो और फफूंदका नाश करनेके लिए जो विषैली दवाइयाँ छिडकी जाती हे उनमे भी गन्धकका उपयोग किया जाता है।

गन्धकको जलानेसे उसका डाइआक्साइड बनता है, जिसे उसकी उग्र गन्धसे पहचाना जा सकता है। गर्म कपडोपर लगे दागोको मिटाने––विरजन करनेमे गन्धकके डाइआक्साइडका उपयोग किया जाता है। पानीसे रासायनिक सयोगकर वह सल्फ्युरस अम्ल बनाता है। लेकिन यह अम्ल तनु (weak) होता है। गन्धकका अम्ल बनानेके लिए सल्फरका ट्राइआक्साइड आवश्यक है। हवामे उसका आक्सीकरण होने पर गन्धकका अम्ल बनता है।

गन्धकका सबसे अधिक उपयोग गन्धकका तेजाब (गन्धकाम्ल) बनानेमे किया जाता है। गन्धकके अम्लको 'उद्योगोका राजा' कहते हैं। उसके अभावमे बहुतसे रासायनिक उद्योग हमेशाके लिए बन्द हो जाएँगे। किसी भी देशकी औद्योगिक प्रगतिका मापदण्ड उस देश द्वारा उपयोगमे लाये जानेवाले गन्धकाम्लकी मात्रा है। सल्फर ट्राइआक्साइडको पानीमे मिला करनेपर गन्धक (सल्फ्यूरिक) अम्ल बनता है। उसका रासायनिक सूत्र H_2SO_4 है। कासीस (हीरा कसीस) अर्थात् लौहके सल्फेटका उपयोग प्राचीनकालसे रग और स्याहियाँ बनानेमे होता आया है। कीमियागर इस कासीसका आसवन कर गन्धकका अम्ल बनाते थे। कासीसको अंग्रेजीमे विट्रियल कहते हैं, इसलिये यूरोपमे गन्धकके अम्लका पुराना नाम 'विट्रियलका तेल' प्रचलित था।

आज गन्धकाम्ल बनानेमे दो प्रमुख विधियाँ काममे लाई जाती हैं। एक विधिको सीसकक्ष (lead chamber) विधि और दूसरीको सम्पर्क विधि (contact process) कहते है। इन दोनो विधियोमे सल्फर डाइआक्साइडसे सल्फर ट्राइआक्साइड बनानेके लिए उत्प्रेरकोका उपयोग किया जाता है। सीसकक्ष विधिमे नाइट्रोजनके आक्साइड उत्प्रेरकका काम करते हैं, सम्पर्क विधिमे इसके लिए प्लेटिनमके चूर्णका उपयोग किया जाता है।

सीसकक्ष विधि सक्षेपमे इस प्रकार है गन्धक या गन्धकयुक्त खनिजको जलाकर उत्पन्न होनेवाली सल्फर डाइआक्साइड गैस और हवाके मिश्रणको नाइट्रोजन आक्साइडके साथ सीसेसे मढे हुए एक बडे कक्षमे ले जाते हे, जहाँ पानीका महीन फव्वारा निरन्तर चलता रहता है। उस कक्षमे पानीकी क्रियासे डाइआक्साइडसे ट्राइआक्साइड बनता है। नाइट्रोजन आक्साइड अपना आक्सीजन सल्फर डाइआक्साइडको प्रदान करता है इसलिए ट्राइआक्साइड बननेपर उससे पानीके साथ सल्फ्यूरिक एसिड अर्थात् गन्धकाम्ल बन जाता है। इस क्रियाके बाद मुक्त होनेवाले नाइट्रोजन आक्साइडको पुन काममे ले लिया जाता है। इस विधिसे बनाया हुआ अम्ल तनु (पतला) होता है, उसमे ३० प्रतिशत पानी रहता है। उसे सान्द्र करना पडता है।

$$2SO_2+O_2 \longrightarrow 2SO_3$$

$$2SO_2+(NO_2+NO)+O_2+H_2O=2SO_2(OH)\ O\ NO+H_2O=$$
$$2H_2SO_4+NO_2+NO$$
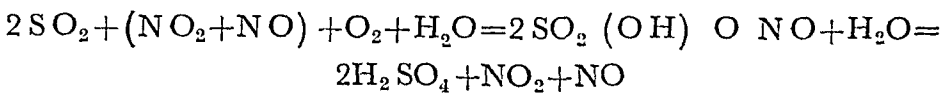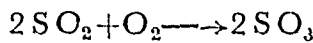
सम्पर्क विधि आविष्कृत तो हुई थी १८३१मे, परन्तु १९०१ तक उसका उपयोग नही किया गया। जर्मनीमे कृत्रिम (सश्लिष्ट) नीलके लिए अनुसन्धान किये जा रहे थे। इस कार्यमे बहुत ही उग्र (सान्द्र) अम्ल प्रचुर मात्रामे चाहिए। कक्ष विधिसे बना अम्ल तनु होनेके कारण इस कार्यके

उपयुक्त सिद्ध न हुआ। इसलिए सम्पर्क विधि खोज निकाली गई, जिसकी सफलताने उद्योगोके इतिहासमे नये अध्यायका आरम्भ किया।

इस विधिमे विशुद्ध सल्फर डाइआक्साइड आवश्यक है, नही तो सम्पर्क करनेवाला पदार्थ प्लेटिनम निष्क्रिय हो जाता है। कोट्रेवने इस शुद्धिकरणके लिए विद्युत् अवक्षेपणको अपनाकर सम्पर्क-विधिको हर तरहसे पूर्णतापर पहुँचा दिया। यह विधि अधिक कार्यक्षम है, इससे अधिक सान्द्र (उग्र) अम्ल वनता है, जो अधिक विशुद्ध भी होता है और इसीलिए सीसकक्ष विधि अव प्राय वेकार ही हो गई है।

गन्धकाम्ल किसी भी विधिसे क्यो न वनाया जाए उसके लिए सल्फर ट्राइआक्साइड ओर सल्फर ट्राइआक्साइड वनानेके लिए गन्धक अथवा गन्धकके यौगिकोकी जरूरत तो होती ही है। गन्धकयुक्त धातुओके खनिजको पाइराइट अथवा 'माक्षिक' कहते है। उसमेसे धातुशोधनके समय निकलनेवाली गैसोको सल्फर डाइआक्साइड कहते है। उन गैसोका वही और उसी समय उपयोग करके गन्धकाम्ल वना लिया जाता है। अभी हालमे कैल्सियम सल्फेट—सेलखडी पत्थर-से गन्धकाम्ल बनानेकी एक विधि खोजी गई है। भारतमे सेलखडी पत्थर प्रचुर मात्रामे मिलता है, इसलिए उससे गन्धकाम्ल बनाना हमारे देशके लिए काफी सुविधाजनक रहेगा।

गन्धकका एक सुपरिचित यौगिक हाइड्रोजन सल्फाइड (H_2S) है। गन्दे कुएँकी सफाई, गटरके रुक जाने या बन्द पानीके सडनेपर जो दुर्गन्ध उडती है वह हाइड्रोजन सल्फाइडकी ही होती है। सडाध या सडे अण्डोसे भी यह गैस निकलती है। प्रयोगशालामे एक रासायनिक क्रियाके रूपमे हाइड्रोजन सल्फाइडका इस्तेमाल विज्ञानके सभी विद्यार्थियोको ज्ञात है।

गर्म पानीके कुछ सोतोसे जो गन्ध आती है वह मुख्यत गन्धकके सल्फाइडकी ही होती है।

सिलिकोन—सिलिकाका अर्थ है बालू। उससे प्राप्त होनेवाले मूल तत्त्वका नाम सिलिकोन है। सिलिकोनका रासायनिक सूत्र Si परमाणुभार २८ ०६ और परमाणु सख्या १४ है। उसकी
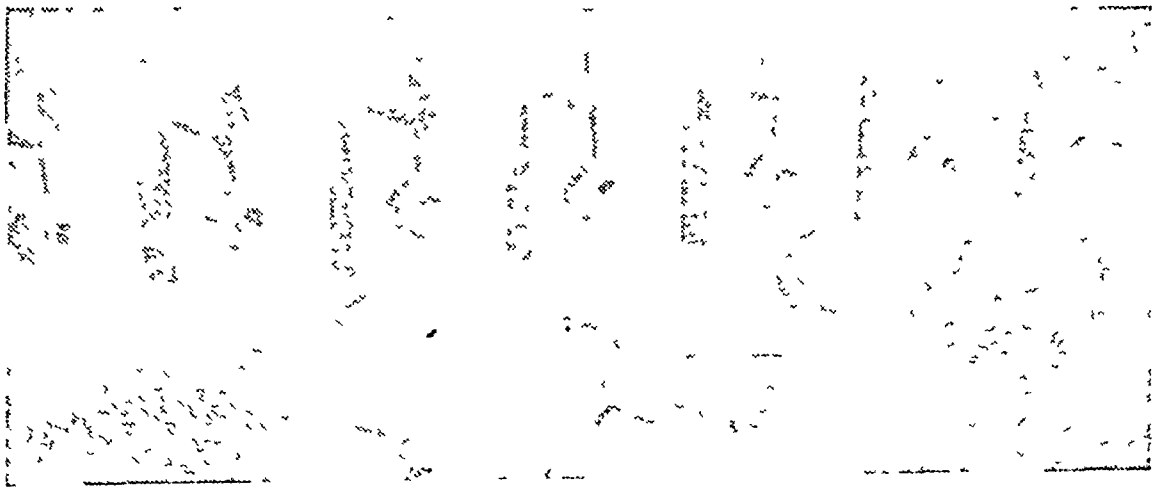
जर्मेनियमके सात ट्राजिस्टरके वरावर ध्वनि प्रवर्धन करनेवाला सिलिकोनका ट्राजिस्टर

सयोजकता ४ यानी कार्वनके वरावर है। उसके यौगिक दुनियामे सर्वत्र व्याप्त है। नदीकी वालूसे लेकर कई मूल्यवान रत्नो तक सिलिकोनके यौगिक है। शुद्ध सिलिकोन भगुर होता है और वह

धातु एव अधातुकी मध्यस्थितिवाली उपधातु (metalloid) है। विद्युत् भट्ठीमें वालू और कार्वनको तपानेसे सिलिकोन उपधातु वालूमेसे मुक्त होती है।

एल्यूमीनियम, ताँवा, मैग्नेशियम आदि धातुओमे सिलिकोन मिलाकर मिश्र धातुएं वनाई जाती है। वालूका उपयोग काँच वनानेमे किया जाता है। वालू और कार्वनको गर्मकर सिलिकोन कार्वाइड वनाते है। सिलिकोन स्फटिक रेडियोके ओसिलेटर रैक्टिफायर (दोलक एकदिशकारी) और ट्राजिस्टर वनानेके काम आते है। साधारण ट्राजिस्टर जर्मेनियम धातुके वनते है। परन्तु उच्च तापपर वे ठीकसे काम नही कर पाते, जवकि सिलिकोनके द्व्यग्र (diods) उच्च ताप-पर भी वरावर काम देते है।
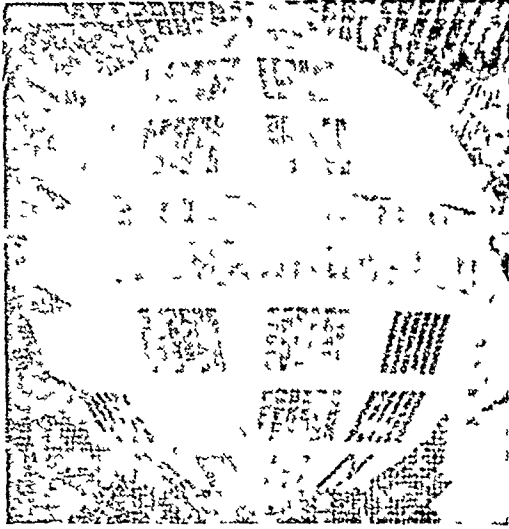
उपग्रह मे सूर्य ऊर्जासे चलनेवाली सिलिकोन सेलकी वैटरीकी माला, जिससे प्रति वर्गगज ९० वाट् विद्युत् पैदा होती है।

कार्वनिक पदार्थोंसे सयोग करके सिलिकोन आर्गेनोक्लोरोसिलेन-जैसे कुछ यौगिक वनाता है। ऐसे पदार्थोको पानी स्पर्श नही कर पाता, इसलिए कपडा उद्योग और चमडा उद्योगमे उनका उपयोग जल प्रतिकर्षक (water repellent) की तरह किया जाता है। आर्गेनो-सिलिकोनका वहुलक वनाया जा सकता है। सर्जास (resinous) द्रव होता है और विद्युत्-विसवाहमे (insulator) की तरह, धातुओकी ढलाईके साचे वनानेमे, जलावरोधी लेप (water repellent coating), पालिश, स्नेहक (lubricants), अगराग और सौन्दर्य प्रसाधन वनानेके काम आता है। सिलिकोन एस्टरका उपयोग रग-रोगन वनाने और तरल ऊष्मा-अन्तरण (heat transfer fluid)की तरह किया जाता है।

अव सिलिकोन रसायन कार्वन रसायनका प्रतिस्पर्धी होता जा रहा है। सिलिकोन कार्वन के जैसे ही आयन और सहसयोजक वन्ध (co-vallent bonds) धारण कर सकता है। आक्सीजनसे इसकी वन्धता (affinity) अधिक होनेके कारण यह मूल तत्त्व प्रकृतिमे अपनी यौगिक अवस्थामे प्राप्त होता है।

सिलिकोनके स्फटिक सामान्यत तनु अम्लमे अविलेय, परन्तु शोरेके सान्द्र अम्ल और लवणके अम्लके मिश्रण (Aqua regia) मे धीमी गतिसे विलेय है, और सिलिकोन टेट्राक्लोराइड वनाते है।

मिथाइल सिलिकोन तेल स्नेहक एव विद्युदपारक (dielectric) द्रवोके रूपमे उच्च ताप-पर भी काम दे सकते है। विनाइल-सिलिकोन ट्राइक्लोराइड ग्लास फाइवर—रेशोके दृढीकरणमे उपयोग किया जाता है। सिलिकोन द्रवोका पृष्ठ तनाव कम होता है इसलिए वे फेन विरोधी पदार्थके रूपमे अच्छा काम देते है। सिलिकोन रवर कम तापपर भी सुनम्य (flexible) रह सकता है और उच्च तापपर अपने गुणोको वनाये रखता है।

इस प्रकार सिलिकोनका महत्त्व दिनोदिन बढता जा रहा है और उसके यौगिकोंके नये-नये उपयोग खोजे जा रहे है।

वालूका सामान्य उपयोग सीमेंट या चूनेकी चिनाईमे किया जाता है। बालू सिलिकोनका आक्साइड है। चकमक पत्थर, बिल्लौरी सग जराहत, अभ्रक आदि अनेक पदार्थोमे सिलिकोन होता है। चाक और सगमरमरको छोडकर एक भी पत्थर ऐसा नही होता जिसमे सिलिकोन न हो।

सीमेट केलसियम सिलिकेटो और एल्यूमिनेटोका महीन चूर्ण है। साधारण सीमेट पोर्टलैण्ट सीमेट है। पानीके साथ मिलानेसे उसके सिलिकेट और एल्युमिनेट वडी दृढतासे पानीके साथ सयोजित होकर चिपक जाते है।

फॉस्फोरस—हेनिग ब्राण्ड नामक एक चिकित्सक-कीमियागरको १६६९ ई०मे चॉदीसे सोना वनानेकी धुन सवार हुई। उसने चॉदीसे सोना वनानेके लिए मूत्रका उपयोग किया। अपने इस प्रयोगसे उसे सोना तो नही मिला, परन्तु मोम-जैसा एक मुलायम पदार्थ अवश्य मिला। वह पदार्थ अंधेरेमे जगमगाता था। उसके वाद जॉन कुकल (१६३०-१७०२) ने भी मूत्रको गरम कर कई क्रियाओके वाद उससे फॉस्फोरस वनाया था। रावर्ट ब्रॉइलको भी फॉस्फोरस वनानेमे सफलता मिली थी। उसके एक साथी ए० जी० हेकविनने तो तीन पौण्ड और एक औस फॉस्फोरस वेचनेका विज्ञापन भी छपवाया था।

१७६९ ई०मे स्वीडनके वैज्ञानिकद्वय शील और गाहने यह घोषणा की कि हड्डियोमे फॉस्फोरस होता है और उन्होने हड्डियोमेसे फॉस्फोरसको मुक्त भी किया।

फॉस्फोरसके विना जीवन सभव नही। क्या वनस्पति और क्या प्राणी-शरीर सवकी कोशिकाओके न्यूक्लिओप्रोटीनमे फॉस्फोरस रहता है। नाइट्रोजनकी ही तरह फॉस्फोरसका परिभ्रमण चक्र भी सतत चलता रहता है। जमीनमे रहनेवाले फॉस्फेट क्षारोसे वनस्पतिमे, वनस्पतिमे जीवधारियोके शरीरमे और जीवधारियोके मर कर दफन हो जानेपर पुन जमीनमे जा मिलता है। जीवित प्राणीके मल-मूत्रमे भी फॉस्फेटके क्षार रहते है। जमीनको उपजाऊ वनानेके लिए फॉस्फेटके क्षारोकी जरूरत पडती है।

फॉस्फोरस दो तरहका होता है। एक तो पीला, मोम-जैसा मुलायम, विषैला और जल्दीमे जल उठनेवाला। सामान्य तापपर, यहाँ तक कि मानव शरीरकी गरमीसे भी वह जल उठता है, इसलिए उसे पानीके अन्दर रखा जाता है। पहले उसका उपयोग दियासलाइयाँ वनानेमे किया जाता था, परन्तु जहरीला होनेके कारण दियासलाईके कारखानोमे काम करनेवालोको हड्डियोका रोग हो जाता था, इसलिए पीले फॉस्फोरसका उपयोग करनेकी मनाही कर दी गई।

लाल फॉस्फोरस जहरीला नही होता। जलानेके लिए जिस पट्टीपर दियासलाईको घिसा जाता है, उस पट्टीपर यह फॉस्फोरस लगा होता है। इस तरहकी दियासलाइयाँ सेफ्टी मैचेज—सुरक्षित दियासलाइयोके नामसे पुकारी जाती है क्योकि जहाँ-तहाँ घिसनेसे वे जलती नही है।

प्रकृतिमे प्राप्त होनेवाले कैल्सियम फॉस्फेटका उर्वरककी तरह उपयोग नही किया जा सकता, क्योकि वह पानीमे अविलेय है। कैल्सियम फॉस्फेटको पीसकर आटे-जैसा महीन चूर्ण वना उसपर गन्धकाम्लकी क्रिया करनेसे सुपर फॉस्फेट वनता है। इस सुपर फॉस्फेटका उपयोग वनस्पतिके उर्वरकके रूपमे किया जाता है।

फॉस्फोरसके कुछ यौगिक भारी पानी (hard water)को हल्का बनानेके काम आते है।

फॉस्फोरसका एक यौगिक फॉस्फिन (PH_3) है। उससे ग्बूव गन्ध आती है। हवामे वह अपने-आप जल उठता है। श्मशान भूमिकी नम जगहोसे निकलनेवाली गैसोमे पक (मार्श) गैस और फॉस्फिन खास तौरपर होती हैं और मरघटमे भूत-लीलाकी लपटोका असली कारण यही है।

परमाणुभारकी सारणी

(अन्तर्राष्ट्रीय परमाणु-भार, १९६१, कार्बन–१२ पर आधारित)

मूलतत्त्व	सकेत	परमाणु सख्या	परमाणु भार
एक्टिनियम	Ac	८९	२२७
एल्यूमीनियम	Al	१३	२६ ९८१५
अमेरिशियम	Am	९५	२४३*
एटिमनी	Sb	५१	१२१.७५
आर्गन	Ar	१८	३९ ९४८
आर्सेनिक	As	३३	७४ ९२१६
एस्टेटाइन	At	८५	२१०*
बेरियम	Ba	५६	१३७ ३४
बर्केलियम	Bk	९७	२४९
बेरिलियम	Be	४	९ ०१२२
बिस्मथ	Bi	८३	२०८ ९८०
बोरोन	B	५	१० ८११
ब्रोमिन	Br	३५	७९ ९०९
केडमियम	Cd	४८	११२ ४०
कैल्सियम	Ca	२०	४० ०८
कैलिफोर्नियम	Cf	९८	२४९*
कार्बन	C	६	१२ ०१११५
सेरियम	Ce	५८	१४० १२
सीजियम	Cs	५५	१३२ ९०५
क्लोरिन	Cl	१७	३५ ४५३
क्रोमियम	Cr	२४	५१ ९९६
कोबाल्ट	Co	२७	५८ ९३३२
कॉपर (ताँबा)	Cu	२९	६३ ५४

---

१ सर्वाधिक स्थायी समस्थानिकका परमाणु-भार।

मूल तत्त्व	सकेत	परमाणु सख्या	परमाणु भार
निकल	Ni	२८	५८ ७१
नियोबियम	Nl	४१	९२ ९०६
नाइट्रोजन	N	७	१४ ००६७
नोवेलियम	No	१०२	२५३
ऑस्मियम	Os	७६	१९० २
ऑक्सीजन	O	८	१५ ९९९४
पेलेडियम	Pd	४६	१०६ ४
फॉस्फोरस	P	१५	३० ९७३८
प्लेटिनम	Pt	७८	१९५ ०९
प्लुटोनियम	Pu	९४	२४२
पोलोनियम	Pd	८४	२१०
पोटेसियम	K	१९	३९ १०२
प्रेस्पोडियम	Pr	५९	१४० ९०७
प्रोमिथियम	Pm	६१	१४६
प्रोटेक्टिनियम	Pa	९१	२३१
रेडियम	Ra	८८	२२६ ०५
रेडोन	Rn	८६	२२२
रेनियम	Rc	७५	१८६ २
ोडियम	Rh	४५	१०२ ९०५
विडियम	Rb	३७	८५४७
थेनियम	Ru	४४	१०१ ०९
मेरियम	Sm	६२	१५० ३५
कैण्डियम	Sc	२१	४४ ९५६
लेनियम	Se	३४	७८ ९६
लिकोन	Si	१४	२८ ०८६
ल्वर (रौप्य)	Ag	४७	१०७ ८७०
डियम	Na	११	२२ ९८९८
न्शियम	Sr	३८	८७ ६२
फर (गन्धक)	S	१६	३२ ०६४
टलम	Ta	७३	१८० ९४८
नेटियम	Tc	४३	९९
ुरियम	Te	५२	१२७ ६०
यम	Tb	६५	१५८ ९२४
यम	Te	८१	२०४ ३७

थोरियम	Th	९०
थुलियम	Tm	६०
टिन (रांगा)	Sn	५०
टिटेनियम	Ti	२२
टंग्स्टन	W	७४
यूरेनियम	U	९२
वेनेडियम	V	२३
जेनोन	Xe	५४
यिटर्बियम	Yb	७०
यिट्रियम	Y	३९
जिंक (जस्त)	Zn	३०
जिरकोनियम	Zr	४०
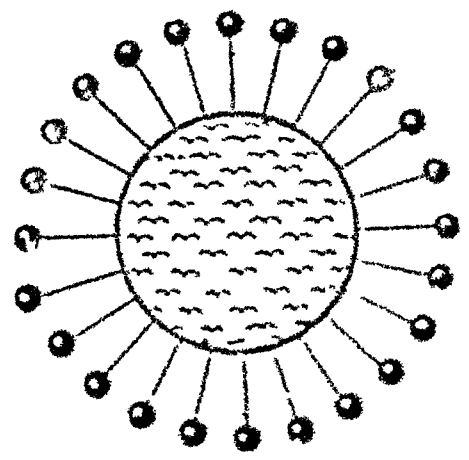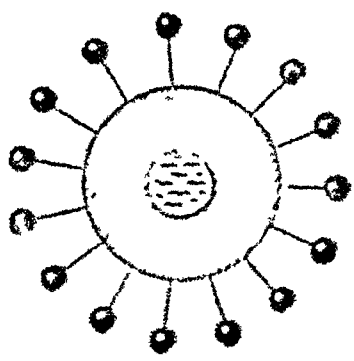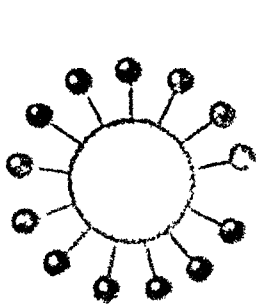
१७ : रसायन-उत्पादक उद्योग

किसी भी देशकी अर्थव्यवस्थामे रसायन-उत्पादक उद्योगका स्थान अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होता है। क्योकि अन्य उद्योगोका विकास इसीपर निर्भर करता है। देशमे रसायन-उत्पादनका जितना ही विकास होगा वहाँके अन्य उद्योग उतनी ही उन्नति करेगे, उस देशके अछूते साधन-स्रोतोका उपयोग कर सकनेवाले उद्योगोके विकासका आरम्भ किया जा सकेगा, और देशके औद्योगीकरणमे प्रगति हो सकेगी। इसीलिए रसायन-उत्पादक उद्योगको सही अर्थोमे अन्य उद्योगोकी 'चाभी' या 'जननी' कहा जाता है।

देशको इस उद्योगकी आवश्यकता चार कारणोसे है

(१) आधुनिक युद्धोमे देशकी सुरक्षाके हेतु उपयोगी सामग्री बनानेके लिए,

(२) शान्तिकालमे कृषि उपयोगी उर्वरक बनानेके लिए,

(३) कपडा, रगरोगन, कॉच, प्लास्टिक, साबुन, तेल आदि दैनिक उपयोगकी वस्तुएँ बनाने वाले अन्य उद्योगोके लिए आवश्यक रसायनकोके उत्पादनके लिए, और

(४) सार्वजनिक स्वास्थ्यके लिए आवश्यक दवाइयाँ आदि बनानेके लिए।

किसी जमानेमे युद्ध-सचालनमे शारीरिक बलको महत्त्व दिया जाता था। बारूदके आविष्कार-से इस स्थितिमे परिवर्तन हुआ और तोप-बन्दूक आदि हथियारोका महत्त्व बढ गया। आधुनिक कालमे नये-नये आविष्कारोके परिणामस्वरूप नये-नये शस्त्र अस्तित्वमे आये, और आजके युद्ध-सचालनमे रसायनकोकी भूमिका अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हो गई। अब सैनिकोकी सख्यासे कही अधिक महत्त्व रसायनकोका है। सक्षेपमे यह कि वर्तमानकालमे आधुनिक रसायन-उद्योग युद्धके लिए गोला-बारूद और अन्य सामरिक वस्तुएँ बनानेके लिए नितान्त आवश्यक हो जाता है। सुव्यवस्थित और सुसचालित रसायन-उत्पादनको युद्ध-सामग्रियोकी चाभी कहा जा सकता है।

आधुनिक युद्धका निर्णयात्मक हथियार परमाणु बम है आजका युद्ध केवल सैनिको अथवा शस्त्रास्त्रोके बलपर नही लडा जा सकता, वह लडा जाता है शस्त्रो और सामरिक साधनोकी आधुनिकताके बल पर। इसलिए जिस देशमे औद्योगीकरणका स्तर उन्नत होगा वही आधुनिक सहार-साधनोका उत्पादन कर सकेगा। इन सब चीजोकी पूर्तिके लिए सुस्थापित और सुविकसित रसायन-उत्पादक उद्योग आवश्यक हो जाता है। इसलिए देशके औद्योगीकरणकी योजनाओ और प्रचलित उद्योगोकी व्यवस्था एव विकासमे देशकी सुरक्षात्मक आवश्यकताओको प्राथमिक स्थान देना स्वाभाविक ही है। एक बार मान भी लिया जाए कि सयुक्त राष्ट्र सघ युद्धोको समाप्त करनेके अपने अभियानमे सफल हो जाता है, फिर भी प्रत्येक राष्ट्रको इस सस्थाके कार्यमे अपना योगदान

तो करना ही होगा। इसलिए यह स्पष्ट है कि रसायन-उत्पादनके सुव्यवस्थित औद्योगीकरणके बिना किसी भी राष्ट्रका काम चल नही सकता।

हमारा देश कृपि-प्रधान है। आबादीका अधिकतर भाग खेतीपर निर्भर करता है। फिर भी हमारे यहाँ खेती बहुत पुराने ढगसे की जाती है। फसलोकी पैदावार और अन्य कृषि कार्योमे हमारा देश बहुत पिछडा हुआ है। इन सब कमियो और पिछडेपनको दूर किया जा सकता है। जमीनको आवश्यक उर्वरक नही मिल पाते। पैदावार बढानेके लिए उर्वरक आवश्यक है। यदि देशका रसायन-उत्पादन उद्योग अच्छी तरह विकसित और उन्नत हो तो सस्ते मूल्य पर उर्वरकोकी माँगको पूराकर पैदावार बढाई जा सकती है। कपडा, चीनी, तेल, दवा, रग आदि दैनिक उपयोगकी चीजे बनानेमे और हमारे जीवनकी प्राथमिक आवश्यकता, अन्नका उत्पादन करनेके लिए खेतीमे जिन महत्त्वपूर्ण रसायनकोकी आवश्यकता होती है उनके निर्माणमे भारी रसायनकोका उद्योग (heavy chemicals industry) बहुत ही महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। जो देश भारी रसायनक प्रचुर मात्रामे पैदा करता है उसका आधुनिक सास्कृतिक स्तर उतना ही उन्नत माना जाता है। ऐसी है भारी रसायन-उत्पादक उद्योगकी महिमा।

इन भारी रसायनकोमे गन्धकका तेजाब—सल्फ्यूरिक अम्ल सबसे पहले नम्बर पर आता है। उसे रसायनकोका राजा कहा जाता है। विज्ञानकी दुनियामे यह कहावत प्रसिद्ध है कि गन्धकका तेजाब उद्योगोकी माता है। यह तेजाब (अम्ल) जितना सस्ता बनाया जा सकेगा उतने ही अनुपातमे औद्योगिक प्रगति हो सकेगी।

हमारे देशमे इस अम्लको बनानेमे सबसे बडी कठिनाई—गन्धक है। हमे आयातित गन्धक-पर निर्भर करना पडता है। हमारे देशका सल्फ्युरिक अम्लका उत्पादन एक लाख टनसे ऊपर पहुँच गया है। लगभग ५० कारखाने इस अम्लको बनाते है। कच्चे मालके लिए दूसरो पर निर्भर करना किसी भी उद्योगके लिए अच्छी बात नही। देश मे सरलतासे उपलब्ध अन्य गन्धकित पदार्थोसे यह अम्ल बनानेकी दिशामे किये जानेवाले शोध-खोजके प्रयत्नोको प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए। इस तरहके पदार्थोमे बिहारके सिहभूम जिलेमे प्राप्त होनेवाले कैल्कोमाक्षिको (chalcopyrites) राजस्थान, मद्रास और उत्तर प्रदेशमे मिलनेवाले सैलखडी और असमके कोयलेका नाम निर्देश किया जा सकता है। असमसे निकलनेवाले कोयलेमे ४ प्रतिशत गन्धक है। इस गन्धकका उपयोग कर लिया जाए तो उद्योगको बहुत राहत मिल जाएगी।

अन्य भारी रसायनकोमे ऐमोनिया, नाइट्रिक अम्ल, हाइड्रोक्लोरिक अम्ल और उनके क्षार, मैग्नेशियमके क्षार, कासीस, नीलाथूथा आदिका समावेश होता है। इनके अतिरिक्त कास्टिक सोडा, पोटाश, धोने और खानेका सोडा, बाइक्रोमेट और दूसरे उपयोगी भारी रसायन भी औद्योगिक विकासके लिए आवश्यक समझे जाते है।

हाइड्रोक्लोरिक अम्ल (लवणका तेजाब) हमारे दैनिक उपयोगके नमकसे बनाया जाता है। लवणको गन्धकके अम्लसे सयोजित करने पर यह अम्ल बनता है। वह गैसीय अवस्थामे रहता है। ठण्डा करनेसे वह द्रव नही होता। पानीमे पारित करनेसे हाइड्रोक्लोरिक अम्लका विलयन तैयार होता है। बाजारमे बेचे जानेवाले अम्लमे ३२-३३ प्रतिशत अम्ल रहता है। अब नई विधियाँ सामने आती जा रही है। (१) हाइड्रोजनके साथ क्लोरिनको वैद्युत विधिसे जलानेपर

यह अम्ल बनता है। (२) गरम कोयले पर क्लोरिन और वाष्प पारित करनेसे भी यह अम्ल बनता है, इसमे उत्प्रेरणके लिए लोहके क्षारोंका उपयोग किया जाता है। (३) लवणसे सोडा बनानेके उद्योगमे यह अम्ल उपोत्पादके रूपमे प्राप्त होता है।

सल्फ्यूरिक, नाइट्रिक और हाइड्रोक्लोरिक अम्ल मान्द्र अथवा तीव्र अवस्थामे बहुत हानिकारक होते है। इसलिए इन अम्लोका उपयोग करते समय खूब सावधानी बरतनी होती है। खासकरके सल्फ्यूरिक अम्लके मामलेमे तो सबसे अधिक सतर्क रहना आवश्यक है क्योंकि उसकी एक नन्ही-सी बूंद भी कपडे पर गिरी तो उस जगह कपडा जल जाता है। खुले शरीरपर गिरनेसे चमडी जलकर घाव हो जाता है। उसमे पानी डालते समय भी बहुत सावधानी रखनी पडती है।

एक खास ध्यानमे रखने-जैसी अद्भुत बात यह है कि सल्फ्यूरिक अम्ल ऊनी कपडोंको नही जला पाता।

हवा और पानीके बाद दैनिक उपयोगकी चीजोमे लवण जैसा पदार्थ शायद ही कोई होगा। हमारे भोजनका वह अत्यन्त उपयोगी अंश है। पशुओंकी खुराकमे भी लवणका महत्त्वपूर्ण स्थान है। इसके सिवा उद्योगोमे भी लवणका स्थान बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। जो स्थान अम्लोंमे सल्फ्यूरिक अम्लका है वही क्षारोमे लवणका समझना चाहिए। लवणसे सोडा बनानेका उद्योग 'एलकेली उद्योग' कहलाता है। रसायनक बनानेके उद्योगमे एलकेली बनानेका उद्योग सबसे पहले नम्बरपर आता है। उसमे लवणका कच्चे मालके रूपमे उपयोग किया जाता है।

लवणके बाद हमारे जीवनमे महत्त्वकी दृष्टिसे दूसरे नम्बरका रसायन, सोडा—विज्ञानकी परिभाषामे, 'सोडियम कार्बोनेट' है। हमारे स्वास्थ्यकी रक्षामे सोडेका योगदान सर्वाधिक है। हमारे शरीरकी सफाई और कपडे आदिकी धुलाईमे काम आनेवाले साबुन और उस प्रकारके अन्य बहुतसे पदार्थ सोडेके विना बनाये ही नही जा सकते। पुराने जमानेमे समुद्र तटपर उगनेवाली वनस्पतिकी राखसे अशुद्ध सोडा निकाला जाता था। सज्जीखार पापडखार, गन्ना आदिसे भी सोडा प्राप्त होता है। आधुनिक सभ्यताके विकास और प्रसारके साथ-साथ सोडेका उपयोग भी खूब बढा है। कॉच बनानेमे सोडेका प्रचुर उपयोग होता है। सोडियमके विभिन्न क्षार बनानेमे सोडा ही मूल पदार्थ है।

लवणसे सोडा बनानेकी दो विधियाँ प्रचलित है (१) M ब्लाङ्ककी विधि और (२) सोल्वेकी विधि या 'ऐमोनिया-सोडा-पद्धति'।

ब्लाङ्ककी विधिमे पहले लवणको सल्फ्यूरिक अम्लके साथ गरम किया जाता है। इससे सोडियम सल्फेट (साल्ट केक) बनता है और हाइड्रोक्लोरिक अम्लका खूब धुआँ उठता है, जिसका पानीमे परिष्करण करके हाइड्रोक्लोरिक अम्ल बनाया जाता है। इसका उपयोग क्लोरिन बनानेमे किया जाता है। उसके बाद सोडियम सल्फेट (लवण पिंड) को कोयले और चूना पत्थरके साथ मिलाकर गोल-गोल घूमनेवाली भट्ठियोमे गरम किया जाता है। कोयला लवण पिंडोका अवकरण करता है, इस क्रियासे सोडियम सल्फाइड बनता है और वह चूना पत्थरसे संयोग कर सोडियम-कार्बोनेट (सोडा) बन जाता है। यह 'काली राख' के नामसे जाना जाता है। फिर उसे पानीमे मिला देते है और तब उसमेसे सोडा निकाला जाता है। इस विलयनमे २५ प्रतिशत सोडेके रूपमे और २० प्रतिशत कास्टिक सोडेके रूपमे एलकेली रहता है। यदि सोडा बनाना अभीष्ट हो तो

लवणके उपयोग और उससे बननेवाली चीज़े

[खानेका सोडा बाईकार्ब, लवण पिंड, सोडियम सल्फेट, सोडियम सायनाइड, सोडियम हाइड्रोक्साइड]

सोडियम ऐसीटेट, सोडियम बेंजोमेट, सोडियम बाइसल्फाइट, कास्टिक सोडा, सोडियम फास्फेट, सोडियम थायोसल्फेट, (हाइपो), सोडियम बायोक्रोमेट
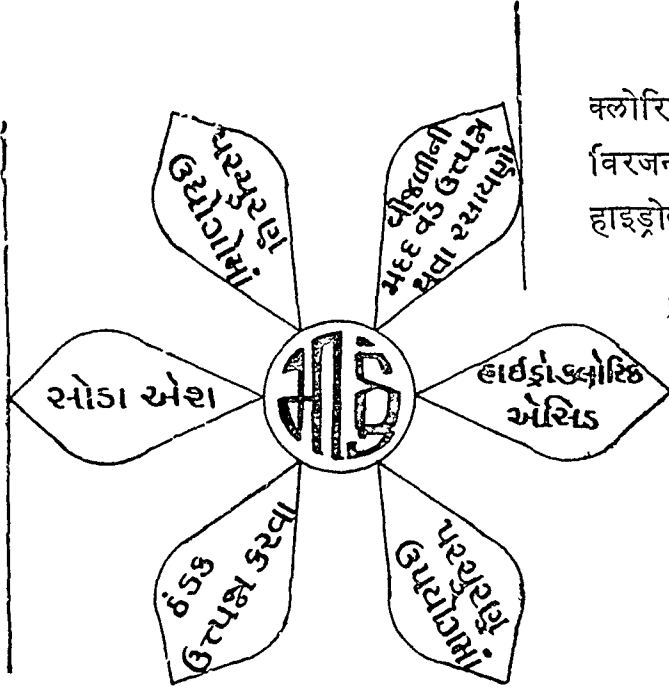
क्लोरिन, कास्टिक सोडा, विरजनचूर्ण, सोडियम क्लोरेट, हाइड्रोक्लोरिक अम्ल,

जिंक क्लोराइड, एल्यूमीनियम क्लोराइड, आयर्न क्लोराइड, मैग्नेशियम क्लोराइड, रॉगेका क्लोराइड, वेरियम क्लोराइड आदि

[मनुष्य तथा पशुओके भोजनमे, खनिजोमेसे चॉदी और तॉबेका निष्कर्पण करनेमे, खाद्य पदार्थोको सुरक्षित रखनेमे, मिट्टीके वरतनो पर पालिश चढानेमे, साबुन तथा कपडा वनानेमे, चमडा पकानेमे, उर्वरकोमे, बेकार पौधोको निकालनेमे, आदि]

इस विलयनमे कार्बन डाइआक्साइड पारित की जाती है। उसके अपद्रव्योको गरमीसे जला दिया जाता है। यही तैयार सोडा बाजारमे 'सोडा ऐश'के नामसे बिकता है। सोडा निकाल लिये जानेके बाद जो अविलेय पदार्थ बचा रह जाता है वह एलकेली-वेस्ट यानी एलकेलीका अपशिष्ट (कूडा) कहलाता है। इस अपशिष्टसे गन्धक, हाइपो आदि उपयोगी रसायनक बनाये जाते है। इस ब्लाङ्क पद्धतिकी एक खामी तो यह है कि इसमे लवणका ही उपयोग होता है, उसका पानी काम नही देता। दूसरे, कीमती सल्फ्यूरिक अम्लका भी उपयोग करना पडता है। लेकिन फिर भी यह विधि मुकाबलेमे इसलिए टिकी हुई है कि इसके कारखानेवालोको सोडेके अतिरिक्त हाइड्रोक्लोरिक अम्ल, गन्धक आदि कीमती रसायनक लगभग मुफ्त मिल जाते है।

अर्नेस्ट साल्वे (१८३८–१९२२)

ऐमोनिया-सोडा-पद्धति अथवा इसके अन्वेषक सोल्वेके नामसे प्रसिद्ध सोल्वे-विधिमे लवणके अतिरिक्त कार्बन

डाइ-आक्साइड और ऐमोनिया-जैसे बहुत ही सस्ते कच्चे मालकी जरूरत पड़ती है। इस विधिमे ऐमोनियासे सतृप्त लवणके विलयनमे कार्बन डाइ-आक्साइड गैस पारित करनेसे सोडियम बाइकार्बोनेट (सोडा बाई कार्ब) और ऐमोनियम क्लोराइड बनता है।

$$NaCl + NH_3 + CO_2 + H_2O \longrightarrow NaHCO_3 + NH_4Cl$$ और

नमक, ऐमोनिया, कार्बन डाइ-आक्साइड, पानी, सोडा बाई कार्ब, नौसादर

$$2NaHCO_3 \longrightarrow Na_2CO_3 + H_2O + CO_2$$

सोडा बाई कार्ब, धोनेका सोडा
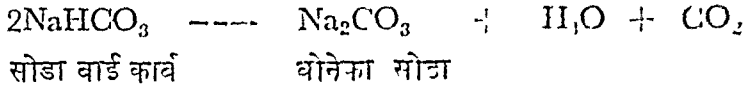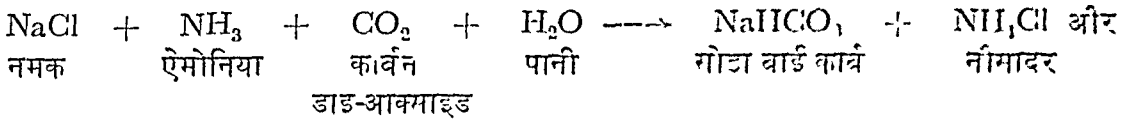
विलेयता कम होनेके कारण वह पहलूदार पदार्थके रूपमेमुक्त होता है। गरम करनेपर उसमेसे कार्बन डाइ-आक्साइड गैस निकल जाती है ओर सोडा बनता है।

इस विधिमे 'सॉल्वे टावर' (बुर्ज अथवा स्तम्भ)का उपयोग किया जाता है। यह टावर बहुतसे खानोवाले एक विशाल टिफिन वाक्स (नाश्तेदान—कटोरदान) जैसा होता है। सोडा बनाते समय प्राप्त होनेवाले कार्बन डाइ-आक्साइडका पुन उपयोग कर लिया जाता है ओर नौसादरसे चूनेकी क्रिया द्वारा प्राप्त ऐमोनियाका भी फिरसे उपयोग कर लिया जाता है। इस प्रकार इस विधिमे इनके उपोत्पाद पुन काममे आ जाते है।
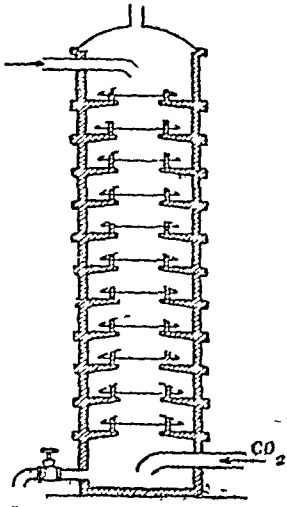
सोल्वे टावर

सोल्वेकी विधिमे कुछ खामियाँ भी है लगभग ३० प्रतिशत लवण वेकार चला जाता है। चीनी रसायनविद डॉ० टी० पी० होउ (T P Hou)ने इस विधिमे कुछ सुधार किये है (१) लवण-का सोडेमे ९६ प्रतिशत रूपान्तर, (२) लवणके क्लोरिनका ऐमोनियम क्लोराइड बनानेमे उपयोग ओर (३) लागत कम इसलिए कीमत (बिक्री मूल्य)मे भी कमी।

सोडेके विलयनसे कास्टिक सोडा बनानेकी विधिमे उसे चूनेके साथ मिलाकर कास्टिक सोडा बनाया जाता है।

$$Na_2 CO_3 + Ca (OH)_2 \rightleftharpoons Ca Co_3 + 2 NaOH$$
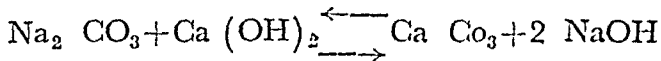
इस क्रियामे समानुपात बना रहनेपर ही क्रिया दाहिनी ओर फिरसे चलती है, परन्तु कास्टिक सोडा बनानेकी इस विधिको अब काममे नही लाया जाता। इसका कारण यह है कि बिजली सस्ती होनेसे लवणके विलयनका विद्युत् विश्लेषण कर कास्टिक सोडा बनाते है, जो बहुत सस्ता पडता है।

रासायनिक वर्गीकरणमे सोडियम और पोटेसियम, दोनो ही 'एलकेली धातुएँ' कहलाती है। दोनोके गुण भी लगभग समान है। लेकिन सोडियमकी तुलनामे पोटेसियम प्रकृतिमे कम दिखाई देता है। पोटेसियमके क्षार सोडियमके क्षारो-जैसा ही काम करते है। पोटेसियमके क्षार बनानेकी विधि सोडियमके क्षार बनानेकी विधिसे मिलती-जुलती है। पोटेसियम डाइक्रोमेट और परमैगनेट अत्यन्त उपयोगी है।

परावर्तन भट्ठीमे क्रोमाइट खनिज, सोडे और चूनेका मिश्रण १०५०-११०० सें० गरम किया जाता है और इस क्रियाके दौरान भट्ठीमे हवा पहुँचाई जाती है। चूना आंचमे पिघलने प्रभारको छिद्रमय बनाये रखता है, ताकि क्रिया बराबर होती रहे। क्रोमेटको मुक्त करनेके लिए गरम प्रभारको पानीमे मिलाकर उसका निस्यदन करनेसे अविलेय अपद्रव्य छँट जाते है। क्रोमेटको डाइक्रोमेटमे परिवर्तित करनेके लिए उसमे सल्फ्यूरिक अम्ल मिलाकर सघनित करनेपर पहले सोडियम डाइक्रोमेट तैयार होता है। उससे पोटेसियम डाइक्रोमेट बनानेके लिए पोटेसियम क्लोराइडके विलयनमे उसे मिलानेपर पोटेसियम डाइक्रोमेटके चमकीले लाल स्फटिक तैयार हो जाते है।

पोटेसियम परमैंगनेट बनानेके लिए पाइरोलुसाइटको कास्टिक सोडा या पोटासके साथ मिलाकर इस तरह गरम किया जाता है कि हवा मिलती रहे। इस क्रियाको शीघ्रतामे सम्पन्न करनेके लिए २-४ भाग कास्टिक सोडा और १ भाग पाइरोल्युसाइटका मिश्रण पोटेसियम क्लोरेटमे मिला दिया जाता है।

पोटेसियमके क्षार यो तो पृथ्वीमे सर्वत्र व्याप्त है, परन्तु काममे लाने योग्य निक्षेप केवल जर्मनीके स्ट्रास्फूर्टमे ही मिले है। १८३९मे इन निक्षेपोका पता चला और तबसे ये दुनियाकी पोटेसियम क्षारोकी आवश्यकताकी पूर्ति करते आ रहे है। इन निक्षेपोमे विभिन्न क्षारोके स्तर एक दूसरेपर छाये हुए (परस्पर व्यापी) मिले है। इन स्तरोमे ५०-१३० फुट मोटी दुहरे क्षारकी एक बडी पट्टी भी है। इस दुहरे या दोपर्ते क्षारको कार्नेलाइट कहते है। इसमे पोटेसियम और मैग्नेशियमके क्लोराइड है। इसमेसे पोटेसियम क्लोराइडको मुक्तकर उसका उपयोग पोटेसियमके अन्य क्षार बनानेमे किया जाता है। अब तो ऐल्सेसके निक्षेप भी पोटेसियमके क्षारोकी विश्व मांगका अधिकाश पूरा करने लगे है। रूस, अमरीका और कैनेडामे भी इसके निक्षेप मिले है, परन्तु स्ट्रास्फूर्टके निक्षेपोका महत्त्व आज भी वैसा ही है।

पोटेसियम कार्बोनेट मोतीकी राख (pearl ash)के नामसे विख्यात है। पोटेसियम क्लोराइडसे कार्बोनेट बनानेका ढग लवणसे सोडा बनानेकी रीतिसे मिलता-जुलता है। कठोर कॉच बनानेके लिए सोडेके बदले पोटेसियम कार्बोनेटका उपयोग किया जाता है। पोटेसियम नाइट्रेट अथवा माल्टपीटर (कलमी शोरा) हमारे देशमे खूब बनाया जाता था। यह पदार्थ उपयोगी उर्वरक और युद्धकालमे बारूद बनानेके काम आता है।

कास्टिक पोटासके विलयनमे क्लोरिन गैस पारित करनेसे पोटेसियम क्लोरेट बनता है। दियासलाई उद्योगमे, पटाखे बनानेमे, फोटोग्राफीमे फ्लश पाउडर तथा विस्फोटक पदार्थ बनानेमे और भी अनेकविध उत्पादनोमे इसका उपयोग किया जाता है।

रग, दवाइयाँ, सुगन्धित पदार्थ और तेल एव अन्य कार्वनिक रसायन—ये सब 'परिष्कृत' रसायन (fine chemicals) कहलाते हे। इन 'परिष्कृत' रसायनकोको वनानेके लिए उत्पादन-के प्रथम चरणमे भारी रसायनोकी आवश्यकता होती हे। 'परिष्कृत' रसायनोके उद्योगके लिए मुख्य पदार्थ कोयलेसे निकाला जानेवाला तारकोल हे। उससे वेनजिन और टोल्युइन, फिनोल और क्रेसोलो, नेफथेलीन, एन्थ्रेसिन आदि उपयोगी रसायन प्राप्त किये जाते है। अव पेट्रोलियममे ये पदार्थ पेट्रो-केमिकल्सके रूपमे प्राप्त किये जा सकते हे। 'परिष्कृत' रसायन-उद्योगकी नीव वास्तव-मे कोयले और पेट्रोलियम पर रखी हुई हे। कोयलेसे तो पेट्रोल भी वनाया जाता है।

रसायन-उत्पादन उद्योगकी यह हुई सक्षिप्त जानकारी। इसके विकासके लिए हमारे देशमे आवश्यक पदार्थोकी कोई कमी नही।
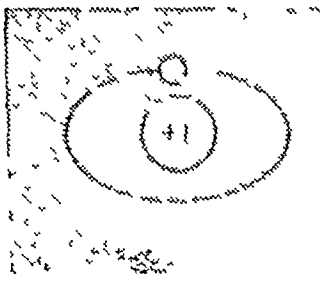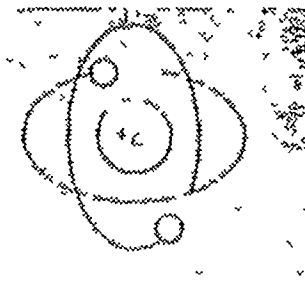
मूल तत्त्व
बाह्य इलेक्ट्रानोकी संख्या
हाइड्रोजन १
हीलियम १
लिथियम १
बेरिलियम २
बोरोन ३
कार्बन ४
नाइट्रोजन ५
आक्सीजन ६
लिथियम ३
+१
3p 3n
3p 4n
हाइड्रोजन
हीलियम
लिथियम
बेरिलियम
बोरोन
कार्बन
नाइट्रोजन
आक्सीजन
लिथियम–६
लिथियम–७
इन दोनो लिथियमके परमाणुभार अलग-अलग है। ये एक-दूसरेके सम-स्थानिक (isotope) माने जाते है।
खंड : ७
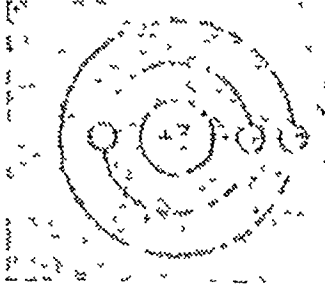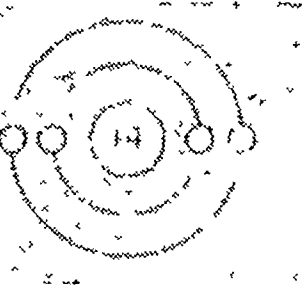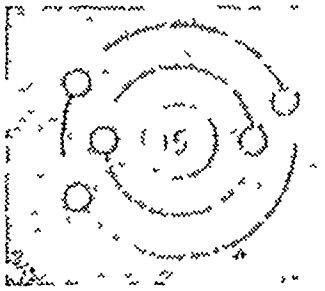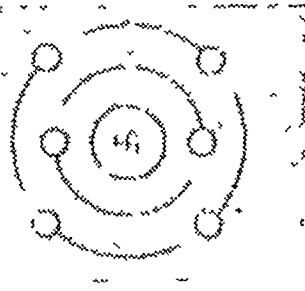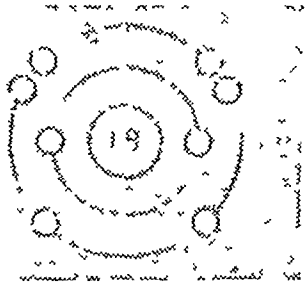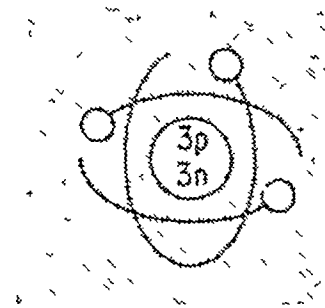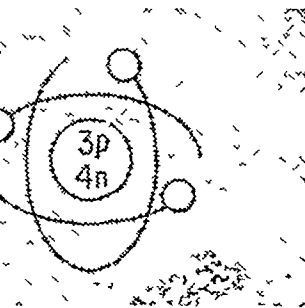
१८ : अधुनातन प्रगति और नये क्षितिज

वीसवी शताब्दीमे रसायनके क्षेत्रमे वहुत तेजीसे प्रगति हुई है। कार्वनिक, अकार्वनिक और भौतिक रसायनमे भी अनेक नये सिद्धान्त, नई मान्यताएँ, नये विधि-विधान, नये निरीक्षण-परीक्षण और नये-नये सश्लेषण हुए है। इतना ही नही, अपितु कई नई शाखाओका उदय भी हुआ है। उदाहरणके लिए वायोकेमिस्ट्री अथवा जीव-रसायन, न्युक्लियर केमिस्ट्री अर्थात् नाभिकीय (परमाणु सरचनासे सम्वन्धित) रसायन, एग्रिकल्चरल केमिस्ट्री यानी खेती-वाडीका रसायन आदि। इनमेसे कुछ क्षेत्रोमे जो प्रगति हुई है उस पर यहाँ एक उडती नजर डाली जाएगी।

कार्वनिक रसायनके क्षेत्रमे १९वी शताब्दीके अन्तिम वर्षोमे कतिपय महान वैज्ञानिकोने अनेक जटिल अणुवाले पदार्थोका अध्ययन कर अनेक पदार्थोकी अणुसरचना खोज निकाली और उनके सश्लेषण भी किये। इनमेसे एमिल फिशर, एडोल्फ फॉन वायर, ग्रीनयार्ड, एर्लिक आदिके नाम विशेष रूपसे उल्लेखनीय है। एमिल फिशरने कार्वोहाइड्रेड वर्गके अनेक पदार्थो जैसे कि ग्लुकोज, फ्रुक्टोज, गेलेक्टोज, मेनोज आदिकी अणुसरचनाकी छान-बीनकर उनमे पाये जानेवाले अन्तरोका पता लगाया। उसने यह भी वताया कि प्युरिन वर्गके युरिक अम्ल, थियोफिल्लिन, थियोब्रोमिन, जेन्थीन, कैफीन आदि समस्त प्राणिज और वानस्पतिक पदार्थ एक ही मूल पदार्थ प्युरिनके अभिजात है। उसने प्रोटीन-जैसे जटिल पदार्थोका अध्ययन भी किया था और उनके वारेमे यह मत प्रतिपादित किया कि वे सव भिन्न-भिन्न एमिनो अम्लोके सयोजनसे वने है। वायरने नीलपर अनुसन्धान किये और उसके सश्लेषणकी विधि खोज निकाली। विलियम पर्किनने सश्लिष्ट रगोके उद्योगकी नीव रखी। ग्रीनयार्डने एक महत्त्वपूर्ण रासायनिक क्रियाका, जो उसीके नामसे जानी जाती है, आविष्कार किया था। इस क्रियाके द्वारा मैग्नेशियम धातुसे कार्वनिक पदार्थोसे विभिन्न कार्वनिक पदार्थ वनाये जा सकते है। फ्रीडल और क्राफ्ट्स नामक दो रसायनज्ञोने, अपने नामसे अभिहित, जिस क्रियाकी खोजकी वह कार्वनिक सश्लेषणके क्षेत्रमे अत्यन्त महत्त्वपूर्ण सिद्ध हुई। पाल एर्लिकने सश्लिष्ट ओषधियोके क्षेत्रमे जो उत्कृष्ट कार्य किया उसका उल्लेख हम एक पिछले अध्यायमे कर आए है। इन समस्त कार्योसे इस सदीमे और भी वेग मिला है।

हार्मोनोका, अनेक वनस्पतियोमे प्राप्त टर्पिन वर्गके सुगंधित पदार्थोका और टेरामाइसिन तथा ऑरियामाइसिन-जैसे प्रतिजीवाणु (एंटि-बायोटिक) पदार्थोका नामोल्लेख किया जा सकता है।
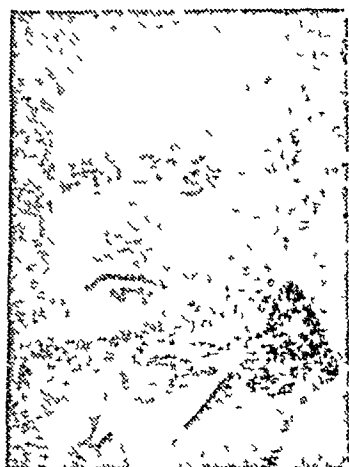
हान्स फिशर (१८८१–१९४५)
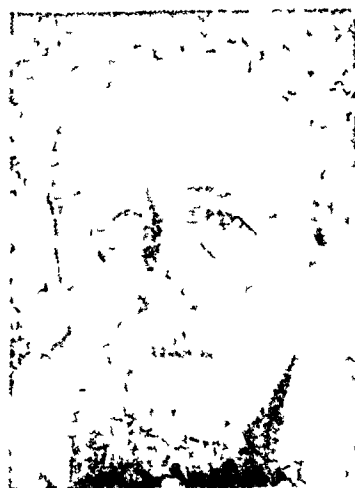
रिचार्ड विलस्टेटर (१८७२–१९४२)

सभी पदार्थोका या उन क्षेत्रोमे काम करनेवाले समस्त वैज्ञानिकोका नाम दे पाना तो सम्भव नही है, लेकिन यहाँ कुछ नामोका उल्लेख करना असगत न होगा। विलस्टेटर, रावर्ट राविन्सन, पाल कारेर, रुत्जिका, लार्ड टोड, राइक्स्टाइन, हान्स फिशर, दवीनीओ, सेगर आदि, इनमे से कुछ तो नोवेल-पुरस्कार विजेता भी है। यह सारा कार्य नई पद्धतियो और नये उपकरणोंके कारण जिनका उल्लेख आगे किया जायगा, सम्भव हुआ है। कार्वनिक पदार्थके दो कार्वनमे किस प्रकारका, जोड (सन्धि, सन्धान) होता है इस पर 'मोलेक्युलर आर्विटल थियरी' (अणु-कक्षक सिद्धान्त) ने प्रकाश डाला, यह वीसवी सदीके रसायनशास्त्रका एक महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त माना जाता है। लेकिन हम यहाँ इसकी गहराईमे नही जाएँगे।

फ्लोरिन गैसको शुद्ध रूपमे पहले पहल मॉयसाँने १८८६मे पृथक् किया। उससे पहले इस दिशामे कई असफल प्रयत्न हो चुके थे। यह गैस वहुत ही तीव्र अत्यन्त क्रियाशील और शरीरको हानि पहुँचानेवाली तथा सभी वस्तुओपर क्रिया करनेवाली है। मॉयसाँने प्लेटिनम धातुके पात्रमे प्लेटिनम-इरिडियम मिश्र धातुके विद्युदग्रोका उपयोग कर पूरे उपकरणको -२३ से० तक ठण्डा और उसमे पोटेसियम हाइड्रोजन फ्लोराइडका निर्जल हाइड्रोक्लोरिक अम्लमे विलयन इस्तेमाल कर उसका विद्युत्विश्लेषण करके इस गैसको प्राप्त किया था। फ्लोरिन-रसायन पिछले पच्चीस वर्षोमे खूव विकसित हुआ है। फ्लोरिनके कार्वनिक यौगिकोका औद्योगिक दृष्टिसे वडा महत्त्व है। उदाहरणके लिए फ्रिओन नामक कुछ फ्लोरोफ्लोरो हाइड्रो-कार्वन ठण्डक पैदा करनेके लिए प्रशीतकारियोकी तरह इस्तेमाल किये जाते है। घर्षण कम करनेवाले तेलोमे यदि फ्लोरिन मिला दिया जाए तो उन तेलोका रेडियधर्मी पदार्थोसे उत्सर्जित होनेवाली किरणोसे विघटन नही होता, इसलिए रेडियधर्मी पदार्थोके सान्निध्यमे आने वाले यन्त्रोमे इस तरहके तेलका उपयोग किया जाता है। टेफ्लॉन नामक एक प्लास्टिक टेट्राफ्लोरोएथिलिनसे वनाया जाता है, यह प्लास्टिक अत्यन्त निष्क्रिय और दृढ होता है।

मॉयसॉने एक विद्युत् भट्ठी बनाकर उसमे अतिशय उच्च ताप पर द्रवित होनेवाले आक्साइड, कार्बाइड, बोराइड, सिलिसाइड आदि पदार्थोका अध्ययन किया। धातुओके आक्साइड और कार्वनको विद्युत् भट्ठियोमे गरमकर क्रोमियम, मैगनीज, मॉलिब्डेनम, टग्स्टन, वेनेडियम, युरेनियम, जिर्कोनियम और टिटेनियम धातुएँ उसने बनाई थी।

अकार्वनिक रसायनके क्षेत्रमे एक और दिलचस्प खोज विरल मृद् (rare earths) सम्बन्धी है। यह कार्य प्रारम्भ तो १८वी सदीमे किया गया था, परन्तु उसमे सक्रियता आई १९वी सदीके अन्त और इस सदीके आरम्भके वर्षोमे। चूने आदिसे मिलती-जुलती कुछ मृत्तिकाओ (मृद्–मिट्टियो)-की ओर १८वी सदीमे कतिपय लोगोका ध्यान गया था और उन्हे शुद्धकर उनमे के मूलतत्त्वोको पृथक् करनेका काम अन्वेषकगण कर रहे थे। लेकिन उन धातुओके क्षारोको शुद्ध अवस्थामे प्राप्त करना, उनके गुण लगभग एक-जैसे होनेके कारण, बहुत ही उलझन भरा था। मेरिगनेक, बायस-बाउड्रन, वेल्सबाक, अरवेन आदि अन्वेपकोने इस समूहके प्राय सभी तत्त्वोको शुद्ध अवस्थामे प्राप्तकर उनके गुणोका विस्तृत अध्ययन किया। वेल्सबाकने यह बताया कि सीरिया और थोरिया (सीरियम और थोरियमके आक्साइड)को गर्म करनेसे वे सफेद प्रकाश देते है और उसने इनके मेण्टल वनाकर प्रकाशके लिए इस्तेमाल करना शुरू किया।

विरल मृद्के मूलतत्त्वोके नाम नीचे लिखे अनुसार है

La–लेन्थेनम	५७	HO–होल्मियम	६७
Ce–सेरियम	५८	Er–एर्बियम	६८
Pr–प्रेसियोडिमियम	५९	Tm–थुलियम	६९
Nd–नियोडिमियम	६०	Yb–यिर्टबियम	७०
Pm–प्रोमिथियम	६१	Lu–ल्युटेटियम	७१
Sm–सेमिरियम	६२	Np–नेप्यूनियम	९३
Eu–यूरोपियम	६३	Pu–प्लुटोनियम	९४
Gd–गेडोलिनियम	६४	Am–एमेरिशियम	९५
Tb–टर्बियम	६५	Cm–क्युरियम	९६
Dy–डिस्प्रोसियम	६६		

एक ओर जब नये मूलतत्त्वोकी खोज जोर-शोरसे की जा रही थी, एल्फ्रेड वर्नर तव अकार्वनिक पदार्थोकी सरचनाके सम्वन्धमे कार्य कर रहा था। सादे अकार्वनिक पदार्थोकी सरचनाको तो सयोजकताके सिद्धान्तके द्वारा समझाया जा सकता है, पर जटिल अकार्वनिक पदार्थो, जैसे कि कोबाल्टके क्षारोके ऐमोनियाके साथके यौगिकोकी सरचनाको इस सिद्धान्तसे समझाना मुश्किल था। वर्नरने इसके लिए सवर्गीकरणवाद (co-ordination theory) प्रतिपादित किया, जो आज भी वर्नरके सवर्गीकरणवादके नामसे प्रख्यात है।

एल्फ्रेड वर्नर (१८६६–१९१९)

अकार्वनिक रसायनके क्षेत्रमे और भी कुछ मूल-तत्त्व खोजे गए। इनमे पोलोनियम और रेडियम भी है।

रेडियमके आविष्कारने परमाणु सरचनापर नया प्रकाश डाला। परमाणु सरचनाकी गुत्थी सुलझानेमे भौतिकी वैज्ञानिकोने प्रमुख कार्य किया। आगे इसी सम्बन्धमे विस्तारसे चर्चा की जा रही है।

परमाणु संरचना और परमाणु ऊर्जा

१९वी शताब्दीके आरम्भमे डॉल्टनने जिस परमाणुवादको प्रतिपादित किया, रसायन-विदोने उसे अपना लिया था और यह मानने लगे कि परमाणु वास्तवमे अविभाज्य है। इस क्षेत्रमे और भी कुछ करना है या जानना है, परमाणुकी सरचना जटिल है और उसमे सीमातीत ऊर्जाका सचय है—इस तरहकी बात भी कोई नही सोचता था। इसलिए बीसवी सदीका सबसे महत्त्वपूर्ण वैज्ञानिक कार्य परमाणुकी सरचनाका पता लगाना और परमाणुमे निहित असीम ऊर्जाको मुक्त और नियत्रित कर उसे दैनिक उपयोगमे लेना है। इस कार्यका श्रीगणेश उन्नीसवी शताब्दीके उत्तरार्धमे हुआ था।

१८५३मे मेसन नामके एक वैज्ञानिकने एक कांचकी नली लेकर उसके दोनो सिरोपर विद्युत् पारित करनेके लिए तार जोडकर नलीमेसे प्राय सारी हवा निकाल दी और उसके दोनो ओरके मुँह अच्छी तरहसे मूँद दिये। दोनो सिरो पर निकले हुए तारोको उसने १०से १५ हजार वोल्ट विद्युत् आवेशवाले विद्युत्-यन्त्रसे जोड दिया। नलीमे प्रकाश हुआ। गिजलर नामके एक वैज्ञानिकने ऐसी ही नलियोमे थोडी मात्रामे अलग-अलग तरहकी गैसे भरी तो भिन्न-भिन्न रगका प्रकाश देखनेको मिला। इस तरहकी नलियाँ आज भी 'गिजलर ट्यूब' कहलाती है। प्रकाशकी इन किरणोकी विलियम क्रुक्स और जे० जे० टामसनने गहन छीन-बीनकी तो पता चला कि वे ऋण विद्युत्से आविष्ट कणोसे बनी थी। इन कणोको इलेक्ट्रॉन नाम दिया गया। यह भी पता चला कि पदार्थके परमाणुओमेसे वे इलेक्ट्रॉन मुक्त हुए थे।

परमाणु तो ऋण अथवा धन किसी भी विद्युत्से आविष्ट नही होता, इसलिए उस ऋण आवेशको उदासीन (neutralise) करनेवाले धन विद्युत्से आविष्ट कण भी अवश्य होने चाहिए। लम्बे प्रयोगोके बाद धन विद्युत्से आविष्ट कण भी खोज निकाले गए और उनका नाम प्रोटोन रखा गया। टॉमसनने प्रयोगोके द्वारा यह प्रमाणित किया कि परमाणुका वजन (भार) प्रोटॉनके कारण है, प्रोटॉनसे इलेक्ट्रॉन वजनमे बहुत हलके होते है। प्रोटॉनका वजन एक माने तो इलेट्रॉन का वजन $\frac{१}{१८४०}$ होगा।

रेडियमसे तीन प्रकारकी किरणे उत्सर्जित होती है—ऐल्फा किरणे, जो हीलियम गैसके अणुओके केन्द्रो (नाभिको) की बनी होती है, बीटा किरणे, जो इलेक्ट्रॉनकी बनी होती है और गामा किरणो, जो क्ष-किरणोकी तरह अनेक वस्तुओके आरपार निकल जाती है। इससे यह पता चला कि यूरेनियम और रेडियम-जैसे भारी वजनवाले परमाणु अस्थिर (अस्थायी) होते है और उनका अन्य पदार्थोमे परिवर्तन होता रहता है ओर उस परिवर्तनके दौरान ये किरणे उत्सर्जित होती है। यूरेनियम धातु धीरे-धीरे रेडियममे और रेडियम सीसेमे परिवर्तित होती है। लेकिन परिवर्तनकी इस प्रक्रियामे हजारो वर्ष लग जाते है।

इस सदीके पूर्वार्धमे परमाणुकी सरचनाके रहस्यका उद्घाटन करनेमे अनेक महान वैज्ञानिकोने योगदान किया। इनमे रदरफोर्डका नाम सर्वोपरि है। परमाणु सरचनाकी छान-बीनमे इस प्रखर

इरा रेमसेन
(१८४६–१९२७)

स्वान्ते आर्हेनियस
(१८५९–१९२७)

थियोडोर विलियम रिचार्ड्स
(१८६८–१९२८)

ऑटो वालाश
(१८४७–१९३१)

विल्हेम ओस्टवाल्ड
(१८५३–१९३२)

हेनरी ल शातेलियर
(१८५०–१९३६)

हेनरी एडवर्ड आर्मस्ट्रांग
(१८४८–१९३७)

**१९-२०वीं सदीके
ख्यातनामा वैज्ञानिक**

वैज्ञानिकने ऐल्फा किरणोका उपयोग किया था। स्वर्ण और प्लेटिनम धातुके पतले पतरोमेंसे ऐल्फा किरणोको पारित कर वे दूसरी ओर कितना मुडती है, यह देखनेका उसने प्रयोग किया। पतरेके पीछेकी ओर उसने जिंक सल्फाइडका लेप कर दिया था। उसपर ऐल्फा किरणोके टकरानेसे प्रकाश कौंधता है। रदरफोर्ड को पता चला कि ऐल्फा किरणे तो केवल कण है और बहुतसे ऐल्फा कण धातुके पतरोमेसे सीधी रेखामे पारित होते हे, केवल कुछ थोडेसे ही कण मुडते हे। कई सूक्ष्म परीक्षणो और गणनाओके पश्चात् रदरफोर्ड इस अनुमान पर पहुँचा कि परमाणुका भार उसके केन्द्रक (नाभिक) के कारण है। इलेक्ट्रान इस केन्द्रककी परिक्रमा करता रहता है। केन्द्रक बहुत कम स्थान घेरता हे, बाकी स्थान खाली (शून्य) रहता हे। परमाणुके आयतन आदिको ठीकसे समझनेके लिए एक उदाहरण लिया जाए। पानीके एक विन्दुको यदि पृथ्वीके गोलेके वरावर मान लिया जाए तो उसमे हाइड्रोजनका एक परमाणु केवल एक नारगी जितना वडा होगा। परमाणुका केन्द्रक तो उसमे भी छोटा होता हे। यदि एक परमाणुके केन्द्रकको एक नारगीके वरावर मान ले तो इलेक्ट्रॉनोको उसके चारो ओर १/३ मील व्यासके अन्तरपर परिक्रमा करते हुए माना जा सकता है। इससे पता चल जाएगा कि परमाणुमे कितनी अधिक खाली जगह होती है, और अगर उसपर कणोकी बौछार की जाए तो उनके केन्द्रकसे टकरानेकी सम्भावना दस लाखमे सिर्फ एक होती हे।

लार्ड रदरफोर्ड
(१८७१-१९३७)

१९३२ मे चेडविकने एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण खोज की। वह वेरिलियम धातुके परमाणुओ-पर ऐल्फा कणोकी बौछार कर उनके केन्द्र-परिवर्तनके परिणामोकी जाँच कर रहा था। उसे कार्बनका एक परमाणु और एक सर्वथा नया ही कण प्राप्त हुआ। इस कणका वजन प्रोटॉनके वरावर था, लेकिन उसमे ऋण या धन, किसी भी प्रकारका विद्युत् आवेश नही था, इसलिए उसे न्यूट्रॉन नाम दिया गया। इस कणकी खोजने परमाणुकी सरचनापर नया प्रकाश ही नही डाला, वरन् परमाणु केन्द्रकका भेदन या विखडन करनेका एक नया हथियार भी दिया। न्यूट्रॉन अनाविष्ट होनेके कारण सीधा केन्द्रककी ओर जाकर उससे टकरा सकता हे। प्रोटॉन ओर ऐल्फा कण धन विद्युत्से आविष्ट होनेके कारण धन विद्युत्से आविष्ट केन्द्रकके पास जाते ही प्रत्याकर्पणके परिणामस्वरूप दूर फेंक दिये जाते है।

अव हम यह देखेगे कि परमाणुकी सरचना किस तरहकी होती है।

हाइड्रोजन गैसका परमाणु सबसे सादा परमाणु है, उसका परमाणु वजन (भार) एक है। उसकी परमाणु सख्या या क्रमाक भी एक है। इसका कारण यह हे कि उसका केन्द्रक केवल एक प्रोटॉनका वना है। उसमे एक इलेक्ट्रॉन केन्द्रककी परिक्रमा करता है। हीलियम गैसके परमाणु-का केन्द्रक दो प्रोटॉन और दो न्यूट्रॉनका वना होता है ओर उसका परमाणुभार ४ है। दो इले-क्ट्रॉन इसके केन्द्रककी परिक्रमा करते है, और इसकी परमाण-सख्या २ है। यूरेनियमका परमाणु

$$E = mc^2$$

[E=energy=ऊर्जा, m=mass=वजन, C=velocity of light=प्रकाशकी गति, जो प्रति सेकण्ड २ ९९७×१०¹⁰ से० मी० है।) इस समीकरणके अनुसार यदि केवल एक ग्राम पदार्थका ऊर्जामें परिवर्तन किया जाए तो उससे ४००० अश्वशक्तिवाला इंजन लगातार एक वर्ष तक चलता रह सकता है। जर्मन वैज्ञानिक ऑटोहानके अनुसन्धानने इस सपनेको सच कर दिखाया।

१९३९ मे ऑटोहानने यूरेनियमके नाभिक (केन्द्र) पर न्यूट्रॉनकी बौछारकी तो उसे एक आश्चर्यजनक परिणाम देखनेको मिला। यूरेनियमके परमाणुओपर न्यूट्रॉनकी बौछारसे बेरियम और क्रिप्टॉन अथवा स्ट्रॉन्शियम और जेनोन-जैसे लगभग दो समान भागवाले परमाणु प्राप्त होते हैं। नाभिकके विभाजनकी इस क्रियाको नाभिकीय विखण्डन या 'न्यूक्लीयर फिशन' कहते हैं। इस विखण्डनके दौरान कुछ पदार्थ ऊर्जामें परिवर्तित हो जाते हैं। २३५ वजनवाले यूरेनियम परमाणुके नाभिकीय विखण्डनके दौरान प्रचुर मात्रामें ऊर्जा ही प्राप्त नहीं होती प्रत्येक परमाणुके विखण्डनके दौरान ३ न्यूट्रॉन भी मुक्त होते हैं, जो यूरेनियमके अन्य परमाणुओका भेदन (विखण्डन) कर अधिक ऊर्जा और अधिक न्यूट्रॉनोको मुक्त करते हैं। इसे 'शृंखला अभिक्रिया' (chain reaction) कहते हैं। शृखला अभिक्रियासे मुक्त होनेवाली परमाणु ऊर्जाका सबसे पहला उपयोग दुर्भाग्यसे विनाशकारी कार्योंमें (हिरोशिमा और नागासाकीपर परमाणु बम बरसाकर) किया गया था, परन्तु अब तो परमाणु ऊर्जाको शान्तिकालीन दैनिक उपयोगोमें लेनेका कार्य आरम्भ हो चुका है। नाभिक-विखडनके दौरान ऊर्जाकी प्रचुर मात्रा हमे गर्मीके रूपमे प्राप्त होती है, जिससे पानीको भापमे परिवर्तित कर उससे बिजली पैदा की जा सकती है और अन्य यन्त्रोको चलाया जा सकता है। इंग्लैण्ड, रूस ओर अमरीकामे परमाण्विक बिजलीघर (Atomic Power Station) आज काफी बडे पैमानेपर विद्युत् उत्पादन कर रहे हैं। भारतमे भी तारापुरमे परमाणु ऊर्जा द्वारा विद्युत् उत्पादनके लिए परमाण्विक बिजलीघर बनाया जा रहा है और ऐसे अन्य बिजलीघरोकी योजना विचाराधीन है इसके लिए परमाणु भट्ठियाँ अथवा 'एटमिक पाइल्स' या 'रिएक्टर' बनाने होते हैं।

भट्ठीको बहुत मोटी सीमेट कक्रीटकी दीवारोसे घेर दिया जाता है जिससे विखडनके समय उत्सर्जित होनेवाला रेडियधर्मी विकिरण कर्मचारियोको हानि न पहुँचा सके। इस दीवारको परिरक्षक (shield) कहते है। तापका नियन्त्रण करनेके लिए भट्ठीमे जल, प्राय भारी जल प्रवाहित होता रहता है, इसे शीतक (coolant) कहते हे। भट्ठीमे जिस पदार्थसे ऊर्जा उत्पन्न की जाती है उसे ईधन (fuel) कहते है। यह प्राय शुद्ध यूरेनियम २३५ की पतली छडे होती है, जिन्हे घटा-बढाकर आवश्यक मात्रामे ऊर्जा उत्पन्नकी जा सकती हे। भट्ठीमे मन्दक पदार्थ (moderator) और नियत्रक छडे (control rods) भी होती हे। मन्दकोका काम न्यूट्रानोके वेगको कम करना है। इसके लिए ग्रैफाइट, पानी या भारी पानी इस्तेमाल किया जाता है। नियत्रकोका उपयोग न्यूट्रॉनोके अवशोषणके लिए किया जाता है, ताकि उनकी सख्या घटाकर उन्हे विखण्डन कार्यके उपयुक्त रखा जा सके। नियत्रक कैडमियम या बोरन मिले हुए इस्पातकी छडे होती है, जिनकी सख्याको घटा-बढाकर ऊर्जाकी मात्राका नियन्त्रण किया जाता है। वास्तवमे यूरेनियमकी छडे और नियत्रक छडे पानीमे ही डूबी रहती है।

परमाणुओके नाभिकपर न्यूट्रॉन आदि कणोकी क्रियाके दौरान और भी कई महत्त्वपूर्ण परिणाम सामने आये है। उनके आधार पर यूरेनियमके बादवाले बहुतसे मूलतत्त्व जो प्रकृतिमे नही मिलते प्रयोगशालामे बनाये गए है। उनकी परमाणु सख्या और नाम नीचे दिये जा रहे है.

ट्रान्स-यूरेनियन मूलतत्त्व

परमाणु सख्या	नाम	परमाणु सख्या	नाम
९३	नेप्चूनियम	९९	आइन्स्टीनियम
९४	प्लूटोनियम	१००	फर्मियम
९५	अमेरीशियम	१०१	मैंडलेवियम
९६	क्यूरियम	१०२	नोवेलियम
९७	बर्केलियम	१०३	लॉरेसियम
९८	कैलिफोर्नियम		

हम यह देख आए है कि किसी एक मूलतत्त्वके अलग-अलग समस्थानिक हो सकते है। नये समस्थानिक नाभिकीय परिवर्तन द्वारा बनाये जाते है। इस तरह बनाये हुए कुछ समस्थानिक अस्थिर (अस्थायी) होते है और वे दूसरे मूलतत्त्वोमे परिवर्तित हो जाते है। इस तरहके समस्थानिकोको रेडियधर्मी समस्थानिक कहते है। मादाम क्यूरीकी पुत्री आइरीन और उसके पति जूलियोने कृत्रिम रेडियधर्मी द्रव्योके क्षेत्रमे बडा ही महत्त्वपूर्ण काम किया है। रेडियधर्मी समस्थानिकोका पता लगाने और नापनेके लिए एक उपकरण काममे लाया जाता है, जिसे गाइगरका काउण्टर कहते है। विभिन्न रेडियधर्मी पदार्थोके जीवनकालमे वडा अन्तर पाया जाता है। उनका अर्ध जीवनकाल (half life-period) अर्थात् जितने समयमे उनकी शक्ति या ऊर्जा आधी हो जाती है, उसे प्रयोगोके द्वारा खोज निकाला गया है। कोबाल्ट ६० अर्थात् ६० वजनवाले कोवाल्ट समस्थानिकका अर्ध-जीवन ५ ३ वर्ष है, कार्वन-१४ का ५६०० वर्ष और फॉस्फोरस -३२ का १४ ३ दिन। किसी भी मूलतत्त्वके समस्थानिकोके गुण उस मूलतत्त्वके स्थायी परमाणुओ-जैसे ही होते है और प्राणी शरीर तथा वनस्पतिमे वह समस्थानिक मूलतत्त्वके स्थायी परमाणुओकी ही तरह आचरण करता है। आजकल भाति-भातिके रेडियो समस्थानिक बडे पैमानेपर बनाये जाने लगे है और चिकित्सा तथा खेती-बाडी और रासायनिक प्रक्रियाओमे अनुसन्धानके लिए उनका उपयोग किया जाने लगा है। इनके कुछ उदाहरण नीचे दिये जाते है।

शारीरिक क्रियाओको समझनेमे रेडियो समस्थानिकोसे वडी सहायता मिली है। शरीरमे कैल्सियमका उपयोग किस तरह होता है, कितना हड्डियोमे जाता है, कितना अन्य भागोमे जाता है और कितना विना काम आये शरीरसे बाहर निकल जाता है—यह सब जानकारी कैल्सियम -४५ के उपयोगके द्वारा जिसका अर्द्धजीवन १८० दिनका है, मालूम की गई है। हमारे गलेमे थाइरॉयड ग्रन्थि है। उसमे थाइरॉक्सिन नामक पदार्थ वनता है। थाइरॉक्सिनके अणुमे आयोडिनके चार परमाणु रहते है। आयोडिन -१३१ (अर्द्धजीवन ८ दिन) देकर आदमीकी थाइरॉयड ग्रन्थिके वारेमे यह पता चलाया जाता है कि वह आयोडिन किस तरह ग्रहण करती है—सावारण गतिसे, तेज-

गतिसे या मन्दगति से, और इस तरह उस ग्रन्थिके स्वस्थ या अस्वस्थ होनेका निदान किया जाता है। किसीका हाथ या पाँव कुचल जाए और वहाँ रक्तका सचरण वन्द हो जाए तो उसे काटना पडता है, जिससे उस व्यक्तिकी जान वच सके। आजकल इस तरहके प्रसगमे रोगीके खूनमे रेडियो-सोडियमके क्षारका इजेक्शन देकर गाइगर काउण्टर द्वारा पहले यह देखा जाता है कि कुचले हुए भागमे खूनका सचरण होता है या नही और तव उस अवयवको काटने या न काटनेका फैसला करते है। यदि काउण्टरमे 'टिक-टिक' की आवाज हो तो समझा जाता है कि खूनका सचरण उस भागमे होता है और उसे बचाया जा सकता है। खेती-वाडीके क्षेत्र मे विभिन्न प्रकारके पौवे किस तरहका उर्वरक अपनी वृद्धिके दौरान कव उपयोगमे लाते हैं, इसकी जानकारी उन उर्वरकोमे रेडियधर्मी पदार्थ मिलाकर प्राप्त की जा सकती है। उदाहरणके लिए सुपर फॉस्फेट उर्वरककी उप-योगिताके वारेमे जानना हो तो उसमे थोडा-सा रेडियो फॉस्फोरसवाला सुपरफॉस्फेट मिलानेसे अभीष्ट जानकारी प्राप्त हो सकती हे।

रेडियधर्मी समस्थानिकोके द्वारा मशीनमेसे निकलते कागज, रवर आदिकी सही मोटाईके वारेमे और जमीनके अन्दर दवे पानीके नल किस जगह फट गए है और वहते है, यह जमीनको खोदे विना ही मालूम किया जा सकता है। पेट्रोल कम्पनियाँ एक ही पाइपके द्वारा पेट्रोल, डीजल, केरोसीन आदि अलग-अलग प्रकारके तेल एक जगहसे दूसरी जगह भेजती हैं। एक तेलके वाद जब दूसरा तेल भेजना शुरु किया जाता है तो पहले तेलमे घुलनशील रेडियो आयोडीन थोडी मात्रामे मिला दिया जाता है। जब यह तेल दूसरे छोर पर पहुँचता है तो वहाँ रखे हुए गाइगर काउण्टरमे आवाज होती है, जिससे पता चल जाता है कि अब दूसरे प्रकारका तेल आनेवाला है।

रेडियधर्मी समस्थानिक का एक अद्भुत उपयोग यहाँ उल्लेखनीय है। पुरातात्त्विक अवशेषो-की प्राचीनताका पता लगानेके लिए कार्वन-१४ का उपयोग किया जाता हे। प्रत्येक सजीव पदार्थमे कार्वन होता है, जिसे प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूपसे वह हवामेसे प्राप्त करता रहता हे। हवामे कार्वन-१४ वाला कार्वन डाइआक्साइड बहुत कम मात्रामे रहता है, क्योकि यह वातावरण (वायु-मण्डल) के ऊपरी स्तरोमे वनता है। किसी भी सजीव वस्तु मे यह रेडियधर्मी कार्वन एक निश्चित मात्रामे रहता ही है। जब कोई सजीव वस्तु निर्जीव हो जाती हे तो कार्वन-१४ का आदान-प्रदान नही होता और वह चीज धीरे-धीरे नष्ट हो जाती है। किसी भी पुरातात्त्विक अवशेषमे यदि कार्वन-१४ की मात्रा दी जाए तो उससे उसकी प्राचीनताका पता चल जाता है ओर यह निश्चित किया जा सकता है कि वह कितने वर्ष पुरानी है। यदि दो ग्राम कार्वन-१४ मिल सके तो उससे ४० हजार वर्ष पुराने अवशेषोकी तिथि निश्चितकी जा सकती है।

रासायनिक पदार्थो (रसायनको) और उनकी क्रियाओके सैद्धान्तिक पहलुओका अध्ययन तो १८वी सदीके आरम्भसे ही किया जा रहा था, परन्तु भौतिक रसायन (physical chemistry) विज्ञानकी एक स्वतन्त्र शाखाके रूपमे १९वी सदीके उत्तरार्धमे ही अस्तित्वमे आया। भौतिकीके क्षेत्रमे जो तरह-तरहके अनुसन्धान-अन्वेषण हुए उन सबकी गहरी छाप भौतिक रसायन पर पडी और ऊष्मा गतिकी (thermo-dynamics) तथा गत्यात्मक सिद्धान्त (kinetic theory) को अपनाकर भौतिकी रसायनविदोने रसायनशास्त्रके विकासमे मूल्यवान योगदान किया।

वाल्थर नर्न्स्ट
(१८६४–१९४१)

विक्टर मॉरिस गोल्डस्मिट
(१८८८–१९४७)

हेनरिक वाइलैण्ड
(१८७७–१९५७)

इर्विंग लेंगमूर
(१८८१–१९५७)

२०वी सदीके धुरन्धर

नील्स जेनिकमैन ब्जेरम
(१८७९–१९५८)

जोशिया विलार्ड गिब्स
(१८३९–१९०३)

उनके कार्यके फलस्वरूप रासायनिक क्रियाओंको ज्यादा अच्छी तरह समझा जा सका और औद्योगिक रसायनक काफी अधिक मात्रामे प्राप्त किये जा सके। विगत शताब्दीमे इस क्षेत्रमे विलार्ड गिब्स, वाण्डेरवाल और वाटहॉफने काफी महत्त्वपूर्ण कार्य किये।

१८८४ ई० मे अर्हेनियसने आयनीकरण का अपना सिद्धान्त सबसे पहले अपने शोध प्रबन्धमे प्रस्तुत किया था। इसमे उसने यह बताया था कि अकार्बनिक पदार्थोके विलयनमे क्षारके मूलक (radicals) आयनोके रूपमे रहते है। उदाहरणके लिए लवण, जिसे रासायनिक भाषामे सोडियम क्लोराइड कहते है, विलयनमे धनाविष्ट सोडियम आयनो और ऋणाविष्ट क्लोराइड आयनोके रूपमे रहता है। इस सिद्धान्तको उस समय बहुत थोडे वैज्ञानिकोमे मान्यता प्राप्त हो सकी थी, परन्तु कालान्तरमे वही एक महत्त्वपूर्ण सिद्धान्तके रूपमे प्रतिष्ठित हुआ और विद्युत्-रसायनकी एक नई शाखा ही आरम्भ हो गई। अकार्बनिक पदार्थोकी क्रियाओको समझने और उनके विश्लेषण (विच्छेदन)के विकासमे इस सिद्धान्तका बहुत महत्त्वपूर्ण योगदान रहा। कोलायड (कलिल) रसायन का विकास, प्रावस्था नियम (phase rule) और उसकी उपयोगिता, मात्रानुपाती अभिक्रिया (mass action) और उसका नियम—ये सब खोजे है तो उन्नीसवी सदीके उत्तरार्धकी, परन्तु काममे आई इस शताब्दीमे। उदाहरण के लिए समुद्रीजलमे पाये जानेवाले कई क्षारोको मुक्त करने और मिश्रधातुएं बनानेमे प्रावस्था नियम बहुत उपयोगी सिद्ध हुआ। उसी तरह मात्रानुपाती अभिक्रियाका नियम हवामेके नाइट्रोजन और हाइड्रोजनको उत्प्रेरकोके सान्निध्यमे सयोजित कर ऐमोनिया बनानेकी होवरकी विधि और दूसरे अनेक उद्योगोमे तथा रासायनिक विश्लेषणमे उपयोगी साबित हुआ। पिछले २५-३० वर्षोमे विद्युत् रसायन, कलिल (कोलाइड्स), वर्णक्रम (spectrum), क्वाटम यान्त्रिकी (quantum mechanics स्फटिकोकी सरचना आदि भौतिक रसायनके क्षेत्रमे बहुत काम हुए है। नन्हे-नन्हे अणुओसे प्लास्टिक, वस्त्ररेशे, रबर आदि विराट् अणु बनानेकी विधियोके बारेमे तो हम पिछले अध्यायोमे पढ ही चुके है।

रसायनके विकासमे साधनो-उपकरणो का स्थान

बीसवी सदीमे रसायनके क्षेत्रमे जो कल्पनातीत विकास हुआ वह बहुत-कुछ नई विधियो और नये ढगके साधनो-उपकरणोके कारण सम्भव हो सका। इन साधनो-उपकरणोके द्वारा कुछ ऐसे प्रश्नोका, जो बरसोसे अनुत्तरित पडे थे, समाधान खोजा जा सका और रासायनिक अनुसन्धानो-को वेग प्रदान किया जा सका। १९वी सदीमे कपूर, नील, कुनैन आदि वानस्पतिक द्रव्योकी अणुसरचनाको अन्तिम रूपसे निर्धारित करनेमे अनेक वर्ष लगे थे। परन्तु आधुनिक साधनो-उपकरणोके अन्वेषणसे यह काम बहुत सरल हो गया है। इसमे वर्णलेखन (chromatography) अनुज्ञापक विधि (tracer technique), पराबैगनी वर्णक्रम (ultra-violet spectrum)

रासायनिक अनुसन्धानके क्षेत्रमे पिछले ३०-३५ वर्षोमे परावैंगनी, अवरक्त और रामन वर्णक्रमोने अणुसरचनाको निश्चित करनेमे वडा ही महत्त्वपूर्ण योगदान किया है। जव किसी पदार्थके अणुपर प्रकाशकिरणे पडती हे ओर यदि वह अणु एक ही प्रकारके परमाणुओका वना है तो अवशोपित ऊर्जा पदार्थके परमाणु मे रहनेवाले इलेक्ट्रॉनको उत्तेजित करती और उसे उच्च कक्षापर ले जाती है। लेकिन यदि किसी अणुमे तरह-तरहके परमाणु हुए तो इलेक्ट्रॉनकी घूर्णनीय (rotational) और कम्पन (vibrational) शक्तिमे भी परिवर्तन होता है।

इलेक्टॉनिक सक्रमणके कारण दृश्य ओर परावैंगनी वर्णक्रमोमे अवशोपण अथवा उत्सर्जन होता है तव घूर्णनीय और कम्पनीय परिवर्तनोके अध्ययनसे अणुकी सरचनाके सम्वन्धमे अच्छी जानकारी प्राप्त की जा सकती है।

अज्ञात पदार्थके वर्णक्रमकी यदि ज्ञात अणु सरचनावाले पदार्थोके वर्णक्रमोसे तुलना की जाए तो कई वार अज्ञात पदार्थकी अणुसरचनाके वारेमे कुछ जानकारी मिल जाती है। जिस प्रकार किन्ही भी दो आदमियोके हाथकी छापे एक-जैसी नही होती उसी प्रकार दो भिन्न पदार्थोके अवरक्त वर्णक्रम भी एक जैसे नही होते यदि किन्ही दो पदार्थोके अवरक्त वर्णक्रम एक-जैसे हुए तो वे दोनो पदार्थ भी एक-से ही होने चाहिए।

एक दूसरा उपकरण हे 'द्रव्यमान वर्णक्रमीय ज्योतिमापी', जिसकी उपादेयता दिनोदिन वढती जा रही है। भौतिकविदोने इस शताव्दीके आरम्भमे सवसे पहला द्रव्यमान वर्णक्रमीय ज्योतिमापी (मास स्पेक्ट्रो फोटोमीटर) वनाया था, लेकिन कार्वनिक रसायनके क्षेत्रमे उसकी उपादेयताका पता दूसरे विश्वयुद्धके वाद ही चला।

विभिन्न पदार्थोके मिश्रणसे यदि इलेक्ट्रानोको टकराया जाए तो विद्युत आवेशवाले कण पैदा होते हे और यदि उन कणोको चुम्वकीय क्षेत्रमेसे पारित किया जाए तो वे वजन और विद्युत् आवेशके अनुपातके अनुसार मुक्त होते हे, ओर यदि इन्हे एक फोटोग्राफिक प्लेट पर गिरने दिया जाए तो वे भिन्न-भिन्न स्थानो पर प्लेटको प्रभावित करते हैं। इसपरसे गणना करके मिश्रणके पदार्थोका अणुभार निश्चित किया जा सकता हे।

क्ष-किरणोकी खोज तो पिछली शताव्दीमे हुई, परन्तु कार्वनिक पदार्थोकी अणुसरचनाका पता लगानेमे उनका उपयोग पिछले तीन दशको से किया जाने लगा हे। अज्ञात पदार्थके एक वडे स्फटिक पर अथवा छोटे स्फटिकोके चूर्ण पर क्ष-किरणे डाली जाएँ तो स्फटिक उन किरणोका विवर्तन (diffraction) करते है। इस विवर्तनको एक फोटोग्राफिक प्लेट पर अकित किया जा सकता है। पदार्थोसे क्ष-किरणोका जो विवर्तन होता हे वह पदार्थोकी अणु-सरचना और उनके आयतन पर अवलम्वित है, इसलिए क्ष-किरणोके विवर्तन के ढगसे विभिन्न पदार्थोकी अणु-सरचना और आयतनका अनुमान किया जा सकता है। क्ष-किरणोके द्वारा रवर, सेल्यूलोज, विटामिन-वी१२ आदि वडे और जटिल विन्यास वाले अणुओकी सरचना पर काफी प्रकाश पडा है।

एक और विधि 'नाभिकीय चुम्वकीय अनुनाद' भी उल्लेखनीय हे। परमाणुके इलेक्ट्रॉनोके कारण चुम्वकीय घूर्ण (magnetic moments) अस्तित्वमे आता है। परमाणु के नाभिकमे स्थित प्रोटॉन और न्यूट्रॉन भी अपनी-अपनी धुरियो पर घूमते रहते है और इससे भी चुम्वकीय घूर्ण पैदा होता है। अधिकाश नाभिकोमे ये दोनो घूर्ण एक-दूसरेको रद्द नही करते, इसलिए परमाणुमे

नाभिकीय चुम्बकीय घूर्ण बना रहता है। ऐसे परमाणुओको चुम्बकीय क्षेत्रोमे रखनेसे इस नाभि-कीय चम्बकीय घूर्णमे परिवर्तन होता है। रेडियो आवृत्ति (frequency) जैसी निम्न-आवृत्तिका उपयोग करनेसे नाभिकीय केन्द्रीय अनुनाद उत्पन्न होता है। इसे नापा जा सकता है और इससे अणुकी सरचनाके बारेमे पता चलता है।

अणुकी सरचनाको निर्धारित करनेवाले अन्य साधन प्रकाशीय घूर्णन व्यासारण और ध्रुवण-लेखन है। इन सब साधनोकी विधिवत शिक्षा देनेके लिए पाठ्यक्रम तैयार किये गए है, जो इन्स्ट्रुमेटेशन कोर्सेस' कहलाते है।

आज दुनियाकी वढती हुई जनसख्याके लिए भोजन जुटानेका प्रश्न कई देशोके सामने जटिल समस्या बना खडा है। परन्तु इस क्षेत्रमे जो कार्य हो रहा है उससे पता चलता है कि कलके नागरिकोके भोजनका प्रवन्ध खेतोमे नही, कारखानोमे होगा। आज पेट्रोलियमसे उच्चकोटिके प्रोटीन बनानेके प्रयोगोको सफलता मिल चुकी है। कृषि, मत्स्योद्योग और पशुपालनकी दिशामे कितने ही साधन प्रयत्न क्यो न किये जाएँ कलके आदमीकी खाद्य-सम्बन्धी आवश्यकताओको इनसे कदापि पूरा नही किया जा सकता। लगता तो यही है कि लकडी और पेट्रोलियम जैसे अखाद्य पदार्थोसे खाद्य पदार्थ वनाकर दुनियाकी इस आवश्यकताको पूरा किया जाएगा। प्लास्टिक-उद्योग वहुत तेजीसे विकसित हो रहा है और आज अनेक गुणसम्पन्न प्लास्टिक सुलभ है। भविष्यके निर्माण-कार्यमे लकडीकी जगह प्लास्टिकका उपयोग होगा। लोहे-जैसे मजबूत प्लास्टिक आज बनने लगे है और यदि उनकी कीले बनाई जाएँ तो उनका लोहेकी कीलोकी तरह इस्तेमाल हो सकता है। इससे यह सम्भावना प्रतीत होती है कि प्लास्टिकका उपयोग लोहे और इस्पातकी जगह भी किया जा सकेगा।

दिमाग पर असर कर भय और भ्रान्ति उत्पन्न करनेवाले रसायनक आज खोज लिये गए है। सम्भव है कि कल मन-मस्तिष्कको प्रफुल्लित और आह्लादित कर मानसपर पटल अकित समस्त अशुभ और दु खद स्मृतियोको पोछनेवाले रसायनक भी खोज लिये जाएँ। बुढापालाने वाली शारीरिक क्रियाओको यदि हमने समझ लिया तो उनपर काबू पानेका, चिर युवा रहनेका उपाय भी निस्सन्देह कर लिया जाएगा।

एक तरफ ये सम्भावनाएँ है, दूसरी ओर मानवकी निरन्तर वढती हुई विनाशकारी शक्ति है। परमाणु शक्ति और विषैले रसायनकोका मनुष्यके सहारके लिए उपयोग किया जाता है। सभ्यता-का दम भरनेवाले और सस्कृतिके हामी सम्पन्न राष्ट्रोने गरीव, असुरक्षित राष्ट्रोके खिलाफ नापाम वमोका और खडी फसले नष्ट करनेवाले रसायनकोका इस्तेमाल किया है। भविष्यमे वे और भी विनाशक रसायनको और सहारक शस्त्रोका इस्तेमाल नही करेगे, इसकी कोई गारटी नही है। सम्भव है कि आती कल आलडस हक्सलेने अपनी बहुचर्चित पुस्तक 'ब्रेव न्यू वर्ल्ड' मे जो भविष्यवाणी की वह सच ही हो जाए! हो सकता है कि वडे-वडे देश अपने कारखानोमे विभिन्न रसायनकोका उपयोग कर भिन्न-भिन्न विशेषताओवाले आदमियोका—मजदूरो, सैनिको, कारकूनो आदिका 'टेस्टट्यूव' मे थोकबन्द उत्पादन करने लगे। चन्द्रमाकी धरतीपर अपने चरण-चिन्ह अकित करने-वाला मनुष्य, कोटि योजन दूर ग्रहो-नक्षत्रो पर पहुँचनेके लिए प्रस्तुत मनुष्य, नन्हेसे परमाणुमेसे सीमातीत शक्ति प्राप्त करनेवाला मनुष्य अभी तो वहुत कुछ करेगा। लेकिन साथ ही उसके नैतिक

मूल्योका नाश न हो और उसका आध्यात्मिक उन्नयन भी इतनी ही तेजीमे होना रहे, यह आशा तो हमे करनी ही चाहिए। विज्ञान और आध्यात्मिक उन्नति हाथमे हाथ मिलाकर आगे बढे, इसीमे मनुष्यकी भलाई है। निरा विज्ञान और उसकी भौतिकवादी प्रगति मनुष्य जातिको सर्वनाश-के रास्ते पर खीच न ले जाए, यह देखना और इस सम्बन्धमे सतर्क रहना विचारकोका काम है। क्या वे सजग और सतर्क रहेगे?

पारिभाषिक शब्दावली

अणुकक्षक सिद्धान्त–molecular orbital theory
अणुसूत्र–molecular formula
अनुहरण–mimicry
अनुज्ञापक विधि–tracer technique
अन्त क्षेपण–injection
अपकेन्द्रित्र–centrifuge
अपघर्षक–abrasive
अपचायक (अवकारक)–reducing agent
अपनति–anticline
अपमार्जक (प्रक्षालक)–ditergent
अभिनति–syncline
अर्धजीवनकाल–half life period
अवक्षेपण–precipitation
अष्टक नियम–law of octavoes
असम–unsymmetrical
आक्सीकरण–oxidation
आयन–ion
आवर्त-सारणी–periodic table of elements
आर्द्रता अवशोषी–hygroscopic
आसजक–adhesive
आसुत–distilled
उत्प्रेरक–catalyser
उत्स्फोटन–blasting
उभयधर्मी–amphoteric
ऊष्मागतिकी–thermo-dynamics
एकलक–monomer
एकदिशकारी–rectifier
ऐल्काली–alkali

औषधीय सत्व–active principle
कच्चा रंग–fugitive colour
कर्तनोपकरण–cutlery goods
कान्तिसार (गजवल्ली)–steel
काँचिका–glaze
किण्वन–fermentation
केन्द्रक (नाभिक)–nucleus
खटवास–rancidity
खनिज संभार–ore-dusting
खुलीचुल्ली भट्ठी–open hearth
गत्यात्मक सिद्धान्त–kinetic theory
गालक–flux
चिकित्सान्वयी–chemotherapeutic
छत्रकशैल–cap rock
ढलवाँ लोहा–wrought iron
तन्तुवाय–spinneret
तन्त्रान्वयी–systematic
तन्य–ductile
तन्यता–tenacity
तरल ऊष्मा अन्तरण–heat transfer fluid
तापसुनम्य–thermoplastic
तापस्थापित–thermosetting
तुल्यभार–equivalent weight
तेल उत्प्लावन विधि–oil floatation method
तैलीयद्रव्य–limpids
त्र्यग्र–triode
दिक्स्थिति–orientation
धमनवात भट्ठी–blast furnace

धातवर्ध्य—malleable
धातुमल—slag
निद्रालु रोग—sleeping sickness
निपिण्ड—block
निस्तापन—calcination
निस्सारण—extration
निक्षेप—deposits
नोदक धुरीदण्ड—propeller shaft
परतवन्दी—lamination
परावर्तनभट्ठी—reverberatory furnace
परमाणुवाद—atomic theory
परिष्करणी—refinery
पानी चढाना—tempering
पिटवाँ लोहा—wrought iron
पुनर्गठन (पुनरुत्पादन)—reformation
पृथक्करण—separation
पृष्ठ तनाव—surface tension
प्रकिण्व—enzyme
प्रकृत—normal
प्रक्षोभक—agitator
प्रतिवर्ती—reversible
प्रभाजन—fractionation
प्रसारगुणाक—coefficient of expansion
प्रशीतक—refrigerator
प्रावस्था नियम—phase rule
फ्लोजिस्टनवाद—flogistor theory
फेनिल रबर—foam rubber
वन्ध—valancy bond
वन्धुता—affinity
वहिर्वेधन—extrusion
वहुलक—polymer
वहुलीकरण—polymerisation
भजन—cracking
भर्जन—roasting
भापविसक्रामक—autoclave
मात्रानुपाती अभिक्रिया—mass action
माध्यमिक—intermediaries
मूलक—radical
मूलतत्त्व—element
मूलानुपातीसूत्र—empirical formula
वर्णक्रम—spectrum
वर्णजन—chromogen
वर्णवर्धक—osochrome
वर्णलेखन—chromatography
वर्णसूचक—chromophore
विकिरणधर्मिता—radio activity
विद्युद्दर्शी—electroscope
विद्युद्विश्लेषण—electrolysis
विद्युद्पारक—dielectric
विलायक—solvent
विवर्तन—diffraction
शृखला अभिक्रिया—chain reaction
शुष्कक—drier
सकुल—complex
सकेन्द्रण (सान्द्रण)—concentration
सघनन—condensation
सचककरण—moulding
सचर्वण—mastication
सयोजकता—valency
सजात श्रेणी—homologous series
सम—iso
सममिति—symmetry
समस्थानिक—isotope
समचक्रीय—homocycle
सहसयोजकता—covalency
समावयव—isomer
समूह—group
सवर्गीकरणवाद—coordination theory
सीसकक्ष—leadchamber
सुरभित—aromatic
हाइड्रोजनीकरण—hydrogenation

रहेगा उसे जग नही लगेगी। पता चला है कि टेकनिशियम भी यही काम करता है। उसके क्षार पर टेक्नेटके विलयनमे रखनेसे लोहेको जग नही लगता। र्‍हेनियम भी टेकनिशियमके ही जैसा है, परन्तु रेडियधर्मी न होनेके कारण वह सक्षारक-अवरोधनकी क्रिया नही करता।

हमारे देशमे श्री जमशेदजी नसरवानजी ताताने ताता आयर्न एण्ड स्टील कम्पनी १९११-१२मे स्थापित कर लोह-उद्योगकी नीव रखी। यह कारखाना बिहार राज्यके अन्तर्गत जमशेदपुर नामक स्थान पर है। १९२२मे इडियन आयर्न एण्ड स्टील कम्पनी, १९३३मे मैसूरमे भद्रावतीका लोहेका कारखाना, १९३६मे इण्डियन आयर्न और बगाल आयर्नका सयुक्त कारखाना—ये सब हमारे देशके लोह उद्योगकी प्रगतिके आधुनिक सीमाचित्र है। स्वतत्र होनेके बादके कालमे पचवर्षीय योजनाओके अन्तर्गत रूरकेला, दुर्गापुर और भिलाईके कारखानोका निर्माण हुआ है, जो विशेषरूपसे उल्लेखनीय है।

लोहेतर धातुएँ

लोहेतर धातुओका अर्थ तो होता है लोहेके अतिरिक्त शेष सभी धातुएँ, परन्तु सामान्यत· ताँवा, एल्युमीनियम, सीसा, जस्ता, राँगा, निकल और मैग्नेशियम धातुओ तथा इनके विविध मिश्रणोसे बनाई हुई मिश्रधातुओको ही लोहेतर धातु कहा जाता है।

ताँबा—सबसे पहले ताँवे को ले। प्राचीन कालसे मनुष्य इसका उपयोग करता आ रहा है। एक जमाना था जब राजस्थानकी (खेतडी) भरी-पूरी खानोसे खूब ताँबा निकाला जाता था। लेकिन आज तो विदेशोसे आपातित ताँवा प्रचुर मात्रामे इस्तेमाल किया जाता है। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि पिछले कुछ वर्षोसे बिहारका इण्डियन कापर कारपोरेशन काफी सफलतासे ताँवा बना रहा है। ईसा पूर्व १००० से ५०० तकके ब्राह्मण ग्रन्थोमे ताँवेका वर्णन 'लोहित धातु'के नामसे किया गया है। अथर्ववेदमे 'ताँवेकी छुरी'का उल्लेख मिलता है। सम्भवत· ताँवेकी छुरीका उपयोग यज्ञमे किया जाता रहा होगा। ताँवेके खनिजोका वर्णन करते हुए उन्हे वजनमे भारी, रगमे लाल, हरे या मटमैले बताया गया है। पुरातनकालका यह वर्णन ताँवेके आधुनिक खनिज मेलेचाइट, पाइराइटीज और रेड कॉपर पर अक्षरश लागू होता है।

ताँबेके खनिज—क्यू प्राईट (कॉपर आक्साइड) और मेलेचाइट (कॉपर कार्बोनेट)को कोयलेके साथ तपानेसे ताँवे को पृथक् किया जा सकता है। लेकिन इन खनिजोका उपयोग सीमित है। क्योकि ताँवा गधकसे बडी जल्दी और सरलतासे सयोग करता है इसलिए प्रकृतिमे गन्धकित (सल्फाइड) ताम्रखनिज प्रचुर मात्रामे मिलते है और ताँवेका निस्सारण करनेके लिए अधिकाँश इन्ही खनिजोका उपयोग किया जाता है। ऐसे खनिजोमे यदि डेढ या दो प्रतिशत ताँवा हो तब भी उनमेसे ताँवेका शोधन आर्थिक दृष्टिसे लाभदायी होता है। इन गन्धकित खनिजोमे पाइराइटीज, कॉपर ग्लान्स आदिके नाम गिनाये जा सकते है। फिर इसके साथ गन्धकित लोह भी मिलता है और थोडे अनुपातमे सखिया, सीसा और राँगा भी रहता है। ऐसे जटिल मिश्रणसे शुद्ध ताँवा प्राप्त करनेका काम काफी कठिनाइयोसे भरा होता है।

खनिजमेसे ताँवेका शोधन करनेके लिए सबसे पहले खनिजका हवामे निस्तापन (calcine) किया जाता है। इस क्रियासे अतिरिक्त गन्धक और डायाक्सॉइड गैसके रूपमे पृथक् हो जाते